राव गुलाबसिंह
और
उनका हिन्दी साहित्य

ा विश्वविद्यालय की पी एच् डी उपाधि के लिए स्वीकृत शोध प्रबंध

डॉ र वा बिवलकर
एम ए पी एच डी
प्राध्यापक एव अध्यक्ष हिन्दी विभाग,
रा न चाडक कला, ज डा बिटको वाणिज्य,
एव र न चाडक विज्ञान महाविद्यालय,
नासिकरोड ४२२१०१ (महाराष्ट्र)

अभिलाषा प्रकाशन
१०७/२९५ ब्रह्मनगर कानपुर-१२

स्वर्गीय
माता पिता की
पावन स्मृति में
सश्रद्ध समर्पित
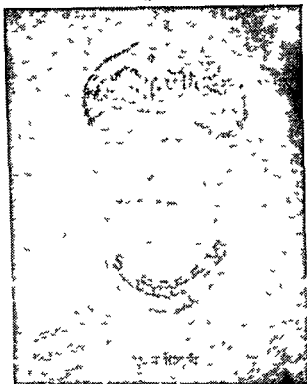
राव गुलाबसिंह जी

सम्मतियाँ

विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

हिन्दी साहित्य का शृगारकाल या रीतिकाल इतनी पुष्कल प्रचरानि मवलित कि उसका सम्पणतया आलोचन वर्तमान म सम्भव हो सके तो हो सरे हस्तलिखित रूप म होन के कारण वाणीविनान प्रत्य नमा धाराणसी उन मवका प्रद सवलन रूप बीस व्यक्तियो के मान का नही है। हिन्दी साहित्यका विस्तर पर अध्ययन शोध अब देश के प्रत्यक अचल म प्रसरित हो गया है। शोध विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा एक प्रकार स अनिवाय कर दिया गया है। इसका सुपरिणाम भी सामन आ रहा है। जिन कवियो या व्यक्तियो के सम्बन्ध म बहुत कम ज्ञान है उनके विषय म इतनी अधिक जानकारी प्राप्त होने लगी है कि स्थूल रूप मे अभी तक जो भी समीक्षा प्रस्तुत हुई है उसम सूक्ष्म अध्ययन के परिणाम स्वरूप जो उपलब्धियाँ हो रही है व सकत करती हैं कि पूव निणयो का अब बहुत कुछ परिवर्तित करना पडगा। शोधार्थी अधिकतर आधुनिक युग को ही सुविधाभोगी के रूप मे ग्रहण करत हैं। किन्तु जो परिश्रम करने म कटिबद्ध होन है व मध्यकाल के विस्तत फलकपर जब शोध की दृष्टि डालते और वांछित सामग्री सकलित करते हैं तो उन्ह अभूतपूव स्थापना का लाभ होता है। प्रसन्नता है कि हिन्दी के वास्तविक क्षत्र स दूर के शोधकर्ता कभी कभी ऐसा शोध कर रहे हैं जसा हिन्दी क्षत्र के लोगो न भी पहल नही किया है। श्री बिवलकर न ऐसा ही महत्त्वपूर्ण काय राव गुलाबसिंह की रचनाओं और जीवनवत्त को लकर पुणे विद्यापीठ स किया है अभी राव साहब को हिन्दी साहित्य कवल टीकाकार के रूप मे ही जानता रहा है। पर इनके शोध न प्रमाणित कर दिया है कि व शृगारकालिक प्रवृत्तियों म संयुक्त उसके प्रतिष्ठित प्रतिनिधि हैं। श्री बिवलकर हिन्दी साहित्य के शोधरसिकों द्वारा अत्यधिक साधुवाद के आस्पद है। पुणे विद्यापीठ का हिन्दी विभाग वहाँ के पुस्तकालय क सहारे और अन्यत्र स अपेक्षित हस्त लेखो का मन्थन करके शोध के क्षेत्र एसा काय कर रहा है जसा अन्यत्र नही हो रहा है। उसके प्राध्यापक और अध्यक्ष भी इसके लिए सवतोभावन श्लाघनीय है। आशा है श्रीबिवलकर के इस महनीय शोध का सवत्र अभिनदन होगा। मध्यकालिक हिन्दी साहित्य क विस्तृत उपवन म बहुत दिनो से क्या आजीवन श्रमिक के रूप म काय करते हुए अपना शोध वन्ने देखकर मुझे जो आनन्द हो रहा है वह अनिवचनीय है। मैं श्रीबिवलकर की मगल कामना करता हू और आशा करता हूँ कि वे भविष्य म भी इस उपवन की देखरख करने में दत्तचित्त रहग और नय तरु वीरुधो की खोज कर शोधसिरजों को अह्लादित करते रहग। एवमस्तु।

विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

डॉ० आनन्द प्रकाश दीक्षित

"रीतिकाल एव आधुनिककाल की सधि रेखा के कवि राव गुलाबसिंह बहुमुखी प्रतिभा के धनी कवि थ। वे एक साथ ही राज्याश्रित कवि भी थे और मुक्त भक्तभी, टीकाकार भी अनुवादक भी शास्त्रकता आचाय भी और रीतिसिद्ध सहृदय कवि भी। उनकी प्रतिमा केवल कविता के क्षेत्र तक ही सीमित न थी, गोण साहित्य के निमाण म भी उनकी अच्छी गति थी। बहुभाषाविद ता वे थे ही, सस्कृत और हि दी व्रजभाषा पर उनका विशेष अधिकार भी था। इन सभी क्षत्रा मे उनकी प्रतिभा का सचार होता रहा इसके प्रमाण स्वरूप उनके अनेक ग्रथ हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के ग्रथालय में सगहीत हैं प्रकाशित और अप्रकाशित रूप म उप लब्ध हैं। सूरति मिश्र और हरिचरण दास के ग्रन्थो के पाठसम्पादन पर काम करत समय ग्र थो के विनिमय के समय कुछ वष पूव अनेक ग्र या पर भी मेरी दृष्टि गयी थी। उन दोना कवि आचार्यों के समान ही इनकी प्रतिमा का विस्तार मुझे प्रभावित कर गया और मन म खेद बना रहा कि अभी तक हि दी साहित्य के इतिहास और विरचना ग्र थ उनकी रचनाओ का विस्तत तो क्या अतिसामा य सा परिचय भी प्राय नही दे पाये हैं। मुझे प्रसन्नता है कि प्रा० श्री० र० वा० बिवलकर ने मेरे सकेत पर राव गुलाबसिंह और उनके साहित्य का शोधात्मक अनुशीलन करना स्वी कार किया। उसी के परिणाम स्वरूप उनका यह काय आज प्रकाशित होने की स्थिति म है।

डॉ० बिवलकर न बड अध्यवसाय और पूरी लगन से इस काय को पूरा किया है। उन्होंने इस प्रसग मे अनेक सम्बन्धित स्थला की यात्रा करके लेखक की जीवनी सम्ब धी सामग्री एव उनकी रचनाएँ एकत्र की। वे जितना ही आग बढ़ते गय राव गुलाबसिंह के कत त्व क उतन ही नये आयाम उद्घटित होने गये। डॉ० बिवलकर ने उन सभी दिशाओ में अपन अध्ययन को मूलगामी बनाने का सजग प्रयत्न जारी रखा और पूववर्ती तथा परवर्ती हिन्दी साहित्य क बीच आलोच्य की सही स्थिति का रेखा जोखा लेने में उन्होंने न तो अपनी तत्परता म ही कमी आन दी न शोध कर्ता से अपेक्षित तटस्थता म ही। उन्होंने सभी दृष्टियो स राव गुलाबसिंह के कतृ त्व की विशेषताओ को रेखांकित करने का प्रयत्न किया है। यदि ग्रथ की कलेवर सीमा उन्हें बाध्य न करती तो उनकी शास्त्रीय रचनाओ का पक्ति-प्रतिपक्ति अनु शीलन एव मूल्यांकन करने म भी न हिचकते। अब यह काम या तो स्वय उनके द्वारा अथवा किसी भी अन्य शोधकता के द्वारा स्वतन्त्र रूप स किया जा सकता है। विशेषत उनके आचायत्व का मूल्यांकन इस दृष्टि से अवश्य होना चाहिए।

यह अब कहना आवश्यक नहीं है कि पहलकर्ता होन के कारण डॉ० बिव लकर को इस संदभ म मौलिक विवेचन करने का श्रेय भी जाता है। मुझे विश्वास

है कि साहित्यानुरागी विद्वज्जनो के द्वारा उनकी इस कृति का सही मूल्य आँका जायगा और उसे अपरिमित महत्व प्राप्त होगा। डॉ० विवल्कर से मुझे बडी आशाएँ है। मेरा विश्वास है कि वे कालान्तर में अन्य महत्वपूर्ण कृतियाँ लेकर प्रस्तुत होंगे। और हिन्दी साहित्य की अवनत सेवा करेंगे। मैं उनकी सफलता की कामना करता हूँ।"

डा० आनन्द प्रकाश दीक्षित
आचार्य एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
पुणे विद्यापीठ पुणे–७

डॉ० रामनिरंजन पाण्डेय

"प्रा० डा० र० बा० विवल्कर ने राव गुलाब सिंह और उनका हिन्दी साहित्य योजना पर अनुसन्धान करके बडा स्तुत्य कार्य किया है रीतिकाल एवं आधुनिक काल की सन्धि में वर्तमान सरस्वती का यह उपासक हिन्दी साहित्य के इतिहास में एक महत्वपूर्ण कड़ी के स्थान पर अपनी सारस्वतिक साधना में लीन था। सन १८३० और १९९१ के बीच का यह सन्धिकाल हिन्दी साहित्य के इतिहास का बडा महत्वपूर्ण खण्ड था। उस युग में तारे कू के समान प्रतिभा में अपने आलोक से हिन्दी साहित्य के आकाश को अलोकित किया था। आचार्य एवं कवि का समानान्तर योग्यता से सम्पन्न राव गुलाब सिंह पर प्रकाश क्षेपण की आवश्यकता थी। इस कृष्ण भक्त आचार्य की सरस एवं विवर्ष पूर्ण सरस्वती सेवा अनुकरणीय थी। बूँदी दरबार में मन्त्री के जीवन की व्यस्तता की सकुलता में से राव गुलाबसिंह ने सरस्वती की सेवा के लिये इतना समय निकाला यह अत्यन्त प्रेरणा दायिनी मानव प्रवृत्ति थी। छन्द प्रभाकर इत्यादि ग्रन्थों के रचनाकार भानु' जी भी लगभग उसी युग के ठीक इसी प्रकार के साधक थे।

बूँदी नरेश के दरबार का हिन्दी सेवा का इतिहास जब लिखा जायगा तब प्रा० डा० र० बा० विवल्कर जी का यह शोध ग्रन्थ आकर ग्रन्थ के समान सहायक सिद्ध होगा। हिन्दी साहित्य के इतिहास की एक महत्वपूर्ण कड़ी पर व्यापक प्रकाश डाल कर इन्होंने हिन्दी साहित्य के इतिहास के अध्येताओं का बडा उपकार किया है। मुझे पूरा विश्वास है कि डॉ० कृष्ण दिवाकर अपने ऐसे प्रतिभाशाली एवं परिश्रमी शोध छात्रों से भविष्य में भी इसी प्रकार के महत्वपूर्ण अनुसन्धान कार्य कराते रहेंगे। डॉ० आनन्द प्रकाश जी दीक्षित एवं उनके सहयोगी डा० कृष्ण दिवा

कर का एम महत्वपूण अनुम धान कार्यों को आयोजित करने के लिये मैं हृदय म साधुवाद ्ता हूं। ऐसे कार्यों से हि दी साहित्य क इतिहास का अपार एव अलगनात धलवर प्रकाश मे आयगा।

डा० बिवलकर को इस सु दर शोध काय के लिये हार्दिक साधुवाद एव बधाई।

डा० रामनिरजन पाडेय
भूतपूव आचाय एव अध्यक्ष
हि दी विभाग उस्मानिया विश्वविद्यालय
हैदराबाद-आंध्रप्रदेश

डॉ० बच्चन सिंह

"मैंने डा० र० वा० बिवलकर का शोध प्रब ध राव गुलाबसिंह और उनका हि दी साहित्य आद्यत पढा है। अभी हि दी साहित्य क बहुत स अज्ञात कवियों की खोज बाकी है। डा० बिवलकर न अत्य त परिश्रम पूवक इस नए कवि को खोज निकाला है। ऐस नए कवि के कारण इतिहास लेखन म नया मोड आता है। इस सन्दभ में डा० बिवलकर का प्रयास अत्य त प्रशसनीय है।

डा० बच्चनसिंह
आचाय एव अध्यक्ष हि दी विभाग
हिमाचल प्रदश विश्वविद्यालय शिमला

डॉ० विजय पाल सिंह

"मैंने डा० र० वा० बिवलकर जी का प्रब ध को आद्यत पढा है। इस ग्रथ म इ हान साहित्य रसिको क समक्ष एक समय प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार की पुन प्रतिष्ठा की है मुझे बडा प्रसन्नता है कि सुदूर महाराष्ट्र म रह कर भी डा० बिव लकर ने एसा मौलिक शोध काय किया है जिससे शोध की मा यता ही सिद्ध होता है। मैं आशा करता हू कि रीति काव्य क समय समालोचक विद्वज्जनो द्वारा उक्त काय का यथोचित मूल्याकन किया जाएगा।

शुभ कामनाओ सहित

डा० विजयपाल सिंह
एम० ए० पी० एच० डी०
आचाय एव अध्यक्ष, हि दी विभाग
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

प्रस्तावना

हि ेा गाहित्य के इतिहास म मध्ययुगीन काव्य का महत्त्वपूण एव विनिष्ट स्थान है। इस युग के कवि एव उनकी कृतिया हि-ी साहित्य के अ तगत अपनी प्रतिष्ठा के साथ सम्मानित हैं विवचन की सुविधा क लिए यद्यपि इतिहासकारो न इस कालखण्ड का भक्ति और रीति के आधार पर विभक्त किया है तथापि समग्र मध्ययुग के साहित्य का सूक्ष्म अध्ययन करन स स्पष्ट हाता है कि य दाना प्रवत्तियां समस्त युग म न्यूनाधिक रूप म उपल-ध हाती हैं। भक्तिकालीन कविया के साहित्य म जहा एक थार भक्ति के अतिरिक्त नायिका भद, नख शिख वणन, अलकरण वत्ति, ऋतु सा ाय आदि के दशन होन है वहाँ दूसरी ओर रीतिकालीन कविया म भी रीति परम्परा के अतिरिक्त नीति, भक्ति, दशन वीरता आदि भावो के भी उत्कृष्ट रूप में उपल-ध होन हैं। अनुसधान म जा नई सामग्रियाँ उपल ध हुई हैं और हो रही हैं। उनमे हि दी साहित्य के इतिहास की परम्परागत मा यताओ पर पुनर्वि चार करना आवश्यक प्रतीत होन लगा है। हि दी साहित्य का मध्ययुग रूपगत तथा विषयगत विविधताओं का अभूतपूव सम वय अपन समस्त वभव के साथ समुपस्थित कर ता है। भारतीय सस्कृति क उदगीय क रूप म मध्ययुग की प्रमुख साहित्य-कृतियाँ आज भी वन्दनीय हैं। मध्ययुग की इस सुदृढ समद्ध एव समवित परम्परा का प्रभाव आधुनिक युग के प्रारम्भिक चरणा म विशेष दष्टिगत होता है जो स्वा भाविक भी है।

मध्ययुग और आधुनिक युग की सक्रमणावस्था क बीच ऐसे अनक साहित्य कार अलक्षित रूप म रह गए हैं जिनके नामा का उल्लख मात्र यदा कदा प्राप्त हो जाता है। उन ग्रथकारो के समस्त साहित्य का सम्यक अध्ययन तथा मूल्याकन न होन क परिणामस्वरूप अनक प्रतिभासम्पन्न एव महत्त्वपूण लेखक साहित्य जगत म अपना उचित स्थान न पा सके। राव गुलाबसिंह ऐसे ही अल्पज्ञात एव उपेक्षित लेखको म स एक बहुमुखी एव श्रेष्ठ लेखक हैं। समकालीन राजदरबार, समाज तथा साहित्य जगत म उनका जो सम्मान था। वह स्वत उनकी महत्ता का परिचायक

है । उनके जीवनकाल म कवल उनके कतिपय ग्रथ प्रकाशित ही नही हुए थे । अपितु मु शी दवीप्रसाद जस विद्वानो द्वारा वे सभादत भी हुए थ । अत इतन विख्यात ग्रथ कर्ता का समुचित परिचय तक सुलभ न होना आश्चय की ही बात है ।

राव गुलाबसिंह का व्यक्तित्व राजस्थान क बूँदी, अलवर, करौली, रीवा आदि राजदरबारो स सम्बद्ध रहा पर भी पूणत स्वतत्र था । राजकाज के नमित्तिक तथा पेचीद काय का सतुलित ढग स सम्भालत हुए स्वा त सुखाय, शारस्वत की आराधना करना कवि का स्वभाव था । उनमे एक ओर राजस्थान की परम्परा गत पराक्रमी वीरश्री वभव के साथ विद्यमान थी तो दूसरी आर राजनीतिक तथा प्रशासनिक कायभार को सभालने की क्षमता भी थी । जीवन कम की सफलता स निर्वाह करते हुए उ होन परमाथ अथात भक्ति की मनायोग से साधना भी की थी और रीति परम्परा क अनुसार नायिका भेद अलकार तथा का य क अगोपागो का शास्त्रीय विवचन भी प्रस्तुत किया था । राव गुलाबसिंह की प्रतिभा केवल काव्य तक ही सीमित नही रही अपितु नीति टीका अनुवाद, भाष्य, कोष आदि के सजन म भी उ होने आशातीत सफलता प्राप्त की ।

इस प्रकार राव गुलाबसिंह के प्रकाशित एव अप्रकाशित ग्रथो की विपुल सख्या वण्य विषयो का विविधता प्रतिपादन शली की सुगमता, निष्पयो की समद्धता का य रचना का उदात्त उद्देश्य आदि को दखकर कवि की श्रेष्ठता स्वत सिद्ध हो जाती है । उनके यक्तित्व म तथा साहित्य मे कम और भक्ति प्रशासन और साहित्य पराक्रम और उदारता सिद्धा त और यवहार आदि अनेक बाता का उत्कृष्ट सम वय दष्टिगत होता है । मध्यकालीन महत्वपूण कवियो की श्रेणी म राव गुलाबसिंह जी का स्थान निश्चित ही सिद्ध होता है कि तु सक्रमणकालीन कवि होन के कारण विपुल ग्रथराशि असाधारण प्रतिभा एव पाडित्य क होन पर भी उनके प्रति न इतिहासकारो न पूणत याय किया और न समीक्षको ने ही स्वस्थ दष्टिकोण स उनके प्रति दखा । परिणामत अत्य त स क्षेप मे उनका उल्लख मात्र किया गया है । अत राव गुलाबसिंह जसे सक्रमणकालीन महत्वपूण लखक का सम्यक अ ययन अत्य त आवश्यक था ।

चि तामणि ग्र थावली के सम्पादन के स दभ म एसे अनक कवि मर दष्टि पथ म आए हैं जिनका शोधपरक अध्ययन प्रस्तुत करना आवश्यक है । साहित्य सम्मलन प्रयाग की वहत ग्रथसूची मे मैंने राव गुलाबसिंह क नाम पर अनक ग्र थ अवश्य देखे थ पर तु पी एच० डी० उपाधि के लिए उनक शोधपरक अ ययन की सवप्रथम कल्पना डा० आन द प्रकाश दीक्षित जी स ही मुझे मिली । यह काय सम्पन्न करन के लिए एसे ही किसी प्रौढमति छात्र की आवश्यकता थी जो धय, साहस तथा अपनी चि तनशीलता के साथ उसे पूरा कर सके । इसी बीच प्रा० र०

डा० बिवलकर मुझसे मिले और उन्होंने विशेषता किसी अज्ञात अथवा अल्पज्ञात समय कवि व तथा उसकी साहित्य कृति के विषय में अनुसंधान करने की अपनी पुन पुन प्रकट की। उनसे पूर्व उन्हीं के ज्येष्ठ मित्र डॉ० म० वि० गोविलकर ने 'रसिकसुन्दर और उनका हिन्दी काव्य' पर अथक परिश्रम से अपना शोध प्रबन्ध पूर्ण कर उसमें सफलता प्राप्त की थी। शोध कार्य करते समय डॉ० गोविलकर जी को कितनी कठिनाइयों तथा परिश्रमों का सामना करना पड़ा था, यह उन्होंने देखा था। साथ ही साथ इन कठिनाइयों के बावजूद भी उपलब्ध प्रसन्नता का भी व अनुभव कर चुके थे। अत हस्तलिखित ग्रंथों पर आधारित अज्ञात कवि के अध्ययन के कठिन एव प्रखर मार्ग को उन्होंने हुनुत स्वीकार किया था।

अपने अनुसंधान कार्यकाल में प्रो० बिवलकर को मैंने कभी भी निराश रूप में नहीं देखा। वे स्वय प्राध्यापन के अतिरिक्त अनेक सामाजिक कार्यों में व्यस्त रहते हैं। उन सबका निर्वाह करते हुए बचे हुए समय का उपयोग वे अपने अध्ययन करते थे। उनकी सबसे बड़ी विशेषता है। योजनाबद्ध कार्य। अत्यन्त व्यवस्थित एव दूरदर्शिता के साथ काम करना उनका स्वभाव है। सम्बन्धित ग्रंथालयों तथा विद्वानों से पत्र द्वारा संपर्क स्थापित करना, आवश्यकतानुसार उनसे प्रत्यक्ष साक्षात्कार करना और अपने अध्ययन के अनुकूल सामग्री प्राप्त करना आदि कार्य उन्होंने समय समय पर मुझसे परामर्श लेकर अत्यन्त सफलता के साथ पूर्ण किए। जोधपुर बीकानेर, बूँदी, अलवर, इलाहाबाद, वाराणसी आदि के ग्रंथालयों में उपलब्ध हस्तलिखित तथा दुर्लभ प्रकाशित ग्रंथों का अध्ययन उन्होंने सम्बन्धित स्थानों में जाकर किया। आवश्यकतानुसार महत्वपूर्ण ग्रंथों के छायाचित्र भी उपलब्ध किए। राव गुलाबसिंह के विद्यमान वंशज तथा उनके पौत्र श्री राव मुकुन्द सिंह से मिलकर ऐसी भी सामग्री उन्होंने प्राप्त की जो अन्यत्र दुर्लभ थी। इस प्रकार प्रो० बिवलकर जी ने राव गुलाबसिंह जी के जीवनवृत्त तथा साहित्यिक कृतियों से प्रामाणिक एव सम्यक् अध्ययन प्रस्तुत करने के लिए अन्त साक्ष्य तथा बहि साक्ष्य सामग्रियों को अत्यधिक परिश्रम से प्राप्त किया। प्रस्तुत ग्रन्थ उनके अथक परिश्रम, कार्य के प्रति लगन, अनुसंधान की निष्ठा एव संतुलित विवेचन क्षमता का ही सुन्दर परिणाम है।

यह प्रबन्ध मेरे ही निर्देशन में लिखा गया है अत उसके विभिन्न पक्षों के विषय में स्वतन्त्र लिखने की आवश्यकता नहीं है। समस्त अवधारणायें एव मान्यतायें अत्यन्त संतुलित तटस्थ विचारपूर्वक एव प्रमाण सहित प्रस्तुत की गई हैं। विस्तार भय के कारण आलोच्य कवि के कतिपय पक्षों का विस्तृत विवेचन हेतुत नहीं किया गया है। परन्तु उससे कवि के मूल्यांकन में किसी प्रकार की कमी नहीं आ पाई है। आशा है कि इन पक्षों का विस्तृत विवेचन उनके द्वारा शीघ्र ही अन्यत्र

भूमिका

हिंदी साहित्य के अनुसंधान का क्षेत्र आज हिन्दी भाषी प्रदेश तक ही सीमित नहीं है अपितु अहिंदी भाषी प्रदेशों में भी विस्तारित हुआ है। अनुसंधान में ऐसी नई सामग्रियाँ उपलब्ध हो रही हैं, जिसके कारण हिन्दी साहित्य की परम्परागत मान्यताओं में परिवर्तन की आवश्यकता प्रतीत होने लगी है। इस दिशा में प्रतिष्ठा प्राप्त समीक्षक एवं सत्यान्वेषी अनुसंधान कर्ताओं द्वारा कुछ काम हुआ है और कुछ हो रहा है। शोध सामग्री में ऐसे अनेक अज्ञात एवं अल्पज्ञात कवियों का साहित्य उपलब्ध हुआ है जिसके कारण हिंदी साहित्य के इतिहास में न केवल श्रीवृद्धि होने लगी अपितु उसे नई दिशा भी प्राप्त हुई है।

रीति काल एवं आधुनिक काल की संधिरेखा के काल में कई कवि ऐसे हैं जिनके ग्रंथ अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण हैं। इन ग्रंथों में से कई सहजता से उपलब्ध हैं, तो कई ग्रंथ दुर्लभ एवं कठिनता से प्राप्त हो जाते हैं। ग्रंथों की दुर्लभता, उस पर लिखित समीक्षा का सर्वथा अभाव, परिश्रम साध्यता आदि अनेक कारणों से इन ग्रंथों का सर्वांगपूर्ण एवं सम्यक अध्ययन नहीं हो सका जिसके परिणाम स्वरूप स्वभावतः सन्दर्भित काल खंड का अध्ययन भी एक दृष्टि से परिपूर्ण नहीं कहा जा सकेगा।

हिंदी साहित्य के अज्ञात अल्पज्ञात साहित्यकारों को प्रकाश में लाकर उसका शोध परक सम्यक अध्ययन प्रस्तुत करने की इच्छा मेरे मन में कई दिनों से थी। एक दिन अपनी इच्छा को मैंने आदरणीय डा० कृष्ण दिवाकर के सम्मुख व्यक्त किया। मेरी प्रार्थना को ध्यान में रखते हुए उन्होंने तथा आदरणीय डा० आनंदप्रकाश दीक्षित, अध्यक्ष हिंदी विभाग पूना विश्वविद्यालय ने पारस्परिक विचार विमर्श के पश्चात हिंदी साहित्य के अल्पज्ञात साहित्यकार "राव गुलाब सिंह और उनका हिन्दी साहित्य' विषय मेरे लिए निश्चित किया।

इस शोध की दिशा में हिंदी साहित्य के लगभग सभी इतिहासों का मैंने अध्ययन किया और आश्चर्य इस बात का रहा कि अधिकांश इतिहास ग्रंथों में राव गुलाबसिंह जैसे समर्थ आचार्य एवं कवि का उल्लेख भी नहीं मिला। कतिपय ग्रंथों में प्रसंगत उल्लेख मात्र प्राप्त है। समकालीन चरित्र लेखकों के ग्रंथों में और उन्हीं के आधार पर दो एक इतिहास ग्रंथों में कवि का जीवन चरित्र एवं साहि

ग्य ग्रथा का परिचयात्मक निर्देश सक्षेप म प्राप्त होता है ।

विभिन्न सूत्रो स यह ज्ञात होता है कि राव गुलाबसिंह एक प्रतिभा सपन्न साहित्यकार थे और वे अपने समय म बहुत ही सम्मानित थे । उन्होने विभिन्न विषया पर अनक ग्रथा की रचना की थी । उनम से कुछ ग्रथ कवि के जीवन काल म प्रकाशित भी हुए थे । अत सवत १८८७ वि० और सवत १९५८ वि० के बीच विद्यमान इस महत्वपूर्ण किन्तु अपनात आचार्य एव कवि के जीवन चरित्र एव ग्रन्थ सपदा के सम्यक अनुशीलन का प्रयास इस शोध प्रबन्ध में किया गया है । यह शोध प्रबन्ध आठ अध्याया म विभक्त है ।

प्रथम अध्याय म युगीन पृष्ठभूमि को प्रस्तुत किया गया है इसम राजनीतिक आर्थिक धार्मिक सामाजिक सास्कृतिक एव साहित्यिक परिवेश क आलोक म यह देखन का प्रयास किया गया है कि राव गुलाबसिंह जी की मिलन धारा पर उसका कहाँ तक प्रभाव पडा है ।

द्वितीय अध्याय म अन्त साक्ष्य एव बहिसाक्ष्य सामग्री के आधार पर राव गुलाबसिंह जी क जीवन चरित्र को प्रस्तुत किया गया है । इसके अन्तगत उनका जन्म एव स्वगवास जन्मस्थान जाति वश एव वशपरम्परा उनका नाम उनके गुरू शिक्षा दीक्षा आश्रयदाता एव सम्मान प्रशासनिक योग्यता एव सामाजिक बोध, देशाटन, निवासस्थान छायाचित्र स्वभाव विशेषतायें अध्यापन एव शिष्य परम्परा तथा व्यक्तित्व आदि का विवचन किया गया है ।

ततीय अध्याय म राव गुलाबसिंह जी की साहित्यिक कृतियो का परिचयात्मक विवेचन प्रस्तुत किया गया है । विभिन्न स्रोतो स प्राप्त सूचना क आधार पर राव गुलाबसिंह जी के ग्रन्थो की सख्या लगभग पतीस हो जाती है । इन ग्रन्थो म स कुछ ग्रन्थ हस्तलिखित तथा कुछ प्रकाशित रूप म प्राप्त होत हैं । अधिकाश प्रकाशित ग्रथ भी दुलभ हैं । अत इन ग्रन्थो की खोज क हतु इलाहाबाद बनारस बूँदी, जोधपुर आदि विभिन्न स्थानो क हस्तलिखित सग्रहालयों पुस्तकालया तथा व्यक्तिगत सग्रहो से अत्यधिक प्रयत्न करत पर भी केवल चौबीस ग्रन्थ प्राप्त हो सके हैं । उपलब्ध ग्रन्था क प्राप्तिस्थान उनकी प्रामाणिकता एव वर्गीकरण आदि का विचार भी इसम किया गया है ।

चतुर्थ अध्याय म राव गुलाबसिंह जी क रीति ग्रन्था का सैद्धान्तिक पक्ष एव आचार्यत्व पर विचार प्रस्तुत किया गया है । इसम नायिका भेद, नायक सखा सखी दूत-दूती निस नख, षड्ऋतु वर्णन, स्थायी भाव विभाव, अनुभाव हाव व्यभिचारी भाव रस, रीति ध्वनि गुण दोष लोपोद्धार, अलकार काव्य लक्षण काव्य प्रयोजन, काव्य कारण काव्य प्रकार शब्द शक्ति छन्द, प्रभाव एव आचार्यत्व का विवेचन किया गया है ।

पंचम अध्याय में राव गुलाबसिंह जी के ग्रंथों में अभिव्यक्त एवं दर्शन विषयक धारणाओं तथा उनके स्वरूप को सोदाहरण स्पष्ट किया गया है। राव गुलाबसिंह जी के भक्ति ग्रंथों में वैधी एवं रागानुगा भक्ति के विभिन्न रूप प्राप्त होते हैं। कृष्ण चरित में राधाकृष्ण का युगल रूप चित्रित है। इस रूप के गान में कवि तन्मय हैं। राव गुलाबसिंह जी कृष्ण भक्ति के किसी विशिष्ट सम्प्रदाय में दीक्षित भक्त नहीं हैं। अतः उनकी भक्ति का रूप सम्प्रदायों की मर्यादा से मुक्त है।

षष्ठ अध्याय में राव गुलाबसिंह जी के प्रकीर्ण साहित्य का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। भक्ति एवं रीति कालीन नीति काव्य के सन्दर्भ में उनके नीति ग्रन्थ "नीति चन्द्र' एवं "नीति मंजरी" तथा 'कृष्ण चरित' में अभिव्यक्त प्रासंगिक नीति विचारों के आधार पर नीतिकार के रूप में उनकी परीक्षा की गई है। टीकाकार के गुण विशेषों का विचार करते हुए उनके द्वारा रचित भाषा भूषण की टीका 'भूषण चन्द्रिका' एवं 'ललित ललाम" की टीका ललित कौमुदी' के आधार पर टीकाकार के रूप में उनकी योग्यता का परिचय दिया गया है। अनुवाद कर्ता के रूप में उनकी सक्षमता का विवेचन किया है। मध्य युगीन कोश साहित्य के सन्दर्भ में उनके कोश ग्रंथ "गुलाब कोश" एवं नामसिंधु कोश' के आधार पर कोशकार के रूप में उनका मूल्यांकन करते हुए उनकी बहुमुखी प्रतिभा को उद्घाटित किया गया है।

सप्तम अध्याय में राव गुलाब सिंह जी की कृतियों का साहित्यिक मूल्यांकन किया गया है जिसके अंतर्गत रस, ध्वनि अलंकार रीति एवं वक्रोक्ति छंद एवं भाषा आदि की सोदाहरण समीक्षा की गई है। इस प्रकार राव गुलाबसिंह जी के काव्य में प्राप्त भाव सौंदर्य एवं कला सौंदर्य का परिचय दिया गया है।

अष्टम अध्याय में राव गुलाबसिंह जी की कविता पर पूर्ववर्ती प्रमुख कवियों का प्रभाव एवं राव गुलाबसिंह जी की मौलिकता पर विचार प्रस्तुत किया गया है।

उपसंहार के अंतर्गत प्रबंध में प्रस्तुत किए गए समग्र अध्ययन के आधार पर राव गुलाबसिंह जी के योगदान को स्पष्ट किया गया है।

इस प्रकार प्रस्तुत प्रबंध में रीतिकाल एवं आधुनिक काल की संधि रेखा के कवि राव गुलाबसिंह जी के जीवन एवं साहित्य का मौलिक अध्ययन प्रथम बार प्रस्तुत किया गया है।

इस कार्य में हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के हस्तलिखित ग्रंथागार एवं पुस्तकालय का सर्वाधिक लाभ मैंने उठाया है। सम्मेलन के पदाधिकारियों ने अध्ययन एवं निवास की समस्त सुविधाएं मुझे उपलब्ध करा दी थीं। राजस्थान

प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर के हस्तलिखित संग्रह से कवि के ग्रंथों की प्रतिलिपि अध्ययनार्थ प्राप्त हुई। सार्वजनिक पुस्तकालय बूंदी के संग्रह में भी एक हस्तलिखित ग्रंथ उपलब्ध हुआ। नागरी प्रचारिणी सभा काशी, कारमायकल लायब्रेरी बनारस एवं भारती भवन पुस्तकालय इलाहाबाद में कवि के दुर्लभ ग्रंथ अध्ययनार्थ प्राप्त हुए। नागरी प्रचारिणी सभा काशी के अधिकारियों ने निवास की सुविधा भी प्राप्त करा दी थी। बूंदी में राव गुलाबसिंह के पौत्र राव मुकुन्दसिंह जी ने जीवन चरित्र विषयक जानकारी, हस्तलिखित एवं प्रकाशित ग्रंथ मुझे अध्ययनार्थ देकर बूंदी में मेरा आतिथ्य कर मुझे आत्मीय बना लिया है। पंचवटी नासिक के मेरे पितृतुल्य वेदशास्त्र संपन्न शंकर लक्ष्मणशास्त्री गर्ग ने अपने व्यक्तिगत संग्रह से ब्रह्मवैवर्त पुराण का कृष्ण जन्म खंड एवं गर्ग संहिता मुझे अध्ययनार्थ उपलब्ध करा दी थी। इन सभी के प्रति मैं हृदय से आभारी हूँ। राव मुकुन्दसिंह जी बूंदी एवं वेदशास्त्र संपन्न शंकर लक्ष्मण शास्त्री गर्ग जी का ऋण तो शब्दातीत है।

इनके अतिरिक्त अनेक प्रकाशित संदर्भ ग्रंथों से मैंने सन्दर्भ ग्रहण कर सहायता ली है जिनके निर्देश प्रबंध में यथास्थान किए गए हैं। उन समस्त ग्रंथकर्ता लेखकों का मैं आभारी हूँ। ये ग्रंथ लेखक को जिन ग्रंथ संग्रहालयों से प्राप्त हुए हैं वे इस प्रकार हैं। जयकर ग्रंथालय पुणे विश्वविद्यालय पुणे महाराष्ट्र राष्ट्रभाषा सभा केन्द्रीय ग्रंथालय पुणे, जिला ग्रंथालय नासिक भांडारकर प्राच्य विद्या संशोधन केन्द्र पुणे डेक्कन कालिज, पुणे हम्पाठा कालिज नासिक रा० न० चांडक आर्ट्स ज० डा० बिटको वाणिज्य एवं न० गो० चापेकर विज्ञान महाविद्यालय नासिक रोड इन ग्रंथालयों के ग्रंथपाल एवं सहायकों से जो सहयोग मिला है उसके लिए उनके प्रति आभार व्यक्त करना मेरा कर्तव्य ही है।

डा० आनन्दप्रकाश दीक्षित अध्यक्ष हिन्दी विभाग पूना विश्वविद्यालय पूना ने अतीव आत्मीयता से मेरे कार्य को समय समय पर विचारणा कर मुझे सतत प्रोत्साहित किया है जिसके लिए मैं उनका विशेष रूप से ऋणी हूँ। हिन्दी विभाग के डा० ना० वि० जोगलेकर भी मेरे शोध कार्य में रुचि लेते रहे हैं। उनकी आत्मीयता के लिए उनका आभारी हूँ।

नासिक रोड महाविद्यालय के भूतपूर्व प्राचार्य प्र० ना० राजदरकर मेरे इस कार्य में पितृवत स्नेह से प्रोत्साहित करते रहे हैं। नासिक रोड महाविद्यालय के विद्यमान प्राचार्य श्री० वा० पंडित से भी मैं सहायता एवं प्रोत्साहन पाता रहा हूँ। उन दोनों के प्रति आभार व्यक्त करना मेरा कर्तव्य ही है।

इस शोध कार्य में डा० कृष्ण दिवाकर जी का प्रखर प्रोत्साहन स्नेहपूर्ण निर्देशन मेरा परम सौभाग्य है। मेरे लिए उन्होंने अतीव कष्ट उठाए हैं। अपने

गम्भीर व्यासंग एवं विद्वत्ता का लाभ मुझे उठाने दिया है। इस कार्य का वास्तव श्रेय उन्हीं का है मैं निमित्त मात्र हूँ।

पूर्णे विश्वविद्यालय के अधिकारियों ने शोध ग्रन्थ प्रकाशित करने की अनुज्ञा दी है। अतः मैं उनका आभारी हूँ।

गाबल राज्यकेशन सोसाइटी ने मुझे ग्रन्थ प्रकाशन सहायता के रूप में बिना सूद के रु० १५००) ऋण तथा रु० १०००) प्रकाशनोत्तर अनुदान के रूप में देना स्वीकार किया है। सोसायटी के विद्यानुरागी पदाधिकारियों विशेष रूप से सोसायटी के सेक्रेटरी प्राचार्य डा० मा० स० गोसावी का मैं ऋणी हूँ।

'मेरे ग्रन्थ के विषय में अपनी सम्मति देकर रीति साहित्य के समर्थ अभ्यासक एवं अधिकारी परम आदरणीय आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, बनारस, डा० आनन्द प्रकाश दीक्षित आचार्य एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग पूर्णे विद्यापीठ, पूर्णे, डा० रामनिरंजन पाण्डेय भूतपूर्व आचार्य एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग उस्मानिया विश्वविद्यालय हैदराबाद डा० विजयपाल सिंह, आचार्य एवं अध्यक्ष हिन्दी विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय बनारस डा० बच्चन सिंह आचार्य एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला ने मुझे विशेष रूप से अनुगृहीत किया है। मैं इन विद्वज्जनों के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

आदरणीय गुरुवर्य डा० दिवाकरजी ने मेरा मार्ग दर्शन तो किया ही है, प्रस्तावना भी लिखने की कृपा की है। उनके प्रति मेरी श्रद्धा एवं कृतज्ञता को शब्दों में प्रकट करना मेरे लिए संभव नहीं है।

कानपुर के नवोदित प्रकाशन 'अभिलाषा प्रकाशन' के श्री रामेंद्र तिवारी जी ने शोध ग्रन्थ के प्रकाशन का भार तत्परता एवं आत्मीयता के साथ उठाया है। नासिक रोड जैसे महाराष्ट्र के सुदूर नगर में बैठकर मुद्रण शोधन मेरे वश की बात नहीं थी, उसका भी यथोचित प्रबन्ध उन्होंने कर दिया है। अतः मैं हृदय से उनका ऋणी हूँ।

र० बा० विवलकर
आचार्य एवं अध्यक्ष, हिन्दी विभाग
रा० न० चांडक कला, ज० डा० बिटको वाणिज्य
तथा न० च० चांडक, विज्ञान महाविद्यालय
नासिक रोड, महाराष्ट्र-४२२१०१

अनुक्रमणिका

१ | युगीन पृष्ठभूमि एव राव गुलाबसिंह

किसी भी साहित्यकार की रचनाओं का मूल्याकन करन से पूव उसके परिवेश एव युगीन पष्ठभूमि पर विचार करना नितात आवश्यक होता है। साहित्यकार अत्यन्त सवेदनशील होता है। अपने परिवेश एव युगीन वातावरण से वह प्रेरणा प्राप्त करता है। अत युगीन पष्ठभूमि के आधार पर साहित्य का विवेचन करन से ही विवच्य साहित्यकार तथा उसके साहित्य के साथ उचित याय किया जा सकता है।

राव गुलाब सिंह जी का कालखण्ड हिदी-साहित्य के इतिहास की दृष्टि से रीतिकाल एव आधुनिककाल की सधि रेखा मे स्थित है। अत उन्नीसवी शताब्दी की युगीन पष्ठभूमि का विचार करना औचित्य पूण होगा।

राजनीतिक

उत्तर भारत म मुगल साम्राज्य की नीव सम्राट अकबर ने डाली और उसके उत्तराधिकारी जहागीर एव शाहजहा न अपन शासन कालो मे उसे उन्नति की दिशा म अग्रसर किया था। औरगजेब के शासनकाल मे ही मुगल सत्ता की अवनति का आरम्भ हो चुका था। औरगजेब के पश्चात ५० वर्षों तक यह अवनति की प्रक्रिया अविरत रूप स चलती रही। उत्तराधिकारियो की असमथता के कारण सूबदार, नवाब सूबा क स्वतत्र शासक बन बठे। दिल्ली के शासन को कर की निर्धारित रकम न पहुँचाकर व अपनी मर्जी स रकम देन लग। अवनति के गत मे जान वाली इस सत्ता को अपनी मुट्ठी म करन का प्रयास मराठों, सिखो एव जाटो ने किया था।

सन १७५७ ईसवी म बगाल के नवाब सिराजउद्दौला को क्लाईव के नतृत्व म ईस्ट इडिया कम्पनी की फौजो न परास्त कर बगाल म इस्ट इडिया कम्पनी का चचु प्रवेश हा नही कराया अपितु भारत म अग्रजी राज की मजबूत नींव डाली[1]। मुगल सम्राट शाह आलम भी सन् १७६४ ई० की बक्सर की लडाई में हार चुका था। सन् १७६५ ई० म कडा के युद्ध म उसकी रही सही शक्ति भी समाप्त हुई। अग्रेजो के साथ सधि की शर्तो म बँधकर उसने बगाल, बिहार एव

१ भारत का राजनीतिक इतिहास–राजकुमार द्वितीय सस्करण, पृष्ठ ३२।

उड़ीसा की दीवानी उन्हें सुपुर्द की।[1]

सिख एव जाटो की तुलना म मराठो का प्रभाव उत्तरी भारत म अधिक था। पानीपत की लडाई म ही उनके पैर उखडने शुरु हुए थे। आपसी सघर्ष एव फट के कारण उनकी शक्ति क्षीण होती गई थी। सन १८१८ ई० म अग्रेजो से वे पराभूत हुए और उनकी सत्ता का अस्त हुआ।[2] मराठो की सत्ता के अस्त के बाद भरतपुर के जाट पराभूत हुए। द्वितीय सिग युद्ध मे सिक्खो की पराजय हो जाने से और अवध को भी अग्रेजो के राज्य मे शामिल कराने के बाद समूचे उत्तरी भारत म ईस्ट इडिया कम्पनी का अधिकार स्थापित हुआ।

इस काल म सतत सघर्ष जारी था। सवमा य स्थिर राजकीय सत्ता का अभाव था। व्यापार के लिए आई हुई यूरोपीय जातियो के सत्ता सघर्ष मे भी अग्रजो का पलडा भारी रहा।

राव गुलाब सिंह जी राजपुताने क परिवेश म रह थे। वहा भी राजाओ के आपसी द्वेष एव सघर्ष का ही वातावरण था। अग्रजो के उत्तरी भारत मे बढ्त अधिकार के कारण दिल्लीपति की अधीनता के बदले उ होने धीरे धीरे अग्रेजो की अधीनता स्वीकार कर ली। जिन राजाओ न अधीनता स्वीकार नही की थी। उनके अदरूनी मामलो म अवसर पाकर अग्रजो ने हस्तक्षप करते हुए उनके अधिकार छीन लिए थे। राव गुलाबसिंह जी के प्रथम आश्रयदाता अल्वर नरेश शिवदानसिंह जी की पदच्युति अग्रजो की राजपूतान की नीति का ही उदाहरण था।[3]

अपने राज्य एव अधिकार विस्तार म अग्रजो न अनक अत्याचार किए थ। राजाओ नवाबो के अधिकार छीन गए थे। इस नीति के परिणाम स्वरूप देशी राजा तथा नवाब असतुष्ट थे, उनके पुरान राजनिष्ठ सेवक असतुष्ट थे। इस दशा म यह विचार चारो ओर दृढ हो रहा था कि परिवतन करने के हेतु कुछ करना चाहिए। अग्रजो की आर्थिक नीति के परिणाम स्वरूप किसान व्यापारी, कारीगर आदि समाज के सभी वग असतुष्ट थे। अग्रजो के राज्य विस्तार म अग्रजो द्वारा प्रशिक्षित भारतीय फौजो का योगदान अच्छा होते हुए भी सना मे अग्रजो के बराबर का स्थान उ ह प्राप्त न था। इसी से अग्रेजी पलटनो म भी असतोष था। सिपाहियो द्वारा मद्रास एव अ य स्थानों म बगावत का झडा खडा किया गया था।

---

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास—सपादक डा० नगेन्द्र प्रथम सस्करण पृ० ४३४।

२ भारत म अग्रजी राज्य के दो सौ वर्ष, केशवकुमार ठाकुर द्वितीय सस्करण, पृष्ठ २५६।

३ कवि रत्न माला भाग १ मुशी देवीप्रसाद सवत १९६८ वि० सस्करण पृ० ८६।

ग्रेजो ने इस बगावत को निष्ठुरता के साथ कुचल दिया था। सेना के भारतीय सिपाहियो पर इसका बुरा प्रभाव पडा। वे भी अग्रेजो का तख्ता पल्टने के हेतु कुछ करना चाहते थे।

देशी राजाओ ने इन सिपाहियो के साथ सपर्क स्थापित किया था। एक साथ अन्दर और बाहर से अग्रेजी सत्ता को एक बारगी फेंकने की तयारियाँ होने लगी थी। दिन भी निर्धारित हो गया था। बदूको के कारतूसो मे लगी गाय और सूअर की चरबी और दाँतो से उन्हें तोडने की आवश्यकता के कारण अग्रेजो की भारतीय सेना के हिन्दू एव मुसलमान सिपाहियो का माथा ठनका। इस तात्कालिक कारण से निर्धारित समय से पहले ही स्वाधीनता सग्राम की पहली पहली आग हुतात्मा मगल पाडे ने लगाई। देखते ही देखते यह आग समूचे उत्तरी भारत मे फैल गई। जिन भारतीय राजाओ और नवाबो ने सेना के साथ सम्पर्क स्थापित किया था और जो उचित अवसर की ताक मे थे वे भी इसमे शामिल हुए। अजीमुल्ला शाह नानासाहब, तात्या टोपे, रानी लक्ष्मीबाई जसे सेनानियो का नेतृत्व इस स्वातन्त्र्य समर को प्राप्त था। इस नेतृत्व की शूरवीरता साहसिकता के होते हुए भी यह स्वातन्त्र्य समर असफल रहा, जिसके अनेक कारण थे। इस सेना मे सगठन का अभाव था। सभी भारतीय राजा इस स्वाधीनता सग्राम मे सम्मिलित नही हुए थे। कुछ अकर्मण्य रहे जिनमे होलकर सिंधिया की गणना की जा सकती है। कुछ राजाओ ने स्वाधीनता सग्राम की मदद न कर अग्रेजो की सहायता की। सिक्ख एव गोरखा इस वर्ग के उदाहरण हैं। सिखो की सहायता के कारण अग्रेजो का दिल्ली पर अधिकार हुआ तो गोरखाओ के कारण लखनऊ उनकी मुट्ठी मे आया।[1]

सन् १८५७ ई० में राव गुलाबसिंह जी अलवर मे थे। देशी नरेशो की अकर्मण्यता के कारण राजपूताने मे स्वाधीनता सँग्राम की लपटें अधिक नही पहुँची थी। अत राजपूताने मे अग्रेजो का प्रभाव स्थिर ही रहा।

सन १८५७ ई० मे भारतीय स्वाधीनता सग्राम के द्वारा भारतीय जनता के असतोष का जो उद्रेक हुआ उसका परिणाम यह निकला कि इग्लड की पालियामेंट मे बैठे अग्रेजी शासन के प्रतिनिधि चितित हो उठे। ईस्ट इंडिया कम्पनी को भारत मे व्यापार करने के हेतु दिए हुए अधिकार पत्र–चार्टर का नूतनीकरण इसी वर्ष किया जाने वाला था। नए सदर्भ मे ईस्ट इंडिया कम्पनी के अधिकार पत्र को रद्द करने तथा भारत मे उसके कारोबार को समाप्त कर देने की माँग बढती गई। भारत मे ईस्ट इंडिया कम्पनी ने अग्रेजी सत्ता का जो विस्तार किया था उसको इग्लड के मत्रिमडल के प्रत्यक्ष नियन्त्रण मे लेने की सिफारिश की गई थी। इसके परिणामस्वरूप सन १८५८ ई० मे इग्लड की महारानी विक्टोरिया के नाम

१ भारत मे अग्रेजी राज–द्वितीय खड, सुन्दरलाल–सन् १९६१ ई० सस्करण।

एक आना पत्र प्रकाशित किया गया। भारत को ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन से मुक्ति मिली किन्तु उसे साम्राज्य का उपनिवेश बनाया गया।

भारतीय दृष्टि में इस परिवतन का कोई महत्व नही था। अंग्रेजो की भारतीय नीति में इससे कोई परिवतन नही आया था। भारत मे अंग्रेजो के शासन के स्थिर हो जाने के कारण कुछ नये सुधार अवश्य हुये, यथा रेल डाक और तार सेवायें, नई शिक्षा प्रणाली आदि। इन सुधारो का सूत्रपात अंग्रेजो ने अपनी प्रशासन की सुविधा के कारण किया था। भारतीय जन भी उससे लाभान्वित हुए। पूववर्ती काल की तुलना मे युगीन परिस्थितियाँ शान्त ही रही। "सन १८८५ ई० में भारतीय कांग्रेस का पहला अधिवेशन बम्बई म हुआ।"[1] यह भारतीय राजनीतिक स्थितियो का नया मोड था।

राव गुलाबसिंह जी सन १८५७ ई० के स्वतन्त्र्य सग्राम के समय अलवर मे थे। सवत १९२८ अर्थात सन १८७१ ई० मे राव गुलाबसिंह जी अलवर छोड कर बूंदी म आये थे। बूंदी नरेश महाराव रामसिंह जी अग्रेजो के मित्र थे। सन् १८५७ ई० के भारतीय स्वाधीनता सग्राम के प्रसग म अंग्रेजा को सेना सहायता देकर उन्होने अपनी मित्रता एव अंग्रेज निष्ठा का परिचय दिया था।[2] सन् १८२१ ई० मे रामसिंह जी जब राजसिंहासन पर विराजित हुए तब अंग्रेजा की ओर से कनल टॉड जेम्स ने उन्हें घोडा हाथी शस्त्र तथा बहुमूल्य रत्न आभूषणादि देकर राजतिलक किया था।[3] सन १८७७ ई० म गवनर जनरल लाड लिटन न महारानी विक्टोरिया के आगमन पर दिल्ली म दरबार किया था। महाराव रामसिंह जी इस दरबार में उपस्थित थे। महारानी विक्टोरिया की ओर स इनको सितार हिन्द प्रथम श्रेणी का जी० सी० एस० आय०—'नाइट ग्रेड कमाण्डर, स्टार ऑफ इण्डिया तथा महारानी के सलाहकार—'कौंसिलर ऑफ दि इम्प्रेस की उपाधियो स सम्मानित किया गया था।[4]

---

१ आधुनिक भारतीय संस्कृति का इतिहास डॉ० पी० पार० साहनी, प्रथम सस्करण पृ० ३२१।

२ बूंदी राज चरितावली हरिचरणसिंह चौहान सवत् १९५३ वि० सस्करण पृष्ठ १२४।

३ वही पृ० १२१।

४ (अ) बूंदी राज्य का इतिहास सम्पादक गहलोत परिहार सन् १९६० ई० सस्करण, पृ० ९०।
(ब) बूंदी राज चरितावली हरिचरणसिंह चौहान, सवत् १९५३ वि० स० पृ० १२४।

राव गुलाबसिंह जी के साहित्य का सजन इसी परिवेश म हुआ है । अलवर एव बूदी के दरबार के रसिक तथा गुणग्राहक आश्रय म उनकी प्रतिभा पल्लवित और पुष्पित हुई । अग्रजी शासन के प्रति असतोष नई राजनीतिक चेतना शिक्षा प्रणाली का नया सूत्र आदि जो परिवतन भारत के विभिन्न प्रदेशो मे आ रहे थे उसके प्रभाव से बूदी प्रभावित नही हुआ था । उसके शात राजनीतिक जीवन मे कोई परिवतन नही आया ।

आर्थिक–विवच्य काल म राजाओ द्वारा एक दूसरे पर किए हुए आक्रमण तथा लूट पाट सनिक व्यय तथा आमोद प्रमोद के खच को पूरा करने के लिए धन एकत्रित करते हुए सामान्य जनो पर किये गय अत्याचार के कारण भारतीय समाज की दशा अतीव विपन्न थी । अपन अधिकार क्षेत्र का विस्तार करत हुए अग्रजो न भी लोगो को लटने म कोई कसर नही रखी थी । "जिस समय उन्होने पटना पर अधिकार प्राप्त किया उस समय उसे इतना लूटा कि नगरवासियो के घरो मे एक तिनका भी बाकी न बचा रहा ।[1]

आधुनिक काल के पूव भारतीय आर्थिक जीवन के केन्द्र यहा के गाँव ही थे । श्री राजकुमार ने अपने ग्रन्थ मे सर चाल्स मेटकाफ सन १८३० ई० मे इस विषय का अभिप्राय उद्धत किया है—'ग्रामीण बस्तियाँ छोटे छोटे प्रजातन्त्र हैं जो पूणत स्वावलम्बी है और बाहरी सम्बन्धो स पूणत मुक्त हैं ।[2] इसी प्रसग मे उन्होने प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता तथा दाशनिक कालमाक्स का विचार भी उद्धृत किया है—"भारत की ये छोटी छोटी और अति प्राचीन बस्तिया जमीन के सामूहिक अधिकार–खेती तथा दस्तकारी की मिलावट और ऐसे श्रम विभाजन पर आधारित है जो कभी नही बदलता । प्रत्येक बस्ती अपने में पूण होती है तथा अपनी आवश्यकता की सभी वस्तुयें स्वय बना लेती हैं । उत्पादन का अधिकतर भाग बस्ती के काम में आता है और वह बाजार का माल नहीं बनता । अत माल बचने और उसे खरीदने स समाज मे जो श्रम विभाजन आ जाता है, वास्तव म जो भारतीय समाज म आ भी चुका है उसका प्रभाव यहाँ के उत्पादन पर नही पडता । पदावार का एक हिस्सा बतौर लगान के राज्य को दे दिया जाता है । सब लोग मिलकर खेती करते हैं आपस म पैदावार बाँट लते हैं । इसके साथ साथ कातने और बुनने का काम प्रत्येक परिवार म सहायक धधे के रूप मे होता है ।"[3] गाँवो म किसान, लुहार

१ आधुनिक हिन्दी साहित्य की पष्ठभूमि—डा० लक्ष्मीसागर वाष्णेय द्वि० स० पृ० ६० ।

२ भारत का राजनीतिक इतिहास राजकुमार, द्वि० स० पृ० १७७ ।

३ वही, पृ० १७७ १७८ ।

बढ़ई आदि विभिन्न व्यावसायिक गाँव की आवश्यकतायें पूरी करते थे। पेशे के आधार पर जातियाँ निर्मित थीं। एक जाति का व्यक्ति दूसरी जाति का पेशा नहीं कर सकता था।

ग्रामों से नगरों का अस्तित्व भिन्न था। नगरों में मूल्यवान वस्तुओं का निर्माण होता था। मध्यकाल में रत्नजटित आभूषणों बारीक सूती रेशमी वस्त्रों, हस्तीदन्त से निर्मित वस्तुओं आदि के लिए इस देश की कीर्ति देशान्तरों में भी फैली हुई थी। इन वस्तुओं का निर्माण राजा सामन्त अमीर आदि के उपयोग की दृष्टि से होता था। नगरों का औद्योगिक इकाइयाँ सामान्य वस्तुओं का निर्माण नहीं करती थीं। ग्रामों के घरेलू उद्योग तथा नगरों के उद्योग पूर्णरूप से स्वतन्त्र थे। खेती के अलावा अन्य व्यवसायों का सम्पर्क इन्हीं नगरों से था। राजनीतिक उथल पुथल का परिणाम इन्हीं के माध्यम से ग्रामों तक पहुँचता था।[1]

अंग्रेजों ने देश को अराजकता से राजकीय अशान्ति से सैनिक लूट मार से तो मुक्ति दी किन्तु नवीन शासन नीति तथा व्यापारिक पद्धति के कारण देश में आर्थिक अशान्ति को जन्म दिया। सामुदायिक ग्राम व्यवस्था जो अब तक भारतीय अर्थव्यवस्था का मूलाधार थी विघटित हो गई, उसका आर्थिक और प्रशासनीय प्रयोजन समाप्त हो गया।[2]

अंग्रेज मूलतः व्यापारी थे। इस देश को अपना बाजार बनाना ही उनका उद्देश्य था। अंग्रेजों द्वारा आर्थिक शोषण का चक्र सन १७५७ ई० की प्लासी की लड़ाई के बाद ही आरम्भ हुआ था। सन १७६५ ई० में बंगाल बिहार उड़ीसा की दीवानी प्राप्त होने पर कम्पनी की लूट खसोट और बढ़ गई।[3] अंग्रेज सामंतीय व्यवस्था नहीं अपितु पूँजीवादी व्यवस्था अपना चुके थे। सामाजिक विकास की दृष्टि से भी वे यहाँ के लोगों से अधिक विकसित थे। अतः आर्थिक व्यवस्था को परिवर्तित करने में उन्हें सफलता प्राप्त हुई। शासन सत्ता प्राप्त होने पर आर्थिक शोषण में अधिक गति एवं शक्ति आई थी। इस शोषण नीति की चर्चा करते हुए सुन्दरलाल ने लिखा है "साविवस आफ हेस्टिंग्स का समय एक तरह से सबसे अधिक महत्वपूर्ण था। इस समय से भारत के प्राचीन धन्धों को नष्ट करना और भारत के धन से इंगलिस्तान के उद्योग धन्धों को उन्नति देना अंग्रेजों की भारतीय नीति का एक अंग बन गया था। ... जो कपड़ा सूरत से विलायत भेजा जाता था। वह

---

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास-सम्पादक डॉ० नगेन्द्र प्रथम सं० पृ० ४३४ ४,५।
२ भारत का राजनीतिक इतिहास-रामकुमार द्वि० सं० पृ० १७७ से उद्धृत।
३ वही, पृ० १७९।
४ भारत में अंगरेजी राज-सुन्दरलाल द्वि० खण्ड सन् १९६१ ई० सं०, पृ० ५५९।

अत्य त बडे और निष्ठुर अत्याचारो द्वारा वसूल किया जाता था । बगाल म भी जुलाहा को जबरदस्ती पेशगी रुपये देकर पहले उनका माल खरीद लिया जाता था। सन १७९३ ई० मे बगाल की अग्रेज सरकार न कानून बनाकर कम्पनी के कपडे के व्यापार से सम्ब ध रखने वाला को आजीवन गुलाम बना दिया । [1]

अग्रेजा की इस नीति के कारण भारतीय किसान, व्यापारी, कारीगर, कच्चे माल स वस्तुओ का निर्माण करन वाल नुकसान उठाते रहे । कच्चे माल को सस्ते दामा पर खरीद कर इग्लण्ड म बना पक्का माल अग्रेजा की मनचाही कीमत पर भारतीय बाजारों म बचा जाता था । इसमे अधिक लाभ लाने की अग्रेजा की नीति रही । इससे किसान एव व्यापारी तबाह हुये । भारतीय कलाकारा, कारीगरो द्वारा निर्मित कलापूण वस्तुओ के दामों स कम दामा पर अपन यहाँ क मशीन से बन माल की बिक्री कर उनको भी अग्रेजो न चौपट कर दिया । अपनी व्यापारिक आर्थिक समद्धि के हेतु उनके साथ स्पर्धा करने वाले उद्योगा को नष्ट करन म उन्होने कोई कसर उठा न रखी । इसके परिणामस्वरूप भारतीय जहाजरानी उद्योग लोहे के उद्योग कागज, चीनी बनान के उद्योग नष्ट हुये । जमीदारी, मालगुजारी आदि प्रथाओ का आरम्भ कर, जमीदार एव मालगुजारो क रूप में एक ऐसे नये वग का निमाण अग्रजा ने किया जो ग्रामो क शोषण मे उनका साधन था । यह वग उनका समथक था । उनकी विदाई तक उनकी सहायता करता रहा ।

खेती व्यक्तिगत सम्पत्ति हो जान से उसका स्वरूप व्यावसायिक बनता गया । कृषि का ग्रामा म रहने वाला उत्पन्न बाजारो म आन लगा । व्यावसायिक दष्टि स लाभप्रद वस्तुओ के उत्पादन की ओर कृषि उद्योग का ध्यान आकर्षित होना गया । किसानो की दशा म से इससे कोई परिवतन नही हुआ । "जमींदारी, मालगुजारी तथा महाजनो क ऋणो की अदायगी म उसका सारा उत्पादन समाप्त हो जाना ।" [2] पचायत याय व्यवस्था क स्थान पर अधिक खच की कचहरियाँ स्थापित की गईं । परिणामस्वरूप आर्थिक शोषण का चक्र अनवरत रूप स चलता रहा ।

रीतिकाल म ही मुगल सम्राटो क अधीनस्थ राजे महाराजे सधि विग्रहादि की चिन्ता स अपेक्षाकृत अधिक मुक्त रहन के कारण बहुत कुछ निश्चिन्तता पूवक वभव विलासिता का सुख लूटत थे । "उनकी छाया में पलो वाले छोटे छोटे जागीरदार उनसे अधिक निश्चि त और विलासी थे । [3]

अग्रेजो न जमीदार एव माल गुजारो का एक सम्पन्न वग निमाण कर वैभव

---

१ भारत म अ गरेजी राज–सु दरलाल सन १९६१ ई० सं०, पृ० ५६२ ५६३ ।
२ हि दी साहित्य का इतिहास–सम्पादक–डॉ० नगेन्द्र प्र० स०, पृ० ४३६ ।
३ रीतिकालीन कवियो की प्रेम व्यजना–डा० बच्चनसिंह, प्र० स० पृ० ९ ।

विलासिता को प्रश्रय दिया। देशी राजाओं को संधि की शर्तों में बाँध कर उनके राज्यों की सुरक्षा की जिम्मेदारी स्वयं उठाकर उन्हें भी भोग विलास की पूर्ण स्वतंत्रता दे दी।[1] इसका तात्पर्य यह नहीं कि सभी देशी राजाओं की प्रवृत्ति विलासिता में डूबने की थी। अपवाद के रूप में इनमें भी कुछ ऐसे उदार चेता शासक थे जो उपलब्ध सुविधाओं को अपनी जनता के कल्याण में भी प्रयुक्त करते थे। राव गुलाबसिंह जी के आश्रयदाता बूँदी नरेश महाराव राजा रामसिंह जी तथा उनके पुत्र रघुवीरसिंह जी ऐसे ही शासकों में से थे।

संवत १८९० वि० अर्थात सन १८३३ ई० में बूँदी राज्य में अकाल पड़ा था। महाराव राजा रामसिंह जी ने सरकारी भाडारों से दीन दुखियों को मुफ्त में तथा साधारणों को सस्ते मूल्य पर अनाज दिलवाया था। प्रजा का पालन अच्छे प्रकार से किया था।[2] बूँदी राज्य के राजपूतों में अपनी लड़कियों को मार डालने की एक बुरी प्रथा का प्रचलन था। संवत १८९३ वि० अर्थात सन १८३६ ई० में एक आज्ञा प्रकाशित कर रामसिंह जी ने यह प्रथा बंद करवाई थी।[3] वे न्याय और धर्म के रक्षक थे। सत्य के सहायक थे। विद्वानों का सम्मान करने में भारतवर्ष के राजाओं में रत्न थे।[4] रामसिंह विद्या प्रेमी थे इनके समय में संस्कृत पढ़ाने के लिए बूँदी में चालीस पाठशालायें थी। इससे यह नगर इस काल में दूसरा काशी माना जाता था।[5]

महाराज रघुवीरसिंह जी भी अपने पिता के सुयोग्य पुत्र थे।[6] विद्वानों के सत्कार में एवं प्रजा पालन में सदैव तत्पर रहते थे।[6]

राव गुलाबसिंह जी इन्हीं गुणग्राही राजाओं के आश्रय में रहे थे। यहाँ का वातावरण काव्यशास्त्र विनोद के लिए पुष्टिकर ही था। इन उदार चेता आश्रय दाता राजाओं तथा राव गुलाबसिंह जी जैसे प्रतिभावान साहित्यकार का संयोग 'मणि कांचन योग ही था।

---

१ हिंदी साहित्य का इतिहास—संपादक—डा० नगेन्द्र प्र० सं० पृ० ४०६।

२ बूँदी राज चरितावली—हरिचरण सिंह चौहान संवत् १९५३ वि० संस्करण पृ० १२२ १२३।

बूँदी राज्य का इतिहास—गहलोत परिहार सन १९६० ई० सं० पृ० ९९।

३ बूँदी राज चरितावली—हरिचरणसिंह चौहान संवत् १९५३ वि० संस्करण पृ० १२६।

४ वही पृ० १२७।

५ बूँदी राज्य का इतिहास—गहलोत परिहार—सन् १९६० ई० सं० पृ० १००।

६ बूँदी राज चरितावली—हरिचरणसिंह चौहान सं० १९५३ वि० सं पृ० १३१।

धार्मिक–हिंदी साहित्य के इतिहास के मध्यकाल के प्रारम्भ से लगभग तीन सौ वर्षों तक धार्मिक आन्दोलन अपने चरमोत्कर्ष पर था। विभिन्न धार्मिक मत समस्त उत्तरी भारतवर्ष म सोल्हवी शताब्दी तक फले हुए थे। हिन्दी साहित्य के इतिहास ग्रथो म इन समग्र धम मतो को चार भागो मे विभक्त किया जाता रहा है—१ निगुणोपासक सत मत २ प्रेमाश्रयी परम्परा ३ सगुण रामभक्ति परम्परा और ४ सगुण कृष्णभक्ति परम्परा।

राव गुलाबसिंह जी के समय म सन्त मत म अनेक पथ विद्यमान थे यथा—मलूकदासी पथ दादू पथ, सतनामी, बावाऽलाली शिवनारायण आदि। सत नामदेव ने सतमत का प्रवतन किया था। सत कबीरदास जी के प्रखर व्यक्तित्व के कारण सतमत कबीर पथ म प्रबल वेग स प्रसारित हुआ था। इस मत म शाखाएँ प्रशाखाएँ बाद म विस्तारित हुई। कबीर के अनुयायियो ने अपने स्वतन्त्र पथ निर्माण किए। कबीर सदृश प्रभावी नेतत्व के अभाव मे व बिखरते गए थे।

प्रेमाख्यान साहित्य मे प्रेम तत्व का महत्व किसी कथानक के सहारे प्रकट किया गया था। प्रेम के सयोग एव विरह दोनो भावनाओ को इस मत मे प्रवेश मिल चुका था। अधिकाश कथानको मे साधना केवल लौकिक न होकर प्रतीकात्मक है और इन काव्यो का महत्व और सदेश जीवन के लिए अधिक गम्भीर है।"[1] सत मत के समान यह मत भी विवच्य काल तक धीरे धीरे लुप्त होता गया था।

स्वामी रामानन्द जी ने रामभक्ति परम्परा का प्रारम्भ कर तिमिरावृत भारतीय जन जीवन को उज्ज्वल बनाया था। निगुण एव सगुण दोनों रूपो में रामनाम की कीर्तिपताका रामानन्द जी के अनेक शिष्यो ने फहराई थी। राम के निगुण भक्तो म मेरमणि सत कबीरदासजी हुए तो सगुण भक्ति परम्परा म राम के परम भक्त गोस्वामी तुलसीदास जी हुए। रामचरित मानस की रचना कर उन्होन समस्त उत्तरी भारतवष को रामभक्ति की पावनधारा मे निमज्जित कर दिया था। राम के धम रक्षक भक्तो के उद्धारक दीनदयालु लोक मगल के निर्माणकर्ता, शील, शक्ति और सौन्दय आदि से समन्वित रूप को उन्होने सस्थापित किया था।

राम भक्ति मे मुख्यत दास भक्ति को ही मान्यता प्राप्त थी। रामोपासक भक्त मर्यादा पुरुषोत्तम प्रभु रामचन्द्र जी की वेदशास्त्र समत उपासना करते थे। इस राम भक्ति म परवर्ती काल म माधुय भाव की भक्ति का भी सूत्रपात हुआ। गोस्वामी तुलसीदासजी की गीतावली म माधुय भाव के चिह्न परिलक्षित होते हैं। इस रसिक एव माधुय भाव की रामभक्ति के सम्बन्ध मे आचाय रामचन्द्र शुक्लजी

---

१ हिंदी साहित्य का उदभव और विकास–रामबहोरी शुक्ल–प्रथम स० द्वितीय खण्ड पृ० २२।

ने लिखा है--'इस प्रकार विलास क्रीडा मे कृष्ण स कहीं अधिक राम को बढाने की होड लग गई। गो लोक मे जो नित्य रासलीला होती रहती है उससे कहीं बढकर साकेत मे हुआ करती है।'[1] राम भक्ति म माधुय भाव की स्वीकृति के कारण रीतिकाल के अतिम चरण तक मर्यादा भाव से परिप्लुत रामभक्ति धारा हिन्दी साहित्य से विलुप्त हो चुकी थी।

यद्यपि कृष्ण नाम का उल्लेख ऋग्वेद मे भी प्राप्त होता है श्रीकृष्ण के व्यक्तित्व का निर्माण हरिवश पुराण वायु पुराण श्रीमदभागवत पुराण आदि मे हुआ है। पद्म पुराण कूम पुराण, ब्रह्मवैवत आदि पुराणो मे श्रीकृष्ण का विस्तत चरित्र वर्णित है। श्रीमदभागवत पुराण मे गीता एव महाभारत जसे पूवकालिक ग्रन्थो म वर्णित कृष्ण चरित्र का समन्वय किया गया है। मध्ययुगी भक्ति के मूलाधार गीता एव श्रीमदभागवत के कृष्ण मान जाते हैं। गीता के कृष्ण 'योगेश्वर हैं तो श्रीमद्भागवत के कृष्ण लीला पुरुषोत्तम' हैं। श्रीमदभागवत में श्रीकृष्ण के ऐश्वय एव माधुय का अद्वितीय सयोजन प्राप्त है।

श्रीकृष्ण के इस अनन्य साधारण व्यक्तित्व की ओर आकृष्ट विद्वानो एव भावुक भक्ताचार्यों ने श्रीकृष्ण की भक्ति के प्रचार एव प्रसार म अपना सारा जीवन समर्पित कर दिया था। भक्ति के आधारभूमि स्वरूप दार्शनिक सिद्धान्तो का प्रणयन कर उनकी सस्थापना की थी। इस प्रकार कृष्णभक्ति परम्परा म श्री निम्बार्काचाय द्वारा प्रतिपादित द्वताद्वैत श्री विष्णु स्वामी द्वारा प्रवर्तित शुद्धाद्वैत श्री मध्वाचाय प्रणीत द्वैत मत के आधार पर सनक सप्रदाय रुद्र सप्रदाय ब्रह्म सप्रदाय आदि की स्थापना हुई।

श्रीकृष्ण की माधुय भाव की उपासना म शास्त्र सम्मति की कोई अपेक्षा न रखकर 'वष्णव एव गौडीय भक्ति काव्य ने राधाकृष्ण की रामानुगा भक्ति का प्रचार कर उनके मधुर स्वरूप को उपस्थित किया और काव्य म उनके प्रमनरव की पूण प्रतिष्ठा की।'

'प्रेमलक्षणा भक्ति को माधुय भक्ति और शृगार रस को उज्ज्वल रस की सज्ञा देकर चतन्य सम्प्रदाय के आचाय रूप गोस्वामी न अपने ग्रन्थों म लौकिक शृगार और प्रेम के उन्नमित रूप की अभिव्यक्ति की थी और कृष्ण भक्ति का दिव्य रूप स्थापित करके शृगार तत्व की स्थूलता का परिमाजन भी किया था परतु आगे चलकर इस भक्ति में से भावतत्व तो पूण रूप से लुप्त हो गया केवल स्थूल

---

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास--आ० रामचन्द्र शुक्ल--चौदहवाँ सस्करण पृ० १४९।

२ रीतिकालीन कविता एव शृगार रस का विवेचन डा० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी, प्रथम सस्करण, पृ० २१५।

कामचेष्टाओ की अभिव्यक्ति म ही भक्तिपरक ग्रथो की रचना की जाने लगी ।[1]

इस प्रकार राव गुलाबसिंह जी के समय तक वष्णवधम अपने विविध रूपो म विद्यमान था । वष्णव धम की कृष्ण भक्ति परम्परा सौदय, लालित्य,, रमणीयता, मानव प्रेम आदि श्रेष्ठ गुणो के कारण अधिक प्रिय रही । राम और कृष्ण के उपासना सम्प्रदायो ने हि दी साहित्य को प्रभावित करने क साथ ही साथ भारतीय जनता को आचाय एव समाज सुधारको की देन भी दी है । यद्यपि ये भक्ति सम्प्रदाय अलग अलग थे उनकी उपासना पद्धतियाँ भिन्न भिन्न थीं वे मूल मे एक ही थे, वेद ही उनका आधार था ।

अग्रेजो की शासन सत्ता क स्थापित होने से पहले ईसाई मिशनरियो न ईसाई धम के प्रचार का काय आरम्भ किया था । अग्रेजो की सत्ता के स्थापित हो जाने पर उसे राजाश्रय प्राप्त हुआ । अग्रेजो का आचरण यद्यपि ईसाई धम सिद्धान्तो के विरुद्ध पडता था फिर भी धम प्रचार के काय म ईसाई मिशनरियो को उनका सक्रिय सहयोग प्राप्त था । इस धम प्रचार का समाज के निम्न स्तर पर वाछित प्रभाव पडा किन्तु शिक्षित एव उच्च वग मे इसकी तीव्र प्रतिक्रिया हुई । सक्रान्ति काल क कुछ चिन्तकों न ऐसी समाजिक सस्थाओ का शुभारम्भ किया जिनका उद्देश्य मुख्यत भारतीय विचार धारा सस्कृति एव धम का उन्नयन ही था । राष्ट्रप्रेम मूल मत्र था । धम के प्रचलित रूप म युगानुकूल परिवतन करने का प्रयास इन चिन्तको न किया था । इस युग म आकर धम मात्र भावना का विषय नही रहा तो उसमें तक बुद्धि और विवक का प्रयोग भी अनिवाय हो चुका था ।

आधुनिक युग म ब्राह्म समाज, प्रार्थना समाज, आय समाज आदि न पुराने धम को नए समाज के अनुरूप ढालन का प्रयास किया । ब्राह्म समाज एव प्राथना समाज ने नए परिवतनो को स्पष्ट रूप से अगिकार कर लिया, पर आय समाज वदिक धम के मूल रूप को बनाए रखना चाहता था । सन १८२८ ईसवी में राजा राममोहन राय ने ब्राह्म समाज की स्थापना की थी । कमकाड एव अधविश्वासो का विरोध उन्होने किया था । मूर्तिपूजा को बाह्याडम्बर माना था । इसके लिए आधारभूत दार्शनिक सिद्धान्त उन्हें तत्तरेय और 'कौशितकी' उपनिषदो मे मिले ।

प्राथना समाज के उन्नायक श्री म० गो० रानडे भी सामाजिक रूढियो एव अधविश्वासो क विरुद्ध निरतर सघष करत रह । मनुष्य की समानता पर उन्होने बार-बार बल दिया था । यद्यपि वे पाश्चात्य विचारो से प्रभावित थे किन्तु बिना तक के उन्हान उन्ह कभी स्वीकार नही किया । वे भारतीय सस्कृति को नवीन वज्ञानिक प्रणाली के अनुरूप ढालने का प्रयत्न कर रहे थे ।

---

१ हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास—डॉ० नगेन्द्र—षष्ठ भाग, प्रथम सं०, पृ० १७ ।

रामकृष्ण परम हंस के देहावसान के बाद उनके प्रिय शिष्य स्वामी विवेकानंद ने रामकृष्ण मिशन की स्थापना की। उनका मुख्य प्रयोजन रामकृष्ण परमहंस के उपदेशों का प्रचार करना था। विवेकानन्द ने ही हीनता से ग्रस्त देश का उदबोधन कराया था। समता, एकता, बन्धुता एवं स्वतन्त्रता की ओर उन्होंने भारतीयों का ध्यान आकृष्ट किया था।[1]

१० अप्रल १८७५ ईसवी को दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना की।[1] महर्षि दयानन्द सरस्वती असाधारण क्षमता एवं प्रतिभा के व्यक्ति थे। आर्य समाज वेद को आधार मानता है। उसके अनुसार वेद अपौरुषेय हैं। वैदिक धर्म ही सत्य और सार्वभौम धर्म है अन्य धर्म अधूरे हैं। राष्ट्रीय विचारधारा को आगे बढ़ाने में आर्य समाज ने आश्चर्यजनक योगदान दिया है।

धर्म के क्षेत्र का यह नया चिन्तन राव गुलाबसिंह जी के बूंदी परिवेश को प्रभावित न कर पाया था। उनके आश्रयदाता रामसिंह जी पुराने ढंग के व्यक्ति थे।[2] बड़े धार्मिक थे। राव गुलाबसिंह जी द्वारा विरचित भक्ति साहित्य यह प्रमाणित करता है कि वे परम्परागत हिन्दू धर्म के अनुयायी थे। उनके स्तुति साहित्य से यह सूचित होता है कि उनकी प्रवृत्ति बहुदेवोपासना की थी। कृष्ण चरित काव्य से उनकी वैष्णव धर्मावलम्बिता अभिव्यक्त हुई है।

सामाजिक सांस्कृतिक

मध्ययुगीन समाज जीवन का रूप दोहरा था। राजा महाराजा सामंत, एवं अमीरों का एक और जन साधारण का दूसरा था। निरन्तर संघर्ष के कारण राजा, महाराजा, सामंत आदि की आर्थिक अवनति हो रही थी उनकी अन्याय उपभोगों की लालसा कम न होकर बढ़ती ही थी। आत्म केन्द्रित राजा अपनी मस्ती में मग्न थे। अमीरों एवं सामन्तों के खान पान, वेषभूषादि में विलासिता ही परिलक्षित होती थी। हीरे, जवाहरात और रत्नों से जटित वस्त्राभूषण पहनना अमीरों एवं सामन्तों का लक्षण था। मदिरा का प्रयोग एक साधारण बात थी।[4]

सामान्य मनुष्यों का जीवन कष्टों और परिश्रम का जीवन था। युद्ध एवं संघर्ष तथा अस्थिर राजनैतिक वातावरण के परिणाम स्वरूप असुरक्षा का भाव

---

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास—डा० नगेन्द्र प्रथम संस्करण, पृ० ४४३–४४५।
२ दिन विनय—प्र० न० जोशी द्वितीय संस्करण, पृ० ८।
३ बूंदी राज्य का इतिहास—गहलोत-परिहार सन् १९६० ई० स० पृ० १००।
४ बूंदी राज चरितावली हरिचरण सिंह चौहान संवत १९५३ वि० स० पृ० १२१।
५ रसिक सुन्दर और उनका हिन्दी काव्य डॉ० म० वि० गाविलकर प्रथम संस्करण, पृ० २५।

सवत्र विद्यमान था। महामारी अकाल आदि प्राकृतिक विपदाओं के कारण सामा य जन त्रस्त थे।[1]

अग्रेजो के शासन म सामाजिक सुधार का काय आरम्भ हुआ। सती प्रथा तथा नवजात कन्याओ की हत्या के विरोध म कानून बनाने पडे। हमारे समाज म स्त्री शिक्षा का सूत्रपात हुआ। समाज के निम्न वग क प्रति हमारे दष्टिकोण के परिवतन मे आय समाज का हाथ रहा।[2]

भारतीय इतिहास के मुगलकाल मे सम्राट अकबर से शाहजहाँ तक के शासक कलाप्रेमी एव कलाओं के सरक्षक थे। कलाओ के क्षेत्र में हिन्दू तथा मुस्लिम कलाओ के तत्व समाहित हुए। मुसलमानो के द्वारा जिन भवनों और प्रासादो का निर्माण हुआ उन पर भारतीय प्रभाव सवत्र देखन को मिलता है। हिन्दू स्थापत्य पर भी मुस्लिम स्थापत्य का प्रभाव दिखाई देने लगा। चित्रकला म भी राजपूत चित्रकला एव मुगल चित्र कला मे समन्वय देखन को मिलता है। अन्य कलाओ मे भी इसी प्रकार का समन्वय दखन को मिलता है। मुगल दरबार के हिन्दू एव मुसल मान चित्रकारो ने जिस शैली की स्थापना की थी उस अनत स्थानीय वभिन्य देकर चित्रकला की विभिन्न शलियाँ निर्मित हुई।[3]

उद्यानों का निमाण भारतीय कला क्षत्र म मुगल सम्राटो की अनुपम देन है। "उन उपवनो में रग बिरग पुष्प खिले रहते थे उनमे भारतीय और पारसी दोनो प्रकार के फूलो की बहार थी। भारतीय पुष्पो में चपा केतकी, बेला जूही कचनार, कुन्द, जपा, हरसिंगार आदि उपवन की शोभा बढा रहे थे। तो पारसी फूलो म गुलाब, मोगरा, गुल्लाला आदि।" इन सुन्दर कलात्मक कुजो से सस्कारित इस युग का प्रकृति प्रेम सौन्दय दष्टि आदि का अभिव्यजन होता था। इन सभी कलात्मक अभिरुचियो के कारण दरबारी ही नही अन्य कवि भी प्रभावित थे।

इस देश में अग्रजी राज्य की स्थापना के कारण एक नया जीवन दशन नई जीवन पद्धति, नई सस्कृति के सपक म भारतीय जनता आई। भारतीय ज्ञान गतानुगतिक, पारम्परिक हो चुका था। पाश्चात्य ज्ञान विज्ञान नए जीवन सन्दर्भों

---

१ रीतिकालीन साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि डा० शिवलाल जोशी प्रथम सस्करण, प० १२७।

२ हिन्दी साहित्य का इतिहास–डा० रामकुमार वर्मा द्वि० सस्करण, प० ३१३।

३ रीतिकालीन साहित्य की ऐतिहासिक पष्ठभूमि, डा० शिवलाल जोशी, प्रथम सस्करण, पृ० १०४।

४ रीतिकालीन कवियो का प्रम व्यजना–डा० बच्चनसिंह, प्रथम सस्करण, पृष्ठ १९।

की ताजगी लिए था । भारतीय ज्ञान विज्ञान का लक्ष्य अध्यात्मिक एव पारलौकिक था तो पाश्चात्य नान विनान का भौतिक एव इहलौकिक था । इस देश की विद्या वग या जाति विशेष तक सीमित थी पर पाश्चात्य विद्या सब सुलभ थी । ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र म भारत न भी अभतपूव प्रगति की थी । जिसके प्रमाण दशन, ज्योतिष, गणित औषधि विज्ञान काव्य शास्त्र व्याकरण आदि मे प्राप्त होते हैं ।[1]

भारतीय समाज की सामाजिक आर्थिक व्यवस्था सम्मिलित परिवार प्रथा पर आधारित थी । परिवार के मुखिया का सम्मान करना आज्ञा पालन करना पारिवारिक जना का क्त य माना जाता था । उनके भरण पोषण की जिम्मेदारी परिवार के मुखिया की थी । सम्मिलित परिवार म परम्परागत रूढियो का पालन होता था । वर्णाश्रम व्यवस्था स्थिर थी ।

अग्रेजो द्वारा प्रचारित नई शिक्षा प्रणाली का दोहरा प्रभाव भारतीय समाज पर पडा था । नई शिक्षा प्रणाली मे शिक्षित भारतीय युवक एक ओर बाबू अथवा मु सिफ बने अग्रेजो क ईमानदार सेवक बने । तो दूसरी ओर इसी शिक्षा प्रणाली के कारण पश्चिमी ज्ञान विज्ञान से सम्पन्न युवक स्वराज्य, स्वतन्त्रता समानता आदि नए विचारो से प्रेरित हो जन जागरण के क्षेत्र म आग बढ । राष्ट्रीय शिक्षा सस्थाए एव अखबार जसे सबय माध्यम उन्हें प्राप्त थे । परिणामस्वरूप धीरे धीरे नव जागरण जीवन के सभी क्षेत्रो म व्याप्त हुआ ।

राजस्थान म बूंदी एक छोटी रियासत थी फिर भी चित्र कला में बूंदी की एक विशिष्ट शली है । यहाँ के राजा कला के पूण विकास मे सहयोग प्रदान करते थे । राजा रामसिंह राव गोपीनाथ आदि न बूंदी की कला को विशेष प्रोत्साहन दिया था । बूंदी की शली म अनक मौलिक रचनाएँ देखने को मिलती हैं । इस कला शली के प्रमुख विषय हैं--रासलीला शिकार सवारी उत्सव आदि । राग रागनियो म भरवा टोडी । प्रकृति म वर्षा का आनन्द, ग्रीष्म का कष्ट एव शीत का प्रकोप दिखाया जाता था । घने जगलो मे पशु एव मघाच्छन्न आसमान में पक्षियो की उडानें चित्रित की जाती थी । वर्षा म नाचता हुआ मोर जितना बूंदी म दिखाया गया है उतना अन्यत्र कहीं नहीं मिलता । मकानों बाजारो और ग्रामो का चित्रण भी आकषक है । यहाँ के नर-नारी का रूप भी अपना अलग आकषण रखता है । बूंदी के कलाकारो का गुण विशेष यह था कि व रसिक एव प्रेमी होते हुए भी वीर थे । कला के माध्यम से यहाँ रस बरसाया गया प्यार उभारा गया, किन्तु इसक विपरीत देश की रक्षा के लिए हँसते-हँसते प्राण भी दे

1 हिन्दी साहित्य का इतिहास–सम्पादक डॉ० नगेन्द्र, प्रथम सस्करण, पृ० ४१७ ।

दिय । इन्ही रोचक गाथाओ के कारण बूँदी की कला अमर हुई है ।"[१]

पर्व एव त्यौहार समाज जीवन के अविभाज्य अग है । राजस्थान के मुख्य त्यौहार है–होली, गणगौर आखातीज, ज माष्टमी राखी पूनम सती पूजन, दशहरा, दीपावली, बसन्त पचमी आदि ।[२]

होली–होली के पर्व म फाग आता है । फाग रग की बहार है । गुलाल स वातावरण लाल हो जाता है । पिचकारियो से रग की फहार छूटती है । सारा जन जीवन रग से तरवतर हो उठता है ।

गणगौर–होली के बाद तेरह दिनो तक गणगौर का उत्सव मनाया जाता है । यह एक पर्व भी है । अतिम तीन दिनो म नारिया मेहँदी लगाकर सजती हैं । मिठाइया बनती हैं । बहू बेटियो को नए वस्त्र एव अलकार दिए जाते हैं । गणगौर विमजन की यात्रा निकलती है जिसमे राजा महाराजा भी शामिल होते हैं ।[३]

आखातीज–गणगौर विसजन के एक मास बाद यह त्यौहार आता है । भेद भाव को भूलकर लोग आपस मे मिलते हैं । श्रवण तीज भी एक महत्त्वपूण पर्व है । महिलाएँ मेहँदी लगाती हैं । गौरी पूजन करती हैं । राजसी ठाठ बाट से इसकी भी यात्रा निकलती है । हाथी, घोडे, ऊँट आदि को सजा कर यात्रा मे सम्मिलित किया जाता है ।[४]

रक्षाबधन–राखी पूनम का रक्षा बधन का त्यौहार राजस्थान का विशेष त्यौहार है । इस पर्व ने इतिहास काल म अपना महत्त्व राजस्थान की भूमि मे ही सिद्ध किया था । नारी विषयक आदरयुक्त पवित्र भावना का, बधु भगिनी प्रेम का यह प्रतीक है ।[५]

सती पूजन–यह नारियो का पर्व है । भाद्रपद अमावस्या को यह सम्पन्न किया जाता है । झुन झुनू गाव मे सतीमाता का बडा मदिर है । उसके पूजन के हेतु नारियाँ हजारो की सख्या म वहाँ एकत्रित होती हैं । जो वहाँ नही जा सकती व अपने अपने घर पर ही सती माता का पूजन करती हैं । इतिहास काल म जिन सहस्रा नारियो न अपने शील रक्षण हेतु आत्माहुति दी । उनकी पुण्य स्मृति

---

१ राजस्थान का इतिहास–डी० एम० दिवाकर प्रथम सस्करण पृ० ४३८ ।

२ भारतीय सस्कृति कोश–सम्पादक प० महादवशास्त्री जोशी–खण्ड प्रथम सस्करण पृ० १ ।

३ राजस्थान–प० महादवशास्त्री जोशी सन् १९६३ ईसवी सस्करण, पृ० ७१ ७२

४ वही, पृ० ७२ ।

५ वही, पृ० ७२ ।

राजस्थान की नारियों ने इस पर्व के रूप में जीवित रखी है।[1]

इनके अलावा पाबू तेजाजी, रामदेवजाभा, जलयजनी आदि के मेले भी लगते है। शूरवीरता की परम्पराओं के समान राजस्थानी संस्कृति में संगीत, नृत्य, नाट्य आदि कलाओं की भी परम्परा पुरानी है। कठपुतलियों का नृत्य घूमर नृत्य भवाई नृत्य प्रसिद्ध है।[2]

रीतिकालीन कवियों की रचनाओं में फाग, षड्ऋतु बारहमासा आदि के प्रसंग में य सांस्कृतिक सामाजिक परम्पराएँ प्रतिबिम्बित दृष्टिगोचर होता है। राव गुलाबसिंह जी की रचनाएँ भी उससे मुक्त नहीं है। अपने काव्य नियम ग्रन्थ में उन्होंने वर्ष के बारह मासों के उत्सवों का विशद वर्णन किया है।

साहित्यिक-विवेच्यकालीन हिन्दी साहित्य की सृजन प्रक्रिया में एक नया परिवर्तन दृष्टिगत होता है। साहित्य की अभिव्यक्ति का प्रधान साधन काव्य था गद्य का प्रयोग यत्र तत्र ही मिलता था। काव्य भाषा मजी हुई थी तो गद्य भाषा अनगढ़ थी।

प्रशासन की आवश्यकता के रूप में फोर्ट विलियम कॉलेज की छत्र छाया में लल्लूलाल एवं सदल मिश्र ने गद्य लेखन के प्रयास का आरम्भ किया था। फोर्ट विलियम की छत्र छाया के बाहर भी इन्शाअल्लाखाँ सदासुखलाल ने गद्य लेखन आरम्भ कर दिया था। स्वामी दयानन्द के धर्म प्रचार के कार्य में भी हिन्दी गद्य का प्रयोग उन्होंने किया था। आर्य समाज के मुखपत्र सत्यार्थ प्रकाश की भाषा भी गद्य भाषा थी। ईसाई पादरियों ने अपने धर्म प्रचार के कार्य में हिन्दी गद्य का प्रयोग कर हिन्दी गद्य के विकास में योगदान दिया। राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द एवं राजा लक्ष्मणसिंह जी ने भी भारतेन्दु के उदय तक के काल में गद्य भाषा और साहित्य के विकास में महत्त्वपूर्ण कार्य किया। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा सम्पादित मासिक पत्रिका कविवचन सुधा के प्रकाशन सन् १८६८ ईसवी से सन् १९०० ईसवीं में 'सरस्वती' मासिक पत्रिका के प्रकाशन तक स्वयं भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी एवं उनके सहयोगी, समकालिक साहित्यकारों ने गद्य साहित्य को ही विकसित किया। गद्य के लिए खड़ी बोली तो कविता के लिए ब्रजभाषा इस प्रकार भाषा का दोहरा प्रयोग साहित्य में भारतेन्दु युग तक विद्यमान था। कविता में भी खड़ी बोली का प्रयोग

१ भारतीय संस्कृति कोश—सम्पादक पं० महादेवशास्त्री जोशी, खण्ड ८ प्रथम संस्करण पृ० २।

२ १—राजस्थान पं० महादेव शास्त्री जोशी सन् १९६३ ई० संस्करण, पृ० ७६—७९

२—भारतीय संस्कृति कोश सम्पादक पं० महादेवशास्त्री जोशी, खण्ड ८, प्रथम संस्करण पृ० २

प्रारम्भ हुआ था किन्तु विकास परवर्ती काल मे ही हो गया था ।

भारतेन्दु काल के पूववर्ती ब्रजभाषा काव्य को तीन वर्गों म विभक्त किया जाता है-भक्ति श्रृगार रस का काव्य और रीति निरूपण । भक्ति काव्य के रचियता मे रीवा नरेश महाराज रघुराज सिंह जी का प्रमुख स्थान है । रीतिकालीन श्रृगार काव्य परम्परा का निर्वाह इस काल के कवियो के लिए स्वाभाविक ही था। ठाकुर कवि के पौत्र शकर कवि सरदार कवि चन्द्रशेखर आदि इस परम्परा के कवि थे । काव्य रीति निरूपण भी इस काल की परम्परा सिद्ध उपलब्धि है । इस परम्परा मे हरिपुर के निवासी रामदास अथवा राजकुमार चन्द्रशेखर वाजपेयी बाबू गोपाल चन्द्र गिरधरदास व्रजनाथ द्विवेदी आदि ने रस नायिका भेद अलकार छन्द प्रभृति काव्यागो का विवचन अपने ग्रन्थो म किया है ।[1]

भारतेन्दु युग म एक नए परिवेश म साहित्य सजन का काय होता रहा । जन चेतना पुनजागरण की भावना से अनुप्राणित थी । इस युग के साहित्य सजन मे इसका प्रतिबिम्ब पडना स्वाभाविक था। रीतिकालीन श्रृगारिक रसिकता, अलकरण का मोह, रीति निरूपण, प्रकृति का उद्दीपनात्मक चित्रण, नीति निरूपण एव भक्ति आदि रीतिकालीन प्रवत्तियो का महत्व घटता गया । भारतेन्दु जो ने जनता के उदबोधन के हेतु जातीय सगीत अर्थात लोकगीतो की शली एव सामाजिक विषयो की कविता पर बल दिया । मातभूमि प्रेम स्वदेशी वस्तुओ का व्यवहार, गो रक्षा, बाल विवाह निषेध, शिक्षा प्रसार का महत्त्व, मद्य निषेध प्रशासन पर व्यग्य आदि नए विषयो पर काव्य का निर्माण हुआ । भारतेन्दु कालीन रचना प्रवृत्तियो एक ओर भक्ति काल और रीतिकाल से अनुबद्ध है तो दूसरी ओर समकालिक परिवेश के प्रति जागरूकता का अभाव भी उनम नहीं है ।[2]

राव गुलाबसिंह जी के ग्रन्थो का अवलोकन करने से यह प्रतीत होता है कि व नवीन चेतना के कवि नही थ । विषय वस्तु एव रचना प्रणाली की दृष्टि स रीतिकार की प्रवत्ति के साहित्यकार थ । राजाश्रय वस्तुत रीतिकाव्य का मरुदण्ड है क्योकि वही कवियो के जीवन यापन का आर्थिक आधार और यश अभ्युदय की उपलब्धि का प्रधान कारक था । शास्त्रीयता, श्रृगारिकता और अलकरणप्रियता इत्यादि रीतिकाल की जो अन्य विशेषताएँ है उनके स्वरूप को विकसित और नियोजित करने म राजाश्रय महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है ।[3] डा० जगदीश गुप्त का

---

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास सम्पादक डॉ० नगेन्द्र-प्रथम सस्करण, पृ० ४५२ से ४५४

२ वही पृ० ४५४-४५५

३ रीतिकाव्य-डॉ० जगदीश गुप्त प्रथम सस्करण, पृ० ३ ।

यह मत राव गुलाबसिंहजी के विषय मे भी उतना ही खरा उतरता है जितना किसी अन्य रीतिकालीन कवि के विषय मे ।

रीति युग के साहित्य को स्थूल रूप से—१ रीति ग्र थ २ आश्रयदाताओ की स्तुति ३ शृंगार वणन ४ नीतिकाव्य ५ भक्ति काव्य आदि मे विभाजित किया जा सकता है ।

रीति ग्रन्थो के निर्माण म सस्कृत काव्य शास्त्रीय परम्परा ने रीति कवियो के लिए आधारभूत सामग्री प्रस्तुत कर ही दी थी । सस्कृत का य शास्त्र मे रस अलकार, रीति ध्वनि एव वक्रोक्ति य पाँच सम्प्रदाय विद्यमान थे । इन सम्प्रदायो मे रस सम्प्रदाय सबस प्राचीन सम्प्रदाय है । आचाय भरत के इस सिद्धान्त की भट्ट लोल्लट शकुक भट्टनायक एव अभिनव गुप्त ने व्याख्या की तथा भोज, मम्मट, एव विश्वनाथ ने व्याख्या करत हुए स्थापना की थी । इनके बाद एसे भी आचाय इस परम्परा म हुए जिन्होन का याग के रूप म इसके स्वरूप भेदाभेद का विवेचन करत हुए सामा य पाठक के लिए इसे सहज बोध्य बना दिया था । भानुदत्त एव उनके प्रसिद्ध ग्र थ रस तरगिणी एव रस मजरी इस दृष्टि से महत्त्वपूण हैं । मध्यकाल मे अपनी सुबोधता के कारण ये ग्र थ पाठय ग्रन्थ ही बने ।

यद्यपि अलकारो की चचा आचाय भरत के नाटयशास्त्र मे ही की जा चुकी थी सिद्धान्त रूप म भामह न इसकी स्थापना की । भामह क पश्चात दण्डी उदभट रुदट जयदेव आदि न अलकार एव अलकाय का अभेद मानते हुए इसे काव्य का आधार भूत तत्त्व कहा । इनक पश्चात भानुदत्त मिश्र क समान अप्पय दीक्षित इस परम्परा क आचाय है जिन्होने अपने ग्र थ कुवलयान द म इसे अत्य त सुबोध एव सक्षिप्त रूप म प्रस्तुत किया । जयदव का च द्रलोक भी एसा ही अधिक प्रिय एव मा य ग्र थ है ।

ध्वनि सिद्धान्त यद्यपि आन द वधन क पववर्ती काल म प्रचलित था आनन्द वधन ने इसकी स्थापना करते हुए पूववर्ती सिद्धान्तो की सम्यक परीक्षा की । ध्वनि सिद्धा त म रस अलकार गुण रीति और दोष के स्थान का निर्धारण किया । कुतक, महिम भटट ने इस सिद्धा त का विरोध किया । अ ततोगत्वा आचाय मम्मट का एतदविषयक विवेचन महत्त्व पा गया ।

रीति एव वक्रोक्ति तथा औचित्य सम्प्रदाय लोकप्रिय न हो सकने के कारण स्थिर नही रह सके ।

छन्दो के विवेचन की धारा भी इन सिद्धा तो क साथ स्वतन्त्र रूप म चली है । सम्भवत का य म गद्य और पद्य दोनो का विचार किय जान से काव्याग के रूप म छन्द का विचार पूववर्ती का य शास्त्रियो न नही किया था ।

रीति कालीन कवियो क समक्ष भी काव्यागो का सुबोध ज्ञान प्राप्त करने

योग्य ग्रथो को उपलब्ध कराने का लक्ष्य रहा था। अत उन्होने भी रीति निरूपण के लिए उन्हा आचार्यों को अपना आधार बनाया जिनके ग्रन्थ सुबोध एव विवेचन की दृष्टि से व्यवस्थित थे। इन ग्रन्थो मे शृगार रस नायक नायिका भेद के लिए भानुदत्त की 'रस मजरी, रस और रस के भेदोंपभेदो के लिए उन्ही की 'रस तरगिणी' अलकारो के लिए जयदेव का चन्द्रालोक अथवा अप्पय दीक्षित का कुवलयानन्द सर्वाधिक ग्राह्य ग्रन्थ रहे। सर्वांग निरूपक रीति कवियो ने मम्मट के काव्य प्रकाश अथवा विश्वनाथ के साहित्य दपण का आधार ग्रहण किया। छन्दों निरूपक कवि भट्ट केदार के वत्त रत्नाकर अथवा गगादास की 'छन्दों मजरी' तथा प्राकृत पगल्म के ऋणी रहे।[1]

हिन्दी रीति ग्रन्थो के निर्माण की परम्परा आचाय केशवदास में आरम्भ होकर चिन्तामणि त्रिपाठी से अनवरत रूप से विकसित हुई। इस काल मे निर्मित रीति ग्रन्थ सस्कृत के काव्य शास्त्रीय ग्रन्थो के आधार पर निर्मित हुए थ। अत इनके उपजीव्य मूल ग्रन्थो म प्रतिपादित सिद्धान्तो म नया बहुत कम जोडा जा सका है। इमी परम्परा मे राव गुलाबसिह जी के काव्य नियम काव्यसिन्धु लक्षणकौमुदी व्यग्याथ चन्द्रिका, वहत् व्यग्याथ चन्द्रिका वनिता भूषण, वृहत वनिता भूषण आदि ग्रन्थो का प्रणयन हुआ है। इन ग्रन्थो की रचना म कवि शिक्षा को सुबोध बनाने का ही प्रयास राव गुलाबसिह जी ने किया है।

दरबारों मे आश्रय देने वाले आश्रयदाता एव सम्मान कर्ता राजाओ की स्तुति में रीतिकालीन कवियो ने स्वतन्त्र रूप म ग्रन्थ रचना की थी—भूषण का शिवाबावनी पद्माकर का हिम्मत बहादुर विरदावली इसी श्रेणी के ग्रन्थ हैं। इसके अलावा अपने ग्रन्थो के प्रारम्भ म अथवा अन्त म कतिपय छन्दो म इस प्रकार की प्रशस्तियाँ देने की भी परम्परा रही थी। 'आश्रयदाताओ अथवा उनके पूवजो के श्रेष्ठ कर्मों की प्रशस्तियाँ आश्रयदाताओ की राज्यश्री आदि का वर्णन किया था।[2]

दरबारो में विद्यमान राजसी सस्कृति शृगारिकता के लिए अधिक पोषक थी। आश्रयदाता एव अन्य दरबारी जनो सन्तुष्टि के लिए शृगारी रचना युगीन आवश्यकता के रूप म निर्मित होनी रही। काव्य रीति विषयक ग्रन्थो म शृगार रस एव नायिका भेद का प्राधान्य भी इसो युगीन अभिरुचि को व्यक्त करता है।

राव गुलाबसिह जी ने आश्रयदाता एव सम्मान कर्ताओ की स्तुति म स्वतन्त्र ग्रन्थो का निर्माण नही किया फिर भी उनके अनेक ग्रन्थो म आश्रयदाताओ की स्तुति उनकी दानवीरता आदि विषयक छन्द प्राप्त हैं। शृगार विषयक रचनाओं

---

१ हिन्दी साहित्य का इतिहास—डॉ॰ नगेन्द्र—प्रथम सस्करण पृ॰ २९४ से २९६।
२ वही, पृ॰ २९८

के रूप मे प्रेम पचीसी पावस पचीसी ग्र थ विरचित हैं । "यग्याथ च द्रिका वहत "यग्याथ च द्रिका, वनिता भूषण बहत वनिता भूषण आदि ग्र थो मे शृगार रस का आधिक्य स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है ।

रीतिकाल म शृगारी का य के समान नीति विषयक रचनाएँ भी प्राप्त होती हैं । नीति सम्ब धी रचनाओं की परम्परा भी काफी पुरानी है । भत हरि ने एक साथ शृगार, नीति एव वराग्य इन तीन शतको का निर्माण किया था ।[१] सस्कृत सुभाषितो मे अ योक्ति के रूप मे नीति साहित्य उपलब्ध होता है । नीति भारतीय कविया का प्रिय विषय रहा है । राव गुलाबसिंह जी के कृष्ण चरित म प्राप्त नीति कथन अनुषगिक रूप का नीति कथन है । नीतिच द्र, राजनीति एव प्रशासन विषयक प्रब धात्मक ग्र थ है । नीति म जरी मुक्तक रूप का ग्र थ है ।

रीति काल मे एक गौण का य प्रवत्ति के रूप मे भक्ति विषयक रचनाएँ प्राप्त होती हैं । भक्ति की प्रवत्ति रीति ग्र थो क मगलाचरण के रूप म एव स्वत त्र ग्र थो के रूप म भी देखने को मिलती है । विष्णु के राम और कृष्ण इन दो अवतारी रूपो मे विशेष आस्था रखते हुए भी गणेश, शिव शक्ति आदि मे भी रीतिकालीन कविया की श्रद्धा थी । इसम यह स्पष्ट हो जाता है कि य कवि सम्प्रदाय विशेष की मर्यादा म आबद्ध नही रह थे । सामा य आस्तिक हि दुओ क मन म विभिन्न दवी देवताओ के प्रति जो श्रद्धा भाव था उसी का अभि यजन उ होने अपने का य म किया था । इससे उनकी बहुदेवोपासना की प्रवत्ति ही दिखाई देती है । 'यह भक्ति विलास जजर दरबारी वातावरण के बाहर विषय वासना ज य दु खो से आकुल मन के लिए शरण भूमि थी । इनकी भक्ति म धम के उस स्वस्थ और नतिक रूप का, जो आत्मबल द्वारा जीवन धारण करता है अभाव हो चुका था पर तु विश्वास अभी ज्यो का त्यों बना हुआ था ।[२]

राव गुलाबसिंह विरचित विभिन्न अष्टक स्तुति साहित्य एव कृष्ण चरित आदि रचनाओ पर यही प्रभाव परिलक्षित हाता है ।

इस प्रकार युगीन पष्ठभूमि के अ तगत विवचित विभिन्न क्षेत्रो की प्रवत्तियो एव स्थानीय परिवेश से राव गुलाबसिंह जी के साहित्य की अ तस्सलिला प्रवत्ति को समझने में पर्याप्त मात्रा मे सहायता प्राप्त होती है ।

---

१ हि दी साहित्य उसका उदभव और विकास डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी, सन १९६३ ई० सस्करण, प० २२७

२ रीति का य की भूमिका डा० नगे द्र, चतुथ सस्करण प० १६५

२ | राव गुलाबसिंह जी का जीवन-चरित्र

किसी भी साहित्यकार के साहित्य के समुचित अध्ययन म युगीन पष्ठभूमि के समान उसके जीवन वत्त की जानकारी भी अपना महत्व रखती है। साहित्यकार का जीवन वृत्त उसके साहित्य की पष्ठभूमि को स्पष्ट करता है, उसे समझने मे सहायक भी होता है। अत व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओ को समझाने के लिये उसके चरित्र को देखना आवश्यक होता है। साहित्यकार के जीवन वत्त को जानने के लिय प्रमुखत दो सूत्रो स सहायता प्राप्त हो सकती है —१ अत साक्ष्य और २ बहि साक्ष्य

अत साक्ष्य–अत साक्ष्य सामग्री म साहित्यकार की उन साहित्य कृतियो का समावेश होता है जिसम प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष रूप मे उसके जीवन विषयक सदर्भ अथवा सकेत प्राप्त होते हैं। राव गुलाब सिंह जी के समस्त ग्रथो म से केवल छ ग्रथो म जीवन विषयक सामग्री प्राप्त होती है। व ग्र थ हैं––(१) गुलाब कोश (२) ललित कौमुदी (३) वहत वनिता भूषण (४) भूषण चन्द्रिका (५) नीति चन्द्र एव (६) कृष्ण चरित का गोलोक खण्ड। इन ग्र थो मे से सर्वाधिक एव विस्तत जानकारी नीतिचन्द्र म प्राप्त होती है। शेष ग्रथो म अत्यन्त सक्षिप्त जानकारी मिलती है।

वहि साक्ष्य–वहि साक्ष्य सामग्री म समसामयिक लेखको द्वारा लिखित जीवन चरित्र, साहित्य इतिहासों मे से प्राप्त जीवनवत्त विषयक जानकारी, ताम्रपट, शिला लेख समसामयिक व्यक्तियो स मौखिक रूप मे प्राप्त सूचना किंवदतियो तथा वशजो से प्राप्त सामग्री आदि का समावश किया जाता है। समसामयिक लेखको द्वारा लिखित राव गुलाबसिंह जी का जीवन चरित्र दो ग्रथो म प्राप्त होता है। वे ग्रथ निम्नलिखित है—

१ ललित कौमुदी–रीतिकाल के ख्याति प्राप्त महाकवि मतिराम द्वारा विरचित ललित ललाम' की टीका के रूप म इस ग्रथ का प्रणयन राव गुलाबसिंह जी ने किया है। भारत जीवन प्रेस काशी से श्रीयुत रामकृष्ण वर्मा द्वारा मुद्रित एव प्रकाशित इस ग्रथ के प्रारम्भ मे श्रीयुत रामकृष्ण वर्मा ने कवि का विस्तत जीवन चरित्र दिया है।

२ कविरत्नमाला भाग १–प्रसिद्ध इतिहासकार मुशी देवीप्रसाद इस ग्रथ

वे लेखक एव प्रकाशक हैं। वे राव गुलाबसिंह जी के समकालीन थे। उनसे वे भली भाँति परिचित भी थ।[1] साहित्य के अध्ययन म साहित्यकारों की जीवनियो की कमी को पूरा करन के हेतु राजपूताना आदि के १०८ कवियो की अप्रकाशित कविताओ एव जीवनियो को यथा साध्य सकलित तथा प्रकाशित करने का जो सकल्प उन्होने किया था उसक परिणामस्वरूप ६५ कवियो की कविताओ एव जीवनियों का सकलन इस ग्रन्थ म किया गया है।[2]

हिन्दी साहित्य के इतिहासो म केवल निम्नलिखित तीन ग्रन्थों मे राव गुलाबसिह जी के जीवन चरित्र के सम्बन्ध म उल्लेख प्राप्त होता है।

१ मिश्रबन्धु विनोद–भाग ३, मिश्र बधु।

२ राजस्थानी भाषा और साहित्य–डॉ० मोतीलाल मनारिया।

३ राजस्थान का पिंगल साहित्य–डा० मोतीलाल मनारिया।

'राजस्थानी भाषा और साहित्य एव 'राजस्थान का पिंगल साहित्य मे प्राप्त जीवन विषयक सूचना एक सी ही है।

राव गुलाबसिह जी के विद्यमान वशज उनके पौत्र राव मुकुद सिंह जी बूँदी मे भी पत्राचार द्वारा एव प्रत्यक्ष साक्षात के प्रसग म राव गुलाबसिह जी के जीवन के सम्बन्ध म कुछ जानकारी उपलब्ध हुई है।

इसी अन्त साक्ष्य तथा बहि साक्ष्य सामग्री के आधार पर राव गुलाबसिह जी का जीवन वत्त प्रस्तुत किया जा रहा है।

काल निणय

(अ) जन्म–अन्त साक्ष्य सामग्री के अ तगत राव गुलाबसिह जी के जन्म काल के सम्बन्ध म कवल नीतिचन्द्र शीषक ग्रन्थ म उल्लेख मिलता है जो इस प्रकार है—

सवत अष्टादश शतक सत्यासी पच सत।
भाद्र प्रतिपदा म जनम कवि गुलाब को नेत ॥[3]

बहि साक्ष्य सामग्री मे राव गुलाबसिह जी के जन्म काल के सम्ब घ मे श्रीयुत रामकृष्ण वर्मा जी क ललित कौमुदी मे जीवन चरित्र मे एव देवीप्रसाद जी ने कविरत्न माला भाग १ म जो उल्लेख किए हैं वे इस प्रकार हैं—

'कवि राव जी का जन्म सवत १८८७ के भादो सुदी १ को हुआ।'[4]

---

१ कवि रत्न माला भाग १, मुशी देवीप्रसाद मुसिफ स० १९६८ वि० का स० कवि राव गुलाबसिह जी का चरित्र पृ० ८७।

२ वही, ग्रन्थ की भूमिका।

३ नीति चन्द–राव गुलाबसिह सवत १९४३, वि० सस्करण प० ४ छद २७।

४ ललित कौमुदी राव गुलाबसिह प्रथम स० जीवन चरित्र अ श प० १।

"गुलाबसिंह जी भादो सुदी १ सवत १८८७ को जन्मे ।"[1]

मिश्र बन्धुओ ने[2] एव डॉ० मोतीलाल मेनारिया ने[3] रावगुलाबसिंह जी के जन्म सवत १८८७ वि० का ही उल्लेख किया है तिथि, पक्ष, मास, आदि के विषय म वे मौन हैं ।

राव गुलाबसिंह जी के विद्यमान वशज उनके पौत्र राव मुकुन्दसिंह जी ने भी उनकी जन्म तिथि 'भादो सुदी १ सवत १८८७ दी है ।[4]

इस विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि राव गुलाबसिंह जी के जन्म के सम्बन्ध मे विभिन्न स्रोतो से जो सूचनाएँ प्राप्त होती हैं उनमे जन्म सवत १८८७ वि० के विषय मे एक वाक्यता है । तिथि एव मास आदि का जहा उल्लेख हुआ है वहाँ भी समानता है ।

अत यह निश्चय पूवक कहा जा सकता है कि राव गुलाबसिंह जी का जन्म सवत १८८७ वि० भाद्रपद शुक्ल प्रतिपदा को ही हुआ है ।

(ब) स्वगवास–राव गुलाबसिंह जी के स्वगवास के सम्बन्ध म वहि साक्ष्य सामग्री पर निभर रहना पडता है । वहि साक्ष्य सामग्री के विभिन्न सूत्रो से प्राप्त जानकारी यहा प्रस्तुत की जा रही है–

१ मिश्र बन्धु विनोद भाग ३, राजस्थानी भाषा और साहित्य तथा राजस्थान का पिंगल साहित्य इन तीनो ग्रन्थो मे राव गुलाबसिंह जी के स्वगवास के केवल सवत का ही निर्देश किया गया है । तिथि मास आदि के विषय में कोई निर्देश नही किया गया है । इनके अनुसार राव गुलाबसिंह जी के स्वगवास का सवत १९५८ वि० है ।[5]

---

१ कवि रत्न माला भाग १ देवीप्रसाद मुसिफ सवत १९६८ वि० सस्करण, कवि राव गुलाबसिंह चरित्र पृ० ८७ ।

२ मिश्र बधु विनोद भाग ३ मिश्र बन्धु सवत १९८५ वि० स० पृ० १०५५ ।

३ (१) राजस्थानी भाषा और साहित्य–डा० मोतीलाल मेनारिया तृतीय स० पृ० ३३१ ।
(२) राजस्थान का पिंगल साहित्य–डॉ० मोतीलाल मेनारिया प्र० स० पृ० २२५ ।

४ राव मुकुन्द सिंह बूंदी से प्रश्नावली के उत्तर म प्राप्त सूचना ।

५ (१) मिश्र बधु विनोद, भाग, ३, मिश्र बन्धु स० १९८५ वि० स० पृ० १०५५ ।
(२) राजस्थानी भाषा और साहित्य डा० मोतीलाल मेनारिया तृ० स० पृ० ३३१
(३) राजस्थान का पिंगल साहित्य–डा० मोतीलाल मेनारिया प्रथम सस्करण पृ० २२५ ।

सिंह जी का स्वर्गवास जेष्ठ शुक्ल तृतीया, सोमवार, संवत १९५८ वि० को हुआ है।

जन्म एवं स्वर्गवास की तिथियों का निर्धारण हो जाने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि राव गुलाबसिंह जी भाद्रपद शुक्ल प्रतिपदा संवत १८८७ वि० से जेष्ठ शुक्ल तृतीया संवत १९५८ वि० तक विद्यमान थे। उन्होंने ७१ वर्ष की प्रदीर्घ आयु पायी थी।

(ख) जन्मस्थान—राव गुलाबसिंह जी के जन्म स्थान के विषय में अन्तःसाक्ष्य सामग्री से कोई संकेत प्राप्त नहीं होता है। बहिःसाक्ष्य सामग्री में प्राप्त सूचनाएँ इस प्रकार हैं—

श्रीयुत रामकृष्ण वर्मा एवं डा० मोतीलाल मेनारिया के अनुसार राव गुलाब सिंह जी का जन्म अलवर राज्यांतर्गत राजगढ़ में हुआ है।[1] मिश्र बन्धुओं ने इनका जन्म स्थान बूंदी माना है।[2] रावगुलाबसिंह जी के विद्यमान वंशज राव मुकुंदसिंह जी इनका जन्मस्थल अलवर मानते हैं।[3]

इस प्रकार राव गुलाबसिंह जी के जन्म स्थान के सम्बन्ध में तीन मत प्राप्त होते हैं—१ राजगढ़ २ बूंदी एवं ३ अलवर। अतः जन्म स्थान का निश्चित निर्धारण करने के लिए इन तीनों स्थानों के विषय में उपलब्ध सूचनाओं की परीक्षा आवश्यक है।

राव गुलाबसिंह जी के समकालिक चरित्र लेखक श्री रामकृष्ण वर्मा एवं देवीप्रसाद जी ने अपने ग्रंथों में जो सूचना दी है वह जन्म स्थान के निर्धारण में सहायक सिद्ध होती है। सूचना इस प्रकार है—

१ पाँच ही वर्ष की अवस्था में पढ़ने लिखने का शौक अधिक हुआ। भाषा काव्य और संस्कृत में सारस्वत चन्द्रिका कण्ठस्थ कर गए थे। तदुपरान्त अलवर में आकर राव जी ने श्री पूर्णमल्ल जी से भाषा ग्रन्थ और संस्कृत ग्रन्थ अर्थ सहित पढ़े।[4]

२ "पाँच बरस की उमर में भाषा काव्य और सारस्वत चन्द्रिका कण्ठस्थ

---

१ (क) ललित कौमुदी राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण, जीवन चरित्र अंश पृ० १।

(ख) राजस्थानी भाषा और साहित्य डा० मोतीलाल मेनारिया, तृतीय संस्करण पृ० ३३१।

(ग) राजस्थान का पिंगल साहित्य—डा० मोतीलाल मेनारिया द्वितीय संस्करण पृ० २२५।

२ मिश्र बन्धु विनोद भाग ३ मिश्र बन्धु संवत १९८५ वि० संस्करण, पृ० १०५१।

३ राव मुकुंदसिंह जी बूंदी प्रश्नावली के उत्तर में प्राप्त सूचना।

४ ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण, जीवन चरित्र अंश, पृ० १-१

करके अलवर मे गए।''

यह विवरण इस बात को स्पष्ट करता है कि राव गुलाबसिंह जी का जन्म अलवर में नहीं, कहीं अन्यत्र हुआ था। वे पाँच वर्ष की अवस्था में अलवर में आए थे। अतः अब केवल दो पर्यायी स्थान राव गुलाबसिंह जी के जन्म स्थान के रूप में विचार के लिए रह जाते हैं–१ बूंदी और २ राजगढ़।

राव गुलाबसिंह जी के जन्म स्थान के रूप में बूंदी का निर्देश केवल मिश्र बन्धु विनोद भाग–३ में मिलता है। ललित कौमुदी तथा कवि रत्न माला भाग २ की तुलना में मिश्र बन्धु विनोद बाद की रचना है।[1] श्रीयुत रामकृष्ण वर्मा ने ललित कौमुदी के जीवन चरित्र अंश में एवं देवी प्रसाद ने कवि रत्न माला भाग १ में राव गुलाबसिंह जी का जन्म स्थान अलवर राज्यान्तर्गत राजगढ़ दिया है। अपने पूर्ववर्ती इन लेखकों के विधान से अन्य मत प्रदर्शित करते हुए मिश्र बन्धुओं ने अपने विधान की पुष्टि में कोई प्रमाण नहीं दिया है। अतः प्रमाणों के अभाव में इस मत का स्वीकार करना तर्कसंगत प्रतीत नहीं होता। श्रीयुत रामकृष्ण वर्मा तथा देवीप्रसाद राव गुलाबसिंह जी के समसामयिक हैं। देवीप्रसाद जी तो राव गुलाबसिंह से व्यक्तिगत रूप से परिचित भी हैं। समकालिकता तथा व्यक्तिगत सम्बन्ध के आधार पर दिया हुआ विवरण अधिक प्रामाणिक एवं महत्त्वपूर्ण मानना तर्कसंगत प्रतीत होता है।

इस समग्र विवेचन के आधार पर यह सिद्ध होता है कि अलवर राज्यांतर्गत राजगढ़ ही राव गुलाबसिंह जी का जन्मस्थान था।

जाति वंश एवं धर्म परम्परा–

राव गुलाबसिंह जी की जाति के विषय में अन्य मान्य सामग्री में कोई संकेत प्राप्त नहीं होते हैं। यदि मान्य सामग्री में केवल डॉ० मोतीलाल मेनारिया ने अपने ग्रन्थों में राव गुलाबसिंह जी की जाति का संकेत किया है। वे उन्हें राव जाति का बतलाते हैं।[3]

---

१ कवि रत्न माला भाग १ मुन्शी देवी प्रसाद संवत् १९६८ वि० प्रथम संस्करण, कविराव गुलाबसिंह जी का चरित्र पृ० ८३।

२ मिश्र बन्धु विनोद प्रथम स० संवत् १९७० वि० है। कवि रत्नमाला भाग १ प्रथम संस्करण १९६८ वि० है।

३ (क) राजस्थानी भाषा और साहित्य–डॉ० मोतीलाल मेनारिया–तृतीय संस्करण पृ० ३११।
(ख) राजस्थान का पिंगल साहित्य–डॉ० मोतीलाल मेनारिया–प्रथम संस्करण, पृ० २२१।

इस राव जाति के विषय मे डा० मोतीलाल मेनारिया जी ने अपने ग्रन्थ में लिखा है— अधिकाश मनुष्य राव और भाट जाति को एक समझते हैं पर तु राव लोग इसे स्वीकार नही करते । वे अपने को भाट जाति स भिन्न मानते हैं और अपनी उत्पत्ति ब्रह्मा के यज्ञ से बतलाते हैं। हमारे विचार से भी राव और भाट जाति में थोडा अन्तर है। पर यह अ तर वण का नही कम का है। जो लोग पीढ़ी वशा वलियाँ रखत हैं जिनकी यजमानी ब्राह्मण वश्य आदि सभी जातियों के यहाँ है वे भाट और जो केवल राजपूतो के याचक हैं, राजदरबारी हैं पीढी वशावली रखने का काम नही करते वे राव नाम से प्रसिद्ध हैं । यह राव उस जाति की पदवी है जिसम असली नाम छिप गया है ।[1]

राव गुलाबसिंह जी न अपने अधिकाश ग्रन्थो मे अपने वश के विषय म स्पष्ट रूप से उल्लेख किया है यथा—

प्रगट ब न्दी वश में अणतराम सुवसार ।[2]
+ +
बन्दी वश माहि भय प्रगट अनन्तराम ।[3]

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि राव गुलाबसिंह जी का जन्म बन्दी वश मे हुआ था । कवि की जाति राव थी । शब्दकोशा तगत अर्थों से यह स्पष्ट होता है कि राव, भाट, बन्दी य समानार्थक शब्द हैं । राव गुलाबसिंह जी ने अपने अनेक ग्रन्थो मे नप वश वणन के अन्तगत अपने आश्रयदाताओ की स्तुति, यश एव कीर्ति का गान किया है। प्राय वन्दना क छ दो के पश्चात य नप वश वणन के छ द आये हैं । राव गुलाबसिंह जी की यह प्रवत्ति भी राव' एव ब न्दी शब्दो के अथ क साथ मेल खाता है।

वश परम्परा—राव गुलाबसिंह जी न अपन ग्र थो मे अपनी वश परम्परा क विषय म सूचना दी है। 'गुलाब कोश' ललित कौमुदी , 'भूषण चन्द्रिका 'आदि ग्रन्थो की तुलना मे नीति चन्द्र म विस्तत सूचना दी है। बहि साक्ष्य सामग्री म ललित कौमुदी" के जीवन चरित एव कवि रत्न माला भाग १ मे वश

१ राजस्थानी भाषा और साहित्य–डा० मोतीलाल मेनारिया ततीय सस्करण पृ० ३७ ३८।

२ गुलाब कोश–हस्त हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द ६।

३ ललित कौमुदी–राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण, छ द ३१।

४ (क) बहत हिन्दी कोश–सम्पादक मुकुन्दीलाल श्रीवास्तव ततीय सस्करण पृ० ११५२।

(ख) सक्षिप्त हिन्दी श दसागर, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, षष्ठ सस्करण, सवत २०१४ वि० पृ० ८४६।

परम्परा के विषय में विवरण प्राप्त होता है किन्तु वह भी अत्यल्प है। अतः इस विषय में नीति चन्द्र में उपलब्ध जानकारी अत्यधिक महत्त्व रखती है। नीति चन्द्र के आधार पर जो वंश परम्परा बनती है वह इस प्रकार है–

सबलसिंह––राव गुलाबसिंह जी ने अपनी वंश परम्परा का आरम्भ सबलसिंह से बताया है–

प्रगटे बन्दी वंश में सबलसिंह मति धाम।
शस्त्र शास्त्र में अति निपुन निपुन महा कवि काम॥[1]

अर्थात सबलसिंह बन्दी वंश में जन्मे थे। वे अतीव बुद्धिमान थे। शस्त्र शास्त्र एवं कवि कर्म में अतीव निपुण थे।

सुमतिसिंह–सुमतिसिंह सबलसिंह के पुत्र थे। इनके विषय में निम्नलिखित छन्द में वर्णन किया गया है–

सबलसिंह के सुमतिसुत पावन भयउ किशोर।
प्रबल प्रतापी विमल मन सज्जन कवि सिर मौर॥[2]

तात्पर्य यह है कि सुमतिसिंह, पवित्र आचरण के सज्जन एवं शुद्ध मन के थे। किशोर वय में प्रबल एवं प्रतापी थे। वे कवियों में भी श्रेष्ठ थे। सुमतिसिंह के सात पुत्र थे जिनका वर्णन राव गुलाबसिंह जी ने निम्नलिखित छन्द में किया है–

भे सुवन सात तिनके सुजान। तहँ बगस राम जेठो निधान।
मनमोहन सुन्दरदास जानि। मतिसागर हरजीराम मानि।
गुन आगर नाहर खान राम। सुत पंचम पावन धर्म धाम।
कुल पालन अति मति चापसिंह। पुनि दौलतराम रु रामसिंह॥[3]

इस छन्द से यह स्पष्ट हो जाता है कि सुमतिसिंह के सात पुत्रों में बगसराम ज्येष्ठ थे, सुन्दरदास मनमोहक थे। हरजीराम बुद्धिमान थे। नाहर खान गुणों के आगर थे। पाँचवें पुत्र चापसिंह धर्मशील शत्रु का दमन करने वाले तथा बुद्धिमान थे। दौलत राम एवं रामसिंह सम्भवतः वय में छोटे थे।

इनमें से नाहर खान के कुल में राव गुमान जी ने जन्म लिया था।

राव गुमान–राव गुमान के सम्बन्ध में निम्नलिखित छन्द में राव गुलाबसिंह जी ने बखान किया है––

उपजे नाहर खान के कुल में राव गुमान।
परशुराम भगवन्त के परम भक्त गुणवान॥
जिन नाद रस सागर में गायकी गुन धाम।
कीन्हि विवाद बार बहु गौरव कर तमाम॥

१ नीतिचन्द्र–राव गुलाबसिंह प्रथम मयूख पृ० [illegible], छन्द ११।
२ वही पृ० ३ छन्द १०। ३ वही पृ० ३ छन्द १३।
४ वही पृ० ३ छन्द १४, १५।

राव गुमान जैसा उपरोक्त छन्दों से प्रकट होता है धर्मात्मा थे। भगवन्त के परम भक्त एव गुणवान थे। जयनगर मे सातक्र उ हाने दो ग्राम पाय थे। अनेक बार तीर्थ यात्राएँ की थी। जाति बन्धुओ को अनक बार भोजन दिया था।

रामगुपाल-इन्ही राव गुमान के वश म रावगुलाबसिह जी क समकालिक राम गुपाल थे। य राव गुमान क नाती थे। राव गुलाबसिह जी ने इनके विषय में निम्नाकित छन्द में जानकारी दी है—

नाती राव गुमान को अब है रामगुपाल।
जयपुर मे है ताक सुहै आदर धरा बहाल ॥[1]

अर्थात राम गुपाल जो राव गुमान के नाती हैं उनको भी जयपुर म सम्मान प्राप्त है।

सुमतिसिंह के पाँचवे पुत्र बाघसिह से राव गुलाबसिह जी की वशावली विस्तारित हुई है। बाघसिह के पुत्र अन्तराम हैं। जिनके विषय मे निम्नलिखित छद दृष्टव्य है—

पचम सुवन किशोर के बाघसिह रनधीर।
तिनके भय सुरूप अरु अनन्तराम गम्भीर ॥[2]

पचम पुत्र रणधीर बाघसिह के अनन्तराम पुत्र हैं जो अपने पिता के सुयोग्य एव गम्भीर प्रकृति के पुत्र हैं।

अँतराम—अँतराम के विषय म अपन अन्य पूवजो से अधिक विस्तृत जानकारी राव गुलाबसिह जी ने दी है। यह जानकारी दने वाले छन्द इस प्रकार हैं—

"सुत बाघसिह के अनन्तराम। भे प्रबल प्रतापी धर्म धाम।
शत सवत अष्टा दश प्रवेश। भे तुँवरनाथ पट्टन नरेश।
जग जाहर सम्पति सिंह नाम। तिनको जस गावत जग तमाम।
भे अनन्तराम तिनके प्रधान। जुग पुस्त निरन्तर रहिव मान।
व्यापार घूँस करि धन अपार। जोरयो तजि सबको भय विचार।
इक समय जात अजमेर राह। पतसाह प्रबल यात्रा उछाह।
निज स्वामि बाल वय जानि आप। दिल्ली पति से किय मग मिलाप।
तब कूँ जा ता मधि धर समान। जुग सहस्र रुप्य फल दियउ दान
पुनि दई तिन हि सिविका सुवेश। दै पदवी तहँ सिविका नरेश।
वय बाल भूप कहि साध मान। आये फिर सादर स्वीय थान।

१ नीतिचन्द्र—राव गुलाबसिह—प्रथम सस्करण, पृ० ३ छन्द १६।
२ वही, पृ० ३, छन्द १७।

जयपुरादि राजान हू तिनको सहित विवेक ।
आदर ताजीमा दि जुत दीन दान अनक ॥
लाखन को धन जार त अतिश्रम बहुविध कीन ।
सो सब पट्टन नाथ न छिन मैं लीनो छीन ॥'[1]

गुलाबकोष एव ललित कौमुदी आदि ग्रथो मे कवि वश वणन अन तराम से आरम्भ होता है । अनतराम का अणतराम इस प्रकार का उल्लेख भी मिलता है । इस विषय के छ द यहाँ उद्धृत किये जाते हैं–

'प्रगट बदी वश मे अणतराम सुवसार ।
तु वर पति न राज को तिन शिर दीनों भार ।
जयपुरादि राजन हू तिनको सहित विवेक ।
आदर ताजीमादि जत दीने दान अनक ॥'[2]

ब दी वश माँहि भये प्रगट अनतराम । पटटन मैं तोरनाथ माने मुख्य मत्रकार ।
जै पुरादि राजन हु ताजीमादि मानजुत । दीने,दान तिनही को योग्य जानि केहि बार ॥'[3]

ऊपरिनिर्दिष्ट छन्दो के आधार पर अन तराम का जो चित्र एव चरित्र परि कल्पित होता है वह निम्नानुसार है–

अनन्तराम प्रबल प्रतापी एव धर्मात्मा थ । तु वरनाथ सपत्तिसिंह जब पट्टन नरेश (पाटन खेतडी के पास राजस्थान) बने तो अनतराम उनके प्रधान नियुक्त हुए । लगभग दो पीढियो तक उनका अच्छा मान वहाँ रहा । व्यापार आदि क द्वारा, सारे भय को छोडकर उन्होने सम्पत्ति प्राप्त की । एक समय दिल्ली के पात शाह अतीव उत्साह स अजमर क रास्त जा रहे थ । अपन स्वामी का बाल वय जान कर उन्होने दिल्लीपति स मेल मिलाप किया । दो सहस्र सौ य मुद्राएँ दान मे दी । प्रतिदान के रूप म दिल्ली पति से सिविका, पोशाख तथा सिविका नरेश पदवी प्राप्त की और अपने स्व स्थान म लौट आए । जयपुरादि राजाओ न भी इन्हे ताजीम, सम्मान, दान आदि दकर इनकी इज्जत की थी । लाखों का धन जोडने मे इन्होने अतीव परिश्रम किए थे किन्तु यह सपत्ति राजा न क्षण में छीन ली ।

सेदूराम–सेदूराम अनतराम के पुत्र थे । इनके विषय म निम्नलिखित छन्दों से सूचना प्राप्त होती है–

अनन्तराम के सुत भय सदूराम सुजान ।
पुनि सुखदेव सदासुख सुनीतिवान गुनवान ॥

---

१ नीतिचन्द्र–राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण पृ० ३ ४ छन्द १८ १९, २० ।
२ गुलाब कोष–हस्त हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छद ६, ७ ।
३ ललित कौमुदी–राव गुलाब सिंह प्रथम सस्करण, छ द ३१ ।

लियो भूप धन छीनी तब सेढराम रिसाय ।
तजि पटटन अलवर नगर आये सहित सहाय ।
तहँ बखतेश नरश ने आदर दियो अपार ।
पै पितु जीवत जानि कै तजि ताजीम विचार ।
बहुरि सुकवि पदवी दई कविता विशद विचारि ।
हास्य कथन मैं साम्यता राखि प्रभुता टारि ॥[1]"
"तिनके सेढूराम भे कविता माहि प्रवीन ।
तिनको अलवरनाथ ने सुकवि नाम धरि दीन ॥"[2]

\+ + +

"तिहि सुत सेढूराम आए अलवर माझ
सुकवि बखानि कियो बखतश सतकार ॥"[3]

इन छन्दो से यह स्पष्ट है कि सेढूराम जी सून, सुखदायी, नीतिवान एव गुणवान थे। पाटण नरेश न पिता की सपत्ति छीनी देख य चीढे थे और पाटण छोडकर अलवर आय थे। अलवर जान पर अल्वर नरश बखतावरसिंह जी ने इनको अपार आदर एव सम्मान दिया था। ताजीम देने का भी विचार था किन्तु पिता अनन्तराम जीवित थे अत ताजीम का विचार उन्होने छोड दिया इनकी कविता के क्षत्र की प्रवीणता को दखकर 'सुकवि' पदवी से इन्हें विभूषित किया गया था।

महतावसिंह—महतावसिंह सढूराम क पुत्र एव राव गुलाबसिंह जी क पिता थे। राव गुलाबसिंह जी ने इनके विषय अपने ग्रन्थो मे अत्यल्प उल्लेख किया है जो निम्नाकित छन्दो से स्पष्ट हो जाता है—

तिनकै सुन महताव भय विमल मति धीर।
सावधान सज्जन परम सागर सम गभीर ॥[4]

\+ + +

"शील छमा की खानि मे तिनक कवि महताव।"[5]

\+ + +

"कवि महताब भये तासु पुत्र शील सिंधु।"[6]

---

१ नीतिचन्द्र–राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण, प० ८, छन्द २१, २२, २३ २४।
२ गुलाब कोश हस्त, हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग छन्द ८।
३ ललित कौमुदी राव गुलाब सिंह प्रथम सस्करण छन्द ३१।
४ नीतिचन्द्र–राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण पृ० ४ छन्द २५।
५ गुलाबकोश–हस्त हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग छन्द ९।
६ ललित कौमुदी–राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छन्द ३१।

इन छन्दों से यह ज्ञात होता है कि महताबसिंह, विमलमति, धीर, सावधान, अतीव सज्जन, सागर के समान गम्भीर, शील क्षमा की खान थे। वे कवि भी थे।

गुलाबसिंह—अपने विषय में राव गुलाबसिंह जी ने जो संकेत दिए हैं वे इस प्रकार हैं—

'तिनके सुत भे तीन तहँ जेठो सुत बलदेव।
द्वितीय दलेल गुलाब कवि तीजो विषय असेव।'[1]
+ + +
'सेवक कवि कोविदन को तिन को तनय गुलाब।'[2]
'तिनके गुलाब भयो ग्रंथ को प्रकासकर।'[3]

इन छन्दों से यह स्पष्ट हो जाता है कि महताबसिंह जी के तीन पुत्र थे बलदेव, दलेल एवं गुलाब। राव गुलाबसिंह अपने भाइयों से छोटे थे। राव गुलाब सिंह जी का चरित्र इस अध्याय का विषय है। वंश परम्परा के प्रसंग में अधिक विवरण न देकर अध्याय के आगामी पृष्ठों में उसका विवेचन किया जायगा। इससे पुनरुक्ति के दोष से बचना संभव होगा।

राव गुलाबसिंह जी के पश्चात की परम्परा भी अन्त साक्ष्य सामग्री में एवं बहि साक्ष्य सामग्री में प्राप्त होती है। इनमें उपलब्ध जानकारी के आधार पर यहाँ विचार किया जाएगा।

नाम सिन्धु कोश के चतुर्थ भाग के अन्त की पुष्पिका में अपने पुत्र रामनाथ का संकेत राव गुलाबसिंह जी ने दिया है जो इस प्रकार है—

रामनाथ मम सुवन ने सब विधि अति श्रम कीन।

नीतिचन्द्र ग्रन्थ में भी रामनाथ सिंह जी के विषय में इसी प्रकार का उल्लेख है जो नीचे उद्धृत किया जा रहा है—

रामनाम मम सुवन ने पूरन कीनो ग्रन्थ।[5]

बृहद व्यंग्यार्थ चन्द्रिका की हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग में प्राप्त हस्त लिखित प्रति की अंतिम पुष्पिका का छन्द भी इस विषय में दृष्टव्य है—

श्री कविराव गुलाब सुत रामसिंह कवि राय।
निज सुत माधव पठन हित लिख्यो ग्रन्थ सुखदाय।[6]

---

१ नीतिचन्द्र—राव गुलाबसिंह—प्रथम संस्करण पृ० ८ छन्द २६।
२ गुलाबकोश—हस्त हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द ९।
३ ललित कौमुदी राव गुलाबसिंह, प्रथम संस्करण छ० ३१।
४ नामसिन्धु कोश—चतुर्थ भाग—रावगुलाबसिंह—प्रथम सं० पृ० ४१ छन्द ३।
५ नीतिचन्द्र—राव गुलाबसिंह—प्रथम संस्करण पृ० ८ छन्द ५२।
६ बृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका हस्त हिन्दी सा० सम्मेलन प्रयाग ग्रंथ के अन्त की पुष्पिका।

3977

देवी प्रसाद न कवि रत्नमाला भाग १ म राव गुलाबसिंह जी के पौत्र माधवसिंह का एक पत्र उद्धत किया है। इस पत्र मे निम्नलिखित सकेत प्राप्त हैं—

"बूदी स राव रामनार्थसिंह चिरजीवी माधव सिंह के न जय वचियो जी।"[1]

राव गुलाबसिंह जी चरित्र के अत म कविराव रामनाथ का पुत्र के रूप मे स्पष्ट निर्देश भी किया गया है।'[2]

श्रीयुत रामकृष्ण वर्मा ने ललित कौमुदी के प्रारम्भ म लिखित राव गुलाब सिंह जी के जीवन चरित्र म इस प्रकार उल्लेख किया है—

"इन्होंने अपने भाई के पुत्र श्री रामनार्थसिंह को गोद म लिया है।'[3]

इस विवेचन से यह स्पष्ट है कि रामनार्थसिंह जी राव गुलाबसिंह जी के पुत्र थ। ललित कौमुदी की सूचना उन्हें अवश्य पुत्र बताती है किन्तु शेष सन्दर्भो मे उनके अकस्य पुत्र होने का कोई सकेत नही मिलता। माधवसिंह रामनाथ सिंह जी के पुत्र तथा राव गुलाबसिंह जी क पौत्र थे।

राव गुलाबसिंह जी के विद्यमान वशज राव मुकुदसिंह जी के पत्राचार क उत्तर में प्राप्त सूचना इस प्रकार है—

इनके पुत्र रामनार्थसिंह जी थ। उनके माधव सिंह जी थे। मैं माधवसिंह का अकस्य पुत्र हूँ।'[4]

राव मुकुदसिंह जी के पुत्र रघुवीरसिंह ने अपन महाविद्यालय के वार्षिक क ७१–७२ के अक मे "साहित्य भूषण कवि रत्न गुलाब' शीर्षक का एक लेख लिखा है। इस लेख म उनके द्वारा दिए गए सकेत निम्नलिखित हैं—

चाँदसिंह के पुत्र रामनाथ सिंह को गोद मे लिया था। रामनाथ सिंह क पुत्र माधवसिंह जी थे पर उनका देहावसान २१ वष की आयु म हो जान के कारण श्री रामनाथ सिंह जी ने सवत १९७९ में श्री मुकुदसिंह जी को गोद मे लिया।'[5]

राव मुकुदसिंह जी से साक्षात हो जाने पर उपरोक्त सूचनाओ म जो शका स्थान हैं उनके विषय म बातचीत की गई। उनका समाधान प्राप्त किया गया है। पहली आशका थी कि क्या राव रामनाथ सिंह जी राव गुलाबसिंह जी के पुत्र थ?

१ कविरत्नमाला भाग १, मुशी देवीप्रसाद मुसिफ प्रथम स० १९६८ वि० कवि राव गुलाबसिंह चरित्र पृ० ९३।

२ वही, पृ० ९४।

३ ललित कौमुदी–राव गुलाबसिंह, राव गुलाबसिंह जी के जीवन चरित्र का अश, प्रथम सस्करण, पृ० ३।

४ राव मुकुदसिंह जी स प्राप्त पत्राचार स–

५ Govt college mogazın Bundı–71–72
रघुवीरसिंह लिखित साहित्य भूषण गुलाब लख स।

अथवा गाद लिए थ ? उत्तर मे राव मुकुन्दसिह जी न कहा है 'राव गुलाबसिह जी न विवाह नहीं किया था। अपन चचेरे भाई चांदसिह के पुत्र रामनाथ सिंह को गोद मे लिया था।' दूसरा आशका यह थी कि क्या राव मुकुन्दसिह जी रामनाथ सिंह जी क अकस्य पुत्र हैं ? अथवा माधवसिह के ? उत्तर म राव मुकुन्दसिह जी न कहा है, वास्तव म मैं राव रामनाथ सिंह जी का अकस्य पुत्र हू। माधवसिंह जी की मत्यु २१ वष की अवस्था म हा जाने पर मुझ गाद म लिया गया था।

वशावली मे स माधवसिंह जा का नाम कट न जाए इसलिए म अपन को माधवसिंह जी का अकस्य पुत्र बतलाता अवश्य हू किन्तु वास्तव मे-सरकारी कागजातो म रामनाथ सिंह जी का अकस्य पुत्र हू।

इस विवचन क आधार पर निम्नलिखित निष्कष निकलते है—

रामनाथसिंह—कवि राव गुलाबसिह जा न अपन चचेरे भाई चांदसिंह जा के पुत्र रामनाथ सिंह को गाद मे लिया था। रामनाथसिह जा भी कवि थे।

माधवसिह—माधवसिह रामनाथसिह जा के पुत्र एव राव गुलाबसिंह जी क पौत्र थ। इनकी मत्यु २१ वष की अवस्था म हुई थी। ये भी कविता करत थ जिसकी यांकी शोक प्रकाशाष्टक म दृष्टव्य है।

मुकुन्दसिह—माधवसिह जी की मत्यु के पश्चात रामनाथ सिह जी न राव मुकुन्दसिह जी को गोद मे लिया था। ये अध्यापक थ। राज्य सरकार स पुरस्कृत भी हो चुक हैं। सवानिवत्ति क पश्चात भी अध्यापन म रुचि होन क कारण पढाइ का काय आज भी करत है।

राव मुकुन्दसिह जी के तीन पुत्र हैं। सूय प्रकाश सिंह विनान शाखा म उपाधि प्राप्त कर चुक है। रघुबीरसिंह एव लक्ष्मणसिह अभी अध्ययन कर रहे है।

राव गुलाबसिंह जी की जाति वश तथा वशावली क ऊपर क विवरण का सकलित रूप यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है—

राव गुलाबसिह जाति राव वश व दा

नाम—अ त साक्ष्य एव बहिसाक्ष्य सामग्री क अ तगत राव गुलाबसिंह जा के नाम का प्रयोग अनक विध रूपो म प्राप्त होता है। भणिता के रूप म राव गुलाबसिंह जी ने अपन नाम का उल्लख इस प्रकार किया है—१—सुकवि गुलाब २—गुलाब और ३—गुलाबसिह। उदाहरण स्वरूप कुछ छ दाश यहाँ प्रस्तुत हैं—

सुकवि गुलाब अटपट वन बोलत हैं।
लटपट ह्व रहे हित अहरान में॥[1]

---

१ पावस पचीसी—हस्त हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छ द १

सारंग पद कंजक किधौं छल छाय रह्यो शशि मैं छवि छायो ।
कं धर छाह कि छेद लसै तम सोम गुलाब सदा सब गायो ।। [1]

गुलाब कोश की काण्ड समाप्ति की सूचना कवि ने इस प्रकार दी है—

इति गुलाबसिंह स्वकृतौ नामानुशासन स्वरादि काण्ड प्रथम भाग एव समर्पित । [2]

---
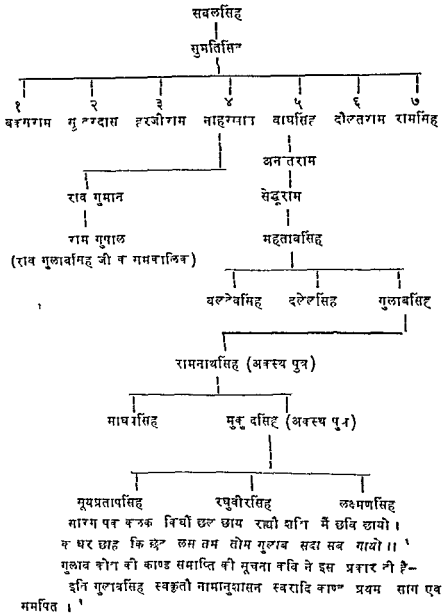
१ काव्य नियम-हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द ५८ ।
२ गुलाब कोश " ' प्रथम काण्ड की पुष्पिका

बहि साक्ष्य सामग्री म नाम का निर्देश निम्नलिखित रूप में प्राप्त है—

"श्री राव साहिब कविराज गुलाबसिंह जी ॥[1]

+ + +

"कविराव गुलाबसिंह जी ।'[2]

+ + +

"गुलाबसिंह जी कवि राव (गुलाब)''

"गुलाब जी ।'[3]

सामग्री के सकलन मे एक ऐसा दस्तावेज प्राप्त हुआ है जिस पर कवि के हस्ताक्षर "राव गुलाबसिंह" इस प्रकार से है।[5]

कवि राव गुलाबसिंह जी के नाम के विषय म प्राप्त सामग्री का अध्ययन करने पर जो निष्कष निकलता है वह इस प्रकार है—

कवि का मूल नाम गुलाबसिंह था। कविता में भणिता के रूप मे गुलाब, सुकवि गुलाब इन सक्षिप्त नाम रूपो का प्रयोग कवि ने अधिक मात्रा मे किया है। इस से यह स्पष्ट हो जाता है कि ये नाम कवि को अवश्य ही बड प्रिय रहे होंगे। 'राव' शब्द केवल जाति वाचक शब्द नही वरन सम्मान सूचक शब्द भी है अत कार्यालयीन विषया मे, व्यवहार मे राव गुलाबसिंह इस नाम को अधिक प्रामाणिक एव आधिकारिक रूप में स्वीकार कर उसका प्रयोग किया गया है। आज भी उनके वशज अपने नाम के साथ राव यह गौरवपूण पदवी जोडते हैं।

गुरू—अन्त साक्ष्य सामग्री म कवि राव गुलाबसिंह जी ने अपने गुरू के विषय मे निम्नलिखित प्रकार से उल्लेख किए हैं—

गुरू प्रशसाया द्वयर्थिका दोहा—

विबुध इन्द्र द्विजराज कुल ईन सुबोध कवीश।
करुणा कर करुणा करहु जगन्नाथ जगदीश ॥"[6]

'जगन्नाथ गुरू पगन को पाय प्रसाद अपीच।
बिसद पचीसी रस सची रची पाँच दिन बीच ॥[7]

---

१ ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह प्रथम स जीवन चरित्र प० १।

२ कवि रत्नमाला भाग १, मुशी देवीप्रसाद स० १९६८, वि० स० राव गुलाबसिंह जी का चरित्र

३ मिश्रबन्धु विनोद भाग ३—मिश्र ब धु—स० १९८५, स० प० १०५५।

४ राजस्थानी भाषा और साहित्य—डा० मोतीलाल मनारिया, प० ३३१।

५ हस्ताक्षर मुद्रिका परिशिष्ट मे।

६ गुलाब कोश—हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द ३।

७ पावस पच्चीसी—हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, प्रथ की पुष्पिका, छद २६।

इन छन्दो से यह स्पष्ट हो जाता है कि राव गुलाबसिंह जी के गुरू का नाम जगन्नाथ था।

बहिसाक्ष्य सामग्री मे ललित कौमुदी के प्रारम्भ में श्रीयुत रामकृष्ण वर्मा द्वारा लिखित राव गुलाबसिंह जी का जीवन चरित्र और कवि रत्नमाला भाग १ मे देवी प्रसाद द्वारा प्रस्तुत किय गये जीवन वृत्त मे राव गुलाबसिंह जी के गुरू के विषय मे निम्नलिखित उल्लेख प्राप्त हैं—

"तदुपरा त अलवर मे आकर राव जी श्री पूणमल जी से भाषा ग्रथ और सस्कृत ग्रथ अथ सहित पढे। फिर प० जगन्नाथ जी से कुवलयान द काव्यप्रकाश आदि ग्रथ भली प्रकार पढे।"[१]

'वहाँ पूरणमल जी से सस्कृत ग्रथ भाषा सहित पढे फिर पडित जगन्नाथ जी से कुवलयान द और का य प्रकाश आदि देखकर साहित्य विद्या मे निपुण हो गए।'[२]

ये निर्देश इस बात को स्पष्ट करते हैं कि गुरू जगन्नाथ जी के अलावा राव गुलाबसिंह जी ने श्रीयुत पूणमल जी से भी शिक्षा पायी थी। सम्भवत राव गुलाबसिंह जी की प्रारम्भिक शिक्षा श्रीयुत पूणमल जी के निर्देशन मे हुई थी कि तु उनका का य शास्त्र का अध्ययन, उनकी काव्य प्रतिभा का सस्कार साहित्य विद्या की निपुणता पण्डित जगन्नाथ जी के कारण थी। राव गुलाबसिंह जी का कवि जीवन प० जगन्नाथ जी स ही प्रभावित रहा था। इसी से गुरू के रूप में उन्होने केवल जगन्नाथ जी का विशेष रूप से ही उल्लेख किया है।

शिक्षा दीक्षा—राव गुलाबसिंह जी की शिक्षा दीक्षा के सम्ब ध म अत साक्ष्य सामग्री में कोई उल्लेख प्राप्त नहीं है। बहि साक्ष्य सामग्री मे भी ललित कौमुदी के जीवन चरित म तथा कवि रत्नमाला भाग १ मे अत्यल्प सूचना प्राप्त है—यथा—

'पाँच ही वष की अवस्था मे पढ़ने लिखन का शौक अधिक हुआ भाषा का य और सस्कृत मे सारस्वत चद्रिका कठस्थ कर गये।'[३]

पाँच बरस की उमर मे भाषा काव्य और सारस्वत चद्रिका कठस्थ कर अलवर में गए।[४]

---

१ ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह—जीवन चरित्र, पृ० १।

२ कवि रत्नमाला, भाग १, मु शी देवीप्रसाद मुसिफ स० १९६८ वि० स० राव गुलाबसिंह चरित, पृ० ८७।

३ ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह—प्रथम स०, जीवन चरित्र अश प० १।

४ कवि रत्नमाला भाग १, मु शी देवीप्रसाद सवत् १९६८ वि० का स०, कवि राव गुलाबसिंह चरित्र, पृ० ८७।

इसम यह स्पष्ट हो जाता है कि राव गुलाबसिंह जी न पाँच वप की अवस्था मे भाषा का य एव सस्कृत मे सारस्वत च द्रिका का अध्ययन किया था।

उपरिनिर्दिष्ट सूचनाओ से राव गुलाबसिंह जी की शिक्षा दीक्षा के विषय में कोई सुस्पष्ट चिन प्राप्त नही होता। उनके दादा सद्रूरामजी तथा पिता महताबसिंह जी अलवर राज्य क आश्रय मे थे अत इस अनुमान को प्रश्रय मिलता है कि उनकी शिक्षा दीक्षा का प्रब घ घर पर ही किया गया था। राव गुलाबसिंह जी के साहित्य के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि उ होंने कोश, साहित्यशास्त्र नीतिशास्त्र तथा टीकाशास्त्र आदि का गम्भीर अध्ययन किया था। सम्भवत यह अध्ययन भी प० जगन्नाथ जी जस गुरुजनो क निर्देशन म ही किया था।

अत निष्कष के रूप म यह सिद्ध होता है कि राव गुलाबसिंह जी ने अपन गुरुजनो के निर्देशन म विभिन्न विषया मे तथा प्रभूत माषा म शिक्षा पायी थी। विविध विषयो को सस्पश करने वाला उनका साहित्य उसी गम्भीर अध्ययन का प्रतिफल है।

आश्रयदाता एव सम्मान—राव गुलाबसिंह जी के जीवन विषयक उपलब्ध सामग्री से यह ज्ञात होता है कि उ हे विभिन्न राजाओ स आश्रय प्राप्त हुआ था।

शिवदानसिंह—अलवर नरेश शिवदानसिंह जी राव गुलाबसिह जी के प्रथम आश्रयदाता एव सम्मान करन वाल राजा हैं। अपने 'गुलाब कोश' ग्रथ की रचना इ होने शिवदानसिंह जी की आज्ञा से ही की थी जिसका सकेत ग्रथ म इस प्रकार किया गया है—

> अलवर पति शिवदान की आना शिरपर धारि।
> कीना कोश गुलाब यह अपनी मति अनुहारि॥ [1]

अपने नीतिचद्र ग्रथ म भी राव गुलाबसिंह जी ने अलवर नरेश शिवदानसिंह जी के विषय म लिखा है—

> अलवर पति शिवदान नप करत रहे अति मान।
> देशाटन हित सीख ल कीनो तदपि पयान॥ [2]

शिवदानसिंह जी राव गुलाबसिंह जी की कितनी इज्जत करते थे इस विषय म ललित कौमुदी के जीवन चरित्र अश म श्री रामकृष्ण वर्मा जी ने इस प्रकार लिखा है—

'इसके अनन्तर अलवर महाराज श्री शिवदानसिंह जी की महारानी राठवाड की—के राजकुमार भये, उनकी बधाई का। रावजी साहिब को पूरी इज्जत और

---

१ गुलाब कोश—हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द ५।
२ नीतिचद्र—राव गुलाबसिंह—प्रथम सस्करण, पृ० ५ छन्द २९।

पूरी जीविका होने की विचार हो गया था। उस समय चन्द्रराज पहले ही एजटी हो गई। जिसस कुछ दिन पीछे राव साहिब अल्वर महाराज की सम्मति से सवत १९२८ म झालवाड को चले।"[1]

कवि रत्न माला भाग १ मे देवी प्रसाद जी ने इस सम्बन्ध म निम्नलिखित रूप से उल्लेख किया है—

अलवर महाराज शिवदानसिंह जी इनकी योग्यता देखकर जीविका दने क विचार म थे कि एजटी हो जाने स अधिकारहीन होकर कुछ द न सके। कवि रावजी तब उनकी सलाह से सवत १९२८ म करोली जाकर वहा के राजा जयपाल सिंह जी से मिले और दस रोज रहकर बूंदी आय।'[2]

इस विवरण स यह स्पष्ट हो जाता है कि अल्वर नरेश शिवदानसिंह जी राव गुलाबसिंह जी की योग्यता स पूर्ण रूप से परिचित थे। अपनी आयु क ५ वर्ष स सवत १९२८ वि० म अलवर छोडने तक राव गुलाबसिंह जी अल्वर म ही थे। इतने प्रदीर्घ काल तक अल्वर रहने क कारण एव दादा तथा पिता महताब सिंह जी के अल्वर दरबार सबद्ध होने क कारण उनकी योग्यता का यह परिचय भी स्वाभाविक ही है। शिवदानसिंह जी राव गुलाबसिंह जी का आदर करते थे। इतना होने पर भी जब राव गुलाबसिंह जी को जीविका दने का, सम्मान करने का अवसर हाथ आया तब एजट की नियुक्ति के कारण व स्वय अधिकार विहीन हो गए। इसका दुःख उन्हें अवश्य ही रहा होगा। तभी तो राव गुलाबसिंह जी को उन्होंने अल्वर छोडकर अन्य राजाओ क पास आश्रयार्थ जाने को प्रेरित किया था। राव गुलाबसिंह जी अल्वर स झालवाड को जाने क हेतु प्रयाण कर चुके थे।

जयपालसिंह—अल्वर म रहते हुए राव गुलाबसिंह जी की कीर्ति अवश्य ही अन्य राज्यो म पहुँची होगी। तभी तो रास्ते म जाते हुए करोला नरेश जयपाल सिंह जी ने उनका सम्मान किया था। इस विषय म उपलब्ध उल्लेख इस प्रकार हैं—

'प्रथम करौली नाथ दीनो सनमान अति
दिन दस बसि बूँदी मारग लियो दराज।'[3]
+ + +
प्रथम करौली नाथ ने मान दान अति दीन।
दिन दस बसि पुनि प्रात ही बूँदी मारग लीन।'[4]

---

१ ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह प्रथम स० जीवन चरित्र पृ० १।
२ कवि रत्न माला भाग १ मुन्शी देवीप्रसाद मुसिफ स० १९६८ वि० म० कवि राव गुलाबसिंह जी का जीवन चरित्र पृ० ८७।
३ ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छन्द ३२।
४ नीतिचन्द्र—राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण पृष्ठ ५ छन्द २०।

ललित कौमुदी के जीवन चरित्र अश में श्री रामकृष्ण वर्मा द्वारा निम्न प्रकार का विवरण इस विषय में दिया गया है—

'तब गए मे करौली महाराज जयपालसिंह जी से मिल वहाँ दस रोज रह कर आगे को चले।'[1]

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि राव गुलाबसिंह जी झालवाड की ओर जाते हुए करौलीनाथ जयपालसिंह जी से मिले थे। सम्भवत अलवर नरेश शिवदानसिंह जी ने भी उनके नाम पत्र भी दिया हो। राव गुलाबसिंह जी की कीर्ति से जयपाल सिंह जी भली भाँति परिचित भी हो। राव गुलाबसिंह जी करौली में दस ही दिन रहे। महाराज जयपालसिंह जी ने उनका खूब सम्मान किया। अलवर नरेश शिवदानसिंह जी यद्यपि राव गुलाबसिंह जी के प्रथम आश्रयदाता रहे हैं फिर भी प्रथम सम्मान कर्ता के रूप में उन्होंने करौलीनाथ जयपालसिंह जी का ही उल्लेख ऊपर के छन्दों में किया है। राव गुलाबसिंह जी ने करौली नरेश को सम्भवत आश्रय के हेतु समुचित नहीं माना। दस दिनों से अधिक वहाँ न रह सके बूँदी की ओर निकल पड़े।

महाराव राजा रामसिंह—जिस समय राव गुलाबसिंह जी बूँदी पहुँचे वहाँ महाराव राजा रामसिंह जी का शासन था। रामसिंह जी केवल राजा ही नहीं थे तो संस्कृत प्राकृत, अपभ्रंश, पिंगल आदि भाषाओं को जाननेवाले विद्वान का य[?] शक्ति की परख रखने वाले थे।[2] राव गुलाबसिंह जी की विद्वत्ता एवं काव्य शक्ति से वे भी परिचित रहे हो। इसी से महाराज रामसिंह जी ने सम्मानपूर्वक राव गुलाबसिंह जी को अपने दरबार में स्वीकृत किया। एक गुणवान एवं विद्वान राजा का आश्रय राव गुलाबसिंह जी को इतना प्रिय हुआ कि संवत १९२८ वि० से संवत १९५८ वि० में अपने स्वर्गवास तक राव गुलाबसिंह जी बूँदी में ही रहे थे। इस विषय के अन्त साक्ष्य सामग्री में प्राप्त विवरण निम्न प्रकार है—

'तहँ हित ठानि सनमानि रुजगार करि।
महाराव राजा राम राखि लिया महाराज ॥'[3]

\+ + +

'राम सिंह बुँदीश ने मान दान जुत नीति।
दया दया करि रुचि सहित राखि लियो करि प्रीति ॥'[4]

---

१ ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह चरित्र अश पृष्ठ १।
२ (अ) ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह—जीवन चरित्र अश पृ० १।
(ब) कविरत्नमाला—भाग १ मुंशी देवीप्रसाद, संवत १९६८ वि० का संस्करण, कवि राव गुलाबसिंह जी का चरित्र पृ० ८७।
३ ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह, प्रथम संस्करण, छन्द ३२।
४ नीतिचन्द्र—राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण, पृ० ५ छन्द ३१।

इन उद्धरणों से यह स्पष्ट है कि राजा रामसिंह जी ने राव गुलाबसिंह जी को सम्मानित किया, मान, दान आदि देकर अतीव प्रीति से अपने आश्रय में रख लिया था।

महाराज रामसिंह जी ने राव गुलाबसिंह जी का सम्मान अनेक प्रसंगों में किया है, जिसका संकेत रावगुलाबसिंह जी ने अपने ग्रंथों में कई स्थानों पर किया है। यथा—

'बहुरि राम पोसाकहू सालगिरह की वम।
चित धारन कीनी हरषि दीनी राम नरेश ॥
सहजाद साहिब कियो मल आगर वार।
बहुरि लाटसाहिब कियो दिल्ली मधि दरबार ॥
रामसिंबिर अगरेज नप तहँ आये जिहिंवार।
तब होंहूँ हाजिर रह्यो आदर सहित उदार।
पुनि संवत चौंतीस में दियो जलोदी ग्राम ॥'[1]

\+ \+ \+

पुनि दीदी ताजीम अरु ग्राम दूसरो दीन।
खिलति जुत गज एक दिन दीन राम प्रवीन ॥
दे लवाजमो साथ अरु सादर गज चढ़वाय।
खिलत सहित नप राम न दियो सदन पहुँचाय ॥
अब करि पंच मुसाहिब रु सामिल राखि सलाह।
कियो प्रकृति अधिकार मुहि रामसिंह नर नाह ॥[2]

रामसिंह जी द्वारा किए गए सम्मान के इसी प्रकार के विवरण राव गुलाबसिंह जी के नीतिचन्द्र, वनिता भूषण, बृहद् वनिता भूषण ग्रंथों में भी प्राप्त होते हैं।[3]

बहि साक्ष्य सामग्री में राजा रामसिंह जी द्वारा दिये गए सम्मान का विवरण इस प्रकार मिलता है—

'महाराज बहादुर ने प्रसन्न होकर इनको जलोदा एवं बोवियो दो ग्राम दिये थे और सालगिरह के उत्सव में बनी बहुत लागत की खास पोशाक के दस्तूर से

---

१ ललित कौमुदी–राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण छन्द ३३ से ३६।

२ वही ३७ से ३०।

३ (अ) नीतिचन्द्र–राव गुलाबसिंह प्रथम सं० पृ० ५ छन्द ३२ ३३,३४ ३५ पृ० ६ ४१, ४२ ४३।

(ब) बृहद् वनिता भूषण–हस्त० लिपि सा० सं० प्रयाग छन्द ३।

(स) वनिता भूषण–राव गुलाबसिंह प्रथम सं० पृ० १ छन्द ३।

अधिक ५०० रुपये दुनाला घर में बिना धारण करा असानी फेर ताजीम और सिर पेंचादि उत्तम भूषण, छड़ी आदि मरसार देकर सारवत सहित हाथी बक्सी उस पर उनको चढ़ा लवाजमा साथ देकर इनकी हवेली तक पहुँचाया।''

"और दो गाँव इनाम देकर सालग्रह के उत्सव में बनी हुई बहुत लागत की पोशाक और ५०० रु० का दुनाला ताजीम हाथी और सरपेंच बख्शा और हाथी पर चढ़ा कर बड़े जुलूस से घर पहुँचाया।[२]

उपयुक्त विवरणों से यह स्पष्ट है कि महाराज रामसिंह जी ने राव गुलाब सिंह जी को एकाधिक प्रसंगों में सम्मानित किया था। दो ग्राम जलोदा और बाबयों दान में दिए थे। सालगिरह की बड़ी कीमती पोशाक ५०० रुपयों का दुनाला सरपेंच छड़ी आदि दिया था। सुसज्जित हाथी दान में देकर उस पर चढ़ा कर उनके घर पहुँचाया था। इस प्रकार राव गुलाबसिंह जी बूँदी नरेश महाराज रामसिंह जी के राज्य काल में बूँदी दरबार में सम्मानित हुए थे।

रघुवीरसिंह—महाराज रामसिंह जी की संवत १९४६ में मृत्यु हुई थी।[३] उनके पश्चात महाराज रघुवीरसिंह जी ही बूँदी के राजा बने। रामसिंह जी के समान महाराज रघुवीरसिंह जी ने भी राव गुलाबसिंह जी को सम्मानित किया था। अन्तःसाक्ष्य सामग्री में इसका विवरण निम्नलिखित रूप में प्राप्त है—

'कंचन कंकन पगन मैं पहिराये रघुवीर।
+ + +
कंचन कंगन चरन मैं पहिराये रघुवीर।[४]

बहिः साक्ष्य सामग्री में ललित कौमुदी के जीवन चरित्र अंश में श्रीयुत राम कृष्ण वर्माजी ने इस सम्बन्ध में निम्नलिखित विवरण दिया है—

'फेर महाराज बहादुर श्री १०८ रघुवीरसिंहजी ने पगन के वास्ते सुवर्ण कड़ा बक्षा। राजपूताने में यह इज्जत बहुत बड़ी गिनी जाती है और कठिनता से प्राप्त होती है।'[५]

---

१ ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण जीवन चरित अंश पृ० २।
२ कवि रत्नमाला भाग १ मुंशी देवीप्रसाद मुंसिफ संवत १९६८ वि० संस्करण कवि राव गुलाबसिंह चरित पृ० ८७।
३ बूँदी राज्य का इतिहास—संपादक गहलोत परिहार सं० १९६० ई० संस्करण पृ० ९६।
४ (अ) बृहद् वनिता भूषण—हस्त० हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छंद ३
(ब) वनिता भूषण—राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण छंद ३।
५ कृष्ण चरित—हस्त० हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, गोलोक खंड छं० ७।
६ ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह, प्रथम संस्करण, जीवन चरित्र अंश, पृ० २।

कवि रत्नमाला भाग १ मे प्राप्त विवरण इस प्रकार है--

'फिर महाराव रघुवीरसिंह जी ने सवत १९४६ मे सोने का कडा पावों में पहनने को इनायत फरमाया। जो राजपूताने मे बडी इज्जत की बात है।'[1]

इसस यह स्पष्ट है कि महाराज रघुवीरसिंह जी राव गुलाबसिंह जी की इज्जत करते थे। सम्वत १९४६ म अर्थात् अपने राज्यारोहण प्रसग मे इन्होंने राव गुलाबसिहजी का पावो म पहनने के हेतु साने का कडा देकर सम्मानित किया था। राव गुलाबसिह जी के लक्षण कौमुदी काव्य सिन्धु बहद व्यग्याय चन्द्रिका, बहत वनिता भूषण आदि ग्रथो की प्रेरणा उन्हें रघुवीरसिंह जी स ही प्राप्त है जसाकि निम्नलिखित छदो से स्पष्ट होता है--

'नपमनि श्री रघुवीर की नासन मानि सिताब।
बहुत सस्कृत ग्रथ लखि कीनों ग्रथ गुलाब॥'[2]

+ + +

''नपमनि श्री रघुवीर की शासन मानि सिताब।
बहुत सस्कृत ग्रथ लखि कीनों ग्रथ गुलाब॥''[3]

+ + +

'पुनि सवत् उनई स अडतालीस मझार।
राम भुवन रघुवीर न दिया हुक्म इहि ढार॥
कवि गुलाब व्यग्याथ मे उदाहरन है थोर।
ताते सबही थलन मे वेग बनावहु और॥
सो शिरधरि रचना रचत पुनि गुलाब हर्षाय।
गणपति शारद गुरुन के बार बार परि पाय॥'[4]

'बूँदी पति रघुवीर की सासन मानि सिताब।
वनिता भूषण सार मैं उद्यम कर्यो गुलाब॥'[5]

इन छदों से यह स्पष्ट होता है कि रघुवीरसिंह जी ने राव गुलाबसिंहजी

---

१ कविरत्नमाला भाग १, मुन्शी देवीप्रसाद मुसिफ सम्वत १९८६ वि० स० कविवर गुलाबसिंह चरित, प० ८७।

२ काव्यसिन्धु हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग पूर्वाध छन्द ३।

३ लक्ष्मण कौमुदी-हस्त० साहित्य सम्मलन प्रयाग छन्द ३।

४ (अ) बहद् व्यग्याय चन्द्रिका-हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग छद ९ से ११
(ब) बृहद व्यग्याथ चन्द्रिका-राव गुलाबसिह सवत १९५४ वि० छन्द ९ से ११

५ (अ) बहत वनिता भूषण हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छद ४।
(ब) वनिता भूषण-राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण पृ० १ छद ४।

जिसका तात्पय यह है कि गुलाब (कवि एव फूल) की सुरभि (कीर्ति एव सुगन्ध) दिशाओ म विकसित है--फली हुई हैं। यह सहज भी है सुमन (भले मन के एव फूल) भी है इसके निकट होने म कवि कीर्ति एव सुगन्ध की सहज ही म अनुभूति प्राप्त होती है। इसम यह स्पष्ट होता है कि अपने शिष्य की प्रतिभा क्षमता स गुरू भली भाति परिचित तो थे ही उन्हे अपने शिष्य पर गव भी था। राव गुलाबसिंह जी निश्चय ही अपने गुरु के प्रिय शिष्य रहे हो ऐसा अनुमान करना अन्यथा नही है।

शोधकर्त्ता को जब राव गुलाबसिंह जी के विद्यमान वशज श्री राव मुकुन्द सिंह जी से साक्षात् हुआ तो वार्तालाप के प्रसग म यह ज्ञात हुआ कि राव गुलाबसिंहजी बून्दी म आने से पहले बून्दी राज के कवि तथा बून्दी राज्य का पद्यात्मक इतिहास 'वश भास्कर' के रचयिता महाकवि सूयमल मिश्रण स पत्राचार द्वारा परिचित हो चुके थे। अपने नाम के साथ 'सुकवि' उपाधि लगाने के कारण सूयमल मिश्रण ने राव गुलाबसिंह जी को एक आज्ञा लिखा था। उत्तर म राव गुलाब सिंहजी ने यह लिखा था कि 'सुकवि' यह उपाधि अल्वर नरेश की दी हुई है। इसी बात को राव मुकुन्दसिंह के पुत्र रघुवीरसिंह ने अपने लेख म भी उद्धत किया है।[1]

इन्ही महाकवि सूयमल मिश्रण ने राव गुलाबसिहजी की प्रशसा म कुछ छन्द लिखे थे जिनम से दो राव मुकुन्दसिहजी के मुखाग्रगत हैं। ये दोनो छद राव मुकुन्दसिहजी से प्राप्त हुए हैं। जिनमे से एक अपूर्ण है। दोनो छद यहा उद्धत हैं--

'जाती मैं न जा यो, पहचा यो जो न पुष्कर म,
मल्लि मैं न मा यो मजु प्रथित, पिपासा को।
धारयो गध धूलि मैं न मालय मूली मैं न
जूही पजि फूली मैं न पूरे मन आसा को।
+ + +
सौरभ गुलाब कवि कम्र तेरो पूमस्त अलिनासाकों।[2]

तात्पय यह है कि विविध फूलो मे गुलाब की सुगध जिस प्रकार भ्रमर को आकर्षित कर लेती है वसे ही गुलाब कवि की कविता अन्य कवियो के होने हुए भी रसिक आश्रयदाताओ को आकृष्ट करने म समथ है।

---

१ Govt College, Bundi Annual–71–72
श्री रघुवीरसिंह का लेख। साहित्य भूषण कविरत्न गुलाब।

२ राव मुकुन्दसिंहजी से हस्तलिखित रूप मे प्राप्त छद।

'श्रुत गुलाब तव गुन सुजस मस्तक सधन घुमात।
तिहिं निदान पाताल तजि सब्र ठौं पठव हु ख्यात ॥'[१]

अर्थात तुम्हारे गुण एव सुयश को सुनकर सभी अपने मस्तको को डुलाते हैं। अत एक पाताल को छोडकर सब स्थानो पर तुम्हारी कीर्ति फलने दो।

(भाव यह कि पाताल मे तुम्हारी कीर्ति सुनकर शेषनाग अगर मस्तक डुलाना आरम्भ कर तो धरति पर प्रलय मचेगी अत पाताल म उसे न भेजो।)

अपन समय के एक ख्याति प्राप्त चारण कवि द्वारा राव गुलाबसिंह जी की यह प्रशस्ति निश्चय ही विशेष महत्व रखती है।

इसके अलावा रसिक कवि सभा कानपुर ने राव गुलाबसिंह जी को साहित्य भूषण" उपाधि देकर सम्मानित किया था।[२] वे काशी कवि समाज के भी भूषण माने गए थे।[३]

इस प्रकार गुरू विद्वान एव कवि समाज द्वारा किए गए सम्मान का मूल्य, आश्रयदाताओ के सम्मान से महत्वपूण है। राव गुलाबसिंह जी की का य एव साहित्य के क्षत्र की क्षमता के ये वास्तव प्रमाण ही हैं।

प्रशासनिक योग्यता एव सामाजिक काय—अन्त साक्ष्य एव बहि साक्ष्य सामग्री मे प्राप्त सूचनाओ के आधार से यह स्पष्ट होता है कि राव गुलाबसिंह जी मे कवित्व प्रतिभा के अलावा प्रशासनिक योग्यता भी थी। सूचनाएँ निम्नलिखित रूप में प्राप्त हैं—

'अब करि पच मुसाहिब सामिल राखि सलाह।
दियो प्रकृति अधिकार मुहि रामसिंह नरनाह ॥'[४]

ललित कौमुदी के जीवन चरित्र मे रामकृष्ण वर्मा ने इस प्रकार विवरण दिया है—

कवि रावजी वाल्टर सस्थापित राजपूत हित कारिणी सभा के और कौसिल के मेंबर है, और महक्मा रजिस्टरी मे हाकीम है।'[५]

---

१ राव मुकुन्दसिंह जी से प्राप्त छ द।
२ कवि रत्न माला, भाग १, मुशी देवी प्रसाद सवत १९६८ वि० सस्करण कवि राव गुलाबसिंह जी का चरित्र, पष्ठ ८७।
३ ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण जीवनचरित्र अश प० ३।
४ (१) ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण छन्द ३९।
(२) नामसिंधुकोश—राव गुलाबसिंह—प्रथम भाग प्रथम सस्करण छन्द ६९।
(३) नीतिचन्द्र—राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण प्रथम प्रकाश, छन्द ४३।
५ ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण जीवन चरित्र अश, पृ० २, ३।

देवी प्रसाद जी ने कवि रत्न माला भाग १ में इस प्रकार उल्लेख किया है–

"कवि राव साहित्य राज का भी काम करते हैं। बूंदी स्टेट कौनसल और वाल्टर कृत राजपूत हितकारिणी सभा के मेंबर हैं। और महकमा रजिस्ट्री म हाकीम हैं।"

इसी प्रकार क उल्लेख मिश्रबन्धु विनोद भाग ३[2] तथा राजस्थानी भाषा और साहित्य[3] आदि ग्रन्थो मे प्राप्त होते हैं।

इन विवरणो से यह स्पष्ट हो जाता है कि राव गुलाबसिंह जी मे कवित्व शक्ति, साहित्य की सजनशीलता के अलावा प्रशासनिक योग्यता भी अवश्य थी। एक पारखी की कुशल एव पनी दृष्टि से उसे पहचान कर महाराज रामसिंह जी ने उसे राज्य के कल्याण, सवधन आदि के हेतु प्रयुक्त किया था। राव गुलाबसिंह जी को उन्होने दरबाराश्रित सम्मानित कवि के अलावा अपना सलाहकार मुसाहिब अर्थात दरबारी, पांच प्रमुख मत्रणाकारा मे स एक एव प्रशासनिक अधिकारी के रूप मे नियुक्त किया था।

अग्रेजो के दिल्ली दरबार के प्रसग म भी राव गुलाब सिंह जी आदर एव सम्मान के साथ राजा रामसिंह जी बरावर गए हुए थे। अग्रेज राजा की रामसिंह जी के शिविर म भेंट के प्रसग मे भी राव गुलाबसिंह जी को उपस्थित रहने की अनुज्ञा थी[4]

इससे यह स्पष्ट हा जाता है कि राव गुलाबसिंह जी महाराज रामसिंह जी के अतीव विश्वसनीय सलाहकार थे।

अन्य राजपूत राजाओ के साथ बूंदी राज्य के अच्छ सम्बन्ध बनाये रखन मे भी राव गुलाबसिंह जी का योगदान रहा था। इस सम्बन्ध म निम्नलिखित छन्द द्रष्टव्य हैं–

पुनि रीवां नागोद मुहि पठयो नृप निजकार।
द तोफा व्यवहार के देय खरीता चार॥
तब सादर नागोद पति नगर उचरे पास।
जादवेंद्र भूमीन्द्र नैं राख्यो पोडश मास॥

---

१ कवि रत्न माला, भाग १, मुन्शी दवी प्रसाद मुन्सिफ सवत १९६८, वि० सस्करण कवि राव गुलाबसिंह चरित्र पृ० ८७।

२ मिश्रबन्धु विनोद भाग ३, मिश्रबन्धु सवत १९८५ वि० द्वि० स० पृ० १०५५।

३ राजस्थानी भाषा और साहित्य–डा० मोतीलाल मेनारिया, तृतीय स० पृ० ३३१

४ (१) ललित कौमुदी–राव गुलाबसिंह प्रथम स० छन्द ३४ ३५।
(२) नीतिचन्द्र–राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण प्रथम सस्करण पृ० ५, ३३, ३४।

> न्य सरीता हित सहित दान मान भल भाय ।
> सुग्तह ह त अधिक द बूदी दियो पठाय ॥"

इससे यह स्पष्ट है कि रीवाँ–एव नागोद के राजाओ के पास तोहफा एव पत्र आदि देकर रामसिंह जी ने राव गुलाबसिंह को भेजा था। नागोद पति जादवेंद्र सिंह जी न उन्हें उचरे नगर के पास सोल्ह माम तक आश्रय म रखकर दान एव सम्मान के साथ पत्र देकर कल्पवक्ष से भी अधिक दान देकर बूदी लौटा दिया था।

एक प्रसग म रीवाँ नागोद के अग्रेज एजट भी राव गुलाबसिह जी से भेंट करने आये थे। निम्नलिखित छन्द इस विषय म दृष्टव्य हैं—

> अग्रेज बकलो अति पवित्र । एजट जिले तह राममित्र ।
> मम सिविर आय हित जुत अपार । बहु वार करी सादर सम्हार ।
> रघुराज पाम तोहफा पठाय । नागोद गयो सिविका सजाय ॥''

इससे राव गुलाबसिह जी की लोकव्यवहार की कुशलता स्पष्ट हो जाती है। अग्रेज अधिकारियो के साथ भी स्नेहपूर्ण व्यवहार द्वारा राव गुलाबसिह ने उन्ह अपना मित्र बना लिया था एव बूँदी राज्य की प्रतिष्ठा को ऊँचा किया था।

बूँदी दरबार के प्रतिनिधि के नाते अग्रेजी शासन के विभिन्न प्रतिनिधियो से राव गुलाबसिह जी सबद्ध रह चुके थ। सर वाल्टर द्वारा सस्थापित राजपूत हित कारिणी सभा के वे सदस्य थ।[३]

राजपूत हित कारिणी सभा का सगठन राजपूतो के हित के लिए किया गया था। राजपूतो म टीका विवाह आदि प्रसगो म अपनी क्षमता का विचार न करते हुए जो फिजूल खच करने की प्रवत्ति थी उसका नियमन करना इस सभा का उद्देश्य था। सबद्ध व्यक्ति की आर्थिक दशा का विचार करते हुए खच की रकम निर्धारित की जाती थी। उसके अनुसार खच पर देखभाल इस सभा के कायक्षेत्र मे थी इस सस्था के सदस्य के नाते समाज सवा का एक सु अवसर राव गुलाबसिह जी को प्राप्त हुआ था।

देशाटन–अपन ७१ वष के जीवन काल म राव गुलाबसिह जी का सम्ब ध मुख्यतया चार स्थाना से रहा है जिनका उल्लेख अत साक्ष्य एव बहि साक्ष्य

---

१ नीतिचन्द्र–राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण सवत १९४३ वि० प ५। ६ छ द ३६ ३८ ३९।

२ वहा छन्द ३७।

३ (१) ललित कौमुदी–राव गुलाबसिंह जी–प्रथम म जीवन चरित्र अश प० २।
(२) कवि रत्न माला भाग १ मुन्शी देवी प्रसाद मुसिफ सवत १९६८ वि० सस्करण कवि राव गुलाबसिह चरित्र प० ८७।

सामग्री म प्राप्त है । ये स्थान है—

१ राजगढ़–अलवर राज्यातगत राजगढ़ राव गुलाबसिंह का जन्म स्थान है। उनके जीवन के प्रारम्भिक पाँच वर्षों का काल सभवत यहीं व्यतीत हुआ है।

अलवर–पाँच वर्ष की अवस्था मे राव गुलाब सिंह जी राजगढ़ से अलवर आये थे अर्थात सवत १८९२ वि० मे वे अलवर में आये थे और सवत १९२८ वि० मे उन्होंने अलवर छोड़ा था। अनुमानत राव गुलाबसिंह जी अलवर म लगभग ३६ वर्ष रहे थे।

करौली–सवत १९२८ वि० मे अलवर छोडने पर बूँदी जाने से पहले वे दस दिन का एक अत्यल्पकाल मर्यादा के लिए रास्ते म करौली रुके थे।

४ बूँदी–सवत १९२८ वि० से सवत १९५८ वि० म अपने स्वर्गवास तक राव गुलाबसिंह जी बूँदी के ही निवासी थे। इकत्तीस वर्षों की बूँदी निवास की प्रदीर्घ काल मर्यादा मे भी राव गुलाबसिंह जी ने देशाटन किया है जिनका विवरण अतःसाक्ष्य एव बहिःसाक्ष्य सामग्री म प्राप्त है और उनका निर्देश इसी अध्याय में किया जा चुका है।

दिल्ली, रीवाँ नागौर आदि स्थानों की यात्रा उन्होंने प्रसग वश ही की है।

राव गुलाबसिंह जी के देशाटन के उद्देश्यो म विभिन्नता है। अलवर म उनके पिता थे अत अलवर म उनका आना अपने घर आना ही है। अध्ययन उसका एक और उद्देश्य माना जा सकता है। अलवर म रहते हुए उन्होंने अपनी योग्यता का सपादन किया। अलवर से करौली एव बूँदी की यात्रा आश्रयदाता की एव आजीविका की खोज के हेतु की हुई यात्राएँ हैं। बूँदी दरबार म शामिल हो जाने के बाद का देशाटन बूँदी दरबार के प्रतिनिधि के रूप म है।

इन विभिन्न नगरों म जीवन व्यतीत करने पर भी अपने ग्रन्थों म अन्य नगरों की तुलना म बूँदी का विस्तृत वर्णन राव गुलाबसिंह जी ने किया है। काव्य नियम बृहद् व्यग्यार्थ चन्द्रिका ललित कौमुदी, कृष्ण चरित आदि ग्रन्थों म इसके प्रमाण प्राप्त हैं। इसम यह स्पष्ट हो जाता है कि अन्य नगरों की तुलना म राव गुलाबसिंह जी बूँदी म अधिक रमे हैं।

निवासस्थान–राव गुलाब सिंह जी अपने जीवन काल म अलवर और बूँदी इन दो नगरों म अधिक रहे हैं। अत साक्ष्य एव बहिःसाक्ष्य सामग्री में राव गुलाबसिंह जी के अलवर के निवास स्थान के विषय म कोई सकेत प्राप्त नहीं होता है। उनके दादा सेढूराम जी तथा पिता मदनसिंह जी अलवर दरबार म कवि के रूप में सबद्ध थे। इस सम्बन्ध को देखते राव गुलाबसिंह जी के पूर्वजों का अपना

निवास स्थान अलवर म रहा हो ऐसा अनुमान करना अनुचित नही है। शोधकर्ता की जब राव गुलाबसिंह जी के विद्यमान वशज राव मुकुदसिंह जी स भेंट हुई थी तो इस विषय पर भी वार्तालाप हुआ था। वार्तालाप म यह ज्ञात हुआ कि अलवर मे राव गुलाबसिंह जी के पूवजो का एक मकान था। बहुत वर्षो पहल वह किसी कायस्थ महोदय के हाथ बेचा गया था। जिस समय वह बेचा गया वह ढूह मात्र था। अत आज उसका कोई अस्तित्व होना सभव नही है।

बूंदी क निवास के विषय म अत साक्ष्य सामग्री मे इस प्रकार जानकारी प्राप्त होती है–

'अरु अटोक ड्योढी करी पैठत वखत तमाम ।।'[1]

राव गुलाबसिंह जी के बूंदी क निवासस्थान के विषय मे बहि साक्ष्य सामग्री मे जो विवरण मिलता है उसमे यह स्पष्ट हो जाता है कि र मसिंह जी न कवि का सम्मान करने के बाद कवि को उनकी हवेली तक पहुँचाया था।[2] उनके घर तक पहुँचाया था।[3]

इस प्रकार राव गुलाबसिंह जी क बूंदी निवास का उल्लेख तीन प्रकारा से प्राप्त होता है–१ अटोक ड्योढी २ हवेली और ३ घर। इन तीनो शब्दो क शब्द कोशातगत अथ नीचे प्रस्तुत किए जा रहे हैं जिसस उनकी अथ भिनता स्पष्ट हो जाती है—

अटोक ड्योढी–प्रतिबध विहीन देहलीज अथवा पौरी वाला मकान[4]

हवेली–चहार दिवारी वाला मकान बडा और पक्का मकान महल।

घर–आवास मकान।[5]

शोधकर्ता शोध सामग्री के सकलन के प्रसग मे बूदी गए थे। राव गुलाब सिंह जी के वशज आज जिस भवन म रहते हैं वह भवन राव गुलाबसिंह जी न बनवाया था एसा वशजो स ज्ञात हुआ है। आज वशजो न उमी का नामकरण गुलाब भवन इस प्रकार किया है। काला महल पोद्दारो की हथाई मुहल्ले म

१ (१) ललित कौमुदी–राव गुलाबसिंह–प्रथम सस्करण छ द ३८।
(२) नीतिचन्द्र–राव गुलाबसिंह–सवत १९४३ वि० सस्करण पृ० ५ छ द ३५

२ ललित कौमुदी–राव गुलाबसिंह जी प्रथम सस्करण जीवन चरित्र अश, पृ० २

३ कवि रत्न माला भाग १ मुन्शी देवी प्रसाद मुन्सिफ सवत १९६८ वि० सस्करण कविराव गुलाबसिंह जी का जीवन चरित्र पृ० ८७।

४ वृहत हिन्दी कोश–सपा–मुकुन्दीलाल श्रीवास्तव ततीय स० सवत २०२० वि० पृ० ३२ ५६८।

५ वही, पृ० १६२१। ६ वही पृ० ४०९।

स्थित इस भवन का पुराना घर क्रमांक २४५ वाड न० ११ है और नया घर क्रमांक १०४ वाड न० ७ है। आज भी यह भवन अच्छी दशा म है।

यह भवन पत्थरो का बना हुआ है। पक्का, डयोढीवाला दुमजिला है। एक हिस्से पर तीसरी मजिल बनी हुई है। ड्योढी के अन्दर खुली जगह है अत यह चहार दीवारी का मकान भी कहा जा सकता है। राव मुकुन्द सिंह जी से यह ज्ञात हुआ कि राव गुलाबसिंह जी इसी भवन मे रहते थे।

राव मुकुन्दसिंह जी से यह भी ज्ञात हुआ कि उसी गली मे, उनके भवन के सामने एक दूसरा मकान है जो राव गुलाबसिंह जी को राजा रामसिंह जी से सम्मान म प्राप्त हुआ था। इसी मकान म हाथी बांधा गया था। परिवार की महिलाएँ यहाँ रहा करती था। आज इस मकान की केवल बाहरी दीवार शेष है।

इस विवेचन से यह स्पष्ट है कि अत साक्ष्य सामग्री मे जिस निवास स्थान का उल्लेख "अटोक डयोढी" किया गया है वह राव गुलाबसिंह द्वारा बनाये हुए मकान का है। इस मकान की बनावट चहारदीवारी से युक्त है। यह हवादार है। अत ऐसा अनुमान किया जाता है कि इसी का सम्मान बढाने के हेतु बहि साक्ष सामग्री म इसका निर्देश 'हवेली' इस प्रकार किया गया हो।

छायाचित्र—साहित्यकारो के छायाचित्र भी उनके अध्ययन मे महत्वपूण होते हैं। पुराने साहित्यकारा के प्रामाणिक छायाचित्र दुलभ ही होते हैं। उनके वशजो के पास ही इनके होन की अधिक सभावना होती है। राव मुकुदसिंह जी से साक्षात हो जाने पर उनस इस विषय म पूछा गया था। राव गुलाबसिंह जी के दो फोटो ग्राफ उनके सग्रह म प्राप्त हुए। ये दोनो पुरान, जीण तथा धुधले पडे हुए हैं। एक तो लगभग ३,४ टुकडो म खडित रूप म प्राप्त है। तुलना म दूसरा फोटो ग्राफ पूण म प्राप्त है। यह फोटोग्राफ राव गुलाबसिंह जी के प्रौढ वय का है। इसम वे कुर्सी मे आसीन हैं। सर पर पगडी है। पगडी मे सर पेंच है। भव्य मुख मुद्रा है। तेजस्वी आँखे हैं। व गले म कठा, मोतियो की मालाएँ धारण किए हुए है। कुरता पहने हुए हैं। दाहिने हाथ म तल्वार है।

उपलब्ध फोटोग्राफ के आधार पर चित्रकार सुहेल द्वारा निर्मित तेल रगो से बना राव गुलाबसिंह जी का एक अध छायाचित्र भी वशजो के पास विद्यमान है। यह चित्र अधिक स्पष्ट एव जीवन्त प्रतीत होता है।

स्वभाव विशेषताए—जीवन चरित्र विषयक उपलब्ध सामग्री मे राव गुलाबसिंह के स्वभाव विशेषा का सदशन भी हो जाता है। उन्हा स्वभाव विशेषो का विवरण यहाँ प्रस्तुत है।

भावुकता—अपने बाल्यकाल से ही राव गुलाबसिंह जी ने गम्भीर अध्ययन किया था कवि के रूप म उनकी मौलिक भावुकता इस गम्भीर अध्ययन से दबी नहीं थी।

उनकी ग्रन्थ सम्पदा म शृगार, भक्ति विषयक ग्रन्थ इसके प्रमाण हैं। अन्य ग्रन्थो के वन्दना के छन्द उनकी भावुकता को ही व्यक्त करते है। एक उदाहरण यहाँ दृष्टव्य है—

"कामी क्रोधी अति दुखी दीन जानि जानि टारि।
पत्री पतित गुलाब की करि अनुकम्प निहारि॥"[१]

अपनी दीनता को व्यक्त करते हुए कवि राव गुलाबसिंह जी न पतित गुलाब पत्र के सदश गुलाब को अनुकम्पा स देखने की प्राथना भावपूण शब्दो म यहाँ की है।

सज्जनता—कवि रत्नमाला भाग १ मे देवीप्रसाद जी न लिखा है— कवि राव जी का ध्यान अत समय तक भगवत चरणो म रहा जो भक्तो को भी दुलभ होता है। इनकी मत्यु सत्पुरुषो सी हुई—और वे सत्पुरुष ही थ। उसके अनेक ग्रथो में यह बात भली भाति भावति है।'[२]

राव गुलाबसिंह जी की सज्जनता इस अवतरण स प्रकट हाती है।

विनम्रता—राव गुलाबसिंह जा की स्वभावगत विनम्रता निम्नलिखित छ दो मे परिलक्षित होती है—

सेवक कवि कोविदन को तिनको तनय गुलाब।
+ + +
"अखिल कोष अमरादि कोस गरो सार अगाध।
मैं नरबानी म किया बुध छमियो अपराध॥"

इससे यह स्पष्ट होता है कि राव गुलाबसिंह जी स्वय को कवि कोविदो का सेवक मानते हैं। उ होने देववाणी की सचित ज्ञान राशि नरवाणी अथात हिन्दी म लाने के अपने काय को विद्वानो के समक्ष अपराध के रूप म स्वीकार किया है। उनकी क्षमा माँगते हुए राव गुलाबसिंह जी न अपनी विनम्रता को ही पगट किया है।

उदारता—राव गुलाबसिंह जी की उदारता के सम्ब ध म देवीप्रसाद जी का निम्नलिखित अवतरण दृष्टव्य है—

'और वे जसे कवि हैं वसे ही कवि कोविदा की कदर भी करते हैं। हिन्दुस्तान के बहुधा कवि समाजा को आपसे बडी सहायता मिलती है।

१ गगाष्टक–हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छन्द ९।

२ कवि रत्नमाला–भाग १ मुन्शी देवीप्रसाद सवत १९६८ वि० सस्करण कवि राव गुलाबसिंह जी का जीवन चरित्र प० ७२।

३ गुलाबकोश–हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग छन्द ९,११।

४ कवि रत्न माला भाग १ मुन्शी देवीप्रसाद मुन्सिफ सवत् १९६८ कवि राव गुलाबसिंह चरित्र, पृ० ८७।

इससे यह स्पष्ट है कि राव गुलाबसिंह जी कला कोविद था, कवियों का सम्मान भी करते थे। कवि समाज के साथ उनका निकटवर्ती सम्बन्ध था। व उदारतापूर्वक उनकी सहायता करते थे। राव गुलाबसिंह जी की उदारता इससे स्पष्ट हो जाती है।

शूरवीरता—राव गुलाबसिंह जी एक भावुक कवि समथ लेखनी के धनी ही नहीं अपितु शस्त्रास्त्र सचालन म भी निपुण थ। ऐस प्रमाण अन्त साक्ष्य सामग्री मे प्राप्त हैं। निम्नलिखित छन्द इस सम्बन्ध म दृष्टव्य है--

लइ पांच कोस रीवां निराय। मग चोर मिले अधराति पाय।
लखि सब भय मो सगि भात। असि काढि कौन मैं रन अभीत॥
छत भयउ महा तहँ सकल काय। नप वस्तु लई पर सब बचाय॥"[1]

एक समय रीवां जाते हुए रीवां स पाँच कोस की दूरी पर राव गुलाबसिंह और उनके साथियों को आधीरात मे चोरो न घेर लिया था। अन्य साथी भयभीत हुए थे किन्तु राव गुलाबसिंह जी हाथ म तलवार लेकर चोरो से डटकर मुकाबला करते रहे। इस सघष म राजा की भेंट वस्तुएँ बचाने म उन्होंने प्राणो की बाजी लगा दी थी। इससे राव गुलाबसिंह जी न अपनी शस्त्र सचालन की योग्यता का ही परिचय नहीं दिया तो अपनी राजनिष्ठा कतव्य निष्ठा एव साहसिकता को प्रमाणित किया था।

विरक्ति—राव गुलाबसिंह जी की ससार से विरक्ति की भावना बचपन स रही है। अन्त साक्ष्य सामग्री म से निम्नलिखित छन्द इसी विरक्ति की भावना को अभिव्यक्त करते हैं—

बालहि त मन जगत स उदासीन करि लीन।[2]
+ + +
बाल पनै स मन खीच जग कामन स।'[1]

इन छन्दो स यद्यपि राव गुलाबसिंह जी की सासारिकता से विरक्ति की भावना व्यक्त होती है फिर भी उन्होंने सन्यास ग्रहण नही किया था। उनकी सासारिक दृष्टि भोगवादी दृष्टि न थी। ससार मे विरक्ति के पश्चात अपनी आसक्ति के विषयो का विचार निम्नलिखित छन्दो मे राव गुलाबसिंह जी ने अभिव्यक्त किया है--

---

१ नीतिचन्द्र—राव गुलाबसिंह, प्रथम स०, सवत १९४३ वि० प्र० ५ छन्द ३६,३७।
२ (क) गुलाब कोश—हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द १०।
(ख) नीतिचन्द्र—राव गुलाबसिंह—प्रथम सस्करण, सवत् १९४३ वि० पृ० ५।
३ ललित कौमुदी—राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण, छन्द ३२।

"नर सुर बानी के विषै परम परिश्रम कीन ।"[1]

\+ \+ \+

सुर नर बानी क विषै कीनो श्रमको समाज ।"[2]

राव गुलाबसिंह अतीव रुचि से सस्कृत एव हिन्दी भाषाओ के विषय मे परिश्रम करते रहे थे । इसी रुचि के कारण सस्कृत भाषा म सचित ज्ञान राशि को वे हि दी भाषा मे ले आने मे प्रयत्नशील रहे हैं ।

इसी सासारिक विरक्ति के परिणामस्वरूप राव गुलाबसिंह जी ने सम्भवत विवाह नही किया था । जीवन के इकतालीस वष की आयु तक आर्थिक दृष्टि से स्थिर न हो सकने के कारण भी वे अविवाहित रहे ये यह तक भी अनुचित नही प्रतीत होता ।[3]

अध्यापन एव शिष्य–राव गुलाबसिंह जी के अध्यापन काय एव शिष्यो के सम्ब ध में अन्त साक्ष्य सामग्री म कोई उल्लेख नही मिलता है । बहि साक्ष्य सामग्री म इस प्रकार विवरण प्राप्त होता है—

'उनके घर म बाहर और भीतर विद्या का प्रचार रात दिन रहता था । बाहर विद्यार्थी पढ़ते लिखते थे भीतर च द्रकलाबाई जसी दासी पुत्रियाँ काव्य रचना किया करती थी । कवि रावजी के शिष्यो की सख्या तो बडी है पर यहाँ मुख्य मुख्य नाम लिखे जाते हैं–अल्वर म (१) किशनपुर के चौहान ठाकुर बिड़दासिंह (२) ईश्वरीसिंह (३) पवाला के ठाकुर नरुका हनवतसिंह बून्दी में चौबे जगन्नाथ, चद्रकलाबाई आदि ।'[4]

राव गुलाबसिंह विरचित वनिता भूषण ग्रन्थ की अन्तिम पुष्पिका इस सन्दभ म द्रष्टव्य है––

'चन्द्रकला टीका करी मोतीलाल सहाय ।
मोतीनाकर ने लिख्यो सोधि ग्रथ सुखदाय ।'[5]

अर्थात वनिता भूषण ग्रथ की टीका चन्द्रकला बाई ने की थी । मोतीलाल

---

१ गुलाब कोश–हस्त० हि दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छन्द १० ।
नीतिचद्र–राव गुलाबसिंह–प्रथम सस्करण सवत् १९४३ वि० प० ५, छन्द २८ ।

२ ललित कौमुदी–राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण, छन्द ३२ ।

३ महाराणा कॉलिज, बून्दी अयुअल ७१–७२ रघुवीरसिंह का लेख–
'साहित्यभूषण कवि राव गुलाब ।'

४ कविरत्न माला भाग १ मुन्शी देवीप्रसाद मुसिफ सवत १९२८ वि० संस्करण कवि राव गुलाबसिंह का जीवन चरित्र पृ० ९४ ।

५ वनिता भूषण–राव गुलाबसिंह–प्रथम सस्करण, पृ० १०९, छन्द ४३६ ।

उसके सहायक थे। ग्रंथ का लेखन मोतीशंकर ने किया था। चन्द्रकलाबाई राव गुलाबसिंह की शिष्य थी। अतः यह तर्क प्रश्रय पाता है कि मोतीलाल एवं मोतीशंकर भी राव गुलाबसिंह जी के शिष्य रहे हों।

उपरिनिर्दिष्ट नामों के अलावा राव गुलाबसिंह जी के वंशज, उनके पौत्र राव मुकुन्दसिंह जी ने दो शिष्यों की सूचना दी है वे हैं– १ बूँदी में चौबे जगन्नाथ तथा २ अलवर मे शिवदानसिंह जी।"[1] देवीप्रसाद जी ने जगन्नाथ चतुर्वेदी का जो निर्देश किया है वे और चौबे जगन्नाथ सम्भवत एक ही व्यक्ति रहे हों। शिवदानसिंह जी भी सम्भवत अलवर नरेश शिवदानसिंह जी रहे हों जिनके आश्रय में राव गुलाबसिंह जी अपने जीवन के प्रारम्भिक काल में रहे थे।

इस विवेचन से यह स्पष्ट है कि राव गुलाबसिंह जी की शिष्य परम्परा विस्तृत थी। अलवर एवं बूँदी के अतिरिक्त राजपूताने के अन्य स्थानों से उच्च वर्ग के व्यक्ति भी उनके शिष्यों में थे। यह बात उनकी योग्यता को प्रमाणित करती है।

इस समग्र विवेचन के आधार पर यह कहा जाता है कि ज्ञानार्जन राव गुलाबसिंह जी का जीवन व्रत था। संस्कृत भाषा में संचित ज्ञानराशि को अपने सुयोग्य एवं समर्थ गुरुओं के निर्देशन में उन्होंने प्राप्त किया था। अपने अध्यवसाय के द्वारा प्राप्त ज्ञानराशि को अधिक सम्पन्न बनाया था। संस्कृत भाषा को जानने की क्षमता न रखने वाले रसिक एवं जिज्ञासुओं की ज्ञान पिपासा को तृप्त करने के हेतु अपने भगीरथ प्रयत्नों से इस ज्ञान गंगा की धारा अलवर एवं बूँदी में प्रवाहित की थी जो प्रत्यक्ष रूप से इस ज्ञान गंगा में निमज्जित नहीं हो सकते थे उनके लिए अपनी ग्रंथ सम्पदा के द्वारा ज्ञान प्राप्ति का मार्ग सुलभ कर दिया था।

व्यक्तित्व–राव गुलाबसिंह जी के जीवन चरित्र विषयक उपलब्ध सामग्री के अध्ययन से उनके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं का सदर्शन प्राप्त होता है। राव गुलाबसिंह जी एक भावुक कवि थे। काव्य प्रतिभा उन्हें अपने पूर्वजों से थाती के रूप में प्राप्त थी। उनकी ग्रंथ सपदा में उनकी भावुकता को अभिव्यक्त करने वाले छंद बहुतायत में प्राप्त होते हैं। वे कुशाग्र बुद्धि एवं समर्थ प्रतिभा के व्यक्ति थे। पाँच वर्ष की अवस्था में भाषा काव्य एवं सारस्वत चंद्रिका जैसे ग्रंथों का मुखाग्रगत करना इसी को प्रमाणित करता है। उनकी ग्रंथ सम्पदा उनकी बहुमुखी प्रतिभा का सबल एवं सुपाठ्य प्रमाण प्रस्तुत करती है। वे भावुक कवि थे, साहित्य शास्त्र विषयक ग्रंथों के ग्रंथकार थे। कोश रचना के क्षेत्र में, टीका के क्षेत्र में नीतिशास्त्र में उनकी प्रतिभा की अभिव्यक्ति, राव गुलाबसिंह जी के इन क्षेत्रों के अधिकार की परिचायक है। राव गुलाबसिंह जी एक सहृदय भक्त भी थे।

---

१ राव मुकुन्दसिंह बूँदी से पत्राचार के उत्तर में प्राप्त सूचना।

साहित्य के क्षेत्र के अतिरिक्त राव गुलाबसिंह जी ने प्रशासन के क्षेत्र में भी अपनी योग्यता एवं क्षमता को प्रमाणित किया था। वे एक मंत्री, प्रशासक, राजनीतिक सम्बन्धों के कुशल ज्ञाता इन विभिन्न रूपों में अपना परिचय दे चुके थे। उनके आश्रयदाता उनके प्रति पूर्णरूपेण आश्वस्त थे। प्रशासन एवं मंत्रणा की यह क्षमता भी सम्भवतः आनुवंशिक ही थी। वे सफल योद्धा, राजनिष्ठ एवं कर्तव्यनिष्ठ व्यक्ति थे।

वे सांसारिक जीवन से विरक्त थे। यह विरक्ति बचपन में ही उनके चरित्र का अंग बन गई थी। वैभव प्राप्त होने पर भी राव गुलाबसिंह जी वैभव मद में डूब नहीं गए थे जिससे उनकी सुशीलता विनम्रता आदि चरित्रगत विशेषताएँ सिद्ध होती हैं। इस प्रकार राव गुलाबसिंह जी का चरित्र स्वार्थ भाव से ग्रस्त इस व्यावहारिक विश्व में एक 'कमलपत्रमिवाम्भसाम' व्यक्तित्व को ही प्रस्तुत करता है।

३ | साहित्य कृतियाँ एवं उनका परिचयात्मक विवेचन

राव गुलाबसिंह जी एक प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार थे। विभिन्न सूत्रों से ज्ञात होता है कि वे अपने समय में बहुत ही सम्मानित थे। उन्होंने विभिन्न विषयों पर अनेक ग्रन्थों की रचना की थी। उनमें से कुछ ग्रन्थ कवि के जीवन काल में प्रकाशित भी हुए थे, परन्तु इन ग्रन्थों का सम्यक् विवेचन इतिहास ग्रन्थों में नहीं किया गया। कतिपय इतिहास ग्रन्थों में प्रसंगानुसार कवि के सम्बन्धित एकाध ग्रन्थ का उल्लेख मात्र किया गया है। अलवत्ता इनमें डॉ० ओम प्रकाश ने 'हिन्दी अलंकार साहित्य' ग्रन्थ में कवि के 'वनिता भूषण' ग्रन्थ का परिचयात्मक विवेचन किया है। विभिन्न स्रोतों से प्राप्त सूचनाओं के अनुसार राव गुलाबसिंह के कुल ग्रन्थों की संख्या लगभग ५६ है जिनमें से अत्यधिक प्रयास करने पर भी केवल २४ ग्रन्थ प्राप्त हो सके हैं। इन ग्रन्थों में से कुछ प्रकाशित और कुछ हस्तलिखित रूप में उपलब्ध होते हैं। उनके प्रकाशित ग्रन्थ भी सहजता के साथ पाठकों के लिए उपलब्ध नहीं होते। अतः राव गुलाबसिंह जी की साहित्य कृतियों का परिचयात्मक विवेचन प्रस्तुत करना वाञ्छनीय प्रतीत होता है। ग्रन्थों का परिचयात्मक विवेचन करने से पूर्व विभिन्न स्रोतों से प्राप्त राव गुलाबसिंह जी के ग्रन्थों की अद्यावधि सूचना का विचार करना आवश्यक है।

साहित्य कृतियों की सूचना—राव गुलाबसिंह जी की साहित्य कृतियों का सर्वप्रथम उल्लेख उनके 'भूषण चन्द्रिका' ग्रन्थ में प्राप्त होता है। इस ग्रन्थ में कवि ने अपने ग्रन्थों के नामों का निर्देश न करते हुए केवल बारह ग्रन्थों की संख्या का उल्लेख किया है जिसमें से अलवर में नौ और बूँदी में तीन ग्रन्थ रचे गए थे। यथा—

अलवर माँझ नौ बनाएँ ग्रन्थ नौ न इहाँ
तीसरा बनाया यह गीझ भूत महराज।"[1]

---

[1] भूषण चन्द्रिका—हस्त सार्वजनिक पुस्तकालय, बूँदी कविवंश वर्णन छन्द २

अत यह स्पष्ट होता है कि 'भूषण चन्द्रिका" से पूर्व अर्थात सवत १९२९ वि० तक राव गुलाबसिंह जी ने बारह ग्रन्थों की रचना की थी।

इसके उपरान्त कवि के ग्रन्थो म से केवल "नीतिचन्द्र' ही ऐसा ग्रन्थ है जिसमें राव गुलाबसिंह जी ने अपने उन्नीस ग्रन्थो का नाम सहित उल्लेख किया है। यथा—

'उनईसहि पूरन ग्रन्थ कीन । तह पच्चीसी चारहि नवीन ।
पावस रु प्रेम य दोय जानि । पुनि रस रु समस्या चारि मानि ।
गगा रु शारदा रुद्र राम । पुनिबाला अष्टक पच नाम ।
ले अमर कोश से सकल नाम । मत रामाश्रम को लखि तमाम ।
त्रय काड रचे भाषा भिधान । निज नाम कोश को धरि निशान।
पुनि लीन सकल त्रय काड शेप । रचि दीन काड चवयो विशेष ।
पुनि नाम चन्द्रिका द्वितीय कीन । अरु नाम सिंधु तीजो नवीन।
न्यायाथ चन्द्रिका बहुरि जानि। पुनि भाषा भूषण तिलक मानि।
त्रय ललित कौमुदी वा य ग्रन्थ। किय नीति सिंधु लही शुक्र पथ।
पुनि नीति मजरी नीति च द्र। पुनि काव्य नियम कविता अमद।'[1]

भूषण चन्द्रिका की अपेक्षा नीति चन्द्र' की सूचना अधिक स्पष्ट है। 'नीति चन्द्र' सवत १९४३ वि० मे प्रकाशित हुआ है। इस समय तक कवि ने उन्नीस ग्रन्थो की रचना पूर्ण की थी। इन ग्रन्थो का विवरण इस प्रकार है-

पच्चीसियाँ-१ पावस पच्चीसी २ प्रेम पच्चीसी ३ रस पच्चीसी ४ समस्या पच्चीसी।

अष्टक-५ गगाष्टक ६ शारदाष्टक ७ रुद्राष्टक ८ रामाष्टक ९ बालाष्टक।

कोश १० गुलाब कोश ११ नाम चन्द्रिका १२ नामसिंधु कोश।

काव्यग्रन्थ-१३ न्यायाथ चन्द्रिका १४ ललित कौमुदी, १५ भाषा भूषण (भूषण चन्द्रिका) १६ काव्य नियम।

नीतिग्रन्थ-१७ नीतिसिंधु १८ नीति मजरी, १९ नीति चन्द्र।

नीति चन्द्र की सूचना के पश्चात् राव गुलाबसिंह जी के चौतीस ग्रन्थों की विस्तृत सूची 'ललित कौमुदी' की भूमिका म उनके समकालिक श्री रामकृष्ण वर्मा द्वारा दी गई है। समकालिक सामग्री की दृष्टि स यह सूचना अत्यधिक महत्त्वपूर्ण एव प्रामाणिक है। सूची इस प्रकार है—

१ रुद्राष्टक, २ रामाष्टक ३ गगाष्टक, ४ शारदाष्टक, ५ बालाष्टक

---

१ नीतिचन्द्र-राव गुलाबसिंह-प्रथम सस्करण छ द ४५।

, पावस पच्चीसी, ० प्रेम पच्चीसी ८ रस पच्चीसी ९ समस्या पच्चीसी, १० गुलाब कोश खंड–४, ११ नाम चन्द्रिका १२ नामसिंधु कोश भाग ४, १३ व्यग्याथ चन्द्रिका १४ बृहद् व्यग्याथ चन्द्रिका १५ भूषण चन्द्रिका १६ ललित कौमुदी, १७ नीति सिंधु खंड ४, १८ नीति मजरी १९ काव्य नियम, २० वनिता भूषण २१ बृहद् वनिता भूषण, २२ नीति चन्द्र भाग २, २३ चिंता तन्त्र, २४ मूत्र शतक २५ ध्यान रूप सर्वतिका बद्ध कृष्ण चरित, २६ आदित्य हृदय, २७ कृष्ण लीला, २८ रामलीला २९ सुलोचना लीला ३० विभीषण लीला ३१ दुर्गा स्तुति, ३२ लक्षण कौमुदी, ३३ कृष्ण चरित मे गोलक खड वृन्दा वन खड मथुरा खड द्वारिका खड विज्ञान खड ३४ कृष्ण चरित सूची ।''[1]

राव गुलाबसिंह जी के समकालिक एव व्यक्तिगत मित्र मुशी देवीप्रसाद ने अपने ग्रन्थ "कवि रत्नमाला भाग १ मे कवि की साहित्य कृतियो की जो सूची उद्धृत की है वह श्री रामकृष्ण वर्मा द्वारा दी गई सूची के समान ही है ।[2]

मिश्र बन्धुओ ने "मिश्र बन्धु विनोद भाग ३" मे राव गुलाबसिंह जी के ३४ ग्रन्थो का उल्लेख किया है जिसका प्रमुख आधार श्री रामकृष्ण वर्मा द्वारा ललित कौमुदी में दी गई सूचना ही है । मिश्र ब धुओ ने अपनी सूची म मूल सूचना के क्रम म परिवर्तन कर अष्टको के नाम नही दिए हैं । अष्टक एव पच्चीसियो का उल्लेख इस प्रकार किया गया है–

नौ छोटे अष्टक तथा पावस और प्रेमपचीसी ।''[3]

नौ यह संख्या सम्भवत पाँच अष्टक एव चार पच्चीसियो का सकेत करती है । 'ध्यान रूप सर्वतिका बद्ध कृष्ण चरित के स्थान पर केवल "कृष्ण चरित" ही लिखा गया है । सम्भवत किसी कारण से 'ध्यान रूप सर्वतिका बद्ध' यह अश छूट गया है ।

मिश्रब धु विनोद के पश्चात डा० मोतीलाल मेनारिया ने राजस्थानी भाषा और साहित्य" एव राजस्थान का पिंगल साहित्य' ग्रन्थो मे भी राव गुलाबसिंह के ३४ ग्रन्थो का उल्लेख किया है जो पूर्ववर्ती ग्रन्थो म प्राप्त सूचना पर आधारित है।[4]

---

१ ललित कौमुदी–राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण पृष्ठ ३ ।

२ कवि रत्नमाला भाग १ सवत १९६८ वि० प्रकाशन, पृष्ठ ८८ ।

३ मिश्र ब धु विनोद भाग ३ मिश्र बन्धु सवत १९८१ वि० सस्करण, पृ० १०५५ ।

४ राजस्थानी भाषा और साहित्य–डा० मोतीलाल मेनारिया–तृतीय सस्करण पृष्ठ ३३१–३३२ ।
राजस्थान का पिंगल साहित्य–डा० मोतीलाल मेनारिया, द्वि० स० पृ० २२५–२६ ।

इसके अतिरिक्त हि न्दी साहित्य के इतिहास म राव गुलाबसिंह के समस्त ग्र थो का उल्लेख तक नही मिलता कि तु टीका, नायिका भेद एव अलकार ग्र थो के विवेचन क प्रसग म भषण च द्रिका[1] ललित कौमुदी[2], बहद व्यग्याथ कौमुदी (च द्रिका)[3] तथा वनिता भूषण इन चार ग्र थो का उल्लेख मात्र किया गया है।

राव गुलाबसिंह के हस्तलिखित एव प्रकाशित ग्र थो म राव गुलाबसिंह विर चित "वहद यग्याथ च द्रिका नाम स ग्र थ उपलब्ध होता है, बहत यग्याथ कौमुदी' नाम से नही जसा डा० सत्यदेव चौधरी न हि दी साहित्य क वहत इतिहास के षष्ठ भाग म लिखा है।[4] अत इस विषय मे डा० सत्यदेव चौधरी से अधिक सूचना प्राप्त करने के हेतु लेखक ने पत्राचार किया था। उत्तर म उ होने लिखा था "भारत जीवन प्रस से प्रकाशित गुलाबसिह कृत बहद व्यग्याथ कौमुदी ' ही जसा कि मुझे स्मरण आता हैं बहद यग्याथ च द्रिका है। सम्भवत यही दोनों नाम पुस्तक पर मुद्रित है–अलग अलग स्थानो पर ।'"[5] लेखक को उक्त ग्र थ की जो प्रकाशित प्रति अध्ययनाथ प्राप्त हुई वह भी भारत जीवन प्रेस, काशी से, सवत १९५४ मे प्रकाशित हुई है। इस प्रति म क्वल बहत व्यग्याथ च द्रिका" इसी प्रकार उल्लेख प्राप्त होता है। हस्तलिखित उपलब्ध प्रतियो पर भी यही नाम है। अत यद्यपि 'कौमुदी' और चन्द्रिका श द पर्यायवाची है फिर भी यह निश्चित हो जाता है कि राव गुलाब के ग्र थ का वास्तविक नाम वहत यग्याथ च द्रिका ही है कि बहत व्य ग्याथ कौमुदी।

राव गुलाबसिंह जी के साहित्य विषयक विभिन्न स्रोतों स प्राप्त सूचनाओ के अतिरिक्त दो अधिक ग्रन्थ काय सि धु पूर्वार्द्ध एव उत्तरार्द्ध तथा जगदम्बा स्तुति हस्तलिखित रूप मे उपलब्ध हुए हैं। इससे कवि के ग्र थो की सख्या ३६ हो जाती है।

साहित्य कृतियों के प्राप्ति स्थान–राव गुलाबसिंह क समस्त ग्र थ किसी एक स्थान

---

१ हि दी साहित्य का अतीत–डा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र खण्ड २ प्रथम सस्करण। पृ० ४७९।
हि दी साहि य का इतिहास–आ० रामच द्र शुक्ल स० २०२५ वि० सस्करण पृष्ठ २३७।

२ हि दी साहित्य का अतीत—डा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र प्रथम स० पृ० ४८६।

३ हि दी साहित्य का बहत इतिहास—षष्ठ भाग सपा० डा० नगे द्र, लेखक–डा० सत्यदेव चौधरी प्रथम सस्करण पृ० ३७५।

४ हि दी साहित्य कोश–भाग २ सम्पादक–धीरेन्द्र वर्मा लेखक डा० ओमप्रकाश। प्रथम सस्करण–पृष्ठ १३२।

५ डा० सत्यदेव चौधरी के लेखक को प्राप्त व्यक्तिगत पत्र से उद्धृत।

पर एकत्रित रूप मे प्राप्त नही होते । कवि राव गुलाबसिंह के ग्रथो को प्राप्त करने के हेतु लेखक ने इलाहाबाद, बनारस बूँदी, जोधपुर आदि स्थानो की यात्रा की । वहाँ के विभिन्न हस्तलिखित सग्रहालयो, पुस्तकालयो एव व्यक्तिगत सग्रहो म से ये ग्रथ प्राप्त हो सके हैं । ग्रथो के प्राप्ति स्थानो का विवरण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है–

१ हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, इलाहाबाद

राव गुलाब सिंह विरचित ग्रथो की प्राप्ति का यह प्रमुख केन्द्र है । यहाँ उपलब्ध ग्रथ मात्र हस्तलिखित रूप म ही हैं । राव गुलाबसिंहजी के विद्यमान वशज, उनके पौत्र राव मुकुन्दसिंह जी, बूँदी से ये ग्रथ हिन्दी साहित्य सम्मेलन को भेट के रूप मे प्राप्त हुए हैं । ग्रथ इस प्रकार हैं––

१ गुलाब कोश–४ काड, २ रुद्राष्टक ३ रामाष्टक ४ नारदाष्टक, ५ गगाष्टक, ६ बालाष्टक, ७ पावस पच्चीसी ८ प्रेमपच्चीसी, ९ समस्या–२० छद, १० काव्य नियम ११ काव्य सिंधु पूर्वार्द्ध एव उत्तरार्द्ध १२ लक्षण कौमुदी, १३ बृहद वनिता भूषण, १४ कृष्णचरित–गोलोक खड, वृन्दावन खड, मथुरा खड ३ द्वारिका खड, विज्ञान खड (अपूर्ण) १५ बृहद व्यग्यार्थ चन्द्रिका १६ आदित्य हृदय स्तोत्र, १७ नीतिचद्र १८ नीति मजरी ।

२ भारती भवन, पुस्तकालय इलाहाबाद

इस पुस्तकालय म राव गुलाबसिंह के दो प्रकाशित ग्रथ प्राप्त हुए हैं । ग्रथो के नाम इस प्रकार हैं–––१ ललित कौमुदी–भारत जीवन प्रेस काशी एव २ बृहत व्यग्यार्थ चन्द्रिका भारत जीवन प्रेस, काशी ।

३ नागरी प्रचारिणी सभा काशी

नागरी प्रचारिणी सभा काशी म यद्यपि हस्तलिखित ग्रथो का विस्तृत सग्रह है फिर भी राव गुलाबसिंह का कोई हस्तलिखित ग्रथ वहाँ प्राप्त नहीं है । उनके 'नीति मजरी' नामक प्रकाशित ग्रथ की एक प्रति वहाँ उपलब्ध है ।

४ कारमायकेल लायब्रेरी बनारस

इस ग्रथालय म राव गुलाबसिंह के प्रकाशित ग्रथ 'ललित कौमुदी' की एक प्रति प्राप्त है ।

५ राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर

राव गुलाबसिंह के तीन ग्रथ–––१ व्यग्यार्थ चन्द्रिका, २ प्रेम पच्चीसी, ३ पावस पच्चीसी हस्त लिखित रूप म यहा सुरक्षित हैं । इन्द्रगढ पोथी खाना सग्रह से ये ग्रथ राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान म आये हैं ।

६ सार्वजनिक पुस्तकालय बूँदी

राव गुलाबसिंह जी का 'भूषण चन्द्रिका ग्रथ मूल हस्तलिखित रूप म सार्वजनिक पुस्तकालय, बूँदी म सुरक्षित है ।

७ श्रीयुतराव मुकुन्दसिंह जी बूँदी का निजी संग्रहालय

राव गुलाबसिंह जी के विद्यमान वंशज, उनके पौत्र राव मुकुन्द सिंह, बूँदी के निजी संग्रह में वृहद् व्यंग्यार्थ चंद्रिका काव्य सिंधु पूर्वार्द्ध का अंश आदित्य हृदय ग्रंथों की एक एक प्रति सुरक्षित है। कवि द्वारा रचित जगदंबा स्तुति' ग्रंथ के चार छन्द राव मुकुन्दसिंह जी से लेखक को प्राप्त हुए हैं। जगदम्बा स्तुति ग्रंथ का निर्देश ग्रंथ सूची में नहीं है। जगदंबा स्तुति' के छन्दों में भगवती दुर्गा की महिमा एवं प्रशस्ति ही प्राप्त होती है। अतः इस तर्क को प्रश्रय मिलता है कि ये ४ छंद मूलतः 'दुर्गास्तुति' ग्रंथ के ही रहे थे जो बाद में जगदंबा स्तुति के नाम से प्रचारित हो गए। इसके अतिरिक्त राव गुलाबसिंह के प्रकाशित ग्रंथों में से नीतिचंद्र भाग २, नीति मंजरी, नाम सिंधु कोश भाग ४, वनिता भूषण एवं व्यंग्यार्थ चंद्रिका की एक खंडित प्रति प्राप्त हुई है। राव गुलाबसिंह के प्रकाशित ग्रंथों की सूची छायाचित्र, हस्ताक्षर का नमूना आदि अत्यंत मौलिक सामग्री भी राव मुकुन्दसिंह जी से प्राप्त हुई है।

राव गुलाबसिंह के प्रकाशित ग्रंथ—राव मुकुन्दसिंह जी के संग्रह से प्रकाशित ग्रंथों की एक सूची शोधकर्ता को प्राप्त हुई है। यह सूची दो भागों में विभक्त है। प्रथम भाग में प्रकाशित ग्रंथों के नाम हैं। यथा—१ भूषण चंद्रिका २ व्यंग्यार्थ चंद्रिका ३ प्रेमपच्चीसी ४ पावस पच्चीसी ५ रुद्राष्टक ६ रामाष्टक, ७ नारदाष्टक, ८ गंगाष्टक, ९ बालाष्टक, १० नीति मंजरी ११ नाम सिंधु कोश ४ भाग। द्वितीय भाग में ये ग्रंथ दिए गए हैं जो शीघ्र प्रकाशित होने वाले थे। ये ग्रंथ हैं—१ नीतिचंद्र २ ललित कौमुदी ३ काव्य नियम।[1]

शीघ्र प्रकाशित होने वाले ग्रंथों की सूची में से नीतिचंद्र एवं ललित कौमुदी ग्रंथ प्रकाशित रूप में उपलब्ध हैं। इसके अतिरिक्त बृहत् व्यंग्यार्थ चंद्रिका तथा वनिता भूषण ग्रंथ भी प्रकाशित रूप में उपलब्ध हैं किन्तु सूची में उनका निर्देश नहीं है। अतः कवि के प्रकाशित ग्रंथों की संख्या १६ हो जाती है। इनमें से निम्न लिखित ग्रंथ ही अतीव प्रयास से अध्ययनार्थ प्राप्त हो सके हैं।

१ बृहत् व्यंग्यार्थ चंद्रिका २ ललित कौमुदी ३ वनिता भूषण, ४ नाम सिंधु कोश-४ भाग, ५ नीतिचंद्र-दो भाग ६ नीति मंजरी ७ व्यंग्यार्थ चंद्रिका (खंडित)।

अनुपलब्ध ग्रंथ

राव गुलाबसिंह जी के ३६ ग्रंथों में से अनवरत खोज-बीन करने पर हस्तलिखित

---

१ प्रकाशित ग्रंथ सूची का फोटो नं० ८ परिशिष्ट में।

तथा प्रकाशित रूप मे उनके केवल २४ ग्रथ ही उपलब्ध हो जाते हैं। अत १२ ग्रथ शेष रह जाते हैं जो सपूण अथवा खडित रूप म भी उपलब्ध नही हो सके। ये ग्रथ इस प्रकार हैं--

१ रस पच्चीसी, २ नाम चद्रिका, ३ नीति सिंधु, ४ खड, ५ चितातत्र, ५ मूल शतक, ६ ध्यानरूप सवतिका बद्ध कृष्ण चरित ७ कृष्णलीला, ८ रामलीला ९ सुलोचना लीला, १० विभीषण लीला ११ कृष्ण चरित सूची, १२ दुर्गा स्तुति।

यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठ सकता है कि जब कवि के २४ ग्रथ उपलब्ध हो सकते हैं तब शेष १२ ग्रथ क्या नही मिल सकने? इसके विषय मे अनुमान का ही प्रश्रय लेना पडता है। एक तो ये ग्रथ किसी न किसी कारण से काल कवलित हुए होंगे अथवा एक ही ग्रथ दो नामो से प्रचलित रहा होगा अथवा इन ग्रथो का स्वतत्र अस्तित्व न होकर ये कवि के ही किसी ग्रथ के खड अथवा अश रहे होंगे। द्वितीय तथा ततीय अनुमान की पुष्टि म कुछ उदाहरण दष्ट य हैं--

द्वितीय अनुमान

रामाष्टक रामलीला--रामाष्टक के आठ छदा म राम चरित के विभिन्न आठ प्रसगो के चित्र प्रस्तुत किये गये हैं जो राम की अवतार लीलाओ को ही वर्णित करते हैं। समवत कवि के किसी शिष्य अथवा प्रशसक ने रामाष्टक ग्रथ का रामलीला नामकरण किया हो।

जगदबा स्तुति दुर्गास्तुति-- जगदबा स्तुति में कवि द्वारा रचित छदो म जगदबा के दुर्गा रूप का वणन कर उसका स्तवन किया गया है। अत यह समव है, कि एक ही ग्रथ के य दो भिन्न नाम प्रचलित रहे हो।

ततीय अनुमान

कृष्ण चरित कृष्णचरित सूची कृष्ण लीला ध्यान रूप सवतिका बद्ध

कृष्ण चरित--कवि के कृष्ण चरित म प्रत्येक खड के आरभ मे उस खड की कथावस्तु का सक्षिप्त रूप कवि ने दिया है। ये सक्षिप्त कथारूप खडो के क्रम से एकत्रित करने पर कृष्ण चरित का एक सार रूप बन जाता है। समव है कि किसी भक्त अथवा कवि के किसी हित चितक ने सुविधा की दष्टि से इसे सकलित कर स्वतन्त्र ग्रथ के रूप म प्रस्तुत किया हो और उसे कृष्ण चरित सूची नाम दिया हो। कृष्ण चरित के विभिन्न लीला प्रसगो का सकलित रूप ही समवत कृष्ण लीला' ग्रथ बना हो। अत य ग्रथ कृष्ण चरित ग्रथ के अग ही प्रतीत होत हैं।

वहद् वनिता भूपण ग्रथ म चिता तत्र स कुछ उदाहरण स्पष्ट निर्देश के साथ उद्धत किये गय हैं। नीति चद्र में नीति सिंधु का तथा रस पच्चीसी का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होता है। अत यह स्वीकार करना पडता है कि कवि ने स्वतत्र ग्रथो के रूप मे इनकी रचना की थी। शेष ग्रथो क विषय म न कोई प्रामाणिक सूचना

उपलब्ध होती है और न ही कोई अनुमान किया जा सकता है।

अत राव गुलाबसिंह जी के उपलब्ध २४ ग्रथो के आधार पर ही उनके साहित्य का विवेचन किया जा सकता है।

ग्रथो की प्रामाणिकता

किसी भी ग्र थकार के ग्रन्थो की प्रामाणिकता को सिद्ध करने मे विभिन्न दष्टियो से विचार किया जाता है यथा—लिखावट, वश वणन, आश्रयदाता वणन, भणिता शब्द चयन शलीगत समानता आदि। राव गुलाबसिंह जी के ग्र थो की प्रामाणिकता के विषय म विभिन्न दष्टियो स विवेचन यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

१ ग्रथ प्राप्ति के स्रोत

हि दी साहित्य सम्मलन प्रयाग म उपल ध राव गुलाबसिंह जी के समग्र हस्तलिखित ग्र थ उनके घर मे सुरक्षित सग्रह स उनके विद्यमान वशज उनके पौत्र राव मुकु दसिंह जी बूँदी स प्राप्त हैं। राव मुकुदसिंहजी के कथनानुसार य सारे ग्र थ स्वय राव गुलाबसिंह जी के द्वारा लिखे गये थ। बहत व्यग्याथ चद्रिका को छोडकर किसी भी ग्र थ मे लिपिकार का कही भी उल्लेख न हाने से राव मुकु दसिंह जी के कथन की पुष्टि ही होती है। वशजो स ग्र थ प्राप्ति आधिकारिक स्रोत ही माना जाएगा।

२ लिखावट

अपने शोध काय मे शोधकर्त्ता को एक एसा दस्तावेज हुआ है जिसमे राव गुलाबसिंह जी के हस्ताक्षर हैं। हस्ताक्षर एव ग्र थो की लिखावट एक सी प्रतीत होती है।

३ कविवश वणन

राव गुलाबसिंह के नीतिचद्र नीति मजरी नामसिंधु कोश गुलाबकोश ललित कौमुदी आदि ग्रथो मे कवि ने अपने वश का जो वणन किया है उसमे समानता परिलक्षित होती है।

४ आश्रयदाताओं की प्रशस्ति

विभिन्न ग्रथो क रचना काल म कवि राव गुलाबसिंह जी के जो आश्रयदाता थ उनकी स्तुति की है। गुलाबकोश म अलवर नरेश शिवदानसिंह जी की प्रशसा है। व्यग्याथ चद्रिका वनिताभूषण आदि ग्र थो म बूँदी नरेश महाराज रामसिंह एव युवराज रघुवीर सिंह की स्तुति है। कार्यसिंधु लक्ष्मण कौमुदी बहद-व्यग्याथ चद्रिका आदि मे रघुवीरसिंह जी की प्रशस्ति है। रीवाँ एव नागादक राजाओ से सम्मानित हाने पर उनकी स्तुति भी की गई है। प्रशस्ति की पद्धति एव शब्दावली म साम्य पाया जाता है।

५ भणिता

राव गुलाबसिंह जी ने भणिता के रूप में अपनी रचनाओं में 'गुलाब' सुकवि गुलाब आदि नामों का प्रयोग किया है।

६ देवता स्तुति एवं वंदना के छन्द

राव गुलाबसिंह के विभिन्न ग्रन्थों में देवता स्तुति एवं वंदना के जो छन्द लिखे गये हैं उनमें समानता है।

७ शब्द चयन एवं शैली

राव गुलाबसिंह जी के विविध ग्रन्थों के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि शब्दचयन एवं शैली की दृष्टि से इन ग्रन्थों में समानता है।

८ पुष्पिका

सभी ग्रन्थों में राव गुलाबसिंहजी ने पुष्पिका नहीं दी है किन्तु जहाँ दी है वहाँ समानता परिलक्षित होती है यथा--

'इति श्रीमदगुलाब कवि रावण विरचिता व्यंग्यार्थ चन्द्रिका सपूर्ण। श्रीरस्तु।'[1]

इति श्रीमदगुलाब कविरावेण विरचित रामाष्टकम।[2]

इति श्रीगुलाब कवि रावण विरचिता भूषण चन्द्रिका सम्पूर्ण।"[3]

९ प्रकाशित ग्रन्थों पर राव गुलाबसिंह जी के नाम का निर्देश स्पष्ट रूप से किया गया है।

इस प्रकार कवि राव गुलाबसिंह जी के उपलब्ध ग्रन्थों की प्रामाणिकता की दृष्टि से--प्राप्ति स्रोत, लिखावट कविवंश वर्णन, आश्रयदाताओं की स्तुति, भणिता शब्द साम्य, भावसाम्य भाषासाम्य शैलीसाम्य आदि का विचार करने पर उसमें समानता देखने को मिलती है। अतः राव गुलाबसिंह जी के ग्रन्थों की प्रामाणिकता स्वतः सिद्ध हो जाती है।

रचनाओं का वर्गीकरण

राव गुलाबसिंह जी की ग्रन्थ सम्पदा को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने विभिन्न विषयों पर ग्रन्थ रचना की है यथा काव्यशास्त्र भक्ति शृंगार समस्या नीति टीकाएँ, कोश आदि। विषय के आधार पर स्थूल रूप से उनका वर्गीकरण यहाँ प्रस्तुत है।

१ लक्षण ग्रन्थ--१ व्यंग्यार्थ चन्द्रिका २ बृहत व्यंग्यार्थ चन्द्रिका ३ काव्य नियम, ४ लक्षण कौमुदी ५ काव्य सिन्धु पूर्वार्ध एवं उत्तरार्ध, ६ वनिता भूषण एवं ७ वक्तवनिता भूषण।

---

१ व्यंग्यार्थ चन्द्रिका--हस्तलिखित राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर।

२ रामाष्टक--हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग।

३ भूषण चन्द्रिका--हस्तलिखित--सार्वजनिक पुस्तकालय, बूँदी।

भेद के लक्षण उदाहरण एव स्पष्टीकरण इस प्रकार का क्रम राव गुलाबसिहजी ने इस ग्रथ म रखा है। लक्षण दोहा छद मे एव उदाहरण सवया छद मे दिए गए है। स्पष्टीकरण म ब्रजभापा गद्य का प्रयोग किया गया है। नायिका भेद के लक्षण, उदाहरण, स्पष्टीकरण का एक उदाहरण दष्टव्य है—

अथ स्वकीया लक्षण दोहा

स्वामी ही के प्रम मैं पगी स्वकीया जानि।
पति की सेवा, सरलता शील क्षमा की खानि॥[1]

अथ स्वकीया उदाहरण सवया

पति सग गई मनि मदिर म सुनि चारु सिवी उर म उमगी।
लखि क रति रूप अनूप सची अमला कमला चित चौप लगी।
कर वीन धर वर भारती माँझ गुलाव कहै मति खूब पगी॥
या हतु कहा अरधग लिखो गिरिजा अवलोकत वाल भगी॥[2]

'अर्द्धा ग मैं शिव समुभि भागी मति कही पर पुरुप को चित्र दीपि जाय यात पतिव्रता स्वकीया।'

इस ग्र थ म गर्विता नायिका के प्रेम गर्विता, एव रूप गर्विता इन्ही दो भेदो की विवेचना की गई है। गुण गर्विता का विचार प्रस्तुत नही किया गया है तथा उसके स्वकीयादि उपभेदो का भी विचार नही हुआ है। प्रोषित पतिकादि दश नायिकाओ का विचार इस ग्रन्थ म किया गया है जब कि परवर्ती ग्र थों मे द्वादश भेदो का विचार प्रस्तुत किया गया है। जिन भेदो का विवेचन नही हुआ वे हैं— आगमिष्यत पतिका, पतिस्वाधीना।

नायिक भेद क साथ ही साथ व्यग्यार्थ की सशक्त अभिव्यक्ति इस ग्रन्थ की विशेषता है। सम्भवत इसीलिए कवि ने ग्रन्थ को नायिका भेद से सम्बद्ध परम्परा गत कोई नाम न देकर "व्यग्यार्थ चन्द्रिका नाम हेतुत दिया है। जिसका उल्लेख कवि ने अपने ग्र थ म इस प्रकार किया है—

आज्ञा राम उदार न दान मान जुत दीन।
व्यग्य अर्थ की चन्द्रिका कवि गुलाब यह कीन॥
व्यग्य अर्थ की नायिका बिगरे तहा विचारि।
कवि गुलाब पै करि कृपा लीज्यो सुकवि सुधारि॥[3]

---

१ व्यग्यार्थ चन्द्रिका—हस्तलिखित, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर छद ३०
२ वही, छद ३१
३ व्यग्यार्थ चन्द्रिका—हस्तलिखित, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, छद ४, ५।

बृहद् व्यंग्यार्थ चंद्रिका—इस ग्रंथ की तीन प्रतियाँ उपलब्ध हैं जिनमें से दो हस्तलिखित एवं एक मुद्रित है। हस्तलिखित प्रतियों में से एक प्रति राव मुकुंदसिंहजी के संग्रह में है और दूसरी हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग में है। मुद्रित प्रति भारती भवन पुस्तकालय इलाहाबाद में सुरक्षित है। इन तीनों प्रतियों का विवरण यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

राव मुकुन्दसिंह जी के संग्रह की प्रति

इस प्रति का कागज पुराना पीले रंग का है। पृष्ठसंख्या ९७ है। कुल छंद ५१० हैं। प्रथम तीन छंद देवता वंदना के हैं। छंद क्रमांक ४ से १८ नृप प्रशंसा के छन्द हैं। इसी में ग्रंथ के रचना तथा पुनः रचना काल का स्पष्ट संकेत प्राप्त है। ग्रंथ रचना काल संवत १९२९ वि० तथा पुनः रचना काल संवत १९४८ वि० है।[1] छन्द १८ से ४९२ तक नायिका भेद का विचार किया गया है अंतिम १८ छंद कविवंश वर्णन नृप प्रशस्ति तथा ग्रंथाध्ययन फल आदि का वर्णन किया गया है। ग्रंथ में लिपिकार एवं लिपिकाल का कोई निर्देश नहीं है। प्रति पूर्ण रूप में सुरक्षित है। इस प्रति के अंत में पुष्पिका दी हुई है जो इस प्रकार है—

'इति श्रीमदवनिमण्डल मण्डनाथ मान बुन्दीन्द्र श्रीमं महाराजाधिराज महाराव राजा श्री रघुवीरसिंह भुजताश्रित साहित्यभूषण कविरत्न सुकवि गुलाबसिंह रावण विरचिता बृहद् व्यंग्यार्थ चंद्रिका समाप्ता। शुभम।

साहित्य सम्मेलन की प्रति

इस प्रति की पृष्ठसंख्या १७० है। कुल छंद ५१० हैं। यह ग्रंथ वेष्टन क्रमांक ७९६ ग्रंथ क्रमांक १०३२ पर प्राप्त है। ग्रंथ रचना एवं पुनः रचना काल राव मुकुंदसिंहजी की प्रति के समान ही है। ग्रंथ पूर्ण अवस्था में प्राप्त है। ग्रंथ की पुष्पिका राव मुकुंदसिंह जी की प्रति की तुलना में अत्यंत संक्षिप्त है जो इस प्रकार है— इति बृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका सम्पूर्ण। इसके पश्चात कवि के पुत्र रामनाथसिंह ने अपने पुत्र माधवसिंह के अध्ययन के हेतु ग्रंथ प्रतिलिपि तैयार करने का संकेत किया गया है। छंद इस प्रकार है—

श्री कविराव गुलाबसुत रामसिंह कवि राय।
तिन सुत माधव पठन हित लिख्यो ग्रंथ सुखदाय ॥१॥

प्रकाशित प्रति—यह ग्रंथ संवत १९५४ में भारत जीवन प्रेस काशी से श्रीयुत बाबू राम कृष्ण वर्मा द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित है। पृष्ठ संख्या ९९ है। कागज पीले रंग का पुराना है। मिहोर निवासी गोविन्द गिल्लाभाई तथा चन्द्रकला

---

१ बृहत व्यंग्यार्थ चंद्रिका हस्तलिखित, राव मुकुन्दसिंह एवं सम्मेलन प्रति छंद ८ से ११

ग्रन्थ मे पष्ठ ६१ पर छन्द सख्या ३१० तक सख्याएँ प्राप्त हैं। इसके पश्चात छन्द सख्या नही लिखी गई है। इसम भी रचना एव पुन रचनाकाल के वे ही निर्देश प्राप्त हैं जो हस्तलिखित प्रतियो म हैं।[1]

'व्यग्यार्थ चन्द्रिका' के समान इस ग्रन्थ का विषय भी नायिका भेद विचार है। व्यग्यार्थ चन्द्रिका ग्रन्थ का यह सशोधित परिवर्धित रूप है। नायिका भेद का विवेचन करते हुए लक्षण एव उदाहरणो को देकर उदाहरणो म प्रयुक्त अलकार का निर्देश किया गया है जो इस ग्रन्थ की विशेषता है। 'व्यग्यार्थ चन्द्रिका' मे ब्रज भाषा गद्य म नायिका भेद का स्पष्टीकरण किया गया है वह इस ग्रन्थ म नही है। नायिका भेद के विवेचन म अधिक भेद समाविष्ट हैं यथा स्वयदूतिका अभिसारिका नायिका के उपभेद। लक्षणो के लिए दोहा एव उदाहरणो के लिए सवैया छन्द का प्रयोग किया गया है।

काव्य नियम—यह ग्रन्थ हस्तलिखित रूप म हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग के हिन्दी सग्रहालय म प्राप्त है। ग्रन्थ वेष्टन सख्या १६०० एव ग्रन्थ सख्या ३११९ पर उपलब्ध होता है। ग्रन्थ का रचना काल सवत १९४२ वि० है।[2] ग्रन्थ म लिपि काल एव लिपिकार का कोई उल्लेख प्राप्त नही होता है। ग्रन्थ के अन्त म पुष्पिका नही दी गई है। पष्ठ सख्या ४१ और छन्द सख्या ३८२ है। ग्रन्थ यद्यपि पूर्ण रूप से प्राप्त है फिर भी कुछ अश कीटको द्वारा नष्ट किया जाने से अनेक स्थलों पर वह खडित सा हो गया है।

काव्य नियम' ग्रन्थ म काव्य के वर्ण्य विषयो पर विवेचन प्रस्तुत किया गया है। इस विषय म राव गुलाबसिंह का कथन है काव्य के अलकार, रस नायिका आदि पर ग्रन्थ लिखे गए हैं किन्तु काव्य के वर्ण्य विषय पर ग्रन्थ नहीं है। कविप्रिया में यद्यपि इस विषय का विचार किया गया है फिर भी उसम कठिनता है। अत विषय का सरल पद्धति से प्रस्तुत करने का प्रयास इस ग्रन्थ में किया गया है। अपनी ग्रन्थ रचना की यह भूमिका उन्होने निम्नलिखित छन्दो म स्पष्ट की है—

'अलकार रस, रसक कवि कल्पनादि निहारि।
वर्ण्य नियम भाषा कियो कवि न अमित हितकारि॥
अलकार रस नायिका छन्दादिक सब आँहि।
वर्ण्य नियम पूरण नही क्रमसैं भाषा माँहि॥

1 वहत् व्यग्यार्थ चन्द्रिका—राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण, सम्वत् १९५४ छन्द ८ से ११

2 काव्य नियम, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छन्द २

कविप्रिया मैं है तऊ कठिन न्यून अस दूर।
सरल सकल घरे याते लक्षण पूर॥[1]

काव्य वर्ण्य विषय क्या है इसका भी स्पष्ट निर्देश इस ग्रन्थ के आरम्भ मे निम्नलिखित छन्दो मे किया है—

आनिवच दान प्रताप जस पुरुष रु नारि सुढार।
भूमिपाल रानी अपर राजकुमार उदार॥
प्रकृति मंत्र सेनादिधिप रु देश नगर जिय जोय।
ग्राम सरोवर सरित पंक्ति अरु तरंगिणी होय॥
वन उद्यान प्रयान गढ गिरि रन सभा सुजान।
हय गय स्वयंवर रु हत मगया मदपान॥
वारि केलि पुष्पावचय रवि शशि पटऋतु सोय।
तरु आश्रम विश्लेषनम काल महोत्सव होय॥
वयसंधि अभिसार अरु उत्सव द्वादश माह।
नालागरह नख शिख प्रभृति वर्ण्य कहत कवि नाह॥[2]

विषय के विवचन म कवि ने इसी क्रम से नखशिख तक विवेचन किया है जिसमे लक्षण और उदाहरण इस प्रकार का स्वरूप प्रस्तुत है। वर्ण्य विषय की सूची भी नख शिख वर्णन तक ही दी गई है अत समाप्ति दशक पुष्पिका न होते हुए भी ग्रन्थ की पूर्णता स्पष्ट हो जाती है।

ग्रन्थ म एसे अनक स्थान हैं जहाँ का अश नष्ट हुआ है। अनेक उदाहरण सुविधानुसार हाशिये म भी दिए गए हैं। उदाहरण के प्रसग मे कवि ने अपने पूर्ववर्ती ग्रन्थ 'नीतिचन्द्र' से भी कुछ उदाहरण उद्धत किए हैं। लक्षण के लिए दोहा छन्द एव उदाहरण के लिए अधिकाश कवित्त छन्द का प्रयोग किया गया है।

यद्यपि ग्रन्थ म कवि ने पूर्ववर्ती किसी आधारभूत ग्रन्थ का सकेत नहीं किया है फिर भी 'प्रसिद्ध पत्र' मे[3] प्राप्त सूचना के आधार पर यह ज्ञात होता है कि यह ग्रन्थ 'काव्यकल्पलता' एव 'अलकार शेखर" इन ग्रन्थो के आधार पर लिखा गया था। कवि शिक्षा की दृष्टि से यह ग्रन्थ अपने काल मे अवश्य ही उपयोगी एव महत्वपूर्ण रहा होगा।

लक्षण कौमुदी—इस ग्रन्थ की तीन हस्तलिखित प्रतियाँ हिन्दी साहित्य

---

१ काव्य नियम हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छन्द ३, ४, ५
२ वही, छन्द ६ से १० तक
३ प्रसिद्ध पत्र—क्षेमकरण गौड

सम्मलन, प्रयाग के हि दी सग्रहालय मे हैं। इन प्रतियो का विवरण निम्नानुसार है—

१ वेष्टन सख्या ७५६ एव ग्र थ सख्या ८६९ पर यह प्रति प्राप्त होनी है। प्रति को पृष्ठसख्या १०५ है। ग्रन्थ के अन्त म पुष्पिका नही है। सवत १९४७ वि० ग्रन्थ का रचना काल है।[1] ग्रन्थ पूण स्थिति मे सुरक्षित हैं। ग्रन्थ म लिपिकाल एव लिपिकार का निर्देश नही है।

२ दूसरी प्रति वष्टन सख्या १६३५ एव दाखिल सख्या ३२३६ पर प्राप्त है। पष्ठ सख्या १५२ है। कागज पुराना पील रग का है। यह प्रति भी पूण अवस्था मे सुरक्षित है। अन्त म पुष्पिका नही है। ग्रन्थ रचना काल के रूप मे सवत १९४७ वि० का ही उल्लेख इस प्रति मे भी किया गया है। प्रतिलिपिकाल एव प्रति लिपिकार का निर्देश नही है।

३ तीसरी प्रति वष्टन सख्या १५६२ तथा ग्रन्थ सख्या २९८२ पर प्राप्त है। पष्ठ सख्या १५२ है। कागज पुराना पीले रग का है। सवत १९४७ का निर्देश रचना काल के रूप में प्राप्त है। ग्रन्थ क अन्त में पुष्पिका नही है। ग्रन्थ पूण स्थिति म सुरक्षित है। प्रति मे प्रतिलिपि काल एव लिपिकार का निर्देश नही है।

राव गुलाबसिंह जी न लक्ष्मण कौमुदी की रचना अपन आश्रयदाता बूँदी नरेश रघुवीर सिंह जी की आज्ञा स की थी। अनक सस्कृत ग्रथो का अनुशीलन कर उन्होने इस ग्रथ का निर्माण किया था।[2]

काव्यशास्त्र क विभिन्न अग एव उपागो का लक्ष्मण निरूपण इस ग्रथ का लक्ष्य है। यह ग्रथ दस प्रकाशो म विभाजित किया गया है।

प्रथम प्रकाश म कुल ९१ छन्द हैं। इनम राधा कष्ण की वदना नप प्रशस्ति रचनाकाल आदि का विचार प्रथम चार छदो म किया गया है। तत्पश्चात नायिका वणन नायिका लक्षण जाति एव भेदोपभेद का विचार कर उनक लक्षण प्रस्तुत किए गए हैं।

द्वितीय प्रकाश म कवल २२ छन्द हैं। इस प्रकाश म नायक दर्शन सखी दूती, सखा, दूत आदि के विभिन्न लक्षणो का विवचन प्रस्तुत किया गया है।

ततीय प्रकाश की छन्द सख्या ६४ है। भाव अनुभाव स्थायी भाव नवरस सयोग शृगार विभाव अनुभाव सात्विक भाव सचारी भाव हाव विप्रलम्भ एव दशा वणन इसकी विषय वस्तु है। स्थायी भावो के विवचन के प्रसग म राव गुलाबसिंह जी न नौ स्थायी भावो के नाम गिनाए अवश्य हैं किन्तु लक्षण दते समय

---

१ लक्ष्मण कौमुदी हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग।

२ लक्षण कौमुदी, हस्त लिखित हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, प्रथम प्रकाश छन्द ३।

रति स्थायी का ही विचार किया है। रस चर्चा मे भी लक्षण मात्र शृगार रस का देकर शेष रसो के नाम ही गिनाए हैं। अत सभी रसो का विचार एक उपचार मात्र था मूलत शृगार का विवेचन ही उनका प्रमुख लक्ष्य प्रतीत होता है।

चतुर्थ प्रकाश की छ द सख्या ८७ है। काव्य लक्षण काव्य प्रयोजन काव्य कारण उत्तम मध्यम अधम काव्य लक्षण शब्द शक्ति आदि का विवेचन इस प्रकाश म किया गया है। काव्य लक्षण की चर्चा म 'सप्त मतानुसारेण' इस प्रकार का उल्लेख कवि न किया है किन्तु प्रत्यक्ष म छ मतो की ही चर्चा की है। इन मतो को उद्धृत करते हुए प्रथम दो के साथ आचार्य नामो का निर्देश किया गया है—यथा मम्मट मतानुसार गोढोक्ती मत। शेष मतो के साथ ततीय चतुर्थ इस प्रकार का निर्देश किया गया है। कवि काव्यशास्त्र के ममज्ञ थ। अत व इन मतो को प्रति पादित करन वाल आचार्यों के नाम नही जानत थे यह स्वीकार नही किया जा सकता। अत यह प्रश्न उपस्थित होता है कि कवि ने शेष मतो क साथ आचार्यो क नाम क्यो नही लिखे ? उसके लिए एक ही तर्क दिया जा सकता है कि कवि सभवत किसी विशिष्ट आचाय के मत को ही प्रदर्शित न कर प्रतिनिधिक मतो को प्रस्तुत करना चाहते थ।

पचम प्रकाश की छन्द सख्या ४० है। काव्य का दोष प्रकरण इसका विषय है। इसमे क्रम से पददोष वाक्यदोष अर्थदोष एव रसदोष का विचार प्रस्तुत किया गया है।

षष्ठ प्रकाश की छन्द सख्या ३१ है। इसम दोषोद्धार गुण रीति अनुप्रास पुनरुक्तवदाभास यमक आदि के लक्षण दिए गए है। इनम चित्र एव वक्रोक्ति न शब्दालकारो का विवेचन कवि ने कुवलयानद के मतानुसार स्वीकार किया है। फलत इनका विवेचन अर्थालकार के अतगत करन का स्पष्ट सकेत दिया गया है।[1]

सप्तम प्रकाश म १२१ छ द है। अलकारो का विवेचन इसकी विषय वस्तु है। इसमे क्रम स अर्थालकार रसालकार प्रमाणालकार ससृष्टि शकर आदि के लक्षण दिए गए हैं।

अष्टम प्रकाश म ९० छन्द है। छन्द एव वृत्त विचार इसका विषय है। विषय विवेचन म मात्रा सख्या मात्रा प्रस्तार वर्ण प्रस्तार नष्ट वर्णन, वर्ण नष्ट उद्दिष्ट वर्णन मेरु वर्णन मात्रा पताका वर्ण पताका मात्रा मर्कटी वर्ण मर्कटी, गण वर्णन दग्धाक्षर आदि का विवेचन प्रस्तुत करत हुए विभिन्न छ दो के लक्षण दिए गए हैं। कही कहा एक ही छ द म दो दो छ दो के लक्षण दिए गए हैं।

नवम प्रकाश मे १३५ छन्द है। काव्य वर्ण्य नियम इसका विषय है। कवि

---

१ लक्षण कौमुदी हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग षष्ठ प्रकाश छद ३१।

ने अपने पूववर्ती 'काव्य नियम' ग्रथ म इसी विषय का लक्षण उदाहरणो के साथ विवेचन किया है। इस प्रकाश म केवल लक्षणा का विचार किया गया है जो 'काव्य नियम' पर आधारित है।

दशम प्रकाश की छद सख्या २३ है। सख्या वणन इसका विषय है। सख्या के वाचक शब्दो का यह सग्रह है। जिन सख्याओ के वाचक शब्द यहा दिए गए हैं वे सख्याएँ हैं–१ से २०, २२, २४, २५ २७ २, ३३, ३६, १००, १००० आदि।

इस प्रकार लक्षण कौमुदी के दस प्रकाशो म कुल ६८२ छद हैं। ग्रथ रचना मुख्यत दोहा छद मे की गइ है। कहा कही छप्पय, चद्रायण जसे अय छदो का प्रयोग भी किया गया है।

काव्य सिधु–यह ग्रथ दो भागो मे लिखा हुआ है। ग्रथ के दोनो भाग हस्तलिखित रूप म हिदी साहित्य सम्मलन प्रयाग के हिदी सग्रहालय म प्राप्त हैं। इन दोनो भागो का विवरण इस प्रकार है—

प्रथम भाग—इस ग्रथ की पृष्ठ सख्या १९० है। यह ग्रथ वेष्टन सख्या १५८५ ग्रथ सख्या ३०५४ पर प्राप्त है। इस ग्रथ म प्रथम ८ तरगो का लेखन किया गया है।

दूसरा भाग–इसके पृष्ठ की सख्या १५७ है। ग्रथ वेष्टन सख्या १५८५ ग्रथ सख्या ३०५५ पर प्राप्त है। इसम ४ तरगो का लेखन किया गया है।

इस ग्रथ में लिपिकार एव लिपिकाल का कहीं निर्देश नही किया गया है। यह ग्रथ कवि ने महाराज रघुबीर सिहजी की आज्ञा से लिखा है। अनक सस्कृत ग्रथों का अध्ययन कर इस ग्रथ का निमाण कवि ने किया है। सवत १९४७ वि० इस ग्रथ रचना काल का भी स्पष्ट निर्देश ग्रथ म प्राप्त है।[1] ग्रथ अपने पूण रूप मे सुरक्षित है।

राव मुकुदसिह जी बूँदी के सग्रह म भी इस ग्रथ की एक अपूण प्रति है। इस प्रति म काय सिधु की ५ वी तरग ही विवेचित है।

काव्य के विभिन्न अगो एव उपागो का विवचन इस ग्रथ का विवेच्य विषय है। इस ग्रथ की बारह तरगो म जो विषय का प्रतिपादन है उसे यहाँ क्रम से प्रस्तुत किया जा रहा है—

प्रथम तरग म कुल १५८ छद हैं। इस तरग म कवि ने नायिका लक्षण एव उनके भेदापभेदो का लक्षण एव उदाहरण देते हुए विस्तार म विवेचन किया है। नायिकाओ के विवेचन म कवि ने वही क्रम रखा है जो उनके पूववर्ती ग्रथो म रहा है। द्वितीय तरग में ३४ छद हैं। इस तरग में नायक, दशन सखी दूती, सखा

---

१ काव्यसिधु हस्तलिखित हिदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छद ३,४।

दूत आदि का लक्षण उदाहरणों सहित विवेचन किया है। तृतीय तरंग की छन्द संख्या १२२ है। भाव अनुभाव, रस विभाव, सचारी भाव, हाव दशा आदि का लक्षण उदाहरणों सहित विवचन किया है। रस विवेचन मे नौ रसों के नाम गिना कर शृंगार एव उसके उभय पक्ष सयोग तथा विप्रलम्भ पर ही विस्तृत विचार किया है। कवि की शृंगार रसासक्ति एव शृंगार का रस राजत्व ही इससे परिल क्षित होता है।

चतुर्थ तरंग की छन्द संख्या २७९ है। अलकारों का विवेचन इस तरंग का लक्ष्य है। प्रथम चार छन्दों मे अलकार वर्णन लक्षण अलकाराग विवेचन करने के बाद ५ से १५ तक अङ्क छोडकर छन्द १६ से अक क्रम से दिए गए हैं। अलकारों के विवेचन में लक्षण एव उदाहरण देकर शब्दालकार अर्थालकार रसालकार प्रमाणालकार ससृष्टि शकरालकार इस प्रकार का क्रम रखा गया है। पचम तरंग मे १९४ छन्द हैं। काव्य लक्षण काव्य प्रयोजन काव्य कारण शब्द शक्ति आदि का विवेचन किया गया है। विवेचन लक्षण एव उदाहरण इस प्रकार से है। इस विवे चन का सूत्र भी राव गुलाबसिंह जी के लक्षण कौमुदी ग्रन्थ के अनुसार ही है जो काव्य सिन्धु के रचना काल मे ही निर्मित है।

षष्ठ तरंग मे ५३ छन्द है। शब्दार्थ निर्णय कवि सम्प्रदाय गुण एव रीति का लक्षण उदाहरणों के साथ विवेचन प्रस्तुत किया गया है। सप्तम तरंग की छन्द संख्या १८९ है। काव्य दोष एव दोषोद्धार इसका विवेच्य विषय है। पद वाक्य अर्थ, रस अलकारादि दोषों का क्रम से विचार प्रस्तुत किया गया है और तत्पश्चात दोषोद्धार का विवेचन किया गया है। अष्टम तरंग की छन्द संख्या ५५ है। इस तरंग मे काव्य रचना विधि कथा आशीष वचन सर्वांग वर्णन दिनकृत्य वर्णन, लोकचेष्टा वाद शिक्षा नखादि के उपमान सादृश्य वाचक नाम आरोग्य गुण, संख्या सूचक शब्दावलि का विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

नवम तरंग से ग्रन्थ का उत्तरार्द्ध आरम्भ होता है। इस तरंग मे ४४ छन्द हैं। श्वेत कृष्ण हरित पीत आदि रंगो का लक्षण उदाहरणों के साथ विवरण इस तरंग मे दिया गया है। दशम तरंग की छन्द संख्या १३७ है। काव्य वर्ण्य विषय इसकी विषय वस्तु है। इस विषय का विस्तृत विवेचन राव गुलाबसिंह जी ने अपने काव्य नियम ग्रन्थ मे विस्तार से किया है। इस तरंग की छन्द संख्या १३७ की तुलना मे काव्य नियम मे ३४२ छन्द हैं। काव्य नियम मे उदाहरणों की संख्या अधिक है। विवेच्य वस्तु मे नगरादि वर्णन एव उदाहरण कम दिए गए हैं।

एकादश तरंग की छन्द संख्या ७ है। नखशिख वर्णन इस तरंग का विषय है। शिख से नख तक नारी के ३२ अगों का लक्षण उदाहरण सहित विवेचन यहाँ

किया गया है। काव्य नियम ग्रथ म निम्न नव के विवेचन म ५४ छद रचित है जबकि इस तरग में ७३ छद हैं। द्वादश तरग म कुछ छन्द ३९८ है। वस्तादि पदाथ सग्रह एव छद विचार इस छन्द की विपय वस्तु है। वस्तादि पदाथ वणन १०२ तक देकर छन्द विचार म स्वतत्र छन्द क्रमाक दिए है जो २६६ हैं। दोनो विषयो को दो खण्डो मे विभाजित कर विवेचन किया गया है। वस्तादि पदाथ सग्रह मे गम्भीर, मध्य, पिंडिताकृति गम प्रकाश, सूक्ष्म श्वेत सूक्ष्म श्याम आदि के पश्चात सूक्ष्म मागल्य मगामागल्य अमागल्य स्थिर रस द्रव पवित्र अपवित्र सुखद दुखद आदि पदार्थों का विवेचन किया गया है। छन्द प्रकरण म छ द लक्षण, गुरु लघु गण देवता, द्विगण दग्धाक्षर, प्रत्यय विचार, मात्रा वण सख्या विधि आदि का विवरण देकर मात्रा वत्त क्रमवत्ता का विस्तत विवेचन किया है।

इस प्रकार काव्य सिन्धु के पूर्वार्द्ध एव उत्तरार्द्ध इन दोना खण्डो के १७०४ छ दो मे राव गुलाबसिंह जी के काव्य के विभिन्न अ गो का लक्षण उदाहरण सहित समग्र विवेचन किया है। प्रथम दो तरगो के अन्त म कागज चिपकाकर पुष्पिका का छन्द लिखा गया है। शेप तरगो मे पुष्पिका नही दी गई है। ग्र थ रचना म लक्षण एव उदाहरणो के लिए कवि ने दोहा छन्द का ही प्रधान रूप से प्रयोग किया है।

वनिता भूषण—यह ग्र थ केवल प्रकाशित रूप म ही उपलब्ध होता है। जगत प्रकाश यत्रालय फतेहगढ से प० जगन्नाथ त्रिपाठी न यह प्रकाशित किया है। ग्रथ म प्रकाशन सवत निर्देश नही है। ग्रथ के पष्ठ की सख्या ११२ है। छन्द सख्या ४४५ है। यह ग्रन्थ पूण रूप से प्राप्त है। ग्रन्थ सटीक है। कवि की शिष्या एव दासी पुत्री चन्द्रकला बाई न यह टीका लिखी है। टीका लखन मे मोतीलाल एव ग्र थ लेखन मे मोती शकर की सहायता प्राप्त थी।[1] ग्रन्थ सवत १९४९ वि० में रचित है।

इस ग्रन्थ का उद्देश्य नायिका भेद एव अलकारो का विवेचन प्रस्तुत करना है। वनिता एव भूषण अर्थात नायिका एव अलकार का साथ ग्रहण करत हुए उनका एकत्र वणन इस ग्र थ म किया गया है। इससे यह ज्ञात होता ह कि 'वनिता भूषण यह नामकरण कवि की सूनता का द्योतक है।[2]

नायिका और अलकारो का एक साथ प्रयाग सस्कृत काव्यशास्त्र की परम्परा में किसी भी आचाय ने नही किया। भाषा काव्य शास्त्र म कान्ता भूषण' के रचयिता कवि रतनेस इस नए प्रयोग के प्रणेता माने गए हैं। कवि रतनेस न इस

१ वनिता भूषण—राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छन्द ४४६।
२ वही, छ द ६।

विषय म प्रथम प्रयास करने की ओर स्पष्ट सकेत डॉ० ओमप्रकाश ने अपने ग्र थ म किया है। डा० ओमप्रकाश के अनुसार "यह तो अपन ढग का प्रथम प्रयोग अलकार साहित्य मे है जिससे रीतिकाल का भाषा काव्यशास्त्र अलकृत हुआ।[1]

इसी परम्परा म 'रस भूषण' शीर्षक के दो विभिन्न ग्रन्थ लिखे गए हैं। एक ग्रन्थ के रचयिता है याकूब खाँ[2] और दूसर ग्रन्थ के रचयिता राय शिवप्रसाद है।[3]

राव गुलाबसिंह तीसरे कवि हैं जो 'काता भूषण' की रचना पद्धति से प्रभावित हैं।[4]

नायिका भेद का विवेचन करते हुए कवि ने अपने पूववर्ती ग्रन्थो मे वर्णित क्रम एव भेदो को इस ग्रन्थ मे कायम रखा है। नायिका भेद के पश्चात कवि ने नायक सखा सखी दूती दूत आदि का विवरण देते हुए उनके साथ भी अलकारो का वणन किया है। उदाहरण देते समय नीतिचन्द्र भूषण चन्द्रिका, चितातत्र आदि अन्य ग्रन्थो से उदाहरण उद्धत किए हैं। नायिका भेद के अग रूप होने के कारण अलकारो के विवेचन म क्रम बद्धता नही रह पाई है। छन्द सख्या ३९८ के पश्चात रसवत प्रमाण एव ससष्टि शकर अलकारो के भेद, लक्षण एव उदाहरण वर्णित हैं।

अत यह भलीभाति स्पष्ट हो जाता है कि कवि ने नायिका एव अलकारो का एकत्र वणन करने का सफल प्रयास किया है।

बहद वनिता भूषण–यह ग्रन्थ हस्तलिखित रूप मे हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मे सुरक्षित है। ग्रन्थ वेष्टन क्रमाक ७५६ एव ग्रन्थ सख्या ८६७ पर प्राप्त होता है। ग्रन्थ के पाठ की सख्या ८० है। छन्द सख्या वास्तव म ४४७ है जब कि ग्रन्थ मे प्रमाद वश ३४७ लिखी गई है। पत्र सख्या ३९ पर छन्द सख्या ४२७ के स्थान पर ३२७ लिखी गई है जिसस स्वभावत सौ अको का अन्तर हो गया है। ग्रन्थ अपूण है। अन्त में पुष्पिका नहीं है। बूँदी नरेश महाराज रघुवीर सिंह जी की आज्ञा से सवत १९४९ वि० मे इस ग्रन्थ की रचना राव गुलाब सिंह जी ने की है।[5]

यह ग्रन्थ 'वनिता भूषण' ग्रन्थ के परिवर्धित रूप म रचित प्रतीत होता है। 'वनिता भूषण नाम की चर्चा 'वनिता भूषण ग्रन्थ के समान करते हुए लक्ष्य यहाँ अपनी बुद्धि के अनुसार क्रम मे लिखे हैं। तथा यथा योग्यता का विचार कर कही क्रम में परिवतन किया गया है ऐसा स्पष्ट सकेत कवि न ग्रन्थ के प्रारम्भ में

---

१ रीतिकालीन अलकार साहित्य का शास्त्रीय विवेचन, डा० ओमप्रकाश प्रथम सस्करण पृ० १२३।

२ वही, प० १२७। ३ वही, प० १२९।

४ वही, प० ५३७।

५ बहद वनिता भूषण हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छन्द ४, ५।

दिया है । [1]

जहाँ तक ग्रन्थ लेखन हुआ है कवि ने नायिका, नायक, सखी दूती, सखा दूत काल लक्षण उदाहरणो का अल्कारो के साथ विवेचन किया है। रसवत, प्रमाण एव ससष्टि शकर अल्कारा का विवेचन इस ग्रन्थ में नहीं किया गया है। वनिता भूषण ग्रन्थ के विस्तार रूप म कवि ने सभवत इस ग्रन्थ का लेखन आरम्भ किया था जो किन्हा कारणो से अपूण रह गया हो। राव गुलाबसिंह विरचित ग्रन्थो की सूची मे "वहद वनिता भूषण' ग्रन्थ का स्वतन्त्र निर्देश प्राप्त है अत यह अनुमान निकलता है कि ग्रन्थ लेखन पूण हुआ होगा किन्तु प्राप्त प्रति ही अपूण है।

गगाष्टक–यह ग्रन्थ हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के हिन्दी सग्रहालय म प्राप्त है। इस ग्रन्थ की पृष्ठ सख्या ४ है। ग्रन्थ का रचना काल सवत १९२३ वि० है। यह ग्रन्थ अलवर मे रचित है। इसकी वेष्टन सख्या ८६० एव ग्रन्थ १२४३ है। ग्रन्थ सुन्दर अक्षरो मे लिखित है। लिपिकाल एव लिपिकार का निर्देश ग्रन्थ म नही है। ग्रन्थ के अन्तिम दो छन्दों मे रचनाकाल तथा रचनास्थान का उल्लेख इस प्रकार किया गया है—

> दसमी फागुन सुक्ल की गुन दग निधि ससि साल ।
> अलवर वासर रोक मे अष्टक रच्यो रसाल ॥[2]

गगा की प्रशस्ति इस ग्रन्थ का विषय है। इसमे कुल मिलाकर दस छन्द हैं। जिनमे से गगा प्रशस्ति के आठ छन्द कवित्त छन्द म एव अन्तिम दो दोहा में हैं।

भारतीय जीवन म गगा का स्थान अनन्य साधारण है। भगीरथ अपने पूवजो के उद्धार के हेतु इस स्वग से ले आए। तत्पश्चात मानव मात्र के उद्धार के हेतु परम पवित्र जलधारा के रूप म वह अनत काल स प्रवाहित है।

गगा की स्तुति में अष्टक महिमा आदि की रचना युगो से होती आई है। महाकवि वाल्मीकि, शकराचाय, कालिदास आदि ने "गगाष्टक' शीषक से ही अपनी रचनाएँ लिखी हैं। पडितराज जगन्नाथ तथा पद्माकर आदि ने गगा लहरी' शीषक से अपनी भाव लहरो को गगा के चरणो मे समर्पित किया है। गरीबदास, जय मगल प्रसाद आदि 'गगाजी की महिमा" नाम से अपनी रचनाएँ कर चुके हैं। राव गुलाबसिंह जी की प्रस्तुत रचना इसी परम्परा की है।

रुद्राष्टक–यह ग्रन्थ हस्तलिखित रूप में हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मे प्राप्त होता है। पृष्ठ सख्या ३ है। इस ग्रन्थ की वेष्टन सख्या ८६० एव ग्रन्थ सख्या १२३७ है। ग्रन्थ पूण अवस्था म सुरक्षित है। ग्रन्थ मे लिपिकार एव लिपिकाल

१ बहद् वनिता भूषण–हस्तलिखित–हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द ६, ७।
२ गगाष्टक–हस्तलिखित हिन्दीसाहित्य सम्मेलन, प्रयाग छन्द १०।

का निर्देश नहीं है । ग्रंथ सु दर अक्षरो मे लिखित है। ग्रथ सवत १९२५ वि० मे रचा गया है । अलवर मे इस ग्रंथ की रचना हुई है । ग्रंथ का रचनाकाल, रचनास्थान का निर्देश कवि ने निम्नलिखित रूप मे किया है ।

> "फागुन सर कर रस रसा शिव चौदशि कुज पाय ।
> कछुक न्यून जुग जाम म अष्टक लीन बनाय ॥"[1]

ग्रंथ म पुष्पिका प्राप्त होती है जो इस प्रकार है—

> श्री मदगुलाब कवि रावण विरचित रुद्राष्टकम ।[2]

यद्यपि ग्रंथ का नाम कवि ने रुद्राष्टक रखा है फिर भी भगवान शकरजी का 'रुद्र' रूप नहा अपितु सौम्य, सु दर मनमोहक रूप इस ग्रंथ मे वर्णित है। शिव पार्वती युगल रूप का वणन प्रस्तुत ग्रन्थ का विषय है । इसम कुल मिलाकर नौ छन्द हैं जिनमे से शिव पार्वती के रूप वर्णन के आठ छ द सवया म तथा अ तिम छ द दोहा मे है । अपने मन मन्दिर म शिव का मनमोहक रूप उनकी सु दर मूर्ति किस प्रकार शोभित है ? इस छोटे ग्रन्थ मे राव गुलाबसिंह जी ने, भगवान शिव तथा शिव गौरी का रूप वणन प्रस्तुत किया है । शिव गौरी विवाह को समस्त मार्मिकता विशदता सु दरता एव सफलता के साथ कवि ने प्रस्तुत किया है। अष्टक के अ तिम छन्द म सुवण कक्ण—सप ककण तथा केसर खौरि—विभूति विलेपित उमाशकर के हाथो का एकत्र वणन अतीव आल्हादक एव तलस्पर्शी बना है । समग्र ग्रन्थ को देखने पर ऐसा भासित होता है कि रुद्राष्टक के बदले ग्रंथ का 'शिवगौरी विवाह शिव गौरी अष्टक जसा नामकरण अधिक औचित्यपूण होता । शिव के 'रुद्र' रूप का नहो अपितु शिव के मगल रूप का ही प्रभावपूण चित्र इस ग्रन्थ मे प्रस्तुत किया गया है ।

रामाष्टक—यह ग्र थ हस्तलिखित रूप म हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग म उपलब्ध है । ग्रंथ की पृष्ठ सख्या ३ है । वेष्टन सख्या ८६० एव ग्रंथ सख्या १२३९ है । ग्रंथ अपने पूण रूप मे विद्यमान है । ग्रंथ म लिपिकाल एव लिपिकार का कोई निर्देश प्राप्त नही होता है । यह ग्रंथ अलवर मे सम्वत् १९२६ वि० म रचा गया है। ग्रंथ के अन्त म रचना काल रचना स्थान एव पुष्पिका निम्नलिखित रूप मे प्राप्त होती है—

> "रस कर निधि, ससि बरस मैं वदि नौमि बुध पाय ।
> द्वितीयराघ अलवर विष अष्टक लीन बनाय ॥"[3]

---

१ रुद्राष्टक—हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द ९
२ वही, पुष्पिका ।
३ रामाष्टक, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छद ९ ।

'इति श्रीमदगुलाब कवि रावेण विरचित रामाष्टकम् ।"

राव गुलाबसिंह जी ने इस ग्रंथ मे रामचरित के आठ प्रसगो का वणन किया है। इसमे नौ छन्द हैं। रामचरित्र के आठ छन्द सवया मे एव अतिम छन्द दोहा म है। रामचरित्र का आरम्भ बाल रूप स करते हुए राज्याभिषेक के प्रसग मे उसे समाप्त किया है। राम का यही रूप कवि के मन मंदिर म विराजित है।

रामचरित्र वस्तुत एक महाकाव्य का विषय है। इस चरित्र म जिन *आठ प्रसगो का यथा बाल रूप एव लीला वन रमण, शिव धनुभग विवाह वन* गमन, रावण से युद्ध की सिद्धता, राम रावण युद्ध एव राज्याभिषेक का वणन कवि ने किया है उनके चयन मे कवि प्रतिभा का परिचय प्राप्त होता है। रामाष्टक के अधिकाश छन्दो म धनुधारी राम का चित्रण कवि ने किया है। राम के धनुर्बाण राम के पराक्रम के प्रतीक हैं जिनके बिना राम की कल्पना नही *की जा सकती है।*

शारदाष्टक—राव गुलाबसिंह जी के 'शारदाष्टक' ग्रथ की हस्तलिखित प्रति, *हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मे प्राप्त होती है। ग्रथ की पष्ठ सख्या ४ है।* इस ग्रथ की वेष्टनसख्या ८६० एव ग्रथ सख्या १२४२ है। ग्रथ मे लिपिकार एव लिपि काल का निर्देश नही किया गया है। ग्रथ सुदर अक्षरो में लिखित है। ग्रथ का रचना काल सम्वत् १९२५ वि० है तथा यह ग्रथ अलवर म रचित है। ग्रथ के अन्त में रचना काल, रचना स्थान का निर्देश प्राप्त है। यथा—

५ २ ५ १
सर कर रस धर वरस में कृष्ण द्वादशी पाय।
फागुन जुग बासर विष अष्टक लीन बनाय ॥"
'इति शारदाष्टकम।'

इस ग्रथ की अन्य प्रति भी इसी सग्रहालय म प्राप्त है। वेष्टण क्रमाक १९४८ एव ग्रथ सख्या ४११६ पर यह प्रति उपलब्ध होती है। इस प्रति की पष्ठ सख्या ७ है। ग्रथ पूण रूप मे प्राप्त है।

शारदा की प्रशस्ति 'शारदाष्टक" का विषय है। इसम नौ छन्द हैं। शारदा स्तुति के ८ छन्द कवित्त मे एव अतिम छद दोहा मे है।

मदता का विनाश करने वाली शारदा माता की स्तुति अनेक विध रूप से करते हुए कवि न प्रार्थना की है कि माता शारदा काम क्रोध आदि से उनके मन से निकाल। उनके मन क विवेक को जाग्रत करें। उन्हे दीन जान कर उनकी मदता दूर करें।

---

१ शारदाष्टक हस्तलिखित, हिदी साहित्य सम्मलन प्रयाग, अतिम छद(क्रमाक नही)

बालाष्टक–यह ग्रंथ हस्तलिखित रूप में हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग में प्राप्त होता है। इसकी पृष्ठ संख्या ४ है। इस ग्रंथ की वेष्टन संख्या ८६० एवं ग्रंथ संख्या १२८१ है। ग्रंथ पूर्ण रूप में उपलब्ध है। ग्रंथ में लिपिकार एवं लिपिकाल का निर्देश नहीं है। ग्रंथ सुंदर अक्षरों में लिखा गया है। ग्रंथ का रचनाकाल संवत १९२३ वि० है एवं यह ग्रंथ अल्वर में रचा गया है। ग्रंथ के अन्त में रचना काल एवं रचना स्थान इस प्रकार दिया गया है––

'कातिक कृष्णा पंचमी गुन दृग निधि, ससि साल।
कवि गुलाब अष्टक रच्यौ अलवरमध्य रसाल॥"

बालाष्टक में कवि ने बाला अर्थात पार्वती की स्तुति गाई है। इस रचना में ९ छंद हैं जिनमें से प्रशस्ति के आठ छंद कवित्त में हैं एवं अंतिम दोहा में है।

कवि ने इस ग्रंथ में बाला अर्थात पार्वती की स्तुति गाई है। संस्कृत में श्रीमद शंकराचार्य ने भी 'बालाष्टक' नाम से रचना की है। पार्वती भगवान शंकर की अर्द्धाङ्गी त्रिपुर सुन्दरी शिव की शक्ति स्वरूपा है। कवि ने अपने भक्ति भाव को सुंदर ढंग से अभिव्यक्त किया है।

आदित्य हृदय–राव गुलाबसिंह जी के इस ग्रंथ की दो हस्तलिखित प्रतियां प्राप्त होती हैं। एक प्रति हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग संग्रहालय में सुरक्षित है तथा दूसरी प्रति श्री राव मुकुंदसिंह जी के संग्रह में प्राप्त है। दोनों प्रतियों का विवरण नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है।

साहित्य सम्मेलन की प्रति–इस प्रति की पृष्ठ संख्या ८ है। इस ग्रंथ की वेष्टन संख्या ७६५ तथा ग्रंथ संख्या ९०३ है। छंद संख्या २६ है। ग्रंथ में रचना काल लिपिकाल तथा लिपिकार का निर्देश नहीं है। ग्रंथ पूर्ण अवस्था में सुरक्षित है।

श्री राव मुकुंदसिंह जी बूंदी के निजी संग्रह की प्रति–इस प्रति की पृष्ठ संख्या ७ है छंद संख्या २६ है। ग्रंथ में रचना काल लिपिकाल तथा लिपिकार का निर्देश नहीं है। ग्रंथ पूर्ण रूप में विद्यमान है।

यह 'आदित्य हृदय' ग्रंथ एक अनुवादित ग्रंथ है। वाल्मीकि रामायण के युद्ध कांड में अपने मूल संस्कृत रूप में 'आदित्य हृदय स्तोत्र' प्राप्त है। राव गुलाबसिंह जी के आदित्य हृदय ग्रंथ का मूल स्रोत वही है। राम रावण युद्ध के प्रसंग में राम को चिंतित एवं थका हुआ देखकर अगस्ति ऋषि ने शत्रु विजय के हेतु श्री रामचन्द्र जी को आदित्य हृदय का उपदेश देते हुए भगवान सूर्य की

---

१ बालाष्टक–हस्तलिखित–हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, अंतिम छंद संख्या नहीं

उपासना करने का उपदेश दिया था । उसी उपदेश का अनुसरण करते हुए श्रीराम ने सूर्य की आराधना की जिसके फलस्वरूप आदित्य देवता प्रसन्न हुए और उनके आशीर्वादों के कारण राम युद्ध में विजयी हुए इस कथावस्तु को राव गुलाबसिंह जी ने इस ग्रंथ में हिंदी भाषा में प्रस्तुत किया है ।

आदित्य हृदय स्तोत्र अपने मूल संस्कृत ग्रंथ का सुंदर भावानुवाद है । यह स्तोत्र व्यक्तिगत भक्ति भाव की अभिव्यक्ति की तुलना में जन कल्याण के हेतु विरचित है । यह एक शत्रु विनाशक स्तोत्र है जीवन की समरभूमि में प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में सतत संघर्ष है । इसी युद्ध में विजय प्राप्ति के हेतु आदित्य देवता का ध्यान धरने का आग्रह अंतिम छंद में कवि ने किया है ।

इस ग्रंथ की रचना में दोहा चौपाई कान्य छंद आदि विविध छंदों का सफल प्रयोग कवि ने किया है ।

दुर्गा स्तुति–यह ग्रंथ पूर्ण रूप से उपलब्ध नहीं होता है । राव गुलाबसिंह जी के विद्यमान वंशज उनके पौत्र राव मुकुंदसिंह जी से यह ग्रंथ खण्डित रूप में शोधकर्ता को प्राप्त हुआ है जिसमें केवल ४ छंद उपलब्ध हैं । इसी ग्रंथ को जगदंबा स्तुति भी कहा जाता है । कवि के वंशजों ने ये छंद श्रद्धा के साथ मुखोद्गत किए हुए हैं । इस ग्रंथ के छंदों का सूक्ष्म अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि यह ग्रंथ अष्टक ग्रंथों के समान लघुकाय ग्रंथ रहा होगा ।

जगदम्बा की स्तुति करते हुए कवि ने उसे जगतजननि जगदाधार जग ज्योति दुख हरण करने वाली एवं सुख की कारक आदि नामों से सम्बोधित किया है । मधु कैटभ राक्षसों के उत्पातों को देखकर ब्रह्मदेव की आर्त पुकार पर जगन्माता ने योग त्याग उठी चैतन्य रूप विष्णु को बल प्राप्त कर असुर निर्दलन किया भक्त जनों का उद्धार किया । जब जब भक्तों पर संकट आए हैं तब तब बिना विलम्ब दुख दूर करने का काम माता ने किया है । महिषासुर जब पृथ्वी पर संकट बना लोकपति अपने स्थानों को छोड़कर उमा की शरण में गए । उमा ने उन्हें मुस्करा कर अभय दिया और कहा कि अब उनके लिए विकट शरीर धारण कर वह असुरों का संहार करेगी । माता के विकराल रूप में अवतरित होते ही महिषासुर अपनी विकराल सेना सहित युद्ध के हेतु उतर आया । जगदम्बा माता ने सेना सहित उसको मार डाला । जब शुम्भ निशुम्भ प्रबल बने देवता भयभीत हुए तब भी उनकी सेना से युद्ध कर भृकुटी के विलास मात्र से वे सारे राक्षस जल कर भस्म हुए । ब्रह्मादि देवताओं ने तब चंडिका रानी सम्बोधन करते हुए उसकी स्तुति की । ब्रह्मा विष्णु महेश के रूप में जगदम्बा ही अवतरित है । दानवों का शीघ्र नाश कर विश्व को सुखी करने वाली वही कही गई है ।

उदाहरण स्वरूप एक छंद यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है—

ब्रह्मादि दव तब जान कहा बहुवानी ।
जय जय सुर पालक जयति चडिका रानी ।
तुम ही चतुरानन हाय विश्व रचि दीना ।
तुम ही प्रति पाल्न मात विष्णु ह्य कीना ।
तुम ही पचानन होय सकल सहारा ।
तुम ही बहुरूपा जग रूप चराचर धारा ।
तु ही हो आदि अरु म-य अत रखवारी ।
तुम ही हनि दानव वगि विपत्ति यह टारी ।
कह कवि गुलाब सुख राशि तुम हि करुना कलिकाल कदबा ।
सुख करनी हरनी दुख सुमरि जगदबा ।[1]

कवि की भावुकता का अभि-यजन अतीव सु दर रूप में इस स्तुति म हुआ है।

कृष्ण चरित--इस ग्रथ की हस्तलिखित प्रति हि दी साहित्य सम्मलन प्रयाग के सग्रहालय म उपलब्ध है । यह बहुत आकार ग्रथ एक ही वेष्टन मे है । उसक भीतर वह तीन अलग क्रमाका तथा आकारो मे प्राप्त हाता है, जिनका विवरण इस प्रकार ह---

१ वेष्टन क्रमाक १६२२ एव दाखिल क्रमाक ३१८२ मे गालोक खड-७० पष्ठ व दावन खड १०९ पष्ठ एव मथुरा खड-१७ पष्ठ हैं । मथुरा खड अपूण है । इस प्रकार गालोक खड व दावन खड एव मथुरा खड की कुल पष्ठ सख्या १९६ हो जाती है । गोलोक एव व दावन खड की कथावस्तु पूण है । मथुरा खड अपूण होन से कथावस्तु भी अपूण ही है । पष्ठ खुल हुए । य खड सुपाठय अक्षरो म लिखित है ।

२ वेष्टन क्रमाक १६२२ एव दाखिल क्रमाक ३१८ म कवि न मथुरा की सम्पूण कथावस्तु १७६ पष्ठो म प्रस्तुत का है । कागज दशी पुराना पतला है । प्रथम अश म मथुरा खण्ड की अपूण कथावस्तु को फिर स लिखकर कथावस्तु पूण का पूण किया है । यह अश जिल्द म बधा हुआ है । ग्र थ सुपाठय अक्षरा म लिखा गया है ।

३ वष्टन क्रमाक १६२२ एव दाखिल क्रमाक ३१८४ म कवि न ग्र थ के द्वारिका खण्ड ४०२ पष्ठ तथा विज्ञान खण्ड अपूण १४ पष्ठ कुल ४१६ पष्ठो म सम्बद्ध कथावस्तु का विवचन किया है । कागज पीला, पुराना दशी है । द्वारिक खण्ड जिल्द म बँधा हुआ तथा विज्ञान खण्ड के पष्ठ खुले हैं । ग्र थ सुपाठय अक्षरा म लिखित है ।

---

१ जगदबा स्तुति हस्तलिखित राव मुकु दसिह से प्राप्त लखक सग्रह छद ४ ।

समूचे ग्रन्थ मे लिपिकार का सकेत प्राप्त नही होता है। ग्रन्थावलोकन से ऐसा अनुमान होता है कि कवि ने ग्रन्थ लेखन आरम्भ करने के बाद प्रारम्भिक अश के कागज समाप्त हो चुके हो। अत मथुरा खण्ड उसमे अधूरा ही रह गया है। तत्पश्चात् जो भी आकार के कागज मिले उनका प्रयोग ग्रन्थ लेखन मे हुआ है। अपनी रचना का समुचित रूप म लिखन के विचार से ही सम्भवत द्वितीय अश म मथुरा खण्ड आरम्भ स लिखकर पूरा किया गया है। विज्ञान खण्ड अपूर्ण होने के कारण यह ग्रन्थ अपूर्ण ही कहा जाएगा, किन्तु कृष्ण चरित की वास्तव कथावस्तु प्रथम चार खण्डो मे पूर्ण रूप से प्रस्तुत हुई है। विज्ञान खण्ड मे ज्ञान विज्ञान, जिज्ञासा आदि का विवेचन प्रस्तुत है जो सीधे श्री कृष्ण चरित्र विषयक सामग्री नही कहलाई जा सकती है।

इस ग्रन्थ की कुल पृष्ठ सख्या ६७८ है। कृष्ण चरित के प्रत्यक खण्ड की छद सख्या इस प्रकार है–१ गोलोक खण्ड–५९३, २ वृन्दावन खण्ड–९२१ ३ मथुरा खण्ड–७१७, ४ द्वारिका खण्ड १६१३, तथा ५ विज्ञान खण्ड ५० अनुमानत कुल छन्द सख्या ३८९४ हो जाती है।

ग्रन्थारम्भ मे कवि ने राधा कृष्ण की स्तुति गाइ है। बून्दी के तत्कालीन राजा रघुवीरसिंह जी की प्रशसा कुछ छन्दो मे करते हुए कृष्ण चरित काव्य की अपनी नियोजना को कवि ने निम्नलिखित छन्द मे अभिव्यक्त किया है–

पाच खण्ड गोलोक अरु वृन्दावन सुखकार
मथुरा खण्ड रु द्वारिका है विज्ञान उदार।[1]

कृष्ण चरित के प्रत्येक खण्ड की रचना करते हुए प्रारम्भ में उस की खण्ड कथावस्तु सक्षेप मे और सूत्रबद्ध रूप म प्रस्तुत की गई है। खण्ड के शेष अश म प्रारम्भ में दी हुई सूत्रबद्ध कथावस्तु का समुचित शीर्षको क अन्तगत, विस्तार किया गया है। इस समग्र कृष्ण चरित काव्य में प्रधान रूप से दोहा, चौपाई छन्द मे कृष्ण चरित प्रस्तुत किया गया है। प्रसग वश ललितपद, हरिपद आदि छन्दो का भी प्रयोग किया गया है। प्रत्येक खण्ड की विषय वस्तु क्रम से यहाँ प्रस्तुत की जा रही है।

गोलोक खण्ड––कृष्ण चरित के गोलोक खण्ड मे राव गुलाबसिह जी ने क्रम से अवतार विवरण, कृष्ण कथा श्रवण का फल हरिभक्त महिमा राधा कृष्ण का जन्म कारण कस जन्म हेतु उसका विजय राधा जन्म, वसुदेव देवकी विवाह बलराम का जन्मोत्सव कृष्ण जन्म कृष्ण का नन्द के घर गमन वसुदेव का नन्द के घर से कन्या को लाना नन्द के घर पुत्र जन्मोत्सव पूतना श्रीधर द्विज बकासुर, शकटासुर तृणावर्त आदि का विनाश एव उद्धार, माता यशोदा को विश्व रूप दर्शन

---

१. कृष्ण चरित–गोलोक खड, हस्त लिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

कराना गर्गाचार्य द्वारा नामकरण कृष्ण के शिशु लीलाओं का प्रभव ब्रह्मदेव द्वारा राधा कृष्ण का विवाह दधि माखन चोरी यमलार्जुन उद्धार दुर्वासा को साँस में खींच लेना दुर्वासा द्वारा स्तुति एवं लौट जाना आदि प्रसगों का विवेचन प्रस्तुत किया है।

वृन्दावन खण्ड– कृष्ण चरित की गोलोक खण्ड में प्रारम्भ हुई इस खण्ड में अधिक विकसित हुई है। गोकुल में विविध असुरों के बढ़ते हुए उत्पातों को देखकर गोप वृन्दावन में निवास करने के हेतु चले गए यहाँ से वृन्दावन खण्ड की कथावस्तु प्रारम्भ करते हुए राव गुलाबसिंह जी ने क्रम से बलराम एवं कृष्ण का गोचारण वत्सासुर बकासुर आदि का संहार एवं मुक्ति धेनुकासुर वध तथा गाएं एवं गोप गणों का पुनर्जीवन कालीय नाग का दमन प्रलम्ब का नाश दावानल का पान कृष्ण राधा की प्रणय लीला गोपियों का व्रत इन्द्र का कोप एवं प्रलय व्रज का उससे उद्धार इन्द्र द्वारा शरणागति नन्द एवं गोपियों की बैकुण्ठ यात्रा गोपियों से दधि दान की स्वीकृति रासलीला अजगर का नाश शंखचूड का नाश कृष्ण द्वारा माघ रास, सावन एवं फागुन की लीलाएँ नारद के द्वारा कृष्ण का नाम कहकर कंस के राग को बढ़ावा देना केशी की कथा व्योमासुर वध कंस का स्वप्न कृष्ण को बुलाकर ले आने के हेतु अक्रूर को अनुज्ञा कंस के यज्ञ का वर्णन राधा का स्वप्न एवं श्रीकृष्ण द्वारा उसकी सान्त्वना अक्रूर का वृन्दावन में आगमन नन्द से भेंट धनुष यज्ञ की बात कहकर मथुरा चलने का निमन्त्रण नन्द आदि को आगे भेजकर अक्रूर का कालिन्दी तट पर आगमन स्नान करते समय कालिन्दी में श्रीकृष्ण को देख उन्हें परमेश्वर जानकर अक्रूर का सुखी बनना मथुरा के निकट नन्दादि गोपगणों का डेरा लगाना कृष्ण की आज्ञा पाकर अक्रूर का मथुरा में गमन आदि का वर्णन किया है। गोकुल की बाललीला व वृन्दावन की किशोर अवस्था की लीलाओं के पश्चात महाराज कंस के सान्निध्य में शत्रु एवं दुष्टों के निकट श्रीकृष्ण यहाँ आकर पहुंच जाते हैं। जीवन के एक नये क्षेत्र में श्रीकृष्ण का यहाँ पदार्पण होता है।

मथुराखण्ड––मथुरा खण्ड में राव गुलाबसिंह जी ने श्रीकृष्ण के उस चरित अंश को प्रस्तुत किया है जो श्रीकृष्ण के मथुरा आने पर घटित होता है। खण्ड के प्रारम्भ में श्रीकृष्ण का समुचित रूप में स्तुति करते हुए कवि ने लिखा है कि कंस वध के लिए मथुरा में प्रवेश करने वाले श्रीकृष्ण उनका परमार्थ अर्थात भक्ति मुक्ति के सहायक बनें। तदुपरान्त श्रीकृष्ण चरित का माहात्म्य कथन करते हुए उन्होंने श्रीकृष्ण चरित को सभी पातकों का नाश करने वाला आयु बढ़ाने वाला धर्मार्थ काम मोक्ष इन चारों पुरुषार्थों का देने वाला स्वर्ग मर्त्य एवं पाताल इन तीनों लोकों को अपने वश में रखने वाला तथा सुखदायक कहा है।[1]

---

१ कृष्ण चरित–मथुरा खंड हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छंद १ २।

इसके पश्चात मथुरा खण्ड की कथावस्तु प्रस्तुत करत हुए कृष्ण व मथुरा प्रवश स आरम्भ करते हुए उनक द्वारिका पहुँचन तक घटित श्रीकृष्ण चरित का उदघाटन किया है। श्रीकृष्ण क मथुरा नगरी म प्रवश करन पर मथुरा की सुदरता देखकर कृष्ण मोहित होते हैं तो श्रीकृष्ण की रूप माधुरी पर आसक्त होकर मथुरा के अनगिनत पौरजन श्रीकृष्ण के साथ नगर भ्रमण में सम्मिलित हो जाते हैं। श्रीकृष्ण मथुरा क धनिक नगरजनो स पूजा एव सम्मान ग्रहण करत हैं। कटु वचन सुनाने वाले रजक स कपडे छीन लत हैं। उस मार कर उस गति प्रदान कर दते हैं। दरजी म वस्त्र ग्रहण कर सुदामा मालाकार स पूजा ग्रहण कर उन्हे दुलभ वरदान दते हैं। रास्ते में मिली कुबरी का उद्धार करत हुए श्रीकृष्ण धनुष यज्ञ क स्थान पहुँचते है। वहा श्रीकृष्ण धनुष तोडकर धरती पर गिराकर अपन शिविर म वापस लौट आत हैं। श्रीकृष्ण द्वारा धनुष तोडने की बात जानकर नन्दादिक सारे गोपगण अत्यन्त आनंदित होते हैं।

दूसरे दिन श्रीकृष्ण न धनुष यज्ञ मडप म प्रवेश करत ही अपनी ओर आन वाले महाराज कस के मस्त हाथी को मार कर फिर यज्ञ स्थान म पहुँचे। वहाँ मल्लो स लडकर उनकी हत्या की कस को मारकर उसका उद्धार किया। उग्रसेन को फिर स राज सिंहासन पर स्थापित किया। नन्द आदि गोपो को वृन्दावन वापस भेजकर उग्रसेन, वसुदेव आदि के आग्रह पर मथुरा के सहायक क रूप मे श्रीकृष्ण मथुरा म ही रह।

गर्गाचाय ने बलराम तथा श्रीकृष्ण का व्रतबध कराया और तत्पश्चात माग म मिले सुदामा को साथ म लेकर बलराम एव श्रीकृष्ण विद्याध्ययन के हेतु उज्जयनी में सादीपनी के आश्रम म पहुचे। श्रीकृष्ण विद्याध्ययन पूण कर गुरु का मत पुत्र उन्ह वापस लौटाकर फिर स मथुरा आए। हस्तिनापुर म अक्रूर तथा वृन्दावन में उदभव को उन्होंने भेजा। गोपियो को योग सिखाने के लिए गये हुये उद्धव गोपियो की सगुण कृष्ण भक्ति देखकर उनसे प्रभावित होकर मथुरा लौट आये। श्रीकृष्ण को गोपियो स भेंट करने के हेतु प्रभावित कर वृन्दावन भेजा। बलराम न कालासुर का वध किया। जरासध न मथुरापर आक्रमण किया उसे सत्रह बार पराजित किया। इस आक्रमणो के कारण द्वारका का निमाण कर सारे मथुरा निवासियो का द्वारका पहुचाया। कालयवन के आक्रमण पर मुचकुद राजा द्वारा कालयवन का वध कर उसकी सेना का विनाश कर श्रीकृष्ण द्वारिका म जा बसे। श्रीकृष्ण के जीवन का एक प्रमुख अंग दुष्टो का विनाश—इस खड म अधिक विकसित हुआ है।

द्वारिका खड—द्वारिका खड म राव गुलाबसिंह जी ने कृष्ण चरित क उत्तराद्ध का वणन किया है। इस खड के प्रारम्भ म वदना के छद न लिखकर कथावस्तु

सक्षिप्त विवरण ही कवि ने दिया है। इस खड मे श्रीकृष्ण के द्वारिका जाने से लेकर उनके गोलोक गमन तक कथावस्तु क्रम से वर्णित की गई है। उग्रसेन का द्वारिका म राज्याभिषेक, बलदेव का विवाह श्रीकृष्ण एव रुक्मिणी का विवाह प्रद्युम्न का जन्म शबर के द्वारा उसे पानी मे डुबाना, शबर का नाश, रति को लेकर घर वापस आना श्रीकृष्ण पर स्यमतक मणि के चुराने का आरोप, जाबवती के साथ श्रीकृष्ण का विवाह, विवाह म जाबवान से स्यमतक मणि की प्राप्ति, सत्यभामा कृष्ण विवाह श्रीकृष्ण के पच विवाह, सोलह सहस्र नारियो के साथ कृष्ण का विवाह सुरतरु पारिजातक लाकर सत्यभामा के अजिर म उसका लगाना हरिवश वणन प्रद्युम्न एव रुक्मि की पुत्री का विवाह अनिरुद्ध उनका पुत्र, रुक्मि की पौत्री का अनिरुद्ध से विवाह, चौसर के प्रसग म बलराम का क्रोध, दुष्ट राजाओ का नाश, उषा अनिरुद्ध विवाह मिथ्या वासुदेव एव द्विविद वानर का नाश साब और दुर्योधन की पुत्री का विवाह सभी रानियो के निवास पर नारद को भगवान का दशन जरासध की भीमसेन के हाथो मत्यु युधिष्ठिर द्वारा यज्ञ मे श्रीकृष्ण को अग्रपूजा का सम्मान, शिशुपाल वध, शाल्व नृप का द्वारिका पर आक्रमण कृष्ण द्वारा उसका पराजय दतवक्र विदूरथ आदि से युद्ध एव उनका नाश, महाभारत के हेतु श्रीकृष्ण को युधिष्ठिर का निमत्रण बलराम का तीर्थ यात्रा के लिए जाना, कृष्ण का हस्तिनापुर पहुँचना श्रीकृष्ण सुदामा भेंट और श्रीकृष्ण द्वारा सुदामा के दारिद्र को दूर करना, सुभद्रा अर्जुन विवाह श्रीकृष्ण का मिथिला गमन, द्वारिका में सपत्ति के बढने स मद का बढना श्रीकृष्ण के पुत्र द्वारा मुनि की हँसी मुनि का कुलनाश का शाप लुब्धक के शर के निमित्त गात्र से कृष्ण की अवतार समाप्ति व्रज मे आकर गोपियो के साथ गोलोक धाम गमन आदि का वणन किया गया है।

इस खड म श्रीकृष्ण चरित की कथावस्तु का विवेचन लगभग १६०० छदो म किया है। इसके पश्चात कृष्ण स्तुति एव स्वरूप वणन छद १६१२ तक कवि राव गुलाबसिंहजी ने किया है। छद १६१२ म एक चौपाई अधूरी ही लिखी गई है उसे छन्द क्रमाक भी नही दिया गया। यह अपूर्ण चौपाई इस प्रकार है--

'महाविष्णु के रोम मझारा। बसत सन्त ब्रह्माण्ड अमारा।
तत वासु नाम है तासा। तुम हो ताके देव प्रकासा।
तात वासुदेव यह नामा। है तुम्हरो महि मैं अभिरामा॥

साधारण रूप स चौपाई में आठ आठ पक्तियों की रचना कवि ने कृष्णचरित ग्रथ म की है किन्तु इस अतिम चौपाई में तीन ही पक्तियाँ लिखी जा सकी हैं अत ऐसा क्यो हुआ होगा इस विषय म शकाओ का उठना स्वाभाविक ही है। इस छद के बाद रिक्त पृष्ठ शेष हैं। विज्ञान खड का लेखन स्वतंत्र पृष्ठ पर आरभ किया है।

इसस हम तक को प्रश्रय मिलता है कि इस छद का आग का अश लिखना शेष रह गया है।

रिक्त पृष्ठ यह स्पष्ट करता है कि उसी पष्ठ पर कवि आग छद पूण करने का विचार रखत थे। अत ऐसा प्रतीत होता है कि अपूणता पष्ठ छूट जान के कारण नही रही है।

विज्ञान खड--राव गुलाबसिह द्वारा इस खड मे चौदह पष्ठ लिखे गय हैं शष रिक्त पष्ठ भी ग्रथ मे विद्यमान हैं। इससे यह अनुमान होता है कि मूलत यह खड इतना ही लिखा गया था। इस खड का आरभ राधा कृष्ण की स्तुति से राव गुलाबसिह जी ने किया है। अय चार खडो के समान इस खड की कथावस्तु को खड के प्रारभ म सक्षिप्त रूप म नही लिखा गया है। इस खड का विज्ञान खड यह नामकरण ही यह सिद्ध करता है कि कृष्ण चरित की कथावस्तु का अन प्रस्तुत करना यहाँ कवि का लक्ष्य नही है अपितु कृष्ण चरित्र के माध्यम स ज्ञान, विज्ञान आदि का विवचन उनका अभिलषित है। उग्रसन एव महर्षि व्यास के सवाद के रूप म यह खड विरचित है। महर्षि व्यास के आगमन पर उग्रसेन उनको समादत कर उनकी पूजा करते है। महर्षि के आगमन से अपने जन्म को सफल मानत हैं। उनकी स्तुति करते हैं। उनके प्रति अपनी कृतज्ञता की भावना को व्यक्त करने हैं। अपन मन म उठने वाली विभिन्न जिज्ञासाओ को महर्षि व्यास क समक्ष प्रस्तुत कर उन्हें प्रार्थना करते हैं कि व उनका समाधान करें। अपने पूर्व सुकृत क विषय म जिसके कारण वह राजवभव के वे अधिकारी हुए अपनी जिज्ञासा को महर्षि के समक्ष उ होन आरभ म ही प्रस्तुत किया था। राजा की जिज्ञासा का समाधान करत हुए महर्षि व्यास न सभी स्वार्थो को त्यागत हुए हरिभक्ति का उपदेश उग्रसन का दिया है। इस सवाद क क्रम म भक्ति तथा भक्तो के प्रकार के विषय म विवचन करते हुए महर्षि व्यास न कहा है कि भक्त किसी योगसिद्ध अथवा मुक्ति के अभिलाषी नही होत, उसका मन स य पर ही स्थिर रहता है। अत भक्तियोग उत्तम है। दुष्टो क सहार के बाद भगवान न दुष्टो का उद्धार क्यो किया ? उग्रसन की इस आशका का उत्तर दत हुए महर्षि ने कहा है भगवान समदृष्टि रखत हैं अत सभी उद्धार क अधिकारी हैं। इस खड का अतिम छद इस प्रकार है--

> सो मम हृदय कमल को टारी। जानि जावो त्रिभुवन हितकारी।
> बोले कृष्ण धय तू भूपा। है तुव मति अति अमल अनूपा।
> तोहि लुभाया मैं तऊ भाई। तनकहु मन कामना न आइ।
> तऊ

यहाँ की यह अपूणता द्वारिका खड की अपूणता के समान ही प्रतीत होती है।

'कृष्ण चरित ग्रंथ अपूर्ण क्यों रहा होगा ऐसा प्रश्न उठना स्वाभाविक है। कवि ने ग्रंथ का आरंभ संवत १९५० वि० में किया था। ग्रंथ के आरंभ में इसका निर्देश कवि ने इस प्रकार किया है—

उनईस से पचास को संवत भार्गव वार।
माघ पंचमी कृष्ण पष भयो ग्रंथ अवतार ॥[1]

कवि राव गुलाबसिंह जी की मृत्यु संवत १९५८ वि० में हुई है अतः यह स्पष्ट है कि कवि अपनी मृत्यु से ८ वर्ष पूर्व इस ग्रंथ का प्रणयन आरंभ कर चुके थे जब उनकी आयु ६० वर्ष से अधिक थी। ४००० छंदों के लगभग इस वृहदाकार ग्रंथ की रचना सुधार आदि संस्कार वार्धक्य की अवस्था के इन्हीं आठ वर्षों में हुआ होगा अतः यह अनुमान कि वार्धक्य के कारण ग्रंथ अपूर्ण रहा है, तर्क संगत प्रतीत होता है। उपलब्ध साहित्य में राव गुलाबसिंह जी का यह अंतिम ग्रंथ है।

कृष्ण चरित के द्वारिका तथा विज्ञान खंड की अप्राप्यता के होते हुए भी कृष्ण चरित की शृंखला उसका पूर्ण रूप से कवि के द्वारा निबाहा गया है। चरित काव्य में व्यक्ति जीवन का चरित्र का उद्घाटन एवं विकास अपेक्षित है। कृष्ण चरित काव्य में कृष्ण चरित का विकास अच्छी तरह से करने में कवि सफल रहे हैं अतः इस रूप में रचना पूर्ण ही मानी जाएगी। श्रीकृष्ण का चरित्र भारतीय संस्कृति के आधारभूत चरित्रों में से एक है। राव गुलाबसिंह जी के कृष्ण चरित की आधारभूत सामग्री उन्होंने श्रीमद् भागवत ब्रह्मवैवर्त पुराण एवं गर्ग संहिता से ग्रहण की है। इस विषय में स्पष्ट रूप से निर्देश कृष्ण चरित में प्राप्त होता है। यथा—

कृष्ण गमन ह्यां वर्नन वानो। ग्रंथ भागवत मैं जिमि चीनो ॥
अब ब्रह्म वैवर्त मझारा। गर्ग संहिता माहि निहारा ॥
वर्नन हौ गहि तिनकी रीता। करि हरिचरन मैं अति प्रीती ॥[2]

कृष्ण चरित के विभिन्न खंडों का विषय वस्तु देखने से यह स्पष्ट होता है कि काव्य ग्रंथ की रचना उन्होंने एक सुनिश्चित योजना के अनुसार की थी। एक प्रबंध काव्य के रूप में कृष्ण चरित से संबद्ध मानव जीवन का चित्र इस ग्रंथ में प्रस्तुत किया गया है। कृष्ण चरित का घटनाक्रम शृंखला बद्ध रूप से तथा स्वाभाविक रूप से विकसित हुआ है। विभिन्न भावों का रसात्मक अनुभव कराने वाले अनेक प्रसंग इस ग्रंथ में दृष्टिगोचर होते हैं। एक महाकाव्य के रूप में कृष्ण चरित काव्य में जीवन की एक प्रदीर्घ कथावस्तु छंदोबद्ध रूप में प्रस्तुत की गई है। रसात्मकता एवं प्रभावाभिव्यक्ति की दृष्टि से यह एक समर्थ काव्य रचना है। कृष्ण

---

१ कृष्णचरित–गोलोक खंड हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छंद ३।
२ वही छं० १६००।

कालीन पौराणिक जीवन इसम प्रस्तुत है। भक्ति रस कृष्ण चरित का प्रधान रस है किन्तु प्रसग वश अन्य रसो का भी यथोचित पोषण इसम हुआ है । कृष्ण के चरित की यह विशेषता रही है कि कृष्ण एक धीर ललित नायक के रूप मे एव योगेश्वर के रूप म ख्याति प्राप्त हैं। कृष्ण चरित की रचना शैली एक प्रौढ रचना शैली है। रामचरित मानस की रचना शैली के कारण रामचरित मानस आज चार सौ वर्षो से हिन्दी भाषी जन जीवन को प्रभावित करता रहा है। कृष्ण चरित की रचना लगभग इसी आदर्श पर राव गुलाबसिंह जी ने की है। अत यह रचना एक प्रबन्ध काव्य एक महाकाव्य के रूप म स्वीकार होने की क्षमता रखती है।

कृष्ण भक्ति का भक्तिकालीन हिन्दी साहित्य अधिकाश रूप म गीतात्मक रहा है। रीतिकाल म कृष्ण भक्ति के प्रबन्धात्मक काव्य भी प्राप्त हैं। गुमान मिश्र का कृष्णचन्द्रिका ब्रजवासी दास का ब्रजविलास तथा मचित का सुरभी दान लीला, कृष्णायन आदि प्रसिद्ध प्रबन्ध काव्य है।[1] राव गुलाबसिंह जी का कृष्ण चरित्र इसी परम्परा का एक महाकाव्य है।

पावस पच्चीसी–यह हस्तलिखित ग्रन्थ हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग के सग्रहालय म प्राप्त होता है। इस ग्रन्थ की वेष्टन सख्या ८६० तथा ग्रन्थसख्या १२३६ है। गुलाबकोश आदि अन्य ग्रन्थो के साथ यह ग्रन्थ एक ही जिल्द म है। पृष्ठ सख्या १३ है। छन्द सख्या २७ है। ग्रन्थ म लिपिकाल एव लिपिकार का निर्देश नही है। ग्रन्थ पूर्ण रूप मे प्राप्त है। ग्रन्थ रचना काल सवत १९२२ वि० है। यह रचना अलवर म रचित है। ग्रन्थ रचना काल तथा रचना स्थान का उल्लेख ग्रन्थ कर्ता ने मदो छन्दो म निम्नलिखित रूप म प्राप्त होता है–

'जगन्नाथ गुरु चरन को पाय प्रसाद अनीच।
विमद पचीसी रस सची रची पाँच दिन बीच ॥
श्रावण शुक्ल त्रयोदशी श्रुति दग निधि शशि साल।
पुर अलवर मे कवि कर श्रम निशि दिवस विशाल ॥'[2]

इसी ग्रन्थ की एक प्रति राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर कार्यालय म प्राप्त है। इन्द्रगढ पोथी खाने की ग्रन्थ सूची म इस ग्रन्थ का दाखिल अक १०३ (ग) है। राव गुलाबसिंह जी ने पावस पच्चीसी ग्रन्थ के २६ वे छन्द म अपने गुरु जगन्नाथ का निर्देश किया है। सभवत इसी कारण सूचीकार ने सूची म

---

१ (१) हिन्दी साहित्य का इतिहास सपादक–डा० नगेन्द्र, प्रथम सस्करण पृ०३९०
(२) रीतिकाल के प्रमुख प्रबन्धकाव्य डॉ० दर्पालसिंह रुद्र, प्रथम सस्करण, पृ० ११७।

२ पावस पच्चीसी–हस्तलिखित–हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छन्द २६–२७।

ग्र थकार का नाम 'जगन्नाथ' लिखा है। किंतु वास्तव म यह ग्र थ राव गुला सिंह के पावस पच्चीसी की प्रति है। इसकी पृष्ठ सख्या ६ है। प्रतिलिपिकार नाम का कही निर्देश नहा है। प्रतिलिपि म अशुद्धियाँ भी दखने को मिलती है राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान की प्रति म अंतिम छ द म 'रस सची" के स्थ पर रस रची इस प्रकार का पाठभेद देखन को मिलता है।

इस ग्र थ की रचना म कवित्त सवया तथा दाहा छ द का प्रयोग कवि किया है। इस ग्र थ क प्रथम पच्चीस छदा म वर्षाऋतु की पृष्ठभूमि पर शृग रस के सु दर चित्र प्रस्तुत किए गए है। कही प्रिया प्रियतम एक साथ होने प्रिया मान कर बठी है। नायिका के मान रूपी गढ को तोडने के हेतु जलधारा को कही मदन देवता के सनिक कहा गया है तो कहा दूत के रूप में प्रस्तुत कि गया है। य जलधाराए कही मान छुडाने का प्रयत्न करती हुई बताई गई है कही विरहिणी नायिका क विरह भाव का उद्दीप्त कर उसे जलाती हुई वर्णित क गइ है। प्रवास विरह के भी कतिपय प्रसग वर्णित है। कही विरह में जलती हु नायिका दादुर पपीहा आदि पर चिढ़ती है। व प्रियतम की स्मृति जगाकर इसे जलाते हैं इसी से क्रोध भाव का व्यक्त करती है। कही विरही जनों के लिए वप जलपजर सुदन वर्णित है। विरहिणी के विरह जनित दाह का शमन करन के हे कही सखियाँ समझाती दर्शाई गई है–समझान क प्रयत्न म वर्षा की जलधाराए- पहाडो पर पुरन्दर का कोप कही गई हैं तो कही धरती के ऊपर दिवाकर की प्रीति कही गई है। कही मदन एव पुरन्दर का सयोग कही गई है। इस प्रका वर्षा ऋतु में विरहिणी नायिका के विरह क विभिन्न चित्र प्रस्तुत करने पर प्रिय क परदेश स लौटने पर सयोग के प्रसग म य जलधाराए कितनी प्रिय आह्लादकारी होती है। इसके भी कतिपय चित्र प्रस्तुत किए है। उदाहरण स्वरूप निम्नलिखित छन्द यहाँ दृष्टव्य है–

> पीत पट ओढि प्यारी प्यारो नील पट ओढि
> बदपट आये उठि रस उपजान में।
> रग की अटारी माँझ कौन जाने कौन भाति
> पटपट होय गई उर लपटान में।
> सुकवि गुलाव अटपट बन बोलत है
> लटपट है रहै हित अहरान में।
> नीर अपटा में छिन छवि की छटा म आज
> बढे है अटा में रूसि घनकी घटान में।।[1]

१ पावस पच्चीसी हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द १ राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर छन्द १।

भाव के अभिव्यजन म कल्पना की उडान म शब्दचित्र प्रस्तुत करने मे कवि की क्षमता यहाँ स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। अपने गुरू की कृपा के प्रसाद को प्राप्त कर कवि ने पाच दिनो मे ही इसकी रचना की थी।

रचना काल का विचार करते हुए अल्वर मे रचित यह रचना कवि राव गुलाबसिंह जी की प्रथम रचना है। इस प्रथम रचना म ही कवि ने जिस सरसता, काव्य सौष्ठव आदि का जो परिचय करा दिया है वह कवि की योग्यता को सूचित करने मे समथ है।

प्रेम पचीसी—इस ग्रन्थ की एक हस्तलिखित प्रति हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग म उपलब्ध है। पृष्ठ सख्या ११ है। गुलाब कोश आदि ग्रन्थो के साथ यह ग्रथ एक ही जिल्द म बधा हुआ है। ग्रथ की वेष्टन सख्या ८६० तथा दाखिल सख्या १२४० है। ग्रथ के रचना काल का निर्देश ग्रथ मे नही किया गया है। यह ग्रथ कहाँ लिखा गया इसका भी निर्देश कही प्राप्त नही होता। पावस पच्चीसी की इस रचना को देखते हुए ऐसा अनुमान लगाया जा सकता है कि यह पावस पच्चीसी के समय म ही निर्मित हुई होगी। इस विषय म निश्चय पूवक कहने के लिए कोई आधार प्राप्त नही है। इस ग्रन्थ का छन्द सख्या २५ है। ग्रन्थ मे लिपिकार एव लिपिकाल का भी कोई सकेत प्राप्त नही होता है। ग्रन्थ पूण रूप से उपलब्ध है।

इस ग्रन्थ की दूसरी हस्तलिखित प्रति राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर म प्राप्त है। इन्द्रगढ पोथी खाना सग्रह से यह प्रति आई है। सूची म इस ग्रन्थ की सख्या १३० (ग) है। पष्ठ सख्या ६ है। इसमें भी लिपिकार, लिपिकाल रचना काल तथा स्थान का निर्देश नही मिलता। ग्रन्थ की छन्द सख्या २५ है।

प्रेम तत्व के सबन्ध म विवचन करने वाली यह रचना है। इसमें कवित्त एव सवैया छन्द का प्रयोग किया गया है। प्रथम छन्द वदना का छन्द है। प्रेम पयोनिधि मे एक नीति के अभाव म पग डालना दुस्वार है इस प्रकार की घोषणा कवि ने की है। प्रम मे पडकर दारुण दुख ही भोगना पडता है एसा सुझाते हुए कवि ने निर्देश किया है कि प्रेम पयोनिधि पारकर जाना लोगो को खेल लगता है। अपनी वाता को अनेक उदाहरणो से कवि ने सिद्ध करने का सफल प्रयास इस ग्रन्थ म किया है। उन्होन लिखा है कि सभी करत हैं किन्तु उसका निर्वाह करना कठिन होता है। दद देन वाले दद सहन वाले की दशा को नही जानते। अगर प्यार की पीडा पहुँचान वाला ही उस नहीं जानता तो फिर अन्य क्या जान ? दद सहने वाले पुकारत रहते हैं किन्तु उनकी सुनता कौन ? प्रेम का पीडित इस प्रेम पीडा को सहन भी किस प्रकार करें। विरही प्रेमी भी तुलना म मीन, पतग, मृग, चातक आदि अनेक परम्परागत उपमान प्रयुक्त किए गये हैं। अचानक प्रिय को देखकर प्रथम

दर्शन का प्यार जगा और प्रेम की यह कहानी सब ओर फैल जाती है। यह कलंक एक बार लगने पर उससे मुक्ति की कोई सम्भावना नहीं होती। प्रेम हो जाने पर फिर लज्जा भाव छूट ही जाता है। प्रेम की दशा में प्रेमी का मन प्रिय के हाथों में पड़कर पराया हो जाता है अपना नहीं रहता। एक बार कलंक लगने पर नायिका निःशंक होकर प्रिय के अंक लगना चाहती है। प्रेम में पड़कर प्रिय का दासत्व एक स्वाभाविक बात हो जाती है। स्नेह का मानव जीवन में महत्त्व प्रतिपादित करते हुए उसके बिना मनुष्य जीवन फीका है नरस्नेह खाली होती है स्नेह को निबाहना न जानने वाले को स्नेह के रंग में रंगना नहीं चाहिए इस प्रकार का प्रतिपादन कवि ने किया है। प्रिय के हेतु स्नेही जनों से वैर कर बैठी नायिका प्रिय के न आने पर दुखी हो जाती है। प्रिय अपनी गली में आवे इस अभिलाषा को अभिव्यक्त करती है। स्नेह को निबाहने की प्रार्थना करती हुई प्रश्न करती है स्वप्न में प्यार में झुके थे अब भूल गए क्या ? तुम्हारे मिलन मात्र की इच्छा अब शेष है। स्नेह अगर किसी से निबाहा न जाय तो भगवान पर दोष कैसे लगाया जाए ?

इस प्रकार प्रेम के सिद्धान्तों का एवं विरहिणी नायिका का विभिन्न प्रकारों से वर्णन इस ग्रन्थ में किया है। उदाहरण स्वरूप एक छन्द दृष्टव्य है—

प्रीति लगी मो उर माँहि उत चित माहि उमग मदी की।
दाग लग्यो विन आज इत उन लाग लगी विन राग पदी की।
कौन करे निरवाह गुलाब अथाह बनी यह बात बदी की।
हाय दई धग्यि विधि धीरज बदरदा न सुन दरदी की।[1]

प्रेम के विभिन्न रूपों को कवि ने इस ग्रन्थ में सफलतापूर्वक अभिव्यक्त किया है।

समस्या पच्चीसी—कवि की ग्रन्थ सूची में ग्रन्थ का संकेत समस्या पच्चीसी के रूप में प्राप्त होता है। यह ग्रन्थ अपने पूर्ण रूप में कहीं भी उपलब्ध नहीं है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग में ग्रन्थ की जो हस्तलिखित प्रति उपलब्ध है उसमें २० छन्द तक ही छन्द लिखे गए हैं। ग्रन्थ के आरम्भ में समस्या यह शब्द लिख कर रिक्त स्थान छोड़ दिया गया है जो सम्भवतः समस्यावाचक शब्द के लिए छोड़ा गया है। अतः उपलब्ध प्रति सम्भवतः ग्रन्थ की प्रारम्भिक प्रति है। यह ग्रन्थ बाद में २५ छन्दों तक पूर्ण होकर रसिकों को ज्ञात रहा होगा तभी सूची में कवि ने स्वयं भी समस्या पच्चीसी इस प्रकार का स्पष्ट निर्देश किया है। हिन्दी साहित्य सम्मेलन में प्राप्त प्रति का विवरण इस प्रकार है—ग्रन्थ की पृष्ठ संख्या ८/११ और

---

१ प्रेम पचीसी हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द ७ राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, छन्द ७

ग्रथ क्रमाक १२०९ है। इस ग्रथ की पष्ठ सख्या १२ है । ग्रथ मे कुल २० छन्द हैं। ग्रथ अपूर्ण है। रचनाकाल, लिपिकाल लिपिकार आदि का कोई उल्लेख ग्रथ मे प्राप्त नही होता है।

इस ग्रथ के छन्दो को देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि किसी समस्या या कूट का प्रस्तुत करना कवि का उद्देश्य नही है। ये छन्द वस्तुत समस्यापूर्ति के छद ही हैं। समस्यापूर्ति काव्य लोकप्रिय काव्य रहा है कवि की योग्यता, रचना शैली आशुकवित्व आदि की परीक्षा का यह एक समथ माध्यम रहा है।[1] समस्या पूर्ति के माध्यम से किसी कवि को कवि समाज म मान्यता प्राप्त होती थी। वे सम्मानित होते थे। रसिक कवि समाज कानपुर द्वारा राव गुलाबसिंह जी साहित्य भूषण की उपाधि से सम्मानित हो चुके थे। अत यह स्पष्ट होता है कि समस्या पच्चीसी ग्रथ समस्या पूर्ति के निमित्त रचित छदो का सकलन है। कवित्त एव सवैया छद का प्रयोग इस ग्रथ म किया है।

समस्या पच्चीसी के प्राप्त छन्दो के अध्ययन से यह अनुभव होता है कि राव गुलाबसिंह जी के इन छन्दो मे, मनोरजकता, चमत्कार चारुता उक्ति वैचित्र्य कल्पना की उडान श्रुति मधुरता आदि समस्या पूर्ति काव्य के गुण विशेष अपनी पूर्ण क्षमता से विद्यमान है।[2]

उदाहरण के रूप मे एक छन्द यहा प्रस्तुत है–

> वर वेष बनाय सखी सग लय रही थिति चित्रन के थल म।
> लहि भोजन थार अघाय गई मह साथिन भाव भरी भल म।
> प्रतिबिंबित भो तहँ आय गयद चुरू भरि पीवन के पल म।
> हँसि बोल उठी वषभानुसुता गज डूबि गयो करके जल म ॥[3]

नायिका अपने सखियो के सहित चित्रशाला मे गई है, भोजनोपरात पानी पीने समय चित्रशाला का हाथी चुल्लूभर पानी मे प्रतिबिम्बित देख उसका यह अचानक हँसते हुए कहना कि हाथ के पानी म हाथी डूब गया एक अद्भुत चमत्कार का निर्माण करता है। सभवत मूल समस्या गज डूबि गयो करके जल मे।' रही होगी। जिसकी पूर्ति कवि ने इस छद की रचना द्वारा की प्रतीत होती है

कवि की काव्य प्रतिभा समाहार शक्ति, चमत्कृति सुमधुर वर्ण चयन आदि

---

१ काव्य प्रभाकर–जगन्नाथ प्रसाद भानु नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, द्वितीय सस्करण प० ६९५।

२ हिन्दी में समस्या पूर्ति काव्य–डा० दयाशकर शुक्ल प्रथम सस्करण पष्ठ २५७ एव ३९१।

३ 'समस्या ' हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य स० प्रयाग छन्द २०।

गुण विशेषो का प्रत्यय इस छ द मे प्राप्त होता है । समस्या पूर्ति का य का एक सु दर उदाहरण यहाँ देखने के लिए मिलता है ।

हि दी साहित्य मे समस्या पूर्ति का य दीघ परम्परा है । विभिन्न कवि समाजो द्वारा समस्या देकर कवियो को उसकी पूर्ति के लिए आवाहन किया जाता था । समस्या पूर्ति का य म प्रमुख बात यह है कि अप्रत्याशित चमत्कार योजना द्वारा चित्त को एक अदभुत प्रसन्नता स भर देना ।[1] उक्ति वचित्र्य समस्या पूर्ति का य का सर्वाधिक महत्त्वपूण गुण है जिसके अ तर्गत वाग्विदग्धता एव प्रत्युत्पन्न मित्व भी समाविष्ट हो जाता है ।[1] समस्यापूर्ति का य के इन निष्कर्षो पर राव गुलाबसिह जी की समस्या पूर्तियाँ सफल प्रतीत होती हैं ।[2]

नीति मञ्जरी—इस ग्र थ की हस्तलिखित प्रति हि दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग म है । इसका वेष्टन क्रमाक १५७६ तथा ग्रथ क्रमाक ३०३५ है । इसकी पष्ठ सख्या ६६ है । प्रति पूणरूप म प्राप्त है । ग्र थ का रचना काल सवत १९३८ वि० है । लिपिकार एव लिपिकाल का कोई निर्देश नही है । बूँदी नरेश रामसिंह जी के आश्रय म यह ग्रथ लिखा गया है ।[1] ग्रथ के अ त म पुष्पिका दी गई है जो इस प्रकार है—

"इति श्री मदगुलाव कविरावेण विरचिता नीति मजरी सम्पूणम शुभम ।'

नीति मजरी' मु शी अम्बे प्रसाद ने मतबद्य फौक कानी म सवत १९४१ वि० मे प्रकाशित की है । प्रकाशित ग्र थ की पृष्ठ सख्या ३५ है । छन्द सख्या २७६ है । कागज पुराना जीण पीले रग का पतला है । ग्रथ पूण अवस्था मे प्राप्त है ।

नीति कथन इस ग्रथ का उद्दश्य है । नीति माला नामक सस्कृत ग्रथ को देखकर भाषा ग्रथ के रूप म नीति मजरी की रचना कवि ने की है । विषय विव चन इस क्रम से किया गया है—वदना नप प्रसा प्राथना से आरम्भ कर नीति कथन, सज्जन प्रशसा, धन प्रशसा, विद्या प्रशसा, पुत्र गुण दोष कथन कल (त्र) दोष गुण कथन, अदष्ट वणन, नीति सार कथन सेवक धम कवि वश वणन आदि ।

नीति चन्द्र—इस ग्र थ की हस्तलिखित प्रति हि दी साहित्य सम्मेलन म प्राप्त है । इसकी वेष्टन सख्या १५९७ तथा ग्र थ सख्या ३०९६ है । पष्ठ सख्या ३५४ है । ग्रथ १६ कलाओ म लिखा गया है । ग्रथ का रचना काल सवत १९४९ है । बूदी नरेश रामसिंह जी के चारो पुत्रो को भेंट देने के हेतु ग्र थ रचित है । इसका स्पष्ट निर्देश ग्रथ म प्राप्त है । यथा—

> निपुन देखि नय विनय म चारि हुँ राजकुमार ।
> नजर हेत तिनकी चु यो नीति च द्र अति चार ॥

---

१ हिन्दी म समस्यापूर्ति काव्य—डॉ० दयाशकर शुक्ल प्रथम सस्करण प्रस्ताविक, पृ० ७ ।

२ वही, पृ० ३९० ।

शशि जुग निधि भू वप म ववार मास बुधवार ।
शुक्ल पचमी म भयो नीतिचद्र अवतार ॥[1]

ग्र य म अनेक स्थानों पर सुधार किए गय हैं । इस ग्रन्थ म ४६ खुले पष्ठ भी हैं जिन मे से कुछ पष्ठा पर ११वी कला तथा १५वी कला का कुछ अश लिखित है । इन ४६ पृष्ठों को घटाने से अन्ततोगत्वा पृष्ठ सख्या २६२ रह जाती है । छ द सख्या १८७६ आती है । ग्रन्थ के अन्त म चार छ द प्राप्त हैं जो सस्कृत के है । ग्रन्थ क सशोधन तथा लखन के सकेत यहा प्राप्त हैं । छन्द इस प्रकार है—

बुन्दी ग्रामगत वृध्वा वुधा कवि गुलाबयुन् ।
नीतिन्दु शोधयामास व्यासो गोविंद सज्ञक ॥१॥
षोडष कला दधान कवि नीत्या निर्मलो दृत्य ।
नीत्यन्धेनयवद्धाय नयमतीना गुलाब मतयायी ॥२॥
श्री व्यासगोवदपदानु नारायणोऽकृत प्राज्ञ इहोज्जहानम् ।
बहु प्रकाश विमल विनाय नित्यणवा नीति कलाम्बरम्मरम् ॥३॥
वत्सरे भू युगाब्देंदु प्रमित पौष कृष्ण के
दशम्याच भगोर्वारे नीतीन्दु शुद्धता गत ॥४॥[2]

इसस यह स्पष्ट होता है कि सवत १९४१ मे नीति सिंधु से निकले हुए नीतिचद्र नामक ग्रथ की शोधित प्रतिलिपि गोविंद नाम के प्रतिलिपिकार द्वारा लिखी गई है और यही प्रति साहित्य समलन म प्राप्त है । ग्रथ पूर्णावस्था म उपलब्ध है ।

यह ग्रथ दो भागो मे प्रकाशित भी है । प्रथम भाग म दस कलाए और द्वितीय भाग म छ कलाएँ समाविष्ट हैं । प्रथम भाग कार्तिक सुदी १५ सवत १९४३ और द्वितीय भाग माघ सुदी १५ सवत १९४३ को प्रकाशित हुआ था । ये दोनो भाग प० केशव प्रसाद मिश्र के द्वारा विद्यारत्नाकर यन्त्र बेलन गज आगरा म प्रकाशित किय गए हैं । प्रथम भाग म १०५ तथा द्वितीय भाग म १०४ पृष्ठ हैं । अत कुल पृष्ठ २१० हो जाते हैं । प्रत्येक भाग के अन्त म ४।४ पृष्ठो के शुद्धि पत्र हैं । ग्रथ का आकार छ द सख्या १८७६ हैं । कागज पुराना जीर्ण है ।

राव गुलाबसिंह जी न प्रथम नीति सिंधु की रचना की । उसके साररूप म नीतिचद्र निर्मित है । इस काय म उनके पुत्र रामनाथ सिंह जी की सहायता उन्हे प्राप्त थी । ग्रथ म इस विषय म जिन छन्दो म सूचना प्राप्त होती है वे छ द इस प्रकार है—

'षोडश कला प्रकाश शतजुत कुवलय हित कार ।
नीति सिंधु स उपज्यो नीतिचन्द्र उमटार ॥

1 नीतिचन्द्र—राव गुलाबसिंह प्रथम भाग सवत १९४३ वि० सस्करण छद ९ १०
2 नीतिचन्द्र, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, ग्रथ का अतिम पृ० ।

> लिग नाथ रचना मदत दय दपि नय पथ ।
> रामनाथ मम गुम्बन न पूरन कीनो ग्रथ ॥[1]

प्रस्तुत ग्रथ के विषय म ग्रथ क अ त म कवि न निम्न छ न्द में अपन विचार प्रकट किए हैं—

> शुक्र नीति को सार गहि कह्यो इहाँ सक्षप ।
> याहि निरतर जो नपति धारण कर अलप ॥
> धारक धर व्यवहार धुर शक्त नपति सो होय ।
> है न शुक्र की नीति सम तीन लोक म कोय ॥
> व्यवहारिन की कुलय सब है कवि ही की नीति ।
> मद भाग्य नृप त जु नहि धारैं याहि स प्रीति ॥
> भय, मवा धन लोभ म तिनन नरक मुकाम ।
> नीतिचद्र की ये भई षोडष कला तमाम ॥[2]

नीति क्षत्र म शुक्रनीति एक महत्वपूर्ण ग्रथ है। इस ग्र थ की महिमा यहाँ प्रतिपादित करत हुए राव गुलाबसिंह जी न राजाओ के शासन म इस ग्रथ के उपयोग से लाभ एव उपयोग न करन की दशा मे हानि का विचार प्रस्तुत किया है। यह एक नीति विषयक प्रब ध ग्रन्थ है जो कवि क नीति विषयक अध्ययन एव अधिकार को सिद्ध करता है।

भूषण चन्द्रिका—यह ग्र थ अपन मूल हस्तलिखित रूप म सावजनिक पुस्तकालय, बूँदी म सुरक्षित है। ग्र थ मे २०४ पष्ठ है। ग्रन्थ राज दरबार म प्रस्तुत करन क लिए तयार किया गया था। उसका प्रथम पष्ठ बेलबूटो स सजाया हुआ है। ग्रन्थ सजिल्द है। इसम लिपिकार एव लिपि काल का निर्देश नही है। यह ग्रथ स्वय कविद्वारा लिपिकृति है। ग्रथ पूणरूप म विद्यमान है। बूदी दरबार के सरस्वती भाडार से सम्भवत यह ग्रन्थ इस पुस्तकालय म आया होगा। कागज सफद मोटा चिकना है। इस पुस्तकालय की सूची म ग्रथकार का नाम गुलाबसिंह के स्थान पर कुवलयान द इस प्रकार लिया गया है। राव गुलाबसिंह जी न ग्र थ के अ तिम छ द मे इस टीका के मूल उपजा य ग्रथ कुवलयान द का उल्लख किया है।[3] सूची लखक न सम्भवत भ्रमवश ही कुवलयान द का ग्र थकर्ता के रूप म उल्लख किया है। ग्रथ क अ ययन स यह निश्चय हाना है कि यह ग्र थ वस्तुत राव गुलाबसिंह

१ नीतिचद्र राव गुलाबसिंह प्रथम भाग सवत १९४३ वि० छद ५१–५२।

२ नीतिचद्र—राव गुलाबसिंह–उत्तरार्द्ध स० १९४३ वि० षोडश कला त्रयोदश प्रकाश छ द १८७ स २००।

३ भूषण चन्द्रिका हस्तलिखित सावजनिक पुस्तकालय बूदी कवि वश वणन छ द ३।

द्वारा ही रचित है । ग्रथ का रचना काल सवत १९२० वि० है' कुल छद २ ४ हैं । ग्रथ के अ त म पुष्पिका है ।

ग्रथ की विषय वस्तु रचना का उद्देश्य तथा जो काय किया गया है उसक विषय मे कवि क विश्वास आदि को निम्नलिखित छ दो म उ हान व्यक्त किया है—

प्रबल प्रतापी राम की कृपा दृष्टि आव ।
पर उपकार बिचारि उर कीनी ग्रथ गुलाव ॥
भाषा भूषन ग्रथ को जो अति आशय आहि ।
बिन या भूषन च द्रिका कोऊ जनि है नाहि ॥
पाठजु नप जसवता कृत राख्यौ पाय वसाय ।
कहूँ बदलि कहु अधिक कहूँ दोहा ल्इ बनाय ॥[1]

बूँदी नरश रामसिह जी की कृपा प्राप्ति तथा परोपकार क विचार स यह ग्र थ निर्मित है । कवि का विश्वास है कि भाषा भूषण ग्रथ के आशय को समझन क लिए भूषण च द्रिका का अध्ययन आवश्यक है । जहाँ तक सम्भव हुआ है कवि न "भाषा भूषण का मल पाठ ही कायम रखा है किन्तु आवश्यकतानुसार कही कही परिवतन किया गया है ।

यह ग्रथ जसवतसिंह जी क भाषा भूषण' ग्रथ की राव गुलाबसिह कृत टीका है । नायिका भेद एव अलकार विवेचन भाषा भूषण का विषय है । भूषण च द्रिका ग्रथ म छ द २५८ तक भाषा भूषण ग्रथ की टीका प्रस्तुत की है । उसक पश्चात कुवलयान द म चर्चित रसवतादि १५ अलकारो का विवेचन १५ छ दो मे किया है । छ द २२ तक ससष्टि शकरादि अलकारा का विवेचन प्रस्तुत किया है । तत्पश्चात उपमा स आरम्भ करते हुए एव वाचकानुप्रवश सकर तक लगभग ११५ अलकारो की सूची दी है । अ तिम चार छ दो मे कविवश तथा ग्र थावतार की चचा की गइ है ।

ललित कौमुदी—इस ग्रथ की हस्तलिखित प्रति उपलब्ध नही है । यह ग्रथ भारत जीवन प्रेस काशी से मुद्रित एव प्रकाशित है । उपलब्ध प्रति म प्रकाशन सवत प्राप्त नही है । ग्रथ के प्रारम्भ म प्रकाशक श्री रामकृष्ण वर्मा द्वारा राव गुलाबसिह जी का जो चरित्र दिया गया है उसम राव गुलाबसिह जी क निधन सवत का उल्लख नही है जिसम यह तक पुष्टि पाता है कि ग्रथ का प्रकाशन कवि के जीवन काल म अर्थात सवत १९५८ वि० क पूव हुआ होगा । ग्रथ म प्राप्त एक अ य निर्देश क

१ भूषण च द्रिका, हस्तलिखित सावजनिक पुस्तकालय बूँदी कविवश वणन, छ द ४ ।

२ वही छ द ६, ७ ८ ।

अनुसार यह ग्रंथ संवत् १९५२ वि० में महाराज रघुवीरसिंह जी ने सुना था। छंद इस प्रकार है–

जब संवत उनइस से बावन फागुन माहिं।
श्री रघुवीर नरेंद्र ने सुनी ग्रन्थ चितचाहिं॥[1]

इससे यह स्पष्ट होता है कि ग्रंथ संवत १९५२ वि० के बाद तथा संवत १९५८ वि० के पूर्व प्रकाशित हुआ होगा। इस ग्रंथ की पृष्ठ संख्या २२९ है। कागज पीला, पतला पुराना है।

महाकवि मतिराम का प्रसिद्ध ग्रंथ ललित ललाम की यह टीका राव गुलाबसिंह जी ने 'ललित कौमुदी' के नाम से लिखी है। ग्रंथ के आरम्भिक २७ छंदों में वंदना और नृप वंश वर्णन किया गया है। ललित कौमुदी की प्रेरणा का सकेत कवि ने निम्न छंदों में किया है–

सभा माहिं इक दिवस यह दियौ हुक्म नृपराम।
कियौ ग्रंथ मतिराम ने नीको ललित ललाम॥
पै टीका काहू न करी जो अब टीका होय।
कठिन अर्थ आशय हु में नौ समुझ सब कोय।
कोविद कवि गुरु शास्त्र में जदपि हुते अपार।
तदपि अल्पमति मैं धरि आज्ञा सीस उदार॥
संवत नगि दिन निधि अवनि कुआर मास रविवार।
कृष्ण पक्ष दशमी विप–भौ टीका अवतार॥[1]

इससे यह स्पष्ट होता है कि महाराज रामसिंह जी की इच्छानुसार राव गुलाबसिंह ने मतिराम कृत ललित ललाम टीका का कठिन कार्य स्वीकार किया था जिसके फलस्वरूप ललित कौमुदी की रचना संवत १९४१ वि० में हुई थी।

ग्रंथ रचना में वंदना एवं नृपवंश वर्णन प्रारम्भिक ३० छंदों में करने के पश्चात १० छंदों में कवि वंश वर्णन का विचार किया गया है। ललित ललाम के छंद तथा उनकी टीका का विवेचन करने के बाद भूषण चन्द्रिका के समान कुवलयानंद के आधार पर रसवतादि १५ अलंकार प्रमाणालंकार तथा संसृष्टि शंकर आदि अलंकारों का विवेचन किया गया है। इसके लिए पुनश्च छंद संख्या १ से ७० तक दी गई है। अंतिम आठ छंदों में रघुवीर सिंह जी से सम्बद्ध नृपवंश तथा कविवंश वर्णन किया गया है। इस ग्रन्थ के विषय में महाराज रघुवीरसिंह जी से जो आज्ञा कवि को प्राप्त हुई उसका संकेत निम्नलिखित छंदों में प्राप्त है–

---

१ ललित कौमुदी, राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण, छंद ५४, अंतिम अंश।

दियो हुकम मुनि ग्रंथ इमि रघुवीर भुवाल ।
उदाहरन भूषनन के निज कृत धरहु रसाल ॥
सो सासन सिर धरि धरे मम ग्रंथन तैयारि ।
उदाहरन भूषनन के जिहि ठा योग्य निहारि ।[1]

अर्थात महाराज रघुवीर सिंह जी की आज्ञा से कवि ने अलंकारों के स्वपूर्ण उदाहरण प्रस्तुत ग्रंथ में जोड़कर संवत १९४१ वि० में लिखित अपने मूल ललित कौमुदी ग्रंथ का विस्तार ही सम्वत १९५२ वि० में किया था ।

गुलावकोश—राव गुलावसिंह जी का गुलाव कोश यह ग्रंथ अपने हस्तलिखित रूप में हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग में प्राप्त है । इस ग्रंथ की वेष्टन संख्या ८६० एवं ग्रंथ संख्या १२३८ है । ग्रंथ की पृष्ठ संख्या ५४७ है । कागज सफेद, मोटा चिकना है । ग्रंथ जिल्द में बँधा हुआ है । प्रथम पृष्ठ बेलबूटा से सुसज्जित है । ग्रंथ पूर्ण रूप में प्राप्त है । ग्रंथ अल्वर नरेश शिवदानसिंह जी की आज्ञा से निर्मित है । ग्रंथ लेखन संवत १९२६ वि० में आरम्भ हुआ था ।[2] ग्रंथ जिल्द में बंधा है । अंतिम पृष्ठ छूटा हुआ है । इसी जिल्द में पांच अष्टक एवं प्रेम पच्चीसी, पावस पच्चीसी ग्रंथ लिखे हुए हैं । ग्रंथ के पूर्ण होने का निर्देश कवि ने माघ सुदि ५ संवत १९२८ वि० किया है ।[3]

गुलाव कोश की रचना मुख्य रूप से अमर कोश के आधार पर की गई है । भाषा में इस प्रकार का प्रयास करने के कारण विद्वानों की क्षमा भी मांगी गई है । इस विषय में उनका निम्न लिखित छन्द दृष्टव्य है ।

अखिल कोश अमरादि कोस गरो सार अगाध ।
मैं नर बानी मैं कियो बुध छमियो अपराध ॥

गुलाव कोश की रचना राव गुलावसिंह जी ने चार काण्डों में की है । प्रत्येक काण्ड विभिन्न वर्गों में विभक्त किया हुआ है जिनके नाम तथा छंद संख्या निम्नानुसार है—

प्रथम कांड में निम्न दस वर्गों का विवेचन किया गया है—

स्वर्ग, व्योम, दिशा काल धी शब्दादिक ज सर्ग ।
नाट्य भाषि पाताल अरु नरक वारि दश वर्ग ॥[4]

(१) स्वर्ग वर्ग—छंद २३ से १०१, (२) व्योम वर्ग छंद २, (३) दिग्वर्ग

---

१ ललित कौमुदी राव गुलावसिंह प्रथम स०, छंद ५८, ५९ अंतिम अंश ।
२ गुलाव कोश—हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग प्रथम कांड, छ० ५,१२
३ वही, अंतिम पृष्ठ ।   ४ वही, प्रथम कांड छंद ११ ।
५ वही, छंद २२ ।

छन्द--४१, (४) काल वग छन्द--२६ (५) धी वग छद १९, (६) शब्दादि वग छन्द २९, (७) नाटय वग छन्द -४४ (८) पाताल भोगि वग छ द १३, (९) नरक वग छन्द ४ (१०) वारिवग छ द ५४ कुल छ द ३४३ है।

गुलाब कोश का द्वितीय काड भी दस काडो मे विभक्त है। इन सर्गो के नाम एव छन्द सख्या निम्नानुसार है।

घर पुर गिरी वन औषधि मगादिकरु नरमानि।
ब्रह्म, क्षत्र, विश शूद्र जुत ये दश वग जानि ॥[1]

(१) भूमिवग--छ द १९ (२) पुरवग छन्द २४ (३) शक वग छ द ९ (४) वनौषधिवग छन्द २४४ (५) सिहारि वग छ द--७९, (६) नवग छ द १८७ (७) ब्रह्मवग छन्द ७३ (८) क्षत्रिय वग--छ द १६०, (९) वश्य वग छ द १४७ (१०) शूद्र वग छन्द ६८ कुल छन्द ९९० हैं।

ततीय काड चार वर्गों मे विभाजित किया गया है। जिनके नाम एव छ द सख्या इस प्रकार है---

है विशेष्य निघ्न रु द्वितीय सकीरण पहिचानि।
अनेकाथ अव्यय सहित चारि वग उर आनि ॥[2]

(१) विशेष निघ्न वग--छन्द १४३ (२) सकीण वग छन्द ५९ (३) अने काथ वग ४४४, (४) अव्यय वग छ द ३७ कुल छ द ६८३ हैं।

चतुथ काड की रचना के विषय मे रावगुलाबसिह जी ने निम्नलिखित छन्द मे निर्देश किया है---

विश्व भेदिनी आदि की निश्चित आशय पाय।
कियो काड चौथो सकल शेष त्रिकाड मिलाय ॥[3]

यह चतुथ काड भी त्रिकाड शेष, प्रथम द्वितीय ततीय इस प्रकार विभाजित कर प्रत्येक काड फिर से विभिन्न वर्गों मे बटा हुआ है। इसका विवरण निम्नानुसार है---

त्रिकाड शेष प्रथम---१ स्वग वग छद ९८ २ दिग्वग छद २५, ३ काल वग छन्द १५ ४ नाटय वग छद २३, ५ पाताल भोगि वग छद ८ ६ नरक वग छद १ ७ वारि वग छद--३८ कुल छन्द २०८ हैं।

त्रिकाड शेष द्वितीय---१ भूमिवग छद २५ २ पुरवग छन्द ११ ३ शल वग छद ९, ४ वनौषधि वग छन्द ५३ ५ सिहादि वग-छद ४७, ६ मनुष्य वर्ग छद ५४ ७ ब्रह्मवग छद ३९ ८ क्षत्रिय वग छन्द ४१ ९ वश्यवग छन्द ४६, १०

---

१ गुलाब कोश हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वितीय काड छन्द १।
२ वही, तृतीय काड छन्द १। ३ वही, चतुथ काड छ द १

पुरवर्ग छंद २४ कुल छंद ३४९ हैं।

त्रिकाड कोष तृतीय—१, विशेष्य निघ्न छंद २४, २ सकीर्ण छंद-३७, ३ अनेकार्थ एकाक्षराय छंद १००, ४ नानार्थ-४७४ ५ अव्यय वर्ग छंद २१ कुल ६५६ छंद हैं। त्रिकाड कोष प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय की कुल छंद सख्या १२१३ हो जाती है। सपूर्ण गुलाब कोश ग्रंथ की छंद सख्या ३२२९ बनती है। अत यह स्पष्ट हो जाता है कि गुलाब कोश अमरकोश मात्र का रूपान्तर नहीं है। कवि ने आधार अवश्य अमर कोश का लिया है किन्तु अपनी ओर से कुछ जोड़ने भी गए हैं।

गुलाब कोश के कुछ छंद उदाहरण रूप म प्रस्तुत करना उचित होगा।

१ धी वर्ग—प्रज्ञा, धिषणा, धीमुषी, बुधि मनीषा सोय।
धी, मति, सवित, चेतना, चित्त प्रतिपत है तोय ॥[1]

२ पुरवर्ग—पू पत्तन नगरी पुरी पुर भदन स्थानीय।
नियम सात नगर ल भिन्न जु पुर गणनीय ॥[2]

३ विशेष्य निघ्न वर्ग—वामन है वृ दिष्ट तो वृदारक जियजोय।
अतिशयार्थ में शब्द या पूरब को पर होय ॥[3]

इस विवेचन स यह स्पष्ट है कि राव गुलाबसिंह जी न अमरकोश, मेदिनी आदि कोशों के आधार पर विभिन्न विषयों स सबद्ध समानार्थक शब्दों का सकलन गुलाब कोश म किया है। ग्रंथ का नाम गुलाब कोश रखते हुए भी प्रत्येक काड के अत की पुष्पिका म नामानुशासन इस प्रकार ग्रंथ नाम का निर्देश कवि न किया है यथा—

इति श्री गुलाबसिंह स्वकृतौ नामानुशासन स्वरादिकाण्ड प्रथम साग एव समर्पिता।

राव गुलाबसिंह जी का विद्या व्यासंग, विशेष रूप स, सस्कृत भाषा व ग्रंथो का अध्ययन, उनम सकलित ज्ञान राशि को भाषा साहित्य म ले आने का एक सफल प्रयास इस रूप मे गुलाब कोश अत्यंत महत्वपूर्ण ग्रंथ है। सस्कृत भाषा को सीखने की क्षमता न रखने वालो के लिए जिज्ञासुओं के लिए यह एक महत्वपूर्ण साधन ग्रंथ है। ग्रंथकार न प्रधान रूप स दोहा छद का और कहीं कहीं सोरठा छद का प्रयोग किया है। ग्रंथ रचना शैली पर सस्कृत का प्रभाव स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

नाम सिंधु कोश—इस ग्रंथ की हस्तलिखित प्रति प्राप्त नहीं होती है। यह

---

१ गुलाब कोश हस्तलिखित हिंदी सा० स० प्रयाग, प्रथम काड, धी वर्ग छ द १।
२ वही द्वि० काड पुरवर्ग छंद १। ३ वही, तृ० काड विशेष्य निघ्न वर्ग छंद १६३
४ वही, प्रथम काड की पुष्पिका।

छन्द–४१, (४) काल वग छन्द–२६ (५) घी वग छंद १९, (६) नग्नादि वग छन्द २९, (७) नाट्य वग छन्द ८४, (८) पाताल भोगि वग–छन्द १३, (९) नरक वग–छन्द ४ (१०) वारिवग छन्द ५४, कुल छन्द ३४३ हैं।

गुलाब कोश का द्वितीय कांड भी दस कांडों में विभक्त है। इन सर्गों के नाम एवं छन्द संख्या निम्नानुसार है।

धर पुर गिरी वन औषधि मगादिक नरमानि।
ब्रह्म, क्षत्र, विश शूद्र जुत य दस वग जानि॥[1]

(१) भूमिवग–छन्द १९ (२) पुरवग, छन्द २४ (३) शैल वग छन्द ९ (४) वनौषधिवग छन्द २४४ (५) सिहादि वग छन्द–५९ (६) नृवग छन्द १८७, (७) ब्रह्मवग छन्द ७३, (८) क्षत्रिय वग–छन्द १६० (९) वश्य वग छन्द १४७ (१०) शूद्र वग छन्द ६८ कुल छन्द ९९० हैं।

तृतीय कांड चार वर्गों में विभाजित किया गया है। जिनके नाम एवं छन्द संख्या इस प्रकार है—

है विशेष्य निघ्न रु द्वितीय सकीरण पहिचानि।
अनकाथ अव्यय सहित चारि वग उर आनि॥[2]

(१) विशेष्य निघ्न वग–छन्द १४३ (२) सकीर्ण वग छन्द ५९ (३) अनेकार्थ वग ८४४, (४) अव्यय वग छन्द ३७ कुल छन्द ६८३ है।

चतुर्थ कांड की रचना के विषय में रावगुलाबसिंह जी ने निम्नलिखित छन्द में निर्देश किया है—

विदव भनिनी आदि की निश्चित आशय पाय।
कियो कांड चौथो सरस दोय त्रिकांड मिलाय॥[3]

यह चतुर्थ कांड भी त्रिकांड शेष प्रथम द्वितीय तृतीय इस प्रकार विभाजित कर प्रत्येक कांड फिर से विभिन्न वर्गों में बँटा हुआ है। इसका विवरण निम्नानुसार है—

त्रिकांड शेष प्रथम—१ स्वग वग छन्द ९८ २ दिग्वर्ग छन्द २५ ३ काल वग छन्द १५ ४ नाट्य वग छंद २३, ५ पाताल भोगि वग छन्द ८ ६ नरक वर्ग छन्द १ ७ वारि वग–छन्द–३८ कुल छन्द २०८ है।

त्रिकांड शेष द्वितीय—१ भूमिवर्ग–छन्द २५ २ पुरवर्ग छन्द ११, ३ शैल वर्ग छन्द ९, ४ वनौषधि वर्ग छन्द ५३ ५ सिंहादि वग–छन्द ४७ ६ मनुष्य वग छन्द ५८ ७ ब्रह्मवग–छन्द ३० ८ क्षत्रिय वग–छन्द ४१ ९ वैश्यवर्ग छन्द ४६ १०

---

१ गुलाब कोश हस्तलिखित हि० । ए० लिपि सग्रहालय प्रयाग द्वितीय कांड छन्द १।
२ वही, तृतीय कांड छन्द १। ३ वही, चतुर्थ कांड छन्द १

द्रवर्ग छंद २४ कुल छद ३४९ हैं ।

त्रिकाड शेष ततीय—१ विशेष्य निघ्न छद २४, २ मकीण छन्द–३७, ३ तिकाथ एकाक्षराथ छ द १००, ४ नानाथ–४७४ ५ अव्यय वग छ द २१ कुल ५६ छद है । त्रिकाड शेष प्रथम, द्वितीय एव ततीय की कुल छद सख्या १२१३ हो जाती है । सपूण गुलाब कोश ग्रथ की छद सख्या २२२९ बनती है । अत यह स्पष्ट हो जाता है कि गुलाब कोश अमर कोश मात्र का रूपा तर नही है । कवि ने आधार अवश्य अमर कोश का लिया है किन्तु अपनी ओर स कुछ जोडते भी गए हैं ।

गुलाब कोश के कुछ छद उदाहरण रूप म प्रस्तुत करना उचित होगा ।

१ धी वग—प्रज्ञा, धिषणा, शेमुषी, बुधि मनीषा साथ ।
धी, मति, सवित, चेतना, चित्त प्रतिपत है तोथ ॥[1]

२ पुरवग—पू पतन नगरी पुरी पुर भेदन स्थानीय ।
निगम सात नगर त भिन्न जु पुर गणनीय ॥[2]

३ विशेष्य निघ्न वग—वामन है वृ दिष्ट तौ वदारक जियजाय ।
अतिशयाथ मैं शब्द ह्या पूर्व को पर होय ॥[3]

इस विवेचन स यह स्पष्ट है कि राव गुलाबसिंह जी ने अमरकोश, मेदिनी आदि कोशो के आधार पर विभिन्न विषयो से सबद्ध समानार्थक शब्दो का सकलन गुलाब कोश म किया है । ग्रथ का नाम गुलाब कोश रखत हुए भी प्रत्येक काड के अत की पुष्पिका म नामानुशासन इस प्रकार ग्रथ नाम का निर्देश कवि न किया है यथा—

"इति श्री गुलाबसिंह स्वकृतो नामानुशासन स्वरादिकाण्ड प्रथम साग एव समपिता ।

राव गुलाबसिंह जी का विद्या व्यासग, विशेष रूप से, सस्कृत भाषा क ग्रथो का अध्ययन, उनम सकलित ज्ञान राशि को भाषा साहित्य म ल आन का एक सफल प्रयास इस रूप मे गुलाब कोश अत्यत महत्त्वपूण ग्रथ है । सस्कृत भाषा को सीखन की क्षमता न रखने वालो के लिए जिज्ञासुओ के लिए यह एक महत्त्वपूण साधन ग्रथ है । ग्रथकार न प्रधान रूप स दोहा छद का, और कही कही सोरठा छद का प्रयोग किया हे । ग्रथ रचना शली पर सस्कृत का प्रभाव स्पष्ट रूप स परिलक्षित होता है ।

नाम सिंधु कोश—इस ग्रथ की हस्तलिखित प्रति प्राप्त नही होता है । यह

---

१ गुलाब कोश हस्तलिखित हिंदी सा० स० प्रयाग, प्रथम काड धी वग छ द १ ।
२ वही द्वि० काड पुरवग छन्द १ । ३ वही, त० काड विशेष्य निघ्न वग छद१४३
४ वही, प्रथम काड की पुष्पिका ।

ग्रथ चार भागा मे प्रकाशित है। प० केशव प्रसाद शर्मा द्विवेदी द्वारा विद्या रत्नाकर यत्र मे यह मुद्रित है। कागज पीला पतला पुराना जीर्ण है। प्रथम भाग की पष्ठ सख्या ४० है, प्रकाशन सवत नही दिया गया है। द्वितीय भाग की पष्ठ सख्या ८८ है प्रकाशन सवत नही दिया गया है। ततीय भाग की पष्ठ सख्या ५० है सन् १८८५ ई० मे यह प्रकाशित है। यह पुस्तक सन् १८५७ ई० के एक्ट २५ क अनुसार रजिस्टर की हुई है। चतुर्थ भाग की पष्ठ सख्या ५१ है। प्रकाशन सवत १९४२ वि० है। नाम सिधु कोश गुलाब कोश का साररूप ग्रथ है। ग्रथ मे कवि ने इस प्रकार का स्पष्ट निर्देश किया है।[1] ग्रथ रचना का प्रारम्भ सवत १९४१ म हुआ है।[2]

गुलाब कोश म जहाँ वर्गों की कल्पना की गई है वहाँ नाम सिधु कोश में तरगो की योजना है प्रत्येक तरग एव उसकी छद सख्या निम्नलिखित रूप म है—

प्रथम भाग—प्रारभिक छन्द २१ स्वग तरग २२ से १०३ व्योम तरग २ दिक्तरग–४१ काल तरग ३६, धी तरग २३, शब्दादि तरग–३१ नाटय तरग–५२, पाताल भोगि तरग १३, नरक तरग ४ वारि तरग–५९ कुल तरग १० छन्द सख्या ३६४।

द्वितीय भाग—प्रारभिक–१ भूमितरग–६–२४ पुरतरग २३, शैलतरग ९ वनौपधि तरग ४७, सिहादि तरग ४९ नृतरग–१५३ ब्रह्म तरग–६४ क्षत्रिय तरग–१२६, वश्य तरग–११८, शूद्र तरग–१०, कुल तरग १० छद सख्या ५६३।

ततीय भाग—प्रारभिक–१ ५, विशेष्यनिघ्न तरग–६–१२० सकीण तरग ४२ अनेकाथ तरग १९८, अव्यय तरग–२६, तरग ४, ३८६।

चतुथ भाग—*१–४ स्वग वर्ग सार ५–१६, दिक्वग स्वर १७–२० काल* वग सार–२१–२२, धी वग सार २३–२४ शब्दादि वग सार २५, नाटय वग सार २६–२८, भूमिवग सार २९–३७ नत्र वर्ग सार ३८ ३९ सिहादि वग ४० नृवर्ग सार–४१ ब्रह्मवग सार–४२ ५२ क्षत्रिय वर्ग सार ५३–९३ वश्य वग सार ९४–९७ शूद्र वर्ग सार ९८–१०५ विशेष्य निघ्नवर्ग सार–१०६–११२, सकीण वग सार–११३ १२० इन चार भागा की छद सख्या १४३३।

इसके बाद—हमसार तरग १–१३ देवकाण्ड सार १४–५४ मत्यकांड सार ५५–९० तिर्यक्कांड सार–९१–१५१, नरक काड सार–१५२–१५५, सामा य कांड सार १५६–१६५ सख्या तरग १ से २१ समाप्ति के छन्द–१ इन सारे छन्दों को मिलाकर चार भागो की सख्या १६२४ बनती है। तुलना म गुलाब कोश कुल छन्द

---

१ नामसिधु कोश—राव गुलाबसिह प्रथम भाग, प्रथम सस्करण।

२ वही,

सख्या ३२२९ है ।

विश्वभेदिनी, हेमकोश आदि का विचार करते हुए अपने पुत्र रामनाथ की सहायता से अपन इस ग्रथ की रचना की है।[1]

गुलाब कोश के सार रूप होने पर भी हेम कोश सार इस नए कोश की सामग्री प्रथम बार इस ग्रथ मे प्रयुक्त की है जो ग्रथ की मौलिकता की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

इस प्रकार कवि राव गुलाबसिंह जी के ३६ ग्रथो म स १२ अनुपलब्ध ग्रथो को छोडकर, शेष २४ ग्रथो का जो परिचयात्मक विवेचन किया गया है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि एक प्रतिभा सम्पन्न साहित्यकार थे । उन्होने काव्य शास्त्र भक्ति काव्य समस्या नीति, टीका कोश आदि विभिन्न विषयो पर ग्रथ रचना कर अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया है। इन विभिन्न विषयो पर लिखे हुए साहित्य का समालोचनात्मक अध्ययन आगामी अध्यायो म प्रस्तुत किया जाएगा।

---

१ नामसिधु कोश--राव गुलाबसिंह, भाग ४, पृष्ठ ५१ प्रथम स० छन्द १ से ४।

४ रीति ग्रन्थो का सैद्धान्तिक पक्ष एव आचार्यत्व

हिन्दी रीति शास्त्र एव रीति काव्य मे रीति शब्द का प्रयोग 'काव्य की आत्मा' अथवा 'विशिष्ट पद रचना' इस सीमित अर्थ म प्रयुक्त नहीं हुआ है। रीति शब्द एक विशिष्ट एव विस्तृत अर्थ में मान्यता प्राप्त है जिसके अन्तगत काव्य शास्त्र के विभिन्न अगो यथा नायिका भेद नखशिख रस अलकार आदि पर लिखे हुए समस्त ग्रन्थो का समावेश हो जाता है।

हिन्दी रीति ग्रन्थो मे जो निरूपण शैली प्रयुक्त की गई है उसको डा० नगेन्द्र ने तीन वर्गों म विभक्त किया है। यथा—'१ काव्य प्रकाश की निरूपण शैली जिसम काव्य के सभी अगो पर थोडा बहुत प्रकाश डाला गया है २ शृगार तिलक रस मजरी आदि शृगार रसमयी नायिका भेदवाली शैली जिसम केवल शृगार के विभिन्न अगो पर विशेष कर नायिका के भेद का ही निरूपण किया गया है ३ चद्रालोक की सक्षिप्त अलकार निरूपण शैली जिसम अलकारो के ही सक्षिप्त लक्षण और उदाहरण दिए गए है।'[1]

राव गुलाबसिंह जी के समस्त रीति ग्रन्थो के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होने रीति ग्रन्थो के लेखन मे प्रयुक्त प्रचलित सभी शैलियो का प्रयोग किया है।

सस्कृत के काव्य शास्त्रीय आचार्यो ने सामान्यत रस के साथ रस के स्थायी सचारी भाव, विभाव आदि सभी का वर्णन किया है किन्तु प्रधानता शृगार के ही विभिन्न अगो को दी गई है। अन्य रसो का निरूपण तो केवल ग्रन्थपूर्ति के लिए कर दिया गया है। *शृगार रस के आलबन के रूप म नायिकाभेद का विचार पल्ल*वित पुष्पित हुआ है। शृगार की रस राजत्व के रूप म स्थापना इसके विकास मे विशेष अनुकूल सिद्ध हुई है।[2] नायक नायिका शृगार रस के आलबन हैं। अत

---

१ रीति काव्य की भूमिका—डा० नगेन्द्र सन १९६१ ई० स० पृ० १३४।

२ रीति काव्य सग्रह—डा० जगदीश गुप्त द्वितीय सस्करण, पृ० १०८।

उचित क्रम म उनका विचार रस स्वरूप भेद, स्थायी
विभाव क अन्तगत किया जाना आवश्यक था। हिन्दी री
बिना किसी प्रकार के सकोच के अथवा दम्भ क नायिका
आरम्भ किया है।[1]

राव गुलाबसिंह द्वारा विरचित रीति ग्रन्था के विवच्य विषया का विचार करत हुए यह स्पष्ट होता है कि नायिका भेद उनका अधिक प्रिय विषय रहा है। द्वितीय स्थान अलकारो को प्राप्त है। तत्पश्चात अन्य काव्य सिद्धान्तो का विचार किया गया है। अत कवि रुचि का विचार करत हुए उनके रीति सिद्धान्ता का विवचन नायिका भेद स आरम्भ करना औचित्यपूण होगा।

नायिका भेद-काव्य म शृगार रस के आलम्बन क रूप म नायिकाओ का विचार भरत मुनि के नाट्यशास्त्र स आरम्भ होता है। "प्रसिद्ध अष्ट नायिका[2] तथा नायिका के उत्तमा मध्यमा अधमा भेदो का उल्लेख भरत न किया है।[3] धनजय क दशरूपक[4] रुद्रट के काव्यालकार,[5] रुद्रभट्ट के शृगार तिलक[6] भोजराज के 'सरस्वती कठाभरण'[7] और शृगार प्रकाश[8] वाग्भट के 'वाग्भटाऽलकार',[9] हेमचद्र के काव्यानुशासन[10] विश्वनाथ क साहित्य दपण,[11] आचाय रूप गोस्वामी क 'उज्ज्वल नीलमणि'[12] आदि ग्रन्थो म भी इसकी विस्तार स विवचना की गई

---

१ रीति काव्य की भूमिका—डा० नगन्द्र—सन १९६१ ई स० पृ० १३९।

२ नाट्यशास्त्र, २२।२०३ २०८। सपा० प० केदारनाथ निणयसागर सन १९४३ ई०।

३ नाट्यशास्त्र ३४।१२ सम्पादक प केदारनाथ निणय सागर—सन १९४३ ई०।

४ दशरूपक—धनजय द्वितीय प्रकाश, श्लोक १५ स २८ सपादक हजारीप्रसाद प्रथम सस्करण।

५ काव्यालकार—रुद्रट—अध्याय १२, श्लोक १६ स ४७ चौखम्भा—स० १९६६ ई० स०।

६ शृगारतिलक—रुद्रभट्ट—प्रथम परिच्छेद श्लोक ४७ स ११६ प्राच्य प्रकाशन, वाराणसी प्रथम स०।

७ सरस्वती कठाभरण भोजराज परिच्छेद ५, प० ३७०—४०७ निणय सागर सन १९०४ ई० स०।

८ शृगार प्रकाश, भोजराज पद्रहवा प्रकाश प० ६१२—६४९ कारोनेशन मसूर सन १९६३ ई० स०।

९ वाग्भटाऽलकार—वाग्भट—निणय सागर सन १०३४ ई० स०।

१० काव्यानुशासन—हमचद्र अध्याय ७ सूत्र २१-२९ सपा० प्रभाकर कुलकर्णी सन १९६४ ई० स०।

११ साहित्य दपण—विश्वनाथ—ततीय परिच्छेद ५६—८८ सपा० सत्यव्रत सिंह सन १९५७ ई० स०।

१२ उज्ज्वल नीलमणि—रूपगोस्वामी—निणयसागर, सन १९३२ ई० प० ४९—७०।

९। नायिका भेद निरूपक ग्रंथो मे भानुदत्त की रस मजरी का स्थान महत्वपूर्ण रहा है। नायक नायिका निरूपक हिन्दी रीति कवियो ने सर्वाधिक प्रेरणा उस ग्रंथ से ही ली है।[1]

राव गुलाबसिंह जी के पूर्ववर्ती काल म रीतिकाल के अनेक कवियो ने नायिका भेद का विचार किया है। भक्तिकाल की सीमा म भी नन्ददास, रहीम आदि कवियो ने तथा रीति काल के आचार्य केशवदास चिन्तामणि मतिराम कुलपति, देवप्रभु, भिखारीदास, पद्माकर आदि कवियो ने अपने ग्रन्थो म नायिकाओ का विवेचन विस्तार से किया है। राव गुलाबसिह जी ने नायिका भेद निरूपण जिस क्रम से किया है तथा जिन भेदोपभेदो का विवेचन किया है उसका स्वरूप इस प्रकार है--

नायिका भेद का विवेचन आरम्भ करते हुए उन्होने अपने सभी ग्रंथो में नायिका लक्षण नायिका जाति भेद वर्णन यह क्रम रखा है। जाति के अनुसार नायिकाओ के पद्मिनी चित्रिणी शंखिनी हस्तिनी इन्ही चार भेदो का विवेचन किया गया है। ये जातिया पूर्ववर्ती आचार्यो द्वारा स्वीकृत हो चुकी थी। उन्ही को कवि ने मान्य किया है। नायिका के स्वकीया परकीया सामान्या-अथवा गणिका इन्ही तीन भेदो को कवि ने प्रतिपादित किया है। इन तीन भेदो के अनेक उपभेदो का विचार नायिका भेद के विवेचन म राव गुलाबसिंह जी ने किया है। कवि ने स्वकीया नायिका के पतिव्रता तथा साधारणा ये दो उपभेद किए है। इन उपभेदो का विवेचन कवि के सभी ग्रंथो म प्राप्त होता है। स्वकीया नायिका के पूर्वाचार्यो द्वारा विवेचित मुग्धा मध्या प्रौढा ये उपभेद भी राव गुलाबसिंह जी ने अपने ग्रंथो म प्रतिपादित किए है। मुग्धा मध्या एव प्रौढा इन तीनो नायिकाओ के जो भेद राव गुलाबसिंह जी ने किए हैं वे इस प्रकार हैं--

मुग्धा भेद-मुग्धा नायिका के अज्ञात यौवना ज्ञात यौवना नवोढा एव विश्रब्ध नवोढा ये भेद कवि ने किए है। वृहद् यथार्थ चन्द्रिका ग्रंथ म नवोढा एव विश्रब्ध नवोढा के भी ज्ञात यौवना अज्ञात यौवना इस प्रकार अन्य उपभेद प्रस्तुत किए गए है किन्तु शेष ग्रंथो म उनका विचार न करते हुए अज्ञात यौवना ज्ञात यौवना नवोढा एव विश्रब्ध नवोढा इन्ही चार का विवेचन किया गया है। अत ऐसा प्रतीत होता है कि कवि को ये ही भेद मान्य थे।

मुग्धा नायिका के इन भेदो के पश्चात कवि ने मतान्तरेण मुग्धा भेद ...के अन्तर्गत वय सधि नववधू नवयौवना नवलअनगा रतिवामा मदुमाना लज्जा प्राया इन भेदो पर भी अपने सभी ग्रन्थो म विचार प्रस्तुत किए है।

---

१ रीतिकाव्य के स्रोत-डा० रामजामिश्र प्रथम स० पृ० २१०-२०।

मध्या भेद–मध्या नायिका के आरूढ यौवना, प्रग
तथा सुरत विचित्रा इन चार उपभेदों का विवेचन राव गु
म प्रस्तुत किया है। लक्षण कौमुदी एव वृहद व्यग्याथ
सम्मेलन प्रयाग म उपल ध प्रति एव राव मुकुदसिंह जी की हस्तालिखित प्रति म
प्रादुर्भूत अनगा के स्थान पर प्रादुर्भूत मनोभाव इस प्रकार का नामकरण लक्षण
विवचन म प्राप्त होता है। उदाहरण म प्रादुर्भूत अनगा नामकरण रखा है।
अनगा एव मनोभवा' पर्यायवाची शब्द होने के कारण नामकरण का यह विभेद
विशेष महत्त्व नहीं रखता है। 'प्रादुर्भूत अनगा' यह नाम कवि ने अपने अधिकांश
ग्रन्था म प्रयुक्त किया है। अत यह नि सकोच पूर्वक कहा जा सकता है कि यही
नाम कवि को अधिक मान्य रहा होगा।

प्रौढा भेद–प्रौढा नायिका क रति प्रीति प्रौढा आन द समोहा प्रौढा, गाढ
तारुण्या कामाधा भावोन्नता रतक्रीडा, समस्त रत कोविदा आक्राता नायिका,
समस्त रस कोविदा, चित्र विभ्रमा लब्धापति इन उपभेदों को कवि ने अपने लग-
भग सभी ग्रन्था म प्रश्रय दिया है। वृहद् वनिता भूषण तथा लक्षण कौमुदी इन दो
ग्र था म रति प्रीति प्रौढा एव आन द सम्मोहा प्रौढा इन उपभदो का विचार नहीं
किया गया है। का य सि धु, लक्षण कौमुदी वृहद व्यग्याथ च द्रिका प्रकाशित इन
ग्र था म समस्त रत कोविदा के स्थान पर समस्त रस चतुरा नाम का प्रयोग
किया गया है। वृहद व्यग्याथ चन्द्रिका की हस्तलिखित प्रतियो म लक्षण देत समय
समस्त रत कोविदा, नाम का प्रयोग किया गया है तो उदाहरण दते समय 'विविध
सुरतना इस प्रकार नाम प्रयुक्त हुआ है। इससे यही स्पष्ट होता है कि एक ही
उपभेद के लिए विभिन्न पर्यायी नामों के प्रयोग करने की कवि म प्रवृत्ति रही थी।

धीरादि भेद–राव गुलाबसिंह जी न मध्या तथा प्रौढा नायिका के, धीरा
अधीरा तथा धीराधीरा इन उपभदा का विवेचन अपने सभी ग्रन्था म किया है।
प्रौढा धीरा नायिका म प्रौढा सादरा धीरा एव प्रौढा सादराधीरा आकृति गुप्ता,
इन अन्य उपभेदो का विचार मात्र वृहद व्यग्याथ च द्रिका म कवि ने किया है।
अन्य ग्र थो म इन दो उपभेदा पर विचार प्राप्त नहीं होता, इससे यह स्पष्ट होता
है कि राव गुलाबसिंह जी को धीरा, अधीरा एव धीराधीरा ये ही तीन भेद प्रौढा
नायिका म मान्य थे।

ज्येष्ठा कनिष्ठा–स्वकीया नायिका म ज्येष्ठा एव कनिष्ठा ये उपभेद राव
गुलाबसिंह जी न अपने सभी ग्रन्थो मे विवेचित किए हैं।

परकीया–परकीया क ऊढा एव अनूढा ये भेद कवि को सवत्र ग्राह्य है।
व्यग्याथ चन्द्रिका प्रकाशित एव काव्यसिंधु इन ग्र था म ऊढा एव अनूढा के साथ
ही साथ प्रौढा एव क यका इन नामा का प्रयोग भी किया गया है।

इसके अलावा परकीया नायिका के छ उपभेद–गुप्ता विदग्धा, लक्षिता कुलटा, अनुशयना एव मुदिता का विवेचन कवि न अपने सभी ग्र थो मे किया है। इन भेदो मे से गुप्ता विदग्धा एव अनुशयना के निम्नलिखित उपभेद भी राव गुलाबसिंह जी के सभी ग्र थो मे प्राप्त होते है। यथा–

१ गुप्ता के तीन भेद–भूत सुरत गुप्ता वतमान सुरत गुप्ता एव भविष्यत सुरत गुप्ता।

२ विदग्धा के तीन भेद–वचन विदग्धा स्वयदूतिका क्रियाविदग्धा।

३ अनुशयना के तीन भेद–प्रथम अनुशयना द्वितीय अनुशयना ततीय अनुशयना।

अन्य नायिका–अ य नायिका के अ तगत राव गुलाबसिंह जी न अ य सभोग दुखिता गर्विता मानवति इन भेदो का विवेचन किया है। वहद व्यग्याथ चद्रिका की हि दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की हस्तलिखित प्रति मे अ य सभोग दु खिता के स्थान पर अ य सुरत दु खिता' इस प्रकार का नामोल्लेख प्राप्त होता है। गर्विता के प्रेम गर्विता रूप गर्विता वक्रोक्ति गर्विता गुण गर्विता कुल गर्विता इन पाँच भेदो की चर्चा करते हुए रूप गर्विता के निजरूप गर्विता पतिरूप गर्विता इस प्रकार उपभेद कवि न किए है। गुण गर्विता के भी निज गुण गर्विता एव पति गुण गर्विता इस प्रकार विभाजन कर निज विद्या बुद्धि पति विद्या बुद्धि पति मन शुद्धि पति उदारता पति शूरत्व आदि उपभेद किए गए हैं। कुल गर्विता नायिका भी निज कुल गर्विता एव पति कुल गर्विता इन दो भागो मे विभक्त की गई है। व्यग्याथ च द्रिका ग्र थ म गर्विता के केवल दो भेद रूप गर्विता एव प्रेम गर्विता वर्णित हुए हैं। अ य भेदो का विवेचन नही किया गया है।

द्वादस नायिका–राव गुलाबसिंह ने प्रोषित पतिका खडिता कलहा तरिता विप्रल धा उत्कठिता वासकसज्जा स्वाधिन पतिका अभिसारिका प्रवत्स्यत पतिका, आगमिष्यत पति का आगतपतिका, पतिस्वाधीना इन द्वादश भेदो की चर्चा अपने लगभग सभी ग्र थो मे की है। व्यग्याथ च द्रिका' ग्र थ म केवल दस भेदो का विचार किया गया है। आगमिष्यत पतिका तथा पति स्वाधीना इन दो भेदो का विवेचन नही किया गया है। प्रवत्स्यत पतिका' का प्रवत्स्यत्प्रेयसि इस प्रकार का अ य नाम वहद व्यग्याथ चद्रिका (प्रकाशित) एव लक्षण कौमुदी इन ग्रन्थो म प्राप्त होता है। अभिसारिका नायिका के दिवाभि सारिका कृष्णाभिसारिका, शुक्लाभिसारिका आदि भेद कवि ने किए हैं। इन भेदो के अतिरिक्त वहद वनिता भूषण एव वनिता भषण ग्र थो म प्रौढा प्रेमाभिसा रिका प्रौढा गर्वाभिसारिका, प्रौढा कामाभिसारिका परकीया प्रच्याभिसारिका तथा गणिकाभिसारिका, इन भेदो का भी विवचन किया गया है। नायिका

भेद के अत म नायिकाओ के उत्तमा, मध्यमा अधमा इन भेदों की चचा भी अपने सभी ग्र यो म कवि ने की है।

नायिका भेद के अन्तगत विवेचित समस्त नायिकाओ का विवरण विस्तार भय के कारण न दत हुए केवल उदाहरण रूप मे कतिपय नायिकाओ के लक्षणो को यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

नायिका–राव गुलाबसिंह जी के अनुसार वह नारी नायिका है जिसे दखते ही दशक पुरुष के मन मे रति स्थायी भाव का जागरण होता है।[1] इस लक्षण के प्रतिपादन म पूववर्ती कवि कोविदो के मत को ही उ हान आधारभूत माना है।

नायिका जाति–जातियो एव गुणो के आधार पर राव गुलाबसिंह जी ने पदमिनी, चित्रिणी शखिनी एव हस्तिनी इन चार नायिका जातियो को स्वीकार कर उनका विस्तत विवेचन अपने ग्र यो म किया है।[2] तत्पश्चात एक एक जाति का स्वतत्र रूप स लक्षण उदाहरण समत विवरण दिया है।

पदिमनी–पदिमनी नायिका के लक्षणो की चर्चा करत हुए राव गुलाबसिंह जी उसे निम्नलिखित गुण विशेषो स युक्त मानत है।

जिस नायिका का मुख पूण च द्रमा के समान है जिसके स्तन भरे हुए एव उन्नत हैं, जिसक दात शिरीष फूलो के सदश हैं जिसके अग प्रत्यगो स चतुराई झलकती है। जिसका वण कनक एव चपक सा है आँखें मृग शिशु सी हैं गति हसी के समान है। जो लज्जा एव मान से युक्त है। जिसक शरीर से कामजल म सदव खिलन वाल कमल सी सुग ध चारो ओर फलती है जो मदन छत्र सी प्रतीत होती है। जा देवताओ की पूजा म रत है। पतली नाक सु दर ग्रीवा त्रिवली म शुभ्रवस्त्र आदि स जो सुशोभित है। जिसकी वाणी कोयल एव हस के समान है वह पद्मिनी नायिका है।[3]

---

१ व्यग्याथ च द्रिका–राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण छ द ७
काव्य सि धु–हस्तलिखित, हि दी सा० सम्मेलन प्रयाग प्रथम तरग छ द ५
वृहद् व्यग्याथ चन्द्रिका हस्तलिखित छ द १८। (हि० सा० स०)
वह" व्यग्याथ च द्रिका हस्तलिखित, राव मुकु दसिंह छ द १८।
लक्षण कौमुदी हस्तलिखित राव मुकु दसिंह छ द ५

२ वनिता भूषण, राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण, छ द ७
व्यग्याथ चन्द्रिका, राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छ द ८।

३ व्यग्याथ च द्रिका हस्तलिखित, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर छ द ९ से १२।
व्यग्यार्थ राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण छ द ९ स १२।
वहद व्यग्याथ च द्रिका–हस्तलिखित हि दी सा० स० प्रयाग छ द २३ से २६
बृहद् व्यग्याथ च द्रिका–हस्तलिखित, राव मुकुदसिंह जी बूंदी २३ स २६

इस लक्षण विवेचन में, काम जल में सदैव खिलने वाले कमल को पद्मिनी नायिका को दी हुई उपमा सुवर्ण के साथ चंपक को रखते हुए नायिका में रंग जाति के साथ अपेक्षित कामलता अधखिली कमलकली के साथ उसकी तुलना आदि में कवि राव गुलाबसिंह जी की लक्षणा प्रतिपादन की स्पष्टता अभिव्यक्त होती है।

चित्रिणी–चित्रिणी नायिका के लक्षणों को स्पष्ट करते हुए कवि ने लिखा है जो तंवगी तथा गज गामिनी है जिसकी आंखें चंचल है किंतु न अधिक छोटा है न अधिक बडी हैं। जिसके बाल भंगा के समान है नितंब तथा स्तन मोटे हैं। जांघ कृश हैं। जो सुन्दरता से पूर्ण हैं। जिसकी ग्रीवा शंख सी है। जो शिल्प संगीतादि में कुशल हैं। जो उपभोग में रत है। उल्लसित है। जिसकी वाणी मयूर सदृश शरीर पर विरल रोमावली है। जिसका वर्णन मृदुल रूप में ही किया जाता है। जो आद्रता से पूर्ण है जो चित्रप्रिय है रति में अल्प रुचि रखती है। जिसके होठ ऊंचे एवं पतले होते है। जो कामवारि के मधु गंध से सुगंधित होती है वह नायिका चित्रिणी है।[1] यहाँ भी अत्यंत मर्मस्पर्शी रूप से चित्रिणी के गुण विशेषों का विचार कवि ने प्रस्तुत किया है। नायिका की चित्र प्रियता उदाहरण में भी सुंदर ढंग से अभिव्यक्त हुई है।[2]

शंखिनी–शंखिनी नायिका के लक्षणों को स्पष्ट करते हुए राव गुलाबसिंह ने कहा है कि उसका सिर एवं भुजाएं दीर्घाकार होती हैं। उसकी कटि कृश एवं शरीर लम्बा होता है। उसके पद दीर्घ कुच स्वल्प होते हैं। उसकी आँखें कुटिल एवं चंचल होती है। उसका योनि जल क्षार गंध से युक्त होता है। उसके बाल सघन होते हैं। उसके गात्र तप्त होते हैं। वह बहुकामिनी एवं सदैव रुष्ट रहने वाली होती है। वह रूखे एवं घर्घर नाद बोलने वाली सभोग में कामाकुल रहने वाली नखच्छत देने वाली होती है। दुष्ट बुद्धि एवं दयाहीन इस रूप में जिसका वर्णन किया जाता है। इस नायिका को लाल रंग के वस्त्र, लाल रंग की मालाएँ प्रिय होती हैं। यह पिंगा लक्षणा होती है तथा पिशुनता में डूबी रहती है।[3]

---

१ व्यंग्यार्थ चंद्रिका हस्तलिखित, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर छंद १५ से १८
व्यंग्यार्थ राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण–छंद १५ से १८।
बृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका हस्तलिखित राव मुकुन्दसिंह बूँदी–छंद ३९ से ३३

२ वाच्यसिंधु हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग तरंग १ छंद १०।

३ व्यंग्यार्थ चंद्रिका हस्तलिखित राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, छंद २१ से २४
व्यंग्यार्थ चन्द्रिका राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण, छंद २१–२४
बृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका, हस्तलिखित, राव मुकुन्दसिंह, बूँदी छंद ३८–४०

हस्तिनी--राव गुलाबसिह न हस्तिनी नायिका के लक्षण इस प्रकार दिए हैं। उसकी भवें घनी, वक्रता विहीन होती है। वह स्थूल होती है। उसके बाल पिंगलवर्ण के होते हैं। उसके पैरो की उगलिया टेढी होती हैं। उसका गौरवर्ण होता है। वह गदगद वाणी से बोलने वाली होती है। वह कठिनता से रति मे रत होने वाली है। उसका मद गन्ध जल इभ सा होता है। वह मन्द चाल से चलती है उसके होठ मोटे हैं। वह छोटी नीचे क धो वाली होती है।[1]

स्वकीया--नायिकाओ का धर्म के आधार पर स्वकीया परकीया सामान्या इस प्रकार विभाजन करते हुए राव गुलाबसिह जी ने स्वकीया नायिका के लक्षण इस प्रकार दिए हैं--वह सतत अपने पति के प्रेम म डूबी रहती है। पति की सेवा, स्व भाव की सरलता उसकी विशेषताएँ होती हैं। वह शीलवान तथा क्षमावान होती है।[2]

स्वकीया नायिका क पतिव्रता एव साधारणा य भेद करन पर भी कवि न उनके विशेष लक्षणो का कोई सकेत नही किया है। नायिका के खण्डिता दि भेद पतिव्रता नायिका म नही साधारण नायिका म ही होते है इतना ही भेद इन दो नायिकाओ म किया है।[3]

स्वकीया नायिका भेद--स्वकीया क नायिका के वय क आधार पर मुग्धा, मध्या एव प्रौढा ये पूर्वाचार्यों द्वारा प्रतिपादित भेद कवि न मान्य किए हैं। प्रौढा को प्रगल्भा के रूप मे भी सम्बोधित किया गया है।

मुग्धा नायिका--मुग्धा नायिका के लक्षण कवि न इस प्रकार दिए हैं--जिसके शरीर म यौवन अकुरित हुआ है जो मनहरण करने की योग्यता रखती है जो

---

१ व्यग्यार्थ चद्रिका हस्तलिखित राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान छन्द २६ २७
राव गुलाबसिह प्रथम सस्करण छ द २६ २७।
बृहद व्यग्यार्थ चद्रिका हस्तलिखित राव मुकुन्दसिह बूँदी छ द ४३ ४४

२ कार्व्यसिधु हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग तरग १ छ द १६
वृहद् वनिता भूषण छन्द ११
बृहद व्यग्यार्थ चद्रिका--हस्तलिखित--राव मुकुन्दसिह बूदी छ द ५।

३ वृहद् वनिता भूषण--हस्तलिखित हिन्दी सा० सम्मेलन प्रयाग छन्द १२
व्यग्यार्थ चद्रिका--राव गुलाबसिह प्रथम स , छन्द ३०
वृहद व्यग्यार्थ चद्रिका--राव गुलाबसिह प्रथम स० छन्द ४०

४ व्यग्यार्थ चद्रिका--राव गुलाबसिह प्रथम स० छन्द ३२
वृहद् व्यग्यार्थ चद्रिका राव गुलाबसिह प्रथम स० छन्द

विश्वास म डूबी मुग्धा नायिका विश्रब्ध नवाढा कही गई है ।[1] यहाँ भी अज्ञात एव ज्ञात नवोढा के लक्षणो का विवेचन नहीं किया गया है। कवि न अज्ञात यौवना नवोढा तथा ज्ञात यौवना विश्रब्ध नवोढा इनक उदाहरण प्रस्तुत किए है। इन उदाहरणो स इन नायिकाओ के परिचायक जो गुण विशेष प्रकट हात हैं उनको इस प्रकार कहा गया है—अज्ञात यौवना नवोढा मचलती हुइ पति के निकट जाती है। ज्ञात यौवना विश्रब्ध नवोढा पति के निकट जाने पर भी सखी का हाथ पकडे ही रहती है।[2] काव्य सिंधु म यही नायिका विश्रब्ध नवोढा कही गई है।[3] इसमे यह स्पष्ट हा जाता है कि विश्रब्ध नवोढा तथा ज्ञात यौवना विश्रब्ध नवोढा इन भेदो म कवि स्पष्टत सीमा रेखा खीच नही सके हैं। यह विवेचन भी उनके एक ही ग्रथ म प्राप्त होता है। अत एसा प्रतीत होता है कि इस नए भेद के प्रतिपादन का प्रयास कवि ने परवर्ती काल म त्याग दिया हो।

मुग्धा नायिका के मतान्तर से वय सधि, नववधू अथात नवल वधू, नव यौवना नवल अनगा रति वामा मदमाना लज्जाप्राया आदि भेदो के विवेचन का स्वरूप निम्नानुसार है—

वय सधि—मुग्धा नायिका की वय सधि की अवस्था तब होती है जब नायिका शिशुता एव यौवन की सधि रेखा पर होती है। युवती क अगा से जब तक शिशुता झलकती है तब तक वह वय सधि की नायिका है।[4]

नववधू अथवा नवल वधू—नववधू अथवा नवलवधू मुग्धा नायिका का लक्षण देते हुए राव गुलाब सिंह जी ने लिखा है कि नववधू अथवा नवलवधू म तरुणाई की कातिमानता द्युति विद्यमान हाती है।[5] दिन प्रति दिन वह बढ़ती जाती है।[6]

नव यौवना—नव यौवना वह नायिका है कि जिसक शरीर मे यौवन की

---

१ वृहद व्यग्याथ चद्रिका राव गुलाबसिंह प्रथम स० छन्द ७४
२ वृहद व्यग्याथ चद्रिका राव गुलाबसिंह प्रथम स० छ० ७१
वही, छन्द ७७
३ काव्य सिंधु हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग तरग १, छद २५
४ काव्य नियम का हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छन्द, १९९
वनिता भूषण, राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छद २९।
वृहद वनिता भूषण, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छद ३३
५ काव्य सिंधु हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग तरग १ छद २७
वृहद व्यग्याथ चद्रिका राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छद ८२
६ वनिता भूषण , , छद ३१।

स्पष्ट झलक लक्षित होती है । यौवन की झलक जिस मुग्धा नायिका म दिखाई द वह नव यौवना मुग्धा नायिका है ।[1]

नवल अनगा--नवल अनगा मुग्धा नायिका वह है जो भोलेपन म काम क्रीडा मे रुचि पाती है। किंतु प्रियतम द्वारा रति की विनय सुनकर आखें मूँदकर मुस्कराती है ।[2]

रतिवामा--सुरत में अरुचि रखन वाली मुग्धा नायिका रति वामा है ।[3]

मदुमाना--राव गुलाबसिंह जी न मान म मदुल रहन वाली मुग्धा नायिका को मदु माना कहा है ।

लज्जा प्राया--लज्जा प्राया वह नायिका है जो रति के हेतु प्रियतम तक पहुँच जाती है किंतु लज्जायुक्त भाव स रति करती है ।[4]

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि मुग्धा नायिका क वयसधि नवलध आदि भेद नायिका के शैशव की सीमा से यौवन की अवस्था म पहुँचने की विभिन्न अवस्थाओ का स्पष्ट करने के साथ रति विषयक आसक्ति विरक्ति आदि भावो को भी व्यक्त करते हैं ।

मध्या--लज्जा तथा काम म सम रहने वाली नायिका राव गुलाबसिंह द्वारा मुग्धा नायिका प्रतिपादित है । वह प्रिय के रूप पर आसक्त होकर प्रिय की ओर देखती है किंतु जस ही प्रिय उसकी ओर देखते हैं लज्जा भाव वश उसकी दृष्टि

---

१ काव्य सिंधु हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग तरग १ छन्द २७ ।
वहद व्यग्याथ चद्रिका राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छन्द ८२ ।
वनिता भूषण राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छ ३४ ।

२ काव्य सिंधु हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग तरग १ छ ३० ।
वनिता भूषण राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छ द ३६ ।
वहद व्यग्याथ चद्रिका हस्तलिखित, राव मुकुन्दसिंह बूँदी छ द १०० ।

३ बहद व्यग्याथ चद्रिका हस्तलिखित राव मुकुन्दसिंह बूँदी छन्द १०० ।
वनिता भूषण राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छ द ३८ ।
काव्य सिंधु हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग तरग १ छन्द १ ।

४ काव्य सिंधु हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मलन प्रयाग तरग १ छ द १ ।
वनिता भूषण राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छन्द ४० ।
बहद व्यग्याथ चद्रिका, राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छन्द १०१ ।

५ बहद व्यग्याथ चद्रिका राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण, छन्द १०१ ।
वनिता भूषण--राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छन्द ४२ ।

नीचे हो जाती है।[1]

मध्या भेद--मध्या नायिका के कवि ने आरूढ़ यौवना प्रगल्भ वचना, प्रादुर्भूत अनगा सुरत विचित्रा इन चार भेदों का विवेचन निम्नानुसार किया गया है।[2]

आरूढ़ यौवना--आरूढ़ यौवना मध्या का विवेचन करते हुए कवि ने उसे पूर्ण रूपेण यौवनारूढ़ एवं यौवन धाम कहा है।[3]

प्रगल्भ वचना--प्रगल्भ वचना वह नायिका कवि राव गुलाबसिंह जी द्वारा मानी गई है जो अतीव प्रगल्भता से बोलती हुई दूसरों को डरा देती है।[4]

प्रादुर्भूत अनगा--काम कलाओं में परिपूर्ण नायिका को कवि ने प्रादुर्भूत अनगा कहा है। अन्यत्र यही नायिका प्रादुर्भूत मनोभवा कही गई है।

सुरत विचित्रा--अदभुत रीति से रति करने वाली कामकलाओं से प्रिय को वश करने वाली नायिका सुरत विचित्रा कही गई है।[5]

प्रौढ़ा--प्रौढ़ा नायिका के विषय में अपने विचारों को अभिव्यक्त करते हुए राव गुलाबसिंह जी ने उसे पति के विषय में केलि कला प्रवीण कहा है।[6] रति

---

१ काव्य सिंधु हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग तरंग १, छन्द ३४।
वनिता भूषण--राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण, छन्द ४४ व ४५ का पूर्वार्द्ध
वृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका, हस्तलिखित राव मुकुन्दसिंह बूंदी छंद ११०।

२ वृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण छं० १०९।
वनिता भूषण राव गुलाबसिंह, प्रथम सं० छन्द ४६।

३ काव्य सिंधु हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, तरंग १, छंद ३६,।
वृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका, हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छं० ११४ पूर्वार्द्ध
वनिता भूषण--राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण छन्द ४७ पूर्वार्ध।

४ वृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छं० ११४ उत्तरार्ध
वनिता भूषण राव गुलाबसिंह प्रथम सं०, छन्द ४९ पूर्वार्ध।

५ वनिता भूषण, राव गुलाबसिंह प्रथम सं०, छन्द ५१।
वृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका, हस्तलिखित राव मुकुन्दसिंह बूंदी, छं० ११९।

६ काव्य सिंधु हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, तरंग १, छं० ३९।
वनिता भूषण राव गुलाबसिंह प्रथम सं० छं० ५४।
वृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका हस्तलिखित राव मुकुन्दसिंह बूंदी छं० ११९

७ वृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छं० १२४।
वनिता भूषण, राव गुलाबसिंह प्रथम सं०, छं० ५५ पूर्वार्ध।

प्रीति प्रौढा तथा आनद समोहा प्रौढा के विषय म कवि न कहा है कि रति प्रीति प्रौढा नायिका अपने पति स एक क्षण भी न बिछुडने वाली तथा सदव हितयुक्त रति करती है तो आनद समोहा प्रौढा मन मे किसी प्रकार का लज्जाभाव न रखते हुए नित्य प्रति सोते समय वस्त्रो को दूर रखकर, बालो को फलाकर सोती है।[1]

प्रौढा नायिका के नौ अ य भेदो का, यथा–(१) गाढतारुण्या, (२) कामाधा, (३) भावोनता (४) दरव्रीडा (५) समस्त रत चतुरा (६) आक्रात नायिका (७) समस्त रति कोविदा (८) चित्र विभ्रमा एव (९) लब्धा पति।[2] विवेचन कवि ने निम्नानुसार किया है।

गाढ तारुण्या—गाढ तारुण्या नायिका को पूर्ण यौवन से युक्त माना गया है।[3]

कामांधा—कामाधा वह नायिका है जो काम भावना के अतिवश होती है। रति भाव से परिपूर्ण होती है।[4]

भावान्नता—भावोनता नायिका उन्नत भावो से युक्त कही गई है।[5]

दरव्रीडा—राव गुलाबसिंह जी ने थोडी लज्जा से युक्त नायिका को दरव्रीडा कहा है।[6]

समस्त रत कोविदा—समस्त रत कोविदा नायिका सकल सुरत विधाओ म प्रवीण होती है।

---

१ काव्य सिंधु हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग तरग १, छ० ४१।
२ बृहद व्यग्याथ चद्रिका, राव गुलाबसिंह प्रथम स० छ० १२६ व १२७।
  काव्यसिंधु, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छ० ४१ ४२।
  वनिता भूषण राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण, छ० ५७ व ५८।
३ वनिता भूषण राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छ० ६० पूर्वार्ध
  बृहद् व्यग्याथ चद्रिका हस्तलिखित मुकुदसिंह बूदी छ० १३२।
४ वनिता भूषण राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण, छ० ६१।
  बृहद व्यग्याथ चद्रिका, हस्तलिखित, राव मुकुदसिंह बूदी, छ० १३२।
५ वनिता भूषण, राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छ० ६२।
  बृहद व्यग्याथ चद्रिका, हस्तलिखित राव मुकुदसिंह बूदी छ० १३९।
६ वनिता भूषण राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छ० ६५ पूर्वार्ध
  बृहद व्यग्याथ चद्रिका, हस्तलिखित राव मुकुदसिंह, बूदी छ० १३९।
७ काव्य सिंधु हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग तरग १ छद ४९।
  वनिता भूषण, राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छद ६७।
  बृहद् व्यग्याथ चद्रिका, हस्तलिखित राव मुकुदसिंह बूदी, छद १४४।

आक्रांतत नायिका–पति एव कुल जिसके वश म रहता है वह आक्रांत नायिका कही गई है।

लब्धा पति–पति कुल तथा पति जिसकी प्रभुता स्वीकार करत है। उसकी मान मर्यादा रखते हैं वह नायिका लब्धा पति नायिका कही गई है।

धीरादि भेद–नायिका क मान तथा मत्री के आधार पर मध्या एव प्रौढा के प्रत्येक के तीन भेद राव गुलाबसिंह जी न मान हैं। ये तीन भेद धीरा, अधीरा तथा धीरा धीरा हैं।

व्यग वचनो के द्वारा अपन रोष का अभिव्यक्त करन वाला मध्या धीरा नायिका है। बिना व्यग्य का प्रयोग किए कठोर वचनो के द्वारा अपन कोप को प्रकट करने पर नायिका मध्या अधीरा है। व्यग्य एव अव्यग वचनो का प्रयोग कर अपने रोष को प्रकाशित कर रो उठन पर नायिका मध्या धीरा धीरा नायिका कहलाती है

जेष्ठा कनिष्ठा–पति प्रेम के आधार पर कवि ने नायिकाओं का ज्येष्ठा कनिष्ठा वर्गीकरण किया है। जेष्ठा कनिष्ठा नायिकाओ का परिचय कवि न इस प्रकार दिया है।

जेष्ठा–विवाहिता दो नारिया मे जो पति के अधिक प्यार की अधिकारिणी होती है, अधिक प्रिय होती है वह जेष्ठा नायिका है।

कनिष्ठा–जिस नायिका पर अन्य नायिका की तुलना म कम प्यार हाता है वह कनिष्ठा नायिका है।

परकीया–राव गुलाबसिंह जी न पर पुरुष स गुप्त रूप स प्रम करन वाली नायिका को परकीया कहा है। इसी परकीया नायिका के प्रौढा एव व या ये दो भेद उन्होने मान हैं। इन भेदा क अतिरिक्त परकीया नायिका क ऊढा एव अनूढा इन दो भेदो का भी कवि न विवेचन किया है। ऊढा एक की याहता हो कर भी पर पुरुष से प्रीति रखती है तो अनूढा अविवाहिता है पर पुरुष से प्रेम करती है। अत ऊढा अनूढा भेद क्रमश प्रौढा एव क यका समानार्थक हो जाते है।

परकीया नायिका के इन भेदो के अतिरिक्त गुप्ता विदग्धा लक्षिता कुलटा अनुशयना मुदिता इन छह अ य भेदो का विवेचन भी कवि ने किया है।

गुप्ता–गुप्ता परकीया नायिका वस्तुत सुरत गुप्त नायिका ही है। अपनी रति को छिपाने के लिये कोई बहाना बना कर कुछ अन्य कारण देकर उसे गोपनीय रखने म यह सफल हाती है इसी स इनका गुप्ता यह नामकरण है। रति के काल भेद के अनुसार भूत सुरत गुप्ता वतमान सुरत गुप्ता एव भविष्यत सुरत गुप्ता इस प्रकार गुप्ता के तीन भेद किए गये हैं। इन्ही भेदा के लक्षणो का विवेचन करते समय राव गुलाबसिंह जी ने इन्हें प्रथम गुप्ता, द्वितीय गुप्ता एव ततीय गुप्ता भी कहा है।

प्रीति प्रौढा तथा आनद समोहा प्रौढा के विषय म कवि न कहा है कि रति प्रीति प्रौढा नायिका अपन पति मे एक क्षण भी न विछुडने वाली तथा सदव हितयुक्त रति करती है तो आनद समोहा प्रौढा मन मे किसी प्रकार का लज्जाभाव न रखते हुए नित्य प्रति सोत समय वस्त्रा को दूर रखकर बालो को फलाकर सोती है।[1]

प्रौढा नायिका के नौ अ य भेदो का यथा--(१) गाढतारुण्या, (२) कामाधा, (३) भावोन्नता (४) दरव्रीडा (५) समस्त रत चतुरा (६) आक्रात नायिका, (७) समस्त रति कोविदा (८) चित्र विभ्रमा एव (९) लब्धा पति।[2] विवेचन कवि ने निम्नानुसार किया है।

गाढ तारुण्या---गाढ तारुण्या नायिका का पूण यौवन मे युक्त माना गया है।[3]

कामांधा---कामाधा वह नायिका है जो काम भावना के अतिवन होती है। रति भाव से परिपूण होती है।

भावान्नता---भावान्नता नायिका उन्नत भावा से युक्त कही गई है।[5]

दरव्रीडा---राव गुलाबसिंह जी ने थोडी लज्जा से युक्त नायिका को दरव्रीडा कहा है।[6]

समस्त रत कोविदा---समस्त रत कोविदा नायिका सकल सुरत विधाओ म प्रवीण होती है।

---

१ काव्य सिधु हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, तरग १, छ० ४१।

२ बृहद व्यग्याथ चद्रिका राव गुलाबसिंह प्रथम म० छ० १२६ व १२७।
काव्यसिधु हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छ० ४१ ४२।
वनिता भूपण राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण छ० ५७ व ५८।

३ वनिता भूपण राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छ० ६० पूर्वाध
बृहद् व्यग्यार्थ चद्रिका, हस्तलिखित, मुकु दसिंह बूदी, छ० १३२।

४ वनिता भूपण राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण, छ० ६१।
बृहद व्यग्याथ चद्रिका हस्तलिखित, राव मुकु दसिंह बूदी, छ० १३२।

५ वनिता भूपण, राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण छ० ६२।
बृहद व्यग्याथ चद्रिका, हस्तलिखित राव मकु दसिंह बूदी छ० १३९।

६ वनिता भूपण, राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छ० ६५ पूर्वाध
बृहद व्यग्याथ चद्रिका हस्तलिखित राव मुकु दसिंह, बूदी छ० १३९।

७ काव्य सिधु हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग तरग १, छन्द ४९।
वनिता भूपण, राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण छन्द ६७।
बृहद् व्यग्याथ चद्रिका, हस्तलिखित राव मुकु दसिंह बूदी, छन्द १४४।

आक्रान्त नायिका–पति एव कुल जिसके वश म रहता है वह आक्रान्त नायिका कही गई है।

लब्धा पति–पति-कुल तथा पति जिसकी प्रभुता स्वकीर करते हैं। उसकी मान मर्यादा रखते हैं वह नायिका लब्धा पति नायिका कही गई है।

धीरादि भेद–नायिका के मान तथा मैत्री के आधार पर मध्या एव प्रौढा के प्रत्येक के तीन भेद राव गुलाबसिंह जी ने माने है। ये तीन भेद धीरा, अधीरा तथा धीरा धीरा हैं।

व्यग वचनो के द्वारा अपन रोप को अभिव्यक्त करने वाली मध्या धीरा नायिका है। बिना व्यग्य का प्रयोग किए कठोर वचनो के द्वारा अपन कोप को प्रकट करने पर नायिका मध्या अधीरा है। व्यग्य एव अव्यग वचनो का प्रयोग कर अपने रोप को प्रकाशित कर रो उठने पर नायिका मध्या धीरा धीरा नायिका कहलाती है

जेष्ठा कनिष्ठा–पति प्रेम के आधार पर कवि ने नायिकाओ का ज्येष्ठा कनिष्ठा वर्गीकरण किया है। जेष्ठा कनिष्ठा नायिकाओ का परिचय कवि न इस प्रकार दिया है।

जेष्ठा–विवाहिता दो नारिया म जो पति के अधिक प्यार की अधिकारिणी होती है, अधिक प्रिय होती है वह जेष्ठा नायिका है।

कनिष्ठा–जिस नायिका पर अन्य नायिका की तुलना म कम प्यार होता है वह कनिष्ठा नायिका है।

परकीया–राव गुलाबसिंह जी ने पर पुरुष से गुप्त रूप से प्रेम करने वाली नायिका को परकीया कहा है। इसी परकीया नायिका क प्रौढा एव कन्या ये दो भेद उन्होने माने हैं। इन भेदो के अतिरिक्त परकीया नायिका क ऊढा एव अनूढा इन दो भेदो का भी कवि ने विवेचन किया है। ऊढा एक की ब्याहता हो कर भी पर पुरुष म प्रीति रखती है तो अनूढा अविवाहिता है पर पुरुष स प्रेम करती है। अत ऊढा अनूढा भेद क्रमश प्रौढा एव कन्यका समानार्थक हो जाते हैं।

परकीया नायिका के इन भेदो के अतिरिक्त गुप्ता विदग्धा लक्षिता कुलटा अनुशयना मुदिता इन छह अन्य भेदो का विवेचन भी कवि ने किया है।

गुप्ता–गुप्ता परकीया नायिका वस्तुत सुरत गुप्त नायिका ही है। अपनी रति को छिपाने के लिये कोई बहाना बना कर कुछ अन्य कारण देकर उसे गोपनीय रखने मे यह सफल होती है इसी से इनका गुप्ता यह नामकरण है। रति के काल भेद के अनुसार भूत सुरत गुप्ता वर्तमान सुरत गुप्ता एव भविष्यत सुरत गुप्ता इस प्रकार गुप्ता के तीन भेद किए गये हैं। इन्ही भेदो के लक्षणो का विवेचन करते समय राव गुलाबसिंह जी ने इन्हे प्रथम गुप्ता द्वितीय गुप्ता एव तृतीय गुप्ता भी कहा है।

विदग्धा–विदग्धा नायिका अन्य बहाना बनाती हुई अपना बात अभि यक्त करने वाली नायिका है। विदग्धा के वचन विदग्धा एव क्रिया विदग्धा इस प्रकार दो भेद किये गये हैं। वचन विदग्धा या स्वयदूतिका यह एक अन्य भेद भी कवि ने किया है। वचन म चतुराइ करने वाली नायिका वचन चातुरी के द्वारा अपने देश के पुरुष से अनुराग करती है तो वह वचन विदग्धा नायिका है।
जब वही किसी पथिक से अनुराग भर वचन करती है तो वह स्वय दूतिका कहलाती है। जब नायिका अपनी विदग्धता, चतुराई क्रिया के माध्यम से अभि यक्त करती है तो वह क्रिया विदग्धा नायिका कहलाती है।

लक्षिता–लक्षिता उस परकीया नायिका को कवि ने माना है जिसकी प्रीति लक्षित अथात प्रकट हो जाती है।

मुदिता–मुदिता कवि ने उस नायिका को कहा है जिसे उसकी चितचाही वस्तु प्राप्त होने पर आन द होता है वह मुदित हो जाती है।

अनुशयना–अनुशयना नायिका के लक्षणो की चचा राव गुलाबसिंह जी ने स्वतन्त्र रूप से न करते हुये अनुशयना के य तीन भेद प्रथम अनुशयना द्वितीय अनुशयना एव ततीय अनुशयना इन नामो से किये गए है। प्रिय मिलन के वतमान सकेत स्थान के नष्ट होने से जो दु खित होती है वह प्रथम अनुशयना है। होनहार के सकेत का अनुमान करती हुई जो नायिका अपने मन म अभाव का अनुभव करती है वह द्वितीय अनुशयना है। सकेत स्थल म प्रिय का गमन मान कर जो सकेत स्थल में पहुँचती हैं किन्तु प्रियतम को वहाँ न पा कर दु खित होती है वह ततीय अनुशयना नायिका है।

कुलटा–राव गुलाबसिंह जी ने कुलटा उस नायिका को कहा है जो अनेक पुरुषो के साथ रममाण होती है।

सामान्या–राव गुलाबसिंह जी के अनुसार सामान्या वह नायिका है जो धन के हेतु सभी पुरुषो से प्रेम करती है रति करती है। यह नायिका गणिका भी कहलाई है।

अ य नायिका–नायिका की मनोदशा के आधार पर अन्य नायिकाओ के अन्तगत राव गुलाबसिंह जी ने अन्य सभोग दु खिता गर्विता तथा मानवती इन नायिका भेदो का विवेचन किया है। अन्य सभोग दु खिता अथवा अन्य सुरत दु खिता वह नायिका कहलाई है जो अपने प्रिय को किसी अ य नारी के साथ रममाण होकर आने की कल्पना करती हुई दु खित होती है। गर्विता नायिका का स्वतत्र विवेचन न करते हुए गव अभिमान करने के कारणो के आधार पर उसके रूप गर्विता वक्रोक्ति गर्विता एव गुण गर्विता कुल गर्विता इस रूप म गर्विता के उपभेदो की चर्चा की गई है। रूप गर्विता में निजरूप पतिरूप तथा गुण गर्विता म निजविद्या बुद्धि, पति

विद्या बुद्धि आदि अनेक उपभेदों की कल्पना कवि ने की है।

मानवती–राव गुलाबसिंह जी ने मानवती नायिका उसको कहा है जो आधी रात में प्रियतम का दर्शन पाकर, मान, एठन के साथ सगमादि रति क्रिया में सहयोग देती है।

द्वादश नायिका–अवस्था भेद के तथा काल भेद के आधार पर राव गुलाबसिंह जी ने प्रोषित पतिका खंडिता, कलहांतरिता, विप्रलब्धा, उत्कंठिता, वासक सज्जा, स्वाधिन पतिका अभिसारिका, प्रवत्स्यत प्रयसी, आगमिष्यत पतिका आगत पतिका एवं पति स्वाधीना इन द्वादश नायिकाओं का विश्लेषण प्रस्तुत किया है।

प्रोषित पतिका–प्रोषित पतिका वह नायिका कही गई है जो पति के परदेश जाने के कारण विरह में विकल रहती है। यह नायिका विरह की अभिलाष, चिंता स्मरण गुणकथन, उद्वेगजड़ता व्याधि, प्रलाप उन्माद एवं मरण आदि दस दशाओं से युक्त होती है।

खंडिता–राव गुलाबसिंह जी खंडिता के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि नायिका रात भर रति की अभिलाषा में प्रतीक्षा करती रहती है। प्रिय का रात में तो आगमन नहीं होता व प्रभात समय आते हैं। उनके शरीर पर अन्य नारी रति चिह्न देखकर नायिका की रति की अभिलाषा नष्ट हो जाती है। यह खंडिता नायिका कही गई है। रात भर नायिका के मन में जो विभिन्न भाव उठते हैं तथा उसकी जो चेष्टाएँ हुआ करती हैं वे इस प्रकार हैं–खंडिता नायिका के मन में चिंता तूष्णी ये भाव विद्यमान रहते हैं और अनुताप संताप निश्वास, अस्फुटालाप आदि उसकी चेष्टाएँ हैं।

कलहांतरिता–कलहांतरिता वह नायिका मानी गई है जो कलह के कारण प्रिय से रूठती है। मनाने के लिए आने पर भी मान नहीं जाती और बाद में पछताती रहती है। भ्रांति संमोह निश्वास ज्वर प्रलाप ये कलहांतरिता नायिका की चेष्टाएँ हैं।

विप्रलब्धा–प्रियतम से मिलन के हेतु संकेत स्थल में पहुंच जाने पर प्रियतम से भेंट न होने के कारण दुखित होने वाली नायिका राव गुलाबसिंह जी के अनुसार विप्रलब्धा नायिका है। निर्वेद निश्वास, सखियों के उलहना के कारण मान अश्रुपात तथा चिंता ये इसकी चेष्टाएं हैं।

उत्कंठिता–उत्कंठिता वह नायिका कवि ने प्रतिपादित की है जो संकेत स्थल में प्रिय के न मिलने के कारण दुखी न होकर प्रिय की चिंता करती हुई वहां पर उसकी राह देखती बैठती है। जंभा अंगड़ाई, अरति कम्प, रुदन, संताप, स्वावस्था कथन आदि उसकी चेष्टाएं हैं।

वासक सज्जा–वासक सज्जा वह नायिका कहलाती है जो पति के **आगमन**

या दिन अपना मान कर रति के हेतु साज सिंगार कर बैठती है।

स्वाधीन पतिका—राव गुलाबसिंह जी ने स्वाधीन पतिका उस नायिका को कहा है जो सदा पति की आज्ञाकारिणी होती है। पति के आशय को समझ कर उसी में वह डूबी रहती है। वन विहार मदनोत्सव आदि में उसे प्रीति होती है। गर्व एवं मनोरथ पूर्ति का अहंकार उसे रहता है।

अभिसारिका—राव गुलाबसिंह जी ने अभिसारिका नायिका का विवेचन विस्तार से किया है। वे अभिसारिका उस नायिका को मानते हैं जो प्रेमवश मदवश अथवा मदन वश स्वयं प्रियतम के पास चली जाती है अथवा प्रियतम को अपने पास बुला लेती है। समय के अनुरूप अपनी वेशभूषा एवं साजशृंगार करती हुई वह मन में शंकित भी रहती है। इसके कारण एक ओर जहाँ उसकी प्रत्युत्पन्न कपटशीलता आदि का परिचय मिलता है वहाँ अनुकूल साजसज्जा के बावजूद भी पहचानी जाने से वह हास्य का भी कारण बनती है। अभिसारिका नायिका की चेष्टाएँ परनारी की हैं। स्वीया अथवा स्वकीया नारी की नहीं है। अभिसारिका नायिका अपने शरीर की कांतिमानता रूप सौन्दर्य का गर्व करती हैं उसी में लीन रहती है। वह बिना आभूषणों को पहने किसी कुल स्त्री के समान तन प्रकाशन करती है किन्तु अपनी सुन्दरता को वस्त्रों के बीच में प्रकट करती है। गर्व में विह्वल होकर जब वह बोलती है तब उसके प्रफुल्लित नेत्रों का विलास लखनीय होता है। उसके हास्य में वस्त्रों के स्खलन में उसे किसी प्रकार का संकोच नहीं होता है। प्रकाश में अर्थात् दिन दहाड़े भी वह प्रियतम से मिलने के लिए जाती है। वारनारी अर्थात् गणिका नायिका का अभिसार उसके उन्मुक्त एवं उज्ज्वल वश नूपुरों की झनकार प्रमुदित मन के कारण प्रफुल्लित बने हुए मुख से अभिव्यक्त होता है। अभिसारिका नायिका अभिसार को छिपाकर दुनियाँ की नजर बचा कर करना चाहती है। किन्तु वह छिपा नहीं रह सकता प्रकट हो ही जाता है। अभिसारिका मुग्धा मध्या प्रौढ़ा परकीया, गनिका आदि भेदों के साथ परकीया के कृष्णाभिसारिका शुक्लाभिसारिका दिवाभिसारिका प्रौढ़ा कामाभिसारिका प्रौढ़ा गर्वाभिसारिका प्रेमाभिसारिका तथा गणिकाभिसारिका इन उप भेदों का भी विवेचन किया गया है।

प्रौढ़ा गर्वाभिसारिका—प्रौढ़ागर्वाभिसारिका वह नायिका है जो नायक से स्वयं मिलने के लिए नहीं जाती अभिमान के कारण पति को बुला लेती है। निमन्त्रण पाकर पति के मन में जहाँ एक ओर सुख का अनुभव होता है वहाँ नायिका मिलने के लिए आना टालती है यह बात उसके मन में खटकती है।

प्रौढ़ा कामाभिसारिका—प्रौढ़ा कामाभिसारिका नायिका काम से इतनी अभिभूत वर्णित है कि मार्ग के बीच में चलते हुए उसके पैरों में साँप लिपट जाता है फिर भी किसी प्रकार भय का भाव उसके मन में नहीं उठता अपितु वह उसके पैरों की

सु दरता बटन का हा अनुभव करती है ।

प्रौढ़ा प्रेमाभिसारिका–प्रौढ़ा प्रेमाभिसारिका वह नायिका है जो प्रिय के प्रेम म डूब कर सखियो के मध्य म अतीव मद गति से चलती है जिसके मुखचद की उज्ज्वलता गलियो म आपूरित रहती है ।

प्रेष्याभिसारिका–राव गुलाबसिंह जी ने प्रेष्याभिसारिका का प्रतिपादन करते हुए उसे मदमाती, यहाँ वहा देखती हुई, हँस कर बोलती हुई चलन वाली कहा है । चौकीदार रास्ता बताते हुए उसके साथ चलने हैं ।

गणिकाभिसारिका–गणिकाभिसारिका कवि न उसे कहा है जो भूषण एव, वस्त्रो स सजकर यह कहती हुई अपने प्रिय के गह की ओर चलना हैं कि श्रम से गुण, गुण मे धन एव धन से काम की प्राप्ति होती है । मन से उल्लसित होकर तथा उमग से भर कर वह चलती है ।

प्रवत्स्यत प्रेयसी–प्रवत्स्यत पतिका अथवा प्रवत्स्यत प्रेयसी वह नायिका कहलाई है जिसक पति परदेश गमन के हेतु अगले क्षण निकल रहे हो । कातर भाव से देखना, काकु वचन, निर्वेद मनाप, समोह निश्वास गमन मे विघ्न की कल्पना ये उसकी चेष्टाएँ हुआ करती हैं ।

आगमिष्यत पतिका–आगमिष्यत पतिका राव गुलाबसिंह जी ने उस नायिका को कहा है जो पति के आगमन की सभावना से हर्षित होती है । अनक शुभ सकेतो के कारण प्रिय के आगमन की निश्चिति एव विश्वास उसे हो जाता है ।

आगत पतिका–आगत पतिका वह नायिका मानी गई है जो पति का विदेश स लौट आते देख कर मन म हर्षित होती है ।

पति स्वाधीना–पति स्वाधीना राव गुलाबसिंह जी ने उस नायिका को माना है जो पति के रूप प्रेम एव गुणो के कारण पूण रूपेण उसके वश म होती है ।

प्रकृति अथवा गुणो के आधार पर उत्तमा, मध्यमा अधमा भेदो का विवेचन करते हुए राव गुलाबसिंह जी ने उत्तमा उस नायिका को कहा है जो अनहितकारी प्रियतम का भी हित ही करती है । उसकी यह क्रिया उत्तम की श्रेणी में होने से वह उत्तमा है । मध्यमा वह है जो प्रिय के हित स हित करती है अहित स अहित करती है । उसका व्यवहार सम होन से वह मध्यमा है । हितकारी प्रियतम स अहित, कर व्यवहार करने वाली नायिका अधमा नायिका कहलाती है ।

राव गुलाबसिंह जी द्वारा विवेचित नायिका भेद का विचार करन पर यह स्पष्ट हो जाता है कि वे अपन पूववर्ती किसी एक आचाय साहित्यकार के अनुवर्ती नही रह । शृगार तिलक ग्रथ मे रुद्रभट्ट ने भरत एव रुद्रट क आधार पर नायिकाओ के तीन वर्गीकरण प्रस्तुत किए हैं । तत्पश्चात् भानुदत्त न अपन 'रस मजरी ग्रथ

म मुग्धा के चार तथा प्रौढ़ा के छह भेदो का विस्तार किया है। अपन नायिका भेद विवेचन मे राव गुलाबसिंह जी न इन सभी भेदो को स्वीकार किया है। अवस्था नुसार नायिकाओ के आठ भेद आचाय भरत द्वारा प्रचारित किए गए थे। जो सभी आचार्यों ने स्वीकार किए हैं। भानुदत्त न "प्रवत्स्यत्पतिका"[1] कृपाराम द्वारा विवेचित आगत पतिका बनी प्रवीन द्वारा वर्णित आगमिष्यत पतिका आदि नायिका भेदो के स्वीकृत हो जाने पर ये द्वादश नायिकाएँ बना। कुमारमणि न प्रेम गर्विता, रूप गर्विता, गुण गर्विता, वक्रोक्ति गर्विता आदि का प्रतिपादन किया था। आचाय केशवदास ने प्रेमाभिसारिका गर्वाभिसारिका, कामाभिसारिका इन भेदो का प्रणयन किया था। कक्कोक के 'रति रहस्य" क आधार पर केशवदास जी ने नायिकाओ की पदमिनी, चित्रिणी, शखिनी एव हस्तिनी इन चारा नायिका जातियो को स्वीकार करते हुए काव्यशास्त्र म उनका प्रचार किया था।[2] राव गुलाबसिंह जी न नायिका भेद विवेचन म तत्त्व आचार्यों का अनुसरण किया है। अभिसारिका नायिका के भेदापभेदो म परकीया प्रख्याभिसारिका एव गणिकाभिसारिका कवि की मौलिक उदभावनाए प्रतीत होती हैं। लक्षणो की चचा म कवि रस मजरी से प्रभावित प्रतीत होने है।

अत यह स्पष्ट हो जाता है कि पूववर्ती आचार्यों द्वारा सम्पादित एव विवेचित सामग्री मे से राव गुलाबसिंह जी ने अपनी रुचि के अनुसार नायिका भद की सामग्री का चयन एव प्रयोग किया है। कुछ नए भेदो के प्रचार का भी प्रयास किया गया है।

नायक विचार—नायक नायिका भद के विचार म नायिकाओ की तुलना म नायक विचार का स्थान गौण रहा है। राव गुलाबसिंह जी म नायक मे य गुण आवश्यक मान हैं। नायक सुन्दर एव शील सपन्न हो। वह युवा एव सुगठित हो। केली कला म प्रवीण हो। कुलवान पवित्र उदारता एव गुणा का आगर हो।

नारी सबध के आधार पर नायक भेद का विवचन करते हुए उन्होन नायक के तीन भेद—१ पति, २ उपपति एव ३ वसिक माने हैं। उनके अनुसार पति नायक अपनी विवाहिता नारी म लीन रहता है तो उपपति पर नारी मे रत रहन वाला नायक है। वसिक नायक तो गणिका नाथ ही कहलाया है।

पति नायक के पत्नी के साथ व्यवहार के आधार पर अनुकूल, दक्षिण धृष्ट

---

१ रस मजरी—भानुदत्त—सम्पादक जगन्नाथ पाठक, द्वितीय सस्करण पृष्ठ १५१—१५२

२ नायिका भद शास्त्र को हिदी की दन—डा० राकेश गुप्त काव्यशास्त्र प्रधान सपादक डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी प्रथम सस्करण पर आधारित, पृ ३४५ स ५५६।

एव धष्ट ये चार भेद कवि ने प्रतिपादित किये हैं।

उनके अनुसार अनुकूल नायक उसे कहा गया है जो अपनी एक ही विवाहिता पत्नी म हित पूवक रत रहता है। दक्षिण वह पति नायक है जो अपनी अनेक पत्नियो के साथ समभाव स प्रीति रखता है। मीठे वचन बोलने वाला किन्तु अपनी पत्नी से कपट करने वाला नायक शठ नायक है, तो निलज्ज एव निडर नायिका के प्रति अपराध करने वाला नायक धष्ट नायक कहलाता है।

इन नायक भेदो के अतिरिक्त नायक के स्वभाव एव व्यवहार के अनुसार तीन उपभेदो का विवेचन राव गुलाबसिंह जी ने किया है। य त्रिविध नायक हैं— (१) मानी (२) वचन चतुर तथा (३) क्रिया चतुर नायक।

मानी नायक नायिकाओ म मान करने वाला नायक कहा गया है। वचन में चतुराई की क्षमता रखने वाला वचन चतुर नायक है। क्रिया म चतुरता करने वाला नायक क्रिया चतुर नायक है।

प्रोषित पतिका नायिका के समान नायक भेद मे भी प्रोषित नायक का विचार राव गुलाबसिंह जी न किया है। स्त्री के वियोग म विरही नायक प्रोषित नायक कहलाया है। राव गुलाबसिंह जी ने अनभिज्ञ, उत्तम म यम, अधम इस प्रकार और नायक भेदो का भी प्रतिपादन किया है। अनभिज्ञ वह नायक है जो नारी रस म अनजान है। उत्तम नायक वह है जो नारी मान को यत्न पूवक दूर करता है। रिस युत नायिका स जो नायक न क्रीडा करता न रिस करता है वह मध्यम नायक है। अधम नायक रति क्रीडा के समय लाज, भीति त्यागने वाला होता है।

नायक के इन भेदो के अतिरिक्त राव गुलाबसिंह जी ने धीर ललित धीरोद्धत धीरशांत एव धीरोदात्त इन चार नायक भेदो का विवेचन भी प्रस्तुत किया है। धीर ललित नायक सुखी, कलानिधि, निश्चिन्त होता है। तो धीरोद्धत नायक गर्वी, छली अपने ही गुणो का बक्ता अथात घमडी प्रवृति का होता है। धीर शांत नायक पवित्र, श्रुति, गुणवान एव विनयी होता है। तो धीरोदात्त नायक क्षमावान गभीर सत्यव्रत एव विजयी होता है।

दशन विचार—नायक नायिका जब एक दूसरे को हित सहित देखते हैं तो वह दशन है। अत नायक नायिका विचार म ही उसका विवेचन अनिवाय हो जाता है। दशन चार प्रकार का होता है, श्रवण, स्वप्न, चित्र दशन तथा साक्षात।

नायक सखा वणन—नायक सखा वणन मे नायक के पाँच सखा भेदो का वणन कवि ने किया है। य पाच सखा हैं—पीठ मद, विट, चेट, नम सचिव एव विदूषक।

पीठमद—नायक सखा पीठमद ह जो मानवती नायिका का मान छुड़ाते हुए उसे नायक के हृदु मना सकता है।

विट–विट वह नायक सखा है जो काम कलाओ मे, उनके कथन म अपनी चतुराई दिखाता है।

चेट–चेट इस वग का नायक सखा है जो नारी हृदय का पारखी, नायक नायिका मिलन मे चतुर माना है।

नम सचिव–राव गुलाबसिंह जी न नम सचिव का लक्षण देते हुए कहा है वह नायक का मित्र, प्रिया एव प्रियतम को मिला देने वाला होता है।

विदूषक–रावगुलाबसिंह जी के अनुसार विदूषक वह नायक सखा है जो अपना वेप, रूप एव वचनादि को बदल कर प्रिया एव प्रियतम से मिलन मे हास्य का निर्माण करता है।

सखी वणन–सखा वणन के समान राव गुलाबसिंह जी ने सखी वणन करते हुए उसके लक्षण बताय हैं तथा उसके काय के स्वरूप को भी स्पष्ट किया है। उनके अनुसार सजनि अथवा सखी वह है जिससे नायक किसी प्रकार का दुराव अथवा छिपाव नही रखता है। मडन शिक्षा एव उपालभ परिहास उसके काम हैं।

दूत दूती वणन–दूत का विचार करते हुए उसके दूत कम के अनुसार तीन प्रकार कवि ने माने हैं। वे इस प्रकार हैं—निसष्टाथ मिताथ एव सदेश हारक। निसष्टाथ दूत वह है जो दोनो के भाव को जानत हुए भी शुभ उक्ति से उत्तर देता है। कहने के अनुसार काय करने वाला मिताथ दूत कहलाता है। सदेश हारक दूत वह है जो कहे हुए सदेश को यथावत् पहुचा देता है।

दूती वणन–दूती वणन करते हुए राव गुलाबसिंह जी ने उस नायक एव नायिका के सन्देश एक दूसरे तक पहुँचाने वाली कहा है। दूती के दो प्रकार के काम उन्होने बतलाए है—(१) प्रियतम से प्रियतमा का विरह निवेदन एव (२) प्रिया प्रिय मिलन।

दूती के भी राव गुलाबसिंह जी न उत्तम, मध्यम तथा अधम उपभेद करते हुए उनके लक्षणो का विवेचन किया है। उत्तम दूती वह होती है जो मनहरण करती हुई मधुर एव अच्छे वचन कहती है। मध्यम दूती पुरुष एव मदु वचन बोलने वाली दूती होती है। पुरुष अर्थात कठोर वचन कह कर दूतता करने वाली दूती अधमा दूती है।

इस प्रकार कवि ने नायक सखा दूत दूती विवेचन प्रस्तुत किया है।

निख नख–नायक नायिका के रूप सौंदय का वणन शृगार रस के पोषण में उद्दीपन के रूप म महत्त्वपूण रहा है। नायकों की तुलना म नायिकाओ के रूप वणन का विचार अधिक मात्रा म होता आया है क्योंकि वे ही शृगार रस की केन्द्र रही हैं।

सस्कृत काव्य ग्र थो म कालिदासादि कवियो ने अपनी नायिकाओ के अग

प्रत्यग का वणन किया है । उत्तर कालीन सस्कृत का-यशास्त्रीय ग्र-थो मे नखशिख वणन को प्रेरणा देने वाले प्रमुख ग्र-थो म गोवधन का कवि कल्पलता, केशव मिश्र का अलकार शेखर, एव वराह मिहर की वृहत्सहिता आदि उल्लेख हैं ।[1] स्तुति साहित्य मे भी देवताओ के स्तवन म उनके अग प्रत्यग की सुन्दरता का विवेचन किया गया है ।

नखशिख की व्यवस्था देते हुए कविकल्पलताकार न लिखा है कि मानवी नख शिख वणन शिख से पदनख तक करना चाहिए और दि-य रूप वणन मे इसके विपरीत पदनख से शिख तक का वणन करना चाहिए ।[2]

फारसी का-य पद्धति मे भी सरापा का वणन मिलता है । इसमे सर से पर तक के वणन म शिखनख की ही का-य परम्परा का निर्वाह किया गया है ।

रीति का य म नखशिख वणन की परम्परा पूववर्ती भक्ति काव्य से आई है । तुलसीदास एव सूरदास के का-य म नख से शिख तक का वणन किया गया है, तो सूफी प्रेमाख्यानो म शिख से नख तक वणन प्राप्त होता है । इनसे भी पूव चदवरदाई के पृथ्वीराज रासो तथा विद्यापति की पदावली में भी नखशिख वणन प्राप्त है । नखशिख परम्परा का निर्वाह करते हुए आचाय केशवदास जी ने दि-य, दि-यादि य एव आदि-य क रूप म वण्य बताकर शिख नख एव नखशिख दोनो पद्धतिया क प्रयोग का समथन किया है यथा—

नखतें शिखलौ बरनिय दवी दीपति दखि ।
शिखतें नख लौं मानुषी केशवदास विसेखि ।
जग के देवी दव के श्रीहरि देव बखानि ।
तिन हरि की श्री राधिका इष्ट देवता जानि ।

हि-दी में पथक रूप से नखशिख ही लिखे गये हैं शिख नख नही । राधा कृष्ण के साथ जुड जाने स नायिका भद मे यह परिष्कार भी आ गया है ।[3]

राव गुलाबसिंह जी ने काव्य सि धु लक्षण कौमुदी एव का-य नियम ग्र था म शिख नख को स्थान दिया है । उनम विषय विवेचन का स्वरूप भी नख शिख न होकर शिख-नख ही रहा है । नायिका के बालो से चरण तक के कच, बनी, अलक,

---

१ रीति का-य के स्रोत, डॉ० रामजी मिश्र—प्रथम सस्करण, पृ० २३४ ।

२ मानवा मौलि तो वर्ण्या देवाश्चरणत पुन ।

कविकल्पलता १, ३, ५८ ।

रीति का-य के स्रोत—डॉ० रामजी मिश्र—प्रथम सस्करण पृ० २३५ से उद्धत ।

३ रीति का-य के स्रोत—डा० रामजी मिश्र, प्रथम सस्करण, आचार्य डा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र द्वारा लिखित 'वार्तिक अनुवचन', पृ० ३ ।

अलिक, गाल भृकुटि, नन, श्रवण, नासिका, अधर, रद, हास्य, श्वास, रसना, वाणी चिबुक, मुख, कठ भुजा, अँगुली, नख, कुच, उदर, नाभि, त्रिवली, कटि नापै, नितब, ऊर चरण, चाल आदि बत्तीस अगो का विवेचन उन्होंने किया है।

विस्तार भय के विचार से राव गुलाबसिंह जी के समस्त शिख नख वणा को प्रस्तुत न करते हुए केवल प्रातिनिधिक रूप म यहा कतिपय उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे हैं–

कच––राव गुलाबसिह जी न कचा म पांच गुण माने हैं। यथा–दीर्घता, कुटिलता, कोमलता सघनता एव नीलता। उदाहरण म भी कवि ने कतिपय उप माना का प्रयोग करते हुए बालो का वणन किया है। इन उपमानो मे घन सिवाल, तम चवर भ्रमर नील कमल श्याम रत्न, जमुना तरग आदि को प्रस्तुत किया गया है।

बनी––वैनी को तलवार सदश, जमुना धार सम, सप निशा भ्रमर पक्ति के रूप मे वर्णित किया है। उदाहरण म भी अतीव सु दरता से इन गुण विशेषो को प्रस्तुत किया गया है।

ललाट कपोल––ललाट एव कपोलो का वणन करते हुए राव गुलाबसिंह जी ने हेम पटिका अधचन्द्र इनकी उपमा भाल प्रदेश के लिए प्रमाण मानी है। कपोलो को मुकुट, मयक, मधूक समान कहा गया है।

भकुटि––भृकुटि का वणन करते हुए उस कवि न वेली, धनुष रेखा छरी असी, भ्रमरावली, पल्लव आदि के समान माना है।

नयन–नयना के सौ दय वणन म कवि ने उ ह मग दग अभोज दल, मछली, खजन, मदन शर, भ्रमर चकोर आदि के समान कहा है। वे चिकने, चचल बड तथा काले अरुण एव श्वेत रग आदि गुणों से युक्त प्रतिपादित है।

श्रवण–काना का वणन करते हुए उन्ह दोला पासक, अथात झूले की रस्सी, *पात्र एव भवना के बराबर कहा है।*

नासा–कवि ने नासिका तिल प्रसून, शुक चचू औंधे मुख का तुणीर, वग दण्ड इन उपमाना के समान माना है।

ओठ–होठो को राव गुलाबसिंह जी न बधूक, पल्लव बिम्ब प्रवाल आदि *के समान कहा है। नायिका क होठो की मधुरता सभी रसिक मधुर वस्तु से तुल्नीय* मानते हैं।

दात–दांता के वणन के प्रसग म राव गुलाबसिंह जी ने उन्हें मोती मानिक हीरा, कुद कली, दाडिम बीज आदि के साथ तुल्ना के योग्य माना है।

हास्य–हास्य की तुल्ना कवि ने चांदनी सु दर खिले पुष्प मीठपन म अमत, उज्ज्वल, दुग्ध धार की वर्षा आदि के साथ की है।

मुख--मुख को राव गुलाबसिंह जी ने चन्द्रमा, पकज, स्वच्छ दर्पण से तुल नाय माना है ।

कंठ—कंठ को कवि ने उसे कबु, कपोत के समान अमल, उदार एव सुन्दर कहा है। उसकी विशिष्टता स्पष्ट करते हुए कहा है कि वह तीन रेखाओं से युक्त हो।

बाहु—बाहु को राव गुलाबसिंह जी ने कल्पवृक्ष शाखा के समान सुन्दर, क्षारसागर की दुग्ध धवल तरंग, नाग नाथ अर्थात वरुण के पाश, सजीवनी वल्लरी, मृणाल की मालिका, सावन की बिजुरी आदि के सदृश प्रतिपादित है।

अगुली—अँगुली का वर्णन करते हुए उसे चपकली सी अमल, मूँगली के हार के समान एव दुनिया की जीवन मूली के समान प्रतिपादित किया गया है ।

नख—राव गुलाबसिंह जी ने नखों को रवि ... मणि, नारव, रत्नों के निकर, लाल रत्नों मे सुमन आदि के सदृश कहा है ।

नाभि त्रिवली—नाभि त्रिवली का एकत्र विवेचन करते हुए जहाँ नाभि को नीर, रसातल कूप ह्रदनद कमल विवर कहा गया है वहा त्रिवली को निश्रेणी, सोपान सरी वीचि पाश इन नामों से प्रतिपादित किया गया है ।

कटि—कवि कटि को सूचि का अग्रभाग शून्य, अणु सिंह कटि के सम मानते । अन्य लोगों के मत को भी कवि ने यहा इस प्रकार उद्धृत किया है कि कोई उसे अतिसूक्ष्म एव इन्द्रजाल की नाप भी कहते हैं ।

चरण—चरणों के वर्णन मे कवि ने उनमे मृदुता ललाई, शुचिता आदि गुणों को मानकर उनकी सुन्दरता का वर्णन किया है ।

गति—गति के गुण विशेषों की चर्चा करते हुए कवि ने उसे सारस, गज, कलहस, राजहस की गति के समान माना है। मदता को चाल की विशेषता कहा है।

शिख नख वर्णन के अन्त मे एक ही छन्द मे कवि ने समग्र शिखनख का प्रस्तुत करते हुए प्रत्येक अग के उपमान उनके साथ रखे हैं। यथा कच के साथ तम वेणी के साथ व्याल भाल के साथ अर्धचन्द्र कपोल के साथ मुकुर, भौंह के साथ धनु दृग के साथ बाण, नासा के साथ कीर, ओठ से बिम्ब दन्त से कुन्द हास्य से चाँदनी सांस से मन्द वाणी के साथ वीणा, मुख के साथ चन्द्रमा कुचो के साथ गिरी, पट के साथ पान, रोमावली से धूम, नाभि से कूप कमर एव नितब के लिए अणु एव चक्र जघा से कदली, कर पद से पल्लव आदि ।

इस प्रकार कवि ने शिख नख का विवेचन करते हुए शृगार के उद्दीपन की सामग्री प्रस्तुत की है ।

षड्ऋतु वर्णन—शिख नख के समान ही शृगार रस विवेचन के एक अग

रूप म ऋतु वणन का विवचन रीति कालान का य ग्रथा म प्राप्त होता है। नायिका की भावदशा का चित्र उपस्थित करने हुए प्रमुखतया उद्दीपन रूप में ऋतु चित्रण किया गया है। ऋतु वणन का य म वण्य विषय के रूप म भी किया जाता रहा है। राव गुलाब सिंह जी के का य म ऋतु चित्रण उभय रूप मे देखने को मिलता है। का य नियम ग्रथ म कवि न वण्य विषय के रूप म पड्ऋतु वणन प्रस्तुत किया है। पावस पचीसी मे वर्षाऋतु के प्राकृतिक सौंदय विवेचन के साथ उद्दीपन रूप मे ऋतु वणन प्रस्तुत है। नायक नायिका भेद के उदाहरणो मे भी ऋतु वणन प्रयोग उद्दीपन रूप म किया गया है। प्रातिनिधिक रूप स कुछ उदाहरण यहा प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

वसत वणन--वसत ऋतु मे कोकिल कूजन, हिंडोला, दक्षिण पवन आदि के कारण जीवन मे परिवतन आ जाता है। विभिन्न प्रकार के फूलो से मजरी से पड सुसज्जित हो जात हैं। एक ही वसत ऋतु सामा य जनो के लिये सुखदायी तो विरही जनो के लिए दुखदायी सिद्ध होता है।

ग्रीष्म वणन--ग्रीष्म ऋतु के वणन म कवि ने कहा है गर्मी, लू के परिणाम स्वरूप पाटल मल्ली जैसे पुष्प सूखने हैं पथिक प्यास से तपते रहते है। मग मरीचिका रहती है। आम्रादिक फल प्याऊँ सत्तू आदि से इस ऋतु म लोगो का पोषण होता है। इसी वणन मे फूलो का सूखना पथिको का जल के हेतु दौडना आम्रराज का फलो से लदना आदि का वणन भी कवि ने किया है।

वर्षा वणन-वर्षा ऋतु म राव गुलाबसिंह जी ने हसो का जाना बादल, मयूर पानी का बरसना कीचड केतकी, जाति कुद आदि पुष्प तूफानी हवा आदि उसके अग रूप म वर्णित किए है। उदाहरण म वर्षा ऋतु की एकाधिक विशेषताओ का प्रयोग करने हुय विरहणी के विरह को उद्दीप्त किया है।

शरद वणन-शरद ऋतु के वणन म कवि ने कहा है कि शरद ऋतु म रवि शशि एव जल निमल हो जात है। शिखि पक्ष एव मद विहीन हो जात हैं धरती भी स्वच्छ हो जाती है। उदाहरण म भी इन्ही विशेषताओ का विस्तार स विवेचन करते हुये रामसिंह जी के चरित्र को शरदागम सदृश बतलाया है।

हेमत वणन-हेमत ऋतु के वणन मे दिन छोटे रात दीर्घ हिम शीत प्रबलता आदि हेमत की विशषताएं राव गुलाबसिंह जी न प्रतिपादित की है। इन्ही विशेषताओ का विचार उदाहरणो म भी प्रस्तुत किया गया है।

शिशिर वणन-शिशिर ऋतु का वणन करत हुये वह समृद्धता की ऋतु मानी गई है। कमल एव कुमुदो की हानि का काल कहा गया है। आन द एव मिष्टान्न की ऋतु कही गई है। इस प्रकार कवि न सफलता पूवक ऋतु वणन प्रस्तुत किया है।

अलकार-राव गुलाबसिंह जी के रीति ग्रथा म नायिका भेद के पश्चात्

अलंकार निरूपण एक महत्त्वपूर्ण अंग है। काव्य के विवेचन में अलंकार को काव्य के अनिवार्य तत्व के रूप में मान्यता प्राप्त है। काव्य के शोभाकर सभी धर्म अलंकार माने गये हैं। अलंकार के विवेचन में भामह एवं दण्डी का नाम विशेष उल्लेख्य है। वामन ने काव्य गत समस्त सौन्दर्य को अलंकार प्रतिपादित कर दण्डी का समर्थन ही किया है। परवर्ती काल में अलंकारों की संख्या में वृद्धि होती गई है। अलंकारों को वर्गीकृत करते हुए उनका विवेचन सुविहीत ढंग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। उद्भट ने जिस वर्गीकरण को प्रस्तुत किया था उसकी तुलना में अलंकारों का व्यवस्थित रूप में रुद्रभट ने ही वर्गीकृत किया था। रुद्रट ने अलंकार को वास्तव, औपम्य, अतिशय श्लेष, इन चार श्रेणियों में विभक्त किया था। अर्थालंकारों के वर्गीकरण में रुय्यक का भी योगदान महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने अलंकारों को सादृश्य गर्भ औपम्यवर्ग, विरोध गर्भ, शृंखलाबद्ध न्यायमूलक, गूढार्थ प्रतीति, आदि ५ वर्गों में विभक्त करते हुए सादृश्य गर्भ के भेदाभेद एवं अभेद ये दो उप भेद किये हैं। अभेद प्रधान को भी आरोप मूलक एवं अध्यवसाय मूलक इस प्रकार विभाजित किया गया है। न्यायमूलक अलंकार वर्ग में तर्क न्याय वाक्य न्याय आदि ४ भेद किये गये हैं।[1]

हिंदी के रीति आचार्यों में आचार्य केशवदास कृत अलंकार विभाजन का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। चिंतामणि सोमनाथ, कुलपति आदि ने शब्दालंकार एवं अर्थालंकार के रूप में ही वर्गीकरण स्वीकार किया है। आचार्य भिखारीदास ने अलंकारों को बारह विभागों में विभक्त किया है। अलंकारों के विवेचन में हिन्दी के रीति आचार्य संस्कृत के पूर्वाचार्यों मम्मट विद्यानाथ विश्वनाथ भोजराज जयदेव अप्पय्य दीक्षित आदि के ऋणी हैं।

राव गुलाबसिंह जी ने अलंकार विवेचन में स्पष्ट रूप से निर्देश किया है कि उन्होंने कुवलयानन्द का अनुकरण किया है।[2] अप्पय दीक्षित ने कुवलयानन्द के अर्थालंकार का विवेचन जयदेव के चन्द्रालोक के आधार पर किया है। चन्द्रालोक के पंचम मयूख में १०८ अलंकारों का विवेचन जयदेव ने किया है, जिनमें ८ शब्दालंकार एवं ९६ अर्थालंकार हैं। कुवलयानन्द में अप्पय्य दीक्षित ने इन अलंकारों में से कई नए भेदों की कल्पना की है। परिशिष्ट में अप्पय दीक्षित ने रसवतादि ७ तथा

---

१ हिंदी कुवलयानन्द—सम्पा० डा० भोलाशंकर व्यास द्वितीय संस्करण पृष्ठ ६७-६८।

२ श्लेष चित्र वक्रोक्ति इ है शब्दालंकार।
पाय कुवलयानन्द मत बरन अर्थ मझार॥

लक्षण कौमुदी, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग प्रकाश ६, छंद ३१।

प्रमाणालङ्कार १० को अलंकारकोटि में माना है। जयदेव ने रसावतादि ७ अलंकारों का मण्डन दूसरों के मत के रूप में अवश्य किया है। अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि जयदेव को इनका अलंकारत्व अभीष्ट नहीं है। जयदेव ने प्रत्यक्षादि १० प्रमाण अलंकारों को अलंकार की कोटि में नहीं माना है। इससे यह स्पष्ट है कि अप्पय दीक्षित जयदेव के अतिरिक्त अन्य अलंकारियों के भी ऋणी हैं। अप्पय दीक्षित ने खास तौर पर चार अलंकारियों के विचारों को भी अपनाया है। ये हैं—भोजराज, रुय्यक, जयदेव एवं शोभाकर।[1] राव गुलाबसिंह जी ने टीकाकार के रूप में जिनके ग्रंथों की टीकाएँ लिखी व भाषा भूषण एवं ललित ललाम ग्रंथ भी कुवलयानन्द के आधार पर ही हैं। अतः राव गुलाब सिंह जी पर कुवलयानन्द का प्रभाव स्वाभाविक ही है।

राव गुलाबसिंह जी कृत अलंकारों का वर्गीकरण इस प्रकार है—

१ शब्दालंकार—शब्दालंकारों में यमक, अनुप्रास, पुनरुक्तवदाभास इन तीन अलंकारों का विवेचन किया गया है।

१ अर्थालंकार—अर्थालंकारों में पूर्णोपमा, लुप्तोपमा, अनन्वय, उपमेयोपमा, प्रतीप, रूपक, परिणाम, उल्लेख, स्मरण, भ्रम, सन्देह, अपह्नुति, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, तुल्ययोगिता, दीपक, दीपकावृत्ति, प्रतिवस्तूपमा, दृष्टान्त, निदर्शना, व्यतिरेक, सहोक्ति, विनोक्ति, समासोक्ति, परिकर, परिकरांकुर, श्लेष, अप्रस्तुत प्रशंसा, प्रस्तुतांकुर, पर्यायोक्त, व्याजस्तुति, व्याजनिंदा, आक्षेप, विरोधाभास, विभावना, विशेषोक्ति, असंभव, असंगति, विषम, सम, विचित्र, अधिक, अल्प, अन्योन्य, विशेष, व्याघात, कारणमाला, एकावली, मालादीपक, सार, यथासंख्य, पर्याय, परिवृत्ति, परिसंख्या, विकल्प, समुच्चय, कारक दीपक, समाधि, लक्षण, प्रत्यनीक, काव्यार्थापत्ति, काव्यलिंग, अर्थान्तरन्यास, विकस्वर, प्रौढ़ोक्ति, संभावना, मिथ्याध्यवसिति, ललित, प्रहर्षण, विषादन, उल्लास, अवज्ञा, अनुज्ञा, लेश, मुद्रा, रत्नावली, तद्गुण, पूर्वरूप, अतद्गुण, अनुगुण, मिलित, सामान्य, उन्मीलित, विशेषक, गूढ़ोत्तर, चित्र, सूक्ष्म, पिहित, व्याजोक्ति, गूढ़ोक्ति, विवृतोक्ति, युक्ति, लोकोक्ति, छेकोक्ति, वक्रोक्ति, स्वभावोक्ति, भाविक, उदात्त, अत्युक्ति, निरुक्ति, प्रतिषेध, विधि, द्विविध हेतु आदि १०२ अलंकारों का विवेचन किया है।

रसवतादि वर्ग—रसवतादि अलंकारों में रसवत, प्रेय, उर्जस्वित, समाहित, भावोदय, भावसन्धि, भावशबलता इन सात अलंकारों का विवेचन किया गया है।

प्रत्यक्ष प्रमाण—प्रत्यक्ष प्रमाण वर्ग में प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान, शब्द, अर्थापत्ति, अनुपलब्धि, संभव, एतिह्य इन ८ अलंकारों की विवेचना की गई है।

संसृष्टि संकर—संसृष्टि संकर के विवेचन में संसृष्टि के तीन तथा संकर के

---

१ हिन्दी कुवलयानन्द—सम्पा० डा० भोलाशंकर व्यास, द्वितीय संस्करण पृष्ठ २६–२७।

चार भेदो का प्रतिपादन किया गया है।

अलकारा के इस वर्गीकरण और विवेचन को देखते हुये यह स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है कि अधिकाँश मे राव गुलाबसिंह जी ने कुवलयानन्द का ही अनुसरण किया है। कुवलयानन्द के विवेचन म शब्दालकारो का विवेचन न करते हुए अर्था लकारा मे ही अलकार विचार प्रारम्भ कियागया है। कुवलयानन्द के उपमा अल कार के स्थान पर पूर्णोपमा एव लुप्तोपमा इनको स्वतन्त्र अलकारा के रूप म राव गुलाबसिंह जी न प्रस्तुत किया है। कुवलयानन्द के दस प्रमाण अलकारा के स्थान पर आठ का ही विचार राव गुलाबसिंह जी ने किया है। श्रुति एव स्तुति मे भेद छोड दिए गए हैं।

राव गुलाबसिंह जी के कतिपय अलकारा की विवेचना को प्रातिनिधिक रूप म यहा प्रस्तुत किया जा रहा है।

अलकार–अलकारा की व्याख्या करते हुए राव गुलाबसिंह जी ने लिखा है रस और व्यग्य से शब्द मे जो भिन्न अर्थ होता है, उसम भूषण सदृश चमत्कार होता है उस भूषण अर्थात अलकार कहते हैं।

अलकारा के महत्त्व का प्रतिपादन कवि न इस प्रकार किया है जाति रीति लक्षण वर्ण रस सुन्दरता आदि से युक्त होने पर भी भूषणो के बिना कविता एव कामिनी दोना भी भूषित नहा होने।

कवि न चार अलकाराग माने हैं––यथा उपमेय, उपमान, धम एव वाचक शब्द। मुख, चक्षु उपमेय हैं शशि, पद्म आदि उपमान हैं समानार्थक वाचक शब्द है और एक गुणता धम है। उपमेय वर्ण्य या विषय तथा उपमान अवर्ण्य अथवा विषयी कहलाते हैं। इसे क्रमश प्रस्तुत या प्रासगित तथा अप्रस्तुत या अप्रासगिक इन नामा से भी जाना जाता है। भूषण क समान भासित होने से उस भूषण कहते हैं।

उपमा–उपमा अलकार के विवेचन मे राव गुलाबसिंह जी ने लिखा है जहा वाचक विषय, धम एव उपमान य चारो अलकाराग विद्यमान रहते हैं वहा पूर्णोपमा अलकार होता है। जहा इसम स एक दो अथवा तीन का लोप को जाता है वहाँ लुप्तोपमा अलकार है।

अनन्वय–राव गुलाबसिंह जी के मत म अनन्वय अलकार वहाँ होता है जहाँ जिसकी उसको ही उपमा दी जाती है। अर्थात उपमेय एव उपमान एक ही होते हैं।

उपमेयोपमा–उपमेय एव उपमान एक दूसरे की परस्पर उपमा बनन पर उपमेयोपमा अलकार होता है।

प्रतीप–प्रतीप अलकार का लक्षण राव गुलाबसिंह जी ने इस प्रकार दिया है––उपमेय जब उपमान बन कर व्यर्थ हो जाता है तब वहाँ प्रतीप अलकार है। विद्वाना ने प्रतीप का अर्थ उलटा इस प्रकार दिया है।

परिणाम–कवि के अनुसार उपमेय एव उपमान जब मिलकर क्रिया करते हैं तब परिणाम अलकार होता है।

उल्लेख जहाँ एक को अनेक माना जाय वहाँ उल्लेख अलकार होता है। परिणाम अलकार की कवि की व्याख्या अ य आचार्यों से कुछ भिन्नता रखती है। परिणाम की व्याख्या करते हुए कहा गया है कि उपमा जब उपमेय की क्रिया करता है तब परिणाम अलकार होता है।

दृष्टान्त–राव गुलाबसिंह जी ने दृष्टा त अलकार वहाँ माना है जहा बिब प्रतिबिंब वणन किया जाता है।

निदर्शना–जहा दो वाक्यो म एकता होती है वहाँ निदर्शना अलकार होता है।

अप्रस्तुत प्रशसा–अप्रस्तुत प्रशसा अलकार वहा माना गया है जहाँ अप्रस्तुत के विवेचन म प्रस्तुत का अथ प्रकाशित होता है। इनके तीन भेद हैं–सारूप निबधना सामान्य निबधना एव विशेष निबधना। जहा समरूप म समरूप अथ निकलता तो वहाँ सारूप्य निबधना होती है। सामा य म जहाँ विशेष अथ अभिव्यक्त हो वहाँ सामा य निब धना होती है। जहाँ विशेष म सामान्य अथ प्रतिपादित होना तो वहाँ विशेष निब धना मानी जाती है।

अर्थान्तरन्यास–अर्थान्तर यास का प्रतिपादन करते हुए राव गुलाबसिंह जी ने लिखा है सामा य जब विशेष बनाता है तब अर्थान्तरन्यास अलकार होता है।

दीपक–दीपक अलकार का लक्षण राव गुलाबसिंह जी न इस प्रकार दिया है वण्य एव अवण्य की एकता जहाँ हो वहाँ दीपक अलकार माना जाता है।

व्याजस्तुति–व्याजस्तुति अलकार वहाँ माना गया है जहा स्तुति के बहाने किसी की निंदा की गई हो जहा निंदा से स्तुति प्रतीत होती हो एव दूसरे की निंदा स्तुति से दूसरे की स्तुति निंदा प्रतिपादित की गयी हो।

व्याज नि दा–दूसर की नि दा स दूसर की नि दा की जाय वहाँ व्याजनिंदा अलकार कवि ने माना है। कवियो ने इसका एक ही भेद माना है।

ललित–ललित अलकार का लक्षण देते हुए राव गुलाबसिंह जी न लिखा है जहाँ अप्रस्तुत म प्रस्तुत का वणनत्याग कर प्रतिबिम्ब रूप म उसका वणन किया गया हो वहा ललित अलकार होता है।

रत्नावली–रत्नावली अलकार का विवेचन करते हुए कवि ने लिखा है कि प्रस्तुत पद क्रम स जो अथ निकल वहाँ रत्नावली अलकार माना जाता है।

छेकोक्ति–लोकोक्ति म जहा और अथ निकलता हो वहाँ कवि ने छेकोक्ति अलकार माना है।

विभावना–विभावना अलकार वहा होता है जहा कारण बिना काय सम्पन्न होता है। विद्वानो ने थोड कारण स काय होने पर भी विभावना का एक अन्य भेद

माना है।

काव्यलिंग—राव गुलाबसिंह जी ने काव्यलिंग अलंकार का प्रतिपादन करते हुए लिखा है समर्थनीय का जहाँ समर्थन होता है वहाँ काव्यलिंग अलंकार होता है। यद्यपि स्वमत के रूप में कवि ने इस मत को उद्घृत किया है। पूर्ववर्ती आचार्यों ने भी इसी रूप में काव्यलिंग का प्रतिपादन किया है। अतः यह स्वतंत्र मत नहीं माना जा सकता है।

उल्लास—राव गुलाबसिंह जी ने उल्लास अलंकार वहाँ माना है जहाँ एक के गुण दोष हो जाते है। कवियों ने उल्लास के चार भेद माने है। इस प्रकार का संकेत भी उन्होंने दिया है।

परिकरांकुर—कवि ने आशय युक्त विशेष्य पद के प्रयोग में परिकरांकुर अलंकार माना है।

श्लेष—जहाँ एक पद से अनेक अर्थ अभिव्यक्त होते है वहाँ श्लेष अलंकार है।

विशेषोक्ति—जहाँ हेतु अधिक होते हुए भी कार्य कुछ भी न हो वहाँ कवि विशेषोक्ति अलंकार मानते हैं।

असम्भव—बिना संभावना के जहाँ कार्य हो वहाँ असंभव अलंकार होता है।

व्याघात—जहाँ हित कर वस्तु में अहित का वर्णन हो वहाँ व्याघात अलंकार है।

रसवत—कवि के अनुसार रसवत अलंकार वहाँ होता है जहाँ एक रस दूसरे रस का अंग हो अथवा स्थायी भाव या व्यभिचारी भाव अंग हो तो रसवत अलंकार होता है।

प्रत्यक्ष—प्रत्यक्ष अलंकार का लक्षण देते हुए राव गुलाबसिंह जी ने लिखा है जहाँ इन्द्रिय और मन अपना विषय प्राप्त कर लेते हैं, ज्ञान कर लेते हैं उसे प्रत्यक्ष अलंकार कहा जाता है।

संसृष्टि शंकर—संसृष्टि शंकर की विवेचना करते हुए कवि ने लिखा है जहाँ शब्दालंकार एवं अर्थालंकार आपस में मिल जाते हैं वहाँ संसृष्टि शंकर यह युगल नाम होता है।

अलंकारों के विवेचन में कवि ने अधिकांशतः परम्परागत मतों का ही समर्थन किया है। उन्होंने रूप में स्वमत प्रतिपादन का दावा किया अवश्य है किन्तु जो मत उद्धृत किए गए हैं वे परम्परागत ही हैं। कहीं स्वतन्त्र मत देने का प्रयत्न अवश्य किया है किन्तु परंपरा से स्वतन्त्र मत प्रतिपादन क्यों किया इसका कोई तर्क प्रस्तुत नहीं किया गया है।

छंद विचार—शृंगार रस के विभिन्न पक्ष एवं अलंकार के पश्चात् राव गुलाबसिंह जी के ग्रंथों में विषय की दृष्टि से छन्द विचार का क्रम आता है। अतः उस

विवेचन यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

संस्कृत काव्यशास्त्र के आचार्यों ने काव्यसिद्धांत के रूप मे छन्द का विचार नहीं किया था। काव्य के अन्तगत वे गद्य उव पद्य दोना का समावेश करते थ। इसी से सभवत काव्यांग के रूप छन्द का विचार किया गया हो। परवर्ती काल म छ द विचार इसम साविष्ट हो चुका है। हिन्दी रीति आचार्य कवियो मे एम भी कवि हो चुके है जिन्होन अपने ग्रथो मे छन्द निरूपण किया है। विषय विवेचन की दष्टि से इन कवियो म ऐसा कोई कवि नही है जिसका प्रयास किसी प्रकार से हीन अथवा असफल कहा जा सके। प्रत्यक न छन्द का सामान्य ज्ञान प्राप्त करने के इच्छुक पाठक की सीमाओ को दष्टि मे रखते हुए सुबोधता एव सुस्पष्टता का ही ध्यान नही रखा छ द शास्त्र के नियमो का पूणत पालन कर विषय की प्राविधिकता का विशेष ध्यान रखा है। प्राकृत पगलम एव वत्त रत्नाकर स प्रभावित होत हुए भी विवचन की व्यवस्था और शली सबकी अपना रही। इन कवियो द्वारा प्रसिद्ध छन्दो के निरूपण के अतिरिक्त नवीन छ दो का आविष्कार किया जाना हिन्दी छन्द शास्त्र के लिए विशेष योगदान रहा है।

राव गुलाबसिंह जी द्वारा प्रस्तुत किया गया छ द विचार इसी शृखला की अग्रि कडी कहलाएगी। । अपने विषय विवचन म प्रारम्भ म उ होने उतदविषयक शास्त्रीय सामग्री को प्रस्तुत किया है जिसके अन्तगत मात्रा सख्या, मात्रा प्रस्तार वण प्रस्तार नष्ट वणन वण नष्ट, उद्दिष्टवणन, मात्रा उद्दिष्ट लक्षण वण उद्दिष्ट मेरु वणन मात्रा मेरु लक्षण वण मरु पताका, मात्रा पताका वण पताका मकटी, मात्रामकटी वण मकटी, गण वणत दग्धाक्षर छन्द लक्षण आदि। कवि न यहाँ जो लक्षण विषयक विवेचन किया है उसक कतिपय उदाहरण प्रातिनिधिक रूप म देना वाछनीय प्रतीत होता है—

पताका—पताका की व्याख्या दते हुए राव गुलाबसिंह जी ने प्रतिपादन किया है कि मेरु म जिस रीति से गणना सयुक्त हो जाय उसे कवि कोविद पताका कहते हैं।

मकटी—वत्त वेद से लघु गुरु वर्णों की मात्राओ की गिनती जिससे ज्ञात हो जाय वह मकक्टी है।

गुरु लघुनाम—लघु गुरु के नामो का विवेचन करते हुए कवि न लिखा है, तीन गुरु 'म' गण है। तीन लघु 'न' गण है। आदि गुरु 'भ' गण है तो आदि लघु "य' गण है। 'ज' गण मध्य गुरु तथा मध्य लघु का 'र' गण है। अ त गुरु का "स' गण है। 'त' गण अत्य गुरु है। नरवाणी के छन्दो म इनका विचार होता है।

इन विचारो के पश्चात मात्रा छन्द एव वण छन्द द्वारो विभागो म निम्न

छन्दों की लक्षण उदाहरण सहित विवेचना की गई है—

मात्रा वृत्त–हाकलिया चौपायी, रूप चौपायी, पद्धरी अरिल्ल, बरव, चंद्रायण, प्लवगम निसानी, काव्य, रोला दोहा, सोरठा, कुंडलियाँ, विष्णुपद, हरिपद, ललित पद उल्लास छप्पय अभिराम, छप्पय, मरहठा, चौपैया चोवाल मात्रिक सवया, त्रिभंगी, झूलना, उदधत, आदि ।

वर्णवृत्त–विद्युन्माला, तोमर, दोधक, इन्द्रवज्रा उपेंद्रवज्रा, स्वागता, भुजंग, प्रयात, लक्ष्मीधर तोटक, सारंग मोतीयदाम, वंशस्थ इन्द्रवंशा तरलनयन, तारा, कन्द, वसन्ततिलका भ्रमरावली, चामर मालिनी, नाराच, नील, चचल, शिखरीणी, चवरी, गीतिका सवैया–मालिनी, मत्त गयंद, चित्रपद चकोर, मल्लिका, अलसा, किरीट, माधवी, दुर्मिलिका मंजरी लक्ष्मीधर भुजंग प्रयात, आधार, कमला, सुधा, ललिता मनोहर कवित्त रूपघनाक्षरी, आदि—

राव गुलाबसिंह जी ने इन छंदों का विवचन किस प्रकार किया है इसके कुछ उदाहरण प्रतिनिधिक रूप से देखना अप्रस्तुत न होगा ।

मात्रिक छंद

चंद्रायण–चंद्रायण का लक्षण कवि इस प्रकार दिया है प्रत्येक चरण में २१ कलाएँ चार चरण चंद्रायण छंद है ।

निसानी–निसानी छंद प्रत्येक चरण में तेइस मात्राएं होती है । तेरह मात्राओं पर विश्राम रहता है ।

काव्य–काव्य छन्द में आदि अंत में छ छ कलाए मध्य में चार तीन कलाएँ ज गण एवं सब लघु इस प्रकार की व्यवस्था होती है ।

रोला–रोला के दोनों चरणों मे चौबीस मात्राएँ होती है । ग्यारह मात्राओं पर यति और अंत में लघु गुरु यह नियम होता है ।

कुंडलिया–दोहा छन्द के आगे रोला छन्द के चार दल हों और जहां पद पर यमक हो वहाँ निर्धारपूर्वक कुंडलियाँ छन्द होता है ।

कवित्त–कवित्त छंद चार चरणों एवं इक्कीस वर्णों का यह छंद है । यति आठ आठ, वा आठ सात इन स्थानों पर विश्राम है । मनहरण एवं घनाक्षरी य उसके भेद है ।

झूलना–झूलना छंद मे पहले दस दस, और बाद में दस सात इस क्रम में कुल सतीस मात्राओं का यह छन्द है ।

वर्णवृत्त

विद्युन्माला–विद्युन्माला वृत्त में प्रत्येक चरण में आठ गुरु की योजना होती है ।

तोमर–जिस छन्द में एक सगण तथा दो ज गण होते हैं वह तोमर वृत्त है ।

भुजंग प्रयात–जिस छन्द में चार 'य" गण होते हैं वह भुजंग प्रयात वृत्त है

लक्ष्मीधर–जिस वृत्त में चार र गण होते हैं वह लक्ष्मीधर वृत्त है।[1]

छन्द विवेचन में कवि ने परम्परा से आए हुए विचारों का ही अनुसरण किया है। वर्गीकरण में भी मात्रा वृत्त एवं वर्णवृत्त इस विभाजन को स्वीकार किया है।

काव्यलक्षण –काव्य के लक्षणों का विचार राव गुलाबसिंह जी ने अपने 'काव्य सिन्धु' तथा 'लक्षण कौमुदी' ग्रंथों में किया है। इस विवेचन में पूर्वाचार्यों के कुछ विभिन्न मत उन्होंने प्रस्तुत किए हैं। ये मत निम्नानुसार हैं—

१ प्रथम मत–आचार्य मम्मट का काव्य लक्षण विषयक मत 'तददोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि।'[2] प्रसिद्ध ही है। इसी मत को रावगुलाबसिंह जी ने इस प्रकार दिया है— 'दोष रहित गुण सहित और अलंकार संयुक्त शब्दार्थ को काव्य कहते हैं।'[3]

२ द्वितीय मत–इस मत के अनुसार काव्य लक्षण देते हुए राव गुलाबसिंह जी ने प्रतिपादित किया है कि काव्य उस वाक्य को कहते हैं जो रस एवं भूषणों से युक्त हो एवं अमित सुखकारी होता हो।[4]

३ तृतीय मत–इस तीसरे मत के अनुसार शब्दार्थ की वह श्रेष्ठ रचना काव्य कहलाती है जो गुणों तथा अलंकारों से युक्त, सरल रीति एवं रस सहित होकर कवि कीर्ति को बढ़ाती है।[5]

---

१ चारि य गन जामे परे सोय भुजंगप्रयात।
चारि र गन को होत है लक्ष्मीधर विख्यात॥
काव्य सिन्धु हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग तरंग १२, छंद १९९

२ काव्य प्रकाश–मम्मट १।४।१। सपा डा० नगेन्द्र प्रथम संस्करण

३ दोष रहित गुण सहित अरु अलंकार जुत होय।
शब्द अर्थ अस काव्य है भाषत सब कवि लोय।
काव्य सिन्धु हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग तरंग ५, छंद १
लक्षण कौमुदी हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग प्रकाश ४ छंद १

४ रस भूषण जुत वाक्य जो सुनत अमित सुखकार।
ताको भाषत काव्य है कविजन सहित विचार।
काव्य सिन्धु हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, तरंग ५, छंद २
लक्षण कौमुदी हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग प्रकाश ४, छंद २

५ रचना वर शब्दार्थ की गुन भूषण जुत होय।
सरल रीति रस सहित हो कर कीर्ति सरसाय।
काव्य सिन्धु हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, तरंग ५ छंद ३
लक्षण कौमुदी ,, प्रकाश ४ छंद ३

चतुर्थ मत–इस मत में कवि ने उस रचना को काव्य कहा है— जो अलङ्कारों से अलङ्कृत गुणों से युक्त, दोष विरहित एवं रस संयुक्त होती है। इस प्रकार की काव्य रचना के द्वारा कवि कीर्ति प्राप्त करते हैं।[1] यह मत भोजराज के मत से प्रभावित है।[2]

पञ्चम मत–पञ्चम मत के प्रतिपादन में कवि ने कहा है, 'जिस रचना में अद्भुत वाक्य से अद्भुत अर्थ प्रकट होता है वह लोकोत्तर रचना कविता नाम धारण करने की योग्यता रखती है।'[3] इस मत के प्रतिपादन में कवि स्पष्ट कुन्तक के मत से प्रभावित प्रतीत होते हैं।[4]

षष्ठ मत–इस मत के अनुसार 'रस की सिद्धि, गुणों का साधन करते हुए जो हितकारी कवित्त निर्माण होता है उसे कोई पदावली कहता है तो कोई काव्य कहता है।'[5]

काव्य लक्षणों के विषय में राव गुलाब सिंह द्वारा प्रतिपादित मतों में मम्मट भोजराज आदि पूर्वाचार्यों के प्रतिपादन का प्रभाव स्पष्ट प्रतीत होता है। यद्यपि स्वमत के रूप में कवि ने किसी मत में अपने नाम का अथवा अन्य संकेत नहीं

---

१ भूषित है भूषन करि गुन जुत दोष विहीन।
रस संजुत करि काव्य लहै कीरति रीति प्रवीन।
काव्य सिंधु हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, तरंग ५, छन्द ४
लक्षण कौमुदी , " , प्रकाश ४ छन्द ४

२ निर्दोषं गुणवत्काव्यमलङ्कारैरलङ्कृतम्।
रसान्वितं कविः कुर्वन् कीर्तिं प्रीतिं च विन्दति।
सरस्वती कण्ठाभरण भोजराज १ २। निर्णय सागर, मुम्बई–१९३४

३ जिहिठां अद्भुत वाक्य को अद्भुतार्थ प्रगटाय।
है रचना लोकोत्तर सु कविता नाम कहाय॥
काव्य सिंधु हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग तरंग ५ छन्द ५
लक्षण कौमुदी , प्रकाश ४ छन्द संख्या नहीं।

४ लोकोत्तर चमत्कारकारि वैचित्र्य सिद्धये।
काव्यस्यायमलङ्कारः कोऽप्यपूर्वो विधीयते।
वक्रोक्ति जीवित कुन्तक १ २ श्री राधेश्याम मिश्र, चौखम्बा सन १९६७ ई०

५ रस की सिद्धि रु गुनन करि साधन सुहित कवित्त।
कोउ कहत पदावली, काव्य कहावत मित्त।
काव्य सिंधु हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, तरंग ५, छन्द ६
लक्षण कौमुदी ,, , प्रकाश ८ छन्द ५

दिया है। अंतिम मत कवि का मत होने की सम्भावना है क्योंकि विभिन्न मतों के पश्चात अपना मत देने की परम्परा रही है। यह भी सम्भव है कि संकोचवश ही कवि ने अपने नाम का उल्लेख नहीं किया हो।

इन सभी मतों को देखने से यह प्रतीत होता है कि कवि की दृष्टि समन्वयात्मक रही है। रस अलंकार रीति आदि विभिन्न काव्यमतों का सम्यक् रूप कवि ने यहाँ प्रस्तुत किया है। काव्यशास्त्र के अपने छात्रों के हित में सम्भवतः कवि ने एक अनाग्रही वृत्ति से विभिन्न मत यहाँ प्रस्तुत किये हैं।

काव्य प्रयोजन—काव्य प्रयोजन का विवेचन प्रस्तुत करते हुए राव गुलाबसिंह जी ने पूर्ववर्ती संस्कृत आचार्य विष्णु पुराण एवं अग्निपुराण आदि का आधार ग्रहण किया है। संस्कृत सूत्रों के आधार पर छंदोबद्ध रूप में विचार अभिव्यक्त किए हैं। काव्य की रचना क्यों की जाती है इसके स्पष्टीकरण में कवि ने कहा है 'यश एवं अर्थ प्राप्ति व्यवहार ज्ञान वनिता सदृश उपदेश अशुभ की हानि तथा अत्यानन्द की प्राप्ति के लिए कविता की जाती है।'[1] यह सूत्र स्पष्टतः मम्मटानुसारी है।[2] इसी विवेचन में दूसरे मत को कवि ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है—काव्य का प्रभाव ज्ञान प्रभाव के सदृश पवित्र होता है। पूजा लाभ कीर्ति की प्राप्ति, अहित का नाश हित की उपलब्धि धर्मार्थ काम मोक्ष इन चतुर्वर्ग पुरुषार्थों के सम्पादन के हेतु काव्य की रचना की जाती है।'[3] इस कृत मत के प्रतिपादन में भामह का प्रभाव प्रतीत होता है।[4] तृतीय मत को प्रकट करते हुए कवि ने कहा है—काव्य से कवि की श्रेष्ठता गुरुता प्रमाणिकता होती है। उसे कीर्ति एवं धन का लाभ होता है। श्रोताओं को

---

१ जस रु अर्थ व्यवहार वित्त वनिता सम उपदेस।
अशुभ हानि आनंद अति कविता करत असेष॥
लक्षण कौमुदी हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग प्रकाश ४ छंद ६

२ काव्यं यशसेऽर्थकृते व्यवहारविदे शिवेतरक्षतये।
सद्यः परनिर्वृतये कान्तासम्मिततयोपदेशयुजे।
—काव्य प्रकाश, मम्मट, १।२ सपा डा० नगेन्द्र प्रथम संस्करण

३ पूजालाभ रु ख्याति पुनि अहित हानि हित आव।
चतुर्वर्ण्य रु ज्ञान सम पावन काव्य प्रभाव।
लक्षण कौमुदी हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग प्रकाश ४ छंद ७

४ धर्मार्थ काम मोक्षेषु वैचक्षण्यं कलासु च।
करोति कीर्तिं प्रीतिं च साधु काव्य निषेवणम्॥
—काव्यालंकार भामह—१।२

को भी सुख एवं आनंद की प्राप्ति होती है।[1]

अग्नि पुराण एवं विष्णु पुराण के आधार पर राव गुलाबसिंह जी ने काव्य प्रयोजन का विवेचन करते हुए लिखा है—"दुनिया में—मनुष्य जन्म दुर्लभ है। विद्या उससे भी दुर्लभ है। कविता की दुर्लभता तो उससे भी अधिक है। शक्ति अर्थात प्रतिभा सबसे अधिक दुर्लभ है।[2] काव्य वचन वर्ण एवं गीत ये सभी शब्दरूपधारी विष्णु के सुखदायी अंग है।[3]

काव्यकारण—काव्य कारण का विचार करते हुए कवि राव गुलाबसिंह जी ने शक्ति व्युत्पत्ति और अभ्यास इन तीनों को काव्य कारण माना है।[4] तात्पर्य यह कि काव्य रचना के लिए शक्ति अर्थात प्रतिभा व्युत्पत्ति अर्थात काव्यशास्त्रीय ज्ञान एवं अभ्यास अर्थात श्रेष्ठ कवियों की रचनाओं का अध्ययन काव्य रचना के कारण यहाँ भी कवि मम्मट से स्पष्ट प्रभावित हैं।[5]

---

१ निज गुरुता श्रोतान सुख तुरत काव्य तें होय।
यहूस्यो कीर्ति धनादि हू निश्चय पावे लोय ॥
लक्षण कौमुदी, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, ४ प्रकाश छंद संख्या नहीं।

२ अग्नि पुराण—नरत्वं दुर्लभो लोके विद्या तत्र सुदुर्लभा।
कवित्वं दुर्लभं तत्र शक्तिस्तत्र सुदुर्लभम ॥
नरता दुर्लभ जात में विद्या दुर्लभ ताहु।
कविता दुर्लभ ताहु में दुर्लभ शक्तिरताहु ॥
काव्य सिंधु हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, तरंग ५ छंद ११

३ विष्णु पुराण—काव्यालापश्च ये केचित गीतिका निखिला निचत।
शब्दमूर्ति धरस्यते विष्णयोरसा महात्मना।
काव्य वचन वर्ण अरु गीतक अहि तमाम।
शब्दमूर्ति धर विष्णु के है सुअंश सुखधाम ॥
काव्य सिंधु हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, तरंग ५ छन्द १२

४ शक्ति और व्युत्पत्ति पुनि अभ्यास हुए तीन।
मिलिकरि कारण काव्य को ये कहि होत प्रवीन ॥
लक्षण कौमुदी, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्रकाश ४ छंद अङ्क नहीं।

५ शक्तिर्निपुणता लोकशास्त्रकाव्याद्यवेक्षणात्।
काव्यज्ञ शिक्षयाभ्यास इति हेतुस्तदुद्भवे ॥
—काव्यप्रकाश—मम्मट। १ ३ सम्पादक डॉ० नगेन्द्र प्रथम संस्करण

काव्य भेद—काव्य के उत्तम मध्यम एवं अधम भेद मानकर उनके लक्षणों का विवेचन कवि ने किया है। राव गुलाबसिंह जी के अनुसार उत्तम काव्य वह है जहाँ वाच्य से व्यंग्य का चमत्कार अधिक होता है। इस काव्य को ध्वनि काव्य भी कहा गया है।[1] जहा वाच्य से व्यंग्य का चमत्कार अधिक नहीं होता-बराबर का होता है वह मध्यम काव्य है।[2] अधम काव्य कवि के अनुसार वह रचना है जो व्यंग्य रहित है। जहाँ शब्दचित्र वर्णित है वाच्य चित्र ही सरस बनता है।[3]

काव्य वर्ण्य विषय—काव्य के वर्ण्य विषयों का विवेचन राव गुलाबसिंह जी के काव्य नियम एवं लक्षण कौमुदी ग्रंथ मे प्राप्त होता है। ग्रन्थ भूमिका में कवि ने कहा है काव्य वर्ण्य का विचार कवि प्रिया मे किया गया है किन्तु वह भी कठिन, न्यून आदि दोषों से युक्त रहा है अतः काव्य नियम ग्रन्थ में कवि ने उसे सरल ढंग से प्रस्तुत किया है।[4] इससे यह स्पष्ट है कि काव्य नियम की रचना करते समय आचार्य केशवदास की कविप्रिया यह ग्रंथ कवि के सामने था। कवि शिक्षा के हेतु काव्य वर्ण्य के विवेचन की आवश्यकता एवं महत्व को समझते हुए कवि ने काव्य वर्ण्य विषयों का विवेचन किया है। कवि के अनुसार काव्य वर्ण्य विषय इस प्रकार हैं—(१) आशीर्वाद, (२) दान, (३) प्रताप (४) यश, (५) पुरुष, (६) नारी, (७) भूमिपाल, (८) रानी (९) राजकुमार (१०) प्रकृति (११) मन्त्री (१२) सेनापति, (१३) देश, (१४) नगर, (१५) ग्राम, (१६) सरोवर (१७) सागर,

---

१ जहाँ वाच्य से व्यंग्य को चमत्कार अति होय।
सोई उत्तम काव्य है ध्वनि हु कहावै सोय॥
—काव्यसिन्धु, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, तरंग ५, छंद २३
—लक्षण कौमुदी हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्रकाश ४, छंद १८।

२ कवि गुलाब भाषत विबुध मध्यम कविता ताहि।
काव्यसिंधु हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, तरङ्ग ५, छंद २५।
लक्षण कौमुदी, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्रकाश ४ छंद १९

३ शब्दचित्र जह होय अरु वाच्य चित्र सरसाय।
व्यंग्य रहित तिहिं कहै अधम काव्य कविराय॥
काव्यसिन्धु हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग तरङ्ग ५ छंद २७।
लक्षण कौमुदी हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, प्रकाश ४, छंद २०।

४ कविप्रिया मे है तऊ कठिन न्यून जस दूर।
सरल सकल धर यात लक्षण पूर॥
काव्य नियम, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छन्द ५।

(१८) तरंगिणी, (१९) वन, (२०) उद्यान, (२१) प्रयाण, (२२) गढगिरी, (२३) रण, (२४) सभा, (२५) घोडा (२६) हाथी (२७) ब्याह (२८) स्वयंवर (२९) मगया, (३०) मद्यपान, (३१) वारिकेली, (३२) पुष्पावच (३३) रवि, ((३४) नगि, (३५) षडऋतु (३६) षड (३७) आश्रम (३८) काल, (३९) महोत्सव (४०) वय संधि, (४१) अभिसार, (४२) द्वादश मासों के उत्सव, (४३) सालगिरह (४४) नित्य नव आदि।[1]

काव्य वर्ण्य विषय विवेचन के कतिपय उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैं—

प्रताप नियम—वर्ण्य विषय के रूप में प्रताप का विवेचन करते हुए कवि ने लिखा है कि सूजन लोग अग्नि, वज्र आदि के समान प्रताप की गणना करते हैं। यह समान रूप से दुष्ट एवं शत्रुओं को पीडा देने वाला तथा मित्रों की पीडा दूर करने वाला होता है।[2]

नृप नियम—नृप नियम की चर्चा में राज्य में अभिलषित गुणों की एक विस्तृत सूची यहाँ दी है। राजा कीर्तिवान प्रतापशाली, विवेकशील, नम्र, आज्ञा देने वाला शत्रु का विनाशकारी, दुष्टों को शांत करने वाला हो। प्रजा पालन में तत्पर उद्यमशील-शास्त्राभ्यासी, वयवान उदार, क्षमशील युद्ध में भी क्षमा प्रदान

---

१ आनिप दान प्रताप जस पुरुष रु नारि सुढार।
भूमिपाल रानी अवर राजकुमार उदार॥
प्रकृति मंत्र सनाधिपरु देश नगर प्रिय जोय।
ग्राम सरोवर सरित पति अरु तरंगिणी होय॥
वन उपान प्रयाण गढ गिरि रन सभा सुजान।
हय गय ब्याह स्वयंवरु रतमृगया मदपान॥
वारिकलि पुष्पावचय रवि शशि षटऋतु सोय।
तरु आश्रम विश्लेपलम काल महोत्सव होय॥
वयस्संधि अभिसार अरु उत्सव द्वादश माह।
साल गिरह शिखनख प्रकृति वर्णन कहत कविनाह॥
काव्य नियम, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छन्द १ से ५।
लक्षण कौमुदी हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्रकाश १, छन्द १ से ५।

२ अग्निमान वज्रादि सम भनत प्रताप सुजान।
दल अरितापक तापहर सज्जन मित्र समान।
काव्य नियम, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छन्द ३९।

रने वाला गम्भीर शूर वीर हो।[1]

रस विचार–राव गुलाबसिंह जी के लपण कौमुदी एव का य सिंधु ग्रथो मे रस विषयक विचार प्रस्तुत किए हैं। रस विचार मे अ तगत क्रम स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव सचारी भाव एव रस आदि को यहा प्रस्तुत किया जा रहा है।

स्थायी भाव–कवि के अनुसार स्थायी भाव वह है जिससे विरोधी एव अविरोधी भाव किसी प्रकार का दुराव नही रखते। स्थायी भाव रस अकुर का मूल होता है।[2] नव रस के लिए नौ स्थायी भाव माने है। हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्भुत शात एव शृगार के लिए क्रमश हास शोक, क्रोध उत्साह भय ग्लानि विस्मय निर्वेद तथा रति स्थायी भाव कह गए है।[3]

विभाव–विभाव के विवचन म राव गुलाबसिंह जी ने कहा है कि जो विशेष रूप मे रस का निर्माण करता है वह विभाव है। विभाव के उभय रूप आलम्बन तथा उद्दीपन उन्होंने मान्य किए है।

आलम्बन विभाव–आलम्बन विभाव उसे कहा गया है जिसके आश्रय म रस रहता है।

उद्दीपन विभाव–उद्दीपन उस विभाव को कहा गया है जो रस को प्रकाशित

---

१ कीर्ति प्रताप विवेक नय आना शत्रु विनास।
दुष्ट नाति प्रजा पालना उद्यम शास्त्राभ्यास ॥
धीरज धम उदारता सगर छमा प्रमान।
जुत सूरत्व गम्भीरता बरनत नृपहि सुजान ॥
काव्य नियम, हस्तलिखित, हि दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द ७० ७१।

२ अविरोधी सविरोधी जिहि भाव न धरैं दुराव।
रस अकुर को मूल तिहि भाषत स्थायी भाव ॥
काव्य सिंधु, हस्तलिखित, हि दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग तरग ३, छ द ३।

३ हासी बढिकर हास्य ह्व सोक सुकरुण होय।
क्रोध रौद्र रस होत है वीर उछाह बिजोइ ॥
भय बढि होत भयानकहि बीभत्स सु बढ़ि ग्लानि।
विस्मय पुनि निर्वेद य नव स्थायी पहिचानि ॥
काव्य सिंधु, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग तरङ्ग ३।
लपण कौमुदी ,, , तृतीय प्रकाश छन्द १२ १३।
चित को चाही वस्तु म ह्व मन अति हो लीन।
प्रम सहित तिहि कहत है स्थायी रति पीन ॥
काव्य सिंधु, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग तरग ३, छन्द ५।

करता है ।[1]

अनुभाव-भाव और अनुभाव की एक साथ चर्चा कर कवि ने दोनो के अन्तर को स्पष्ट किया है। कवि के अनुसार भाव उसी को कहा जाता है जो मन का रसानुकूल परिवर्तन करने म समथ होना है, और अनुभाव उसे कहते हैं जो भावो को प्रकाशित करता है। य अनुभाव प्रमुखत चार कहे गए हैं–कायिक, मानसिक, आहाय तथा सात्विक ।[2] भुज क्षेपादि मे कायिक अनुभाव है मोहादि की गणना मानसिक अनुभाव म की जाती है। आहाय का विचार केवल नाटय ही सभव है। सात्विक अनुभाव नान रूप में शरीर अगा म विद्यमान रहता है।[3] सात्विक अनुभाव शरीर म सत्व रूप म विद्यमान रहते हैं समयानुसार शरीर पर प्रगट होते हैं। सात्विक अनुभाव नो हैं यथा–स्तम्भ, स्वेद रोमाच, स्वर भग ववण्य, आँसू प्रलय जभा ।

---

१ जाके आश्रित रस रहे सो आलबन जानि ।
रस को कर प्रकास सो उद्दीपन उर आनि ॥
लक्षण कौमुदी हस्तलिखित हिन्दी साहित्य स० प्रयाग प्रकाश छद १८

२ रस वस मन को बदलिगो ताहि बखानत भाव ।
भाव जनावन हार का कहत सुकवि अनुभाव ॥
लक्षण कौमदी, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, ततीय प्रकाश छन्द १।
रसवत मनको बदलिगो ताहि कहावत भाव ।
भाव जनावत हार का कहत सुकवि अनुभाव ॥
का य सिंधु हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, ततीय तरग छद १
चारि भाँति अनुभाव है कायक मानस साय ।
आहाय अरु सात्विक कहत कवि गुलाब बुधगोय ।
लक्षण कौमुदी हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, ततीय प्रकाश, छद १५

३ भुज क्षेपादि कायक द मानस है मोहादि ।
आहाय जु नाटय म नान चवय भुजत्वादि ॥
लक्षण कौमुदी हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग ततीय प्रकाश, छन्द १६

४ सत्व कहावन जियत तनु तात उपज आय ।
ताका सात्विक कहत है कवि कोविद मनभाय ॥

शेष अगले पष्ठ पर

इस प्रकार हैं–निर्वेद मद, ग्लानि, श्रम, चिंता त्रास, दैन्य, असूया, स्मृति, धृति, व्रीड़ा जड़ता, हर्ष उग्रता चपलता, आलस्य, उन्माद, औत्सुक्य, आवेग मति, निद्रा सुप्ति, विषाद अवहित्था बोध, मरण मोह, वितर्क, अमर्ष, व्याधि, अपस्मार, गर्व, छल।[1]

रस-राव गुलाबसिंह जी के अनुसार विभावादि से पुष्ट होकर स्थायी भाव जब दृढ़ हो जाते हैं, तब वे रस में परिणत हो जाते हैं और रस की संज्ञा प्राप्त करते हैं। अपने कथन को स्पष्ट करने के लिए कवि ने जल के हिम में परिणत होने की प्रक्रिया की उपमा रस प्रक्रिया को दी है।[2] इन रसों की संख्या नौ मानी गई है। जिनके नाम हैं–शृंगार हास्य करुण, रौद्र वीर, भय, वीभत्स अद्भुत एवं शांत[3]

कवि ने यद्यपि सभी रसों के नामों का उल्लेख किया है फिर भी समस्त विवेचन प्रधानतया शृंगार रस का ही किया गया है। अतएव मैं नाम मात्र केवल हास्य रस की चर्चा की गई है।

शृंगार–शृंगार रस का विचार करते हुए कवि ने कहा है' काम का उद्भव शृंग कहलाता है। उसके आगमन की दशा में शृंगार रस माना जाता है।'[4] शृंगार रस के संयोग एवं विप्रलंभ इन दोनों भेदों की चर्चा कवि ने की है। जहाँ प्रिया एवं प्रियतम एक दूसरे में अनुरक्त हैं आनंद भाव में भरे हैं दर्शन तथा स्पर्श आदि से एक दूसरे को आनंद पहुँचाते हैं वहाँ संयोग शृंगार है।[5] जहाँ दंपति

---

१ काव्य सिन्धु हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन छंद ३८, ३९।

२ इत्यादिक स्थायी जु है दृढ़ता पावै साय।
पावत है रस नाम निमि जल जमि पालो होय।
काव्य सिन्धु हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग तरंग ३, छंद ६
लक्षण कौमुदी , ,, कौमुदी ३, छंद ६

३ रस शृंगार हास्य पुनि करुना रौद्र रु बीर।
भय बिभत्स रु अद्भुत शांति कहत नवधीर॥
काव्य सिन्धु हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, तरंग ३, छंद ७
लक्षण कौमुदी , कौमुदी ३ छंद ७

४ उद्भव है काम को शृंग कहत तिहिं नाम।
और तासु आगम करन है शृंगार ललाम॥
काव्य सिन्धु हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, तरंग ३ छंद ९

५ अनुरागी आनंद जुत प्यारी पीतम दोय।
दरसन स्परस आदि को सुख संयोग तब होय॥
लक्षण कौमुदी हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, कौमुदी ३, छंद १०

अनुराग म परिपूण होन पर भी मिलन नहीं होता वहाँ विप्रलम्भ शृगार कहलाता है।[1] विप्रलभ के पाँच भेद हैं–पूवानुराग मान, प्रवास, करुण, एव शाप[2] इनके लक्षण भी कवि ने दिए है। विप्रलभ की अभिलाष, चिंता, स्मरण, गुण कथन, उद्वेग जडता व्याधि प्रलाप उ माद एव मरण आदि दश दशाओं का विवेचन किया गया है।[3] उदाहरण स्वरूप प्रलाप एव उ माद के लक्षण प्रस्तुत है–'नायिका का चित्त प्रिय से लगा होता है भ्रमण करता है। इस दशा म उसके अर्थहीन वचन प्रलाप दशा कहलाती है। जब नायिका जमीन पर इस प्रकार लेट जाती है कि वह सजीव है कि निर्जीव ऐसी आशका उठे तो वह दशा उ माद की दशा है।[4]

हास्य रस–हास्य रस का विवेचन करते हुए कवि न कहा है कि रूप, वचनादि की विकृति देखकर हँसी उत्पन्न होन से हास्य रस का निमाण होता है।[5]

रीति विचार–रीति के महत्व एव धारणा के विषय म भारतीय काव्यशास्त्र म विभिन्न मतभेद पाए जाते हैं। आचाय वामन रीतिरात्माकाव्यस्य कह कर जहाँ एक ओर काव्य की आत्मा के रूप म उसका महत्व प्रतिपादित करते हैं वहा दूसरी ओर उसे 'विशिष्टा पद रचना रीति।' कह कर उसके महत्व मे परिवतन कर देते हैं। आचाय विश्वनाथ ने रीति को, उपकर्त्री रसादीना। कहकर उस रस का सहायक माना है। रीतियों के विभिन्न नामों का प्रयोग इन पूवाचार्यों द्वारा किया गया है। बाण ने साहित्यिक शैली के रूप म उत्तरी पश्चिमी दक्षिणी एव पूर्वी

---

१ परिपूरन अनुराग हू दपति मिलन न होय।
विप्रलम्भ शृगार सो पाँच भाँति जिय जोय।
काव्य सि धु, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, तरग ३ छन्द ९८

२ सुपूवानुरागहि लखहु मान, प्रवास विचार।
करुणात्मक अरु शाप सहित कहत सुकवि निर्धार॥
काव्य सि धु हस्तलिखित हि दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, तरग ३, छन्द ९९

३ अभिलाष रु चिंता स्मरन गुन कथन रु उद्वेग।
जडता व्याधि प्रलाप उन्माद मरन जुत बेग॥
काव्य सि धु हस्तलिखित हि दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, तरग ३, छद १०८

४ प्रिय प चित्त का भ्रमण सो अनरथ वचन प्रलाप।
भूविं स्वजीव अजीव की सो उ माद सथाप॥
लक्षण कौमुदी हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, प्रकाश ३, छन्द ६४

५ विकति रूप वचनादि लख हस हास्य रसधारि।
छाया सग दौरत हरिहो देखि हँसी व्रजनारि॥
काव्यसिन्धु हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, तरग ३, छद १४

इन नामों का प्रयोग किया है। भामह एवं दंडी ने वत्स एवं गौडीय मार्ग इस रूप में रीति के ही नामों का उल्लेख किया है। वामन इन्हें वदर्भी गौडीय एवं पांचाली कहते हैं।

काव्य में प्रयुक्त वर्णों के आधार पर वृत्तियों की कल्पना की गई है। ये वृत्तियाँ तीन हैं—उपनागरिका, कोमला एवं परुषा।

राव गुलाबसिंह जी ने भावों के अनुरूप शब्दों की सुन्दर योजना जो रसादि की उपकारिणी होती है' रीति कहा है। रीति के तीन भेद उन्होंने किए हैं—१ उपनागरिका, २ परुषा एवं ३ कोमल। मधुर वर्णों से युक्त परुषा रीति तथा प्रसाद वर्णों से युक्त मधुरा रीति कही गई है। इन्हीं तीन रीतियों को वदर्भी, गौडी एवं पांचाली नामों से भी कहा जाता है।[1] इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि रीति एवं वृत्ति को एक मानते हैं क्योंकि वृत्तियों के नाम ही उन्होंने रीति के नामों के रूप में दिए हैं। विवेचन में आचार्य विश्वनाथ का प्रभाव स्पष्ट है। रीति विवेचन शब्द गुणों के आधार पर ही किया गया है। अतः शब्द गुणों का विचार भी इसी प्रसंग में करना आवश्यक प्रतीत होता है—

गुण विचार—गुण की व्याख्या करते हुए राव गुलाबसिंह जी ने उन्हें रस के प्रधान धर्म, उत्कर्ष के हेतु कहा है। मतिवान आत्माओं में शौर्यादि गुण जिस प्रकार स्थिर रहते हैं उसी प्रकार काव्य में भी गुण स्थिर होते हैं।[1] गुणों की संख्या के सम्बन्ध में विचार करते हुए कवि ने कहा है कि यद्यपि काव्याचार्यों ने दस गुणों की चर्चा की है ये दस गुण तीन गुणों में लीन हो जाते हैं। ये तीन गुण हैं—माधुर्य, ओज

---

१. शब्दन की रचना सुभग अगज भाव समान।
   उपकारिणी रसादि को रीति सुत्रिविध सुजान
   मिलै वर्ण माधुर्य के उपनागरिका सोय।
   ओजवर्ण जा में मिलै रीति सुपरुषा होय।
   वर्ण प्रसाद सुकोमला इन्हीं को कवि तात।
   वदर्भी गौडी अपर पांचाली ठहरात॥
   लक्षण कौमुदी, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्रकाश ६ छंद २१, २३ २४।

२ गुण सु हेतु उत्कर्ष के रस के धर्म प्रधान।
   आत्मा के सौर्यादि ज्यों अचल स्थित मतिवान।
   लक्षण कौमुदी, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग,
   प्रकाश ६, छंद १४।

एव प्रसाद ।[1] माधुर्य गुण का लक्षण देते हुए कवि कहते है—"जो मन को आनन्द से द्रवित करता है वह माधुर्य गुण है । शृगार, करुण एव शान्त रस मे यह शोभित होता है । ओज गुण का भी परम्परागत रूप से विवेचन किया गया है । प्रसाद गुण का विवेचन इस प्रकार किया गया है— चित्त मे शीघ्र अनुभूत हो वह प्रसाद गुण है । सरल एव सुखकारी वर्णों का प्रयोग इसमे होता है । प्रसाद गुण सभी रसों मे स्थित है ।[2]

ध्वनि विचार—रीति सिद्धान्त के समान ध्वनि सिद्धान्त भी काव्य की आत्मा का अनुसधान करने वाली भारतीय काव्यशास्त्रीय परम्परा का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है । ध्वनि का सम्बन्ध शब्द शक्ति से होने के कारण ध्वनि विचार मे शब्द शक्ति विचार भी आवश्यक हो जाता है । राव गुलाबसिंह जी के शब्द शक्ति एव ध्वनि के विषय मे विचार यहा प्रस्तुत हैं—

शब्द शक्ति—शब्द शक्ति के सम्बन्ध मे कवि ने अभिधा लक्षणा एव व्यजना इन तीनो शब्द शक्तियो पर विचार प्रस्तुत किया है । लक्षणा मे रूढि लक्षणा एव प्रयोजनवती उपादान लक्षणा लक्षण लक्षणा सारोपा सा यवसाना आदि भेदोपभेदो का विवेचन किया गया है । व्यजना के अभिधामूलक व्यजना लक्षणा मूल व्यजना शाब्दी व्यजना आर्थी व्यजना आदि भेद किए गए है । उदाहरण स्वरूप व्यजना शब्द शक्ति की कवि कृत व्याख्या प्रस्तुत है । यथा—जहाँ अभिधा एव लक्षणा शब्द शक्तियो द्वारा प्रतिपादित अर्थ के अलावा अन्य अर्थ अभिव्यक्त होता है वहाँ व्यजना शब्द शक्ति होती है ।[3] रूढि और प्रयोजनवती लक्षणा का लक्षण देते हुए कवि ने कहा है रूढि

---

१ दसविध गुण है तं सकल होत तीन मे लीन ।
ते माधुर्य रु ओज पुनि कहत प्रसाद प्रवीन ॥
लक्षण कौमुदी, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग प्रकाश ६ छन्द १५

२ मन द्रव कर आनन्द सो गुण माधुर्य बखान ।
शृगार रु करुणा बहुरि सांत माहि सरसान ॥
काव्य सिन्धु हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग तरग ६ छन्द ४३
शीघ्र चित्त को प्राप्त ह्वै सरल बरन सुखकार
ताको कहत प्रसाद गुन सब ठौथित निवार ॥
लक्षण कौमुदी हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग प्रकाश ६ छन्द २० ।

३ जहँ अभिधा र लक्षणा तात्पर्य तें आन ।
शब्द अर्थ तें अर्थ जो वह व्यजना जान ॥
काव्य सिन्धु हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, तरग ५ छन्द ८२

लक्षणा म प्रसिद्ध अथ का परम्परागत अथ का ग्रहण किया जाता ह इसम व्यग्य नहीं होता। जहाँ इसम व्यग्य की अभिव्यक्ति होती है वहा प्रयोजनवती लक्षणा होती है।[1]

राव गुलाबसिह जी न ध्वनि को उत्तम काव्य माना है। ध्वनि क विभिन्न भेदो पभेदो के नामो का भी निर्देश किया ह। लक्षणा मूल ध्वनि क कवि न अर्थान्तर सक्रमित वाच्य, पुनरुक्ति म सक्रमित वाच्य अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य आदि भद किए है। अभिधा मूल ध्वनि के असलक्ष्य क्रम एव सलक्ष्य क्रम भेद करते हुए सलक्ष्य क्रम अभिधामूलक ध्वनि क शब्द शक्त्युद्भव एव अथ शक्त्युद्भव आदि भेद किए है।

गुणीभूत व्यग्य क भी ८ भेदो का सकेत कवि न किया है। य भेद इस प्रकार है—अस्फुट, अपराग, वाच्य सिद्धता, सन्दिग्ध प्राधा य, तुल्य प्राधा य, का क्वाक्षिप्त, अगूढ, असु दर व्यग्य आदि।

सम्भवत ध्वनि का य का विस्तृत विवेचन कवि का यहाँ लक्ष्य नही था। इसी स ग्र थ भय स विस्तार से कवि न केवल सकेत रूप म ही ध्वनि विचार प्रस्तुत किया है।[2]

दोष विचार—दोष विचार म दोष की व्याख्या प्रस्तुत करत हुए कवि न दोषो को रस का बाधक माना है। दोषा क—पदपदाश दोष, वाक्य दोष, अथ दोष, रस दोष, एव अलकार दोष आदि पाच प्रकार मान हैं।[3]

पद दोष क जो नाम कवि न दिए है व दस प्रकार है–श्रुति कटु च्युत सस्कार, अप्रयुक्त, असमथ, अनुचिताथ, निहिताथ, ग्राम्य, क्लिष्ट, निरथ, अप्रीत,

---

१ रूढि प्रसिद्ध कहावत सो जाम व्यग्य न आहि।
होय प्रयोजनवति वहै व्यग्य कढ जा माहि॥
रसनागिरनु, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, तरग ५, छ द ३८।

२ ध्वनि क भद लखेजु इक सहस च्यार स च्यार।
मै इहि ठौं वरन नहा भाति ग्रन्थ विस्तार॥
लक्षण कौमुदी हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग प्रकाश ४ छन्द ४७।

रस को बाधक दोष सो पद पदाश म होय।
वाक्य अथ अरु रसन मैं पाच भाति जिय जोय॥
काव्य सिन्धु हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, तरग ७, छ द १।
लक्षण कौमुदी, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, प्रकाश ५, छन्द १।

असंदिग्ध, अवाचक अश्लील नेयार्थ अविमष्ट विधेयांश।[1] इनके लक्षणों का स्वरूप स्पष्ट करने के हेतु नेयार्थ का कवि के द्वारा प्रतिपादित लक्षण यहाँ बनता है—"रूढि प्रयोजनवति के बिना जहाँ लक्ष्यार्थ शक्तिहीन बनता है वहाँ नेयार्थ यह दोष होता है।'अ'

वाक्य दोषों में प्रतिकूल वर्ण, न्यून पद हतवृत्त अधिक पद, पतत्प्रकर्ष कथित पद, अर्थान्तरैकवाचक अभवन्मत योग गर्भित लक्षण अनभिहित वाच्य, अक्रम अमत, पराय मग्न प्रक्रम लक्षण अस्थानस्थ पदलक्षण सकीर्ण, अस्थानस्थ समास, प्रसिद्ध हत आदि दोषों का विचार प्रस्तुत किया गया है।

अर्थ दोषों में अपुष्ट, कष्ट व्याहत सुदुष्क्रम ग्राम्य अवनीकृत अश्लील ख्याति विरुद्ध संदिग्ध निर्हेतु सहचर भिन्न दुष्क्त पुनरुक्त साकांक्षता विध्यवाद युक्त विरुद्ध प्रकाशन विरुद्ध विधा अस्थान युक्त अविशेष विशेष विशेष अविशेष, अनियम नियम नियम अनियम निर्मुक्त पुनरुक्त आदि दोषों का विचार किया गया है। उदाहरण स्वरूप सहचर भिन्न पुनरुक्त एवं निर्मुक्त पुनरुक्त के लक्षण यहाँ प्रस्तुत हैं।" उत्तम के साथ जब अधम का साथ रहे तो वह सहचर भिन्न है। एक अर्थ का दो बार प्रयोग पुनरुक्त है। एक बार वर्णन करने के बाद फिर से वर्णन किया जाय तो निर्मुक्त पुनरुक्त कहलाता है।[2]

---

१ श्रुति कटु च्युत संस्कार अरु अप्रयुक्त असमर्थ।
अनुचितार्थ निहितार्थ पुनि ग्राम्य रु क्लिष्ट निरर्थ॥
अप्रतीत संदिग्ध पुनि अवाचक रु अश्लील।
नेयार्थ रु अविमष्ट संग विधेयांस परिसील।
अविरुद्ध मति कृत हुए पदरु वाक्य में होत।
होत कितेक पदांस मैं भाषत सुमति उदोत।
निरर्थक रु असमर्थ पुनि च्युत संस्कार निदान।
तीन दोष ए पद ही मैं होत न आन न स्थान।

लक्षण कौमुदी हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग प्रकाश ५ छन्द २ से ५

१ अ रूढि प्रयोजनवति बिना शक्ति रहित जो होय।
प्रकाशन मुलक्ष्यार्थ को नेयार्थ हि जिय जोय॥

काव्य सिन्धु, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, तरंग ७, छन्द २२।

२ उत्तम संग अधमहि वहै सहचर भिन्न पिछानि।
एक अर्थ दो बार वहै सो पुनरुक्त बखानि।
बरनि चुकै पुनि वर्णन आव। सो निर्मुक्त पुनरुक्त कहाव।

लक्षण कौमुदी, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्रकाश ५, छन्द १४, १५

रस दोष वर्णन में कवि ने कहा है–रस, स्थायी एवं सचारी के नाम आ ा रा दोष होना है । जहाँ विरोधी रसों के अगों का प्रयोग हो, उसका विभावादि ग्रहण किया गया हो तो वह दोष है । विभाव अनुभाव का जहाँ कष्टपूर्ण कल्पना की जाय, जहा असमय में विस्तार एवं सक्षेप हो तो रस दोष है ।"[1]

अलकारों के दोषों में उपमा में न्यून अधिक पद असम्भव, असादृश्य, उपमान न्यून अधिक पद सादृश्य धर्म उपमेय उपमान की लिंग वचन, विधि काल अ तगत भिन्नता, उत्प्रेक्षा दूषण में उत्प्रेक्षा वाचक शब्द, समासोक्ति दोष में अनुप्राय यमक आदि का विवेचन किया गया है ।

दोषोद्धार–दोषों की विस्तृत विवेचन के पश्चात कवि ने दोषोद्धार के विषय में अपनी मान्यता प्रस्तुत की है । जब विभिन दोष प्रसग विशेष में दोष न रहकर औचित्यपूर्ण हो जाते हैं तो दोषों का उद्धार माना जाता है । यथा–रौद्रादि रसों में रोष पूर्ण वाक्य वक्ता के विषय में उद्धत वाक्य श्रुति दोष नहीं अति गुणकारी होता है ।[2] विस्मय क्रोध, विषाद, आनंद, दीनता दया एवं प्रसाद के प्रसग में कथित पद गुण हो जाता है ।[3] अतीव निश्चय की उक्ति में अधिक पद पुनरुक्ति, दोष नहीं गुण ही है । पतत्प्रकर्ष कुवचन इनकी चर्चा में रातें भले ही समाप्त हो उनकी चर्चा

---

१ रस अरु शृगारादि नवस्थायी अरु सचारि ।
इनको आव नाम जो सो रस दोष विचारि ।
जहा विरोधी रसन को अगज कोऊ होय ।
तासु विभावादि ग्रहण दोष कहावे सोय ।
है विभाव अनुभाव की कष्ट कल्पना दोष ।
असमय जल्दी विस्तरु सक्षेप सुगनिदोष ।
लक्षण कौमुदी, हस्तलिखित, हिन्दी सा० सम्मेलन, प्रयाग, प्रकाश ५ छ द ४४, ४५ ४६
का यसि धु , तरग ७ छन्द १२ १५ ।

२ रोष रहित वक्ता विष उद्धत वाक्य प्रकार ।
रौद्रादिक रस माहि हू श्रुति कटु अति गुनकार ॥
लक्षण कौमुदी, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्रकाश ६, छ द १

३ विस्मय क्रोध विषाद मुद दैन्य दया र प्रसाद ।
इत्यादिक में कथित पद गुन व्है जान अवाद ।
लक्षण कौमुदी, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्रकाश ६, छ द ५

विद्याध्ययन के हेतु आचार्यों के पास जाने की अनेक कथाओं से भारतीय साहित्य भरा पड़ा है। आचार्य के पास जाकर ही विद्यार्थी अभ्युदय प्राप्त कराने वाली विद्याओं के ज्ञाता बनते थे। अतः आचार्य देव भी माने गए हैं।

आचार्य में अपेक्षित गुण विशेषों पर भी विस्तृत चिन्तन भारतीय परम्परा में किया गया है। डा० विजयपालसिंह द्वारा उद्धृत आचार्य चरक की गुण सूची इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण प्रतीत होती है। आचार्य में जिन गुणों को अपेक्षित माना गया है वे इस प्रकार हैं—स्पष्ट ज्ञान, उदारता, शिष्य वत्सलता अपने कार्य के लिए अपेक्षित उपकरणों से सम्पन्न तथा अपने कार्य में सिद्धि और लाघव से युक्त, ज्ञानदान में सक्षम, मन से निर्मद निरभिमान, अकोप दूसरों के स्वभाव और दूसरों के प्रति अपने दृष्टिकोण से सुविज्ञ, शास्त्र के शब्द और अर्थ से पूर्ण अवगत। इस प्रकार बौद्धिक व्यापार के संग्राहक संचालक, सम्पादक, एवं आदान प्रदान के माध्यम के रूप में आचार्य की प्रतिष्ठा हुई।[1]

काव्य के विषय में चिन्तन, उसके विविध अंगों का सिद्धान्त प्रतिपादन, विवेचन काव्यशास्त्र का विषय है। अतः काव्य के क्षेत्र में इस श्रेणी का कार्य करने वालों को काव्यशास्त्र के आचार्य कहलाए हैं। भारतीय साहित्य में संस्कृत साहित्य एवं काव्यशास्त्र की एक प्रदीर्घ परम्परा है। संस्कृत काव्यशास्त्र में आचार्यों की भी एक विशाल धारा प्रवाहित है। इन आचार्यों के आचार्यत्व पर विचार करते हुए डा० नारायणदत्त खन्ना ने लिखा है "काव्याचार्य काव्यशास्त्र के पण्डित को कहते हैं। आचार्य वे विद्वान हैं जिन्होंने कविता करने के लिए आवश्यक नियमों का विधिवत विवेचन किया है।"[2]

काव्यशास्त्र के आचार्यों का तीन प्रकार से श्रेणी विभाजन डा० नगेन्द्र द्वारा सम्पादित ग्रन्थ में प्राप्त होता है। यथा—प्रथम में वे आचार्य आ जाते हैं जिन्होंने मौलिक सिद्धान्तों की उद्‌भावना एवं प्रतिपादन किया है—ये आचार्य उद्‌भावक आचार्य कहे गए हैं। दूसरे वर्ग में वे आचार्य माने गए हैं जिन्होंने मौलिक उद्‌भावना न कर प्राचीन सिद्धान्तों का प्रतिपादन आख्यान किया है, ये व्याख्याता आचार्य कहलाए हैं। तीसरे वर्ग में वे आचार्य आ जाते हैं, जो कवि शिक्षक थे। जिनका लक्ष्य अपने स्वच्छ व्यावहारिक ज्ञान के आधार पर सरस एवं सुबोध पाठ्य ग्रन्थ प्रस्तुत करना था। संस्कृत काव्याचार्यों में भरत, वामनादि प्रथम श्रेणी में, मम्मट विश्वनाथ आदि द्वितीय श्रेणी में तथा जयदेव अप्पय दीक्षित, केशव मिश्र, भानुदत्त आदि तीसरी श्रेणी में आ जाते हैं।[3]

---

१ केशव का आचार्यत्व डा० विजयपाल सिंह प्रथम संस्करण, पृ० २१।

२ आचार्य भिखारीदास—डॉ० नारायणदास खन्ना, प्रथम संस्करण, पृष्ठ १६२।

३ हिन्दी साहित्य का इतिहास—डा० नगेन्द्र, प्रथम संस्करण, पृष्ठ ४२२।

हिन्दी के अधिकांश आचार्यों का उद्देश्य संस्कृत आचार्यों से पूर्णत भिन्न दिखाई देता है। संस्कृत के आचार्यो ने सिद्धान्त निरूपक लक्षण ग्रन्थो का निर्माण किया। पूर्ववर्ती आचार्यों द्वारा प्रतिपादित काव्यशास्त्रीय सिद्धान्तो की परीक्षा कर उसका खण्डन अथवा मंडन कर ये आचार्य नए सिद्धान्तो की स्थापना करते थे। हिन्दी के आचार्यों मे यह प्रवृत्ति नही दिखाई देती। उन्होने न तो स्वतन्त्र सिद्धान्तो का निर्माण किया न पूर्ववर्ती आचार्यों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तो का खण्डन मण्डन अथवा परीक्षण ही।[1]

हिन्दी के काव्यशास्त्र विषयक ग्रन्थ रचनाकार आचार्य मुख्यत राजाश्रय मे रहे हैं। अत काव्यशास्त्र निरूपक ग्रन्थ रचना के मूल मे दो उद्देश्य निहित थे–१ राज रुचि के अनुसार ग्रन्थ निर्माण और २ रसिको के लिए भी काव्यशास्त्र की रचना। जिससे पाठक को सामान्य से अधिक रस ग्रहण की क्षमता प्राप्त हो सके।[2]

हिन्दी के आचार्य के साथ कवि शब्द लगा हुआ था। इस समन्वय से आचार्यत्व एव कवित्व दोनो प्रभावित हुए थे। जहाँ संस्कृत के आचार्यों ने प्राय आचार्यत्व और कवि कर्म को पृथक रखा था वहा हिन्दी आचार्य कवियो ने दोनो को मिला दिया। इससे काव्य की वृद्धि तो निश्चय ही हुई किन्तु काव्यशास्त्र का विकास न हो सका।[3]

रीतिकाल मे आचार्य शब्द विस्तृत अर्थ मे प्रयुक्त हुआ। नई उद्भावना अथवा विवेचन, विश्लेषण के अभाव मे भी वे आचार्य कहलाएँ हैं। रीति निरूपण के आधार पर रीति आचार्य कवियो को दो वर्गों मे विभक्त किया गया है–सर्वांग निरूपक एव विशिष्टांग निरूपक। सर्वांग निरूपक आचार्य वे हैं जिन्होने काव्य के समस्त अंगो का–काव्य लक्षण, काव्य हेतु काव्य प्रयोजन काव्यभेद रस शब्द, शक्ति, गुण दोष रीति अलंकार छन्द आदि का विवेचन अपने ग्रन्थो मे किया है। इस परम्परा मे चिन्तामणि कुलपति सुरति मिश्र श्रीपति, देव आदि की गणना की जाती है। विशिष्टांग निरूपक आचार्यो ने काव्य के सभी अंगो को अपने विवेचन का विषय न बनाकर उसके तीन महत्त्वपूर्ण अंगो रस, अलंकार एव छन्द आदि मे से एक, दो अथवा तीनो का निरूपण अपने एक अथवा अनेक ग्रन्थो मे किया है।

---

१ भोसला राजदरबार के हिन्दी कवि––डॉ० कृष्ण दिवाकर प्रथम संस्करण पृष्ठ ४१८।

२ केशव का आचार्यत्व–डा० विजयपालसिंह प्रथम संस्करण पृष्ठ ५८–६०।

३ हिन्दी साहित्य का वृहत इतिहास षष्ठ भाग, संचारक डा० नगेन्द्र प्रथम संस्करण, पृष्ठ ४९५।

४ हिन्दी साहित्य का इतिहास, सम्पादक–डा० नगेन्द्र, प्रथम संस्करण, पृष्ठ ३०५–३०६।

आचार्यत्व की इस पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए राव गुलाबसिंह जी के आचार्यत्व पर विचार करना युक्ति संगत होगा।

राव गुलाबसिंह विरचित विभिन्न रीति ग्रन्थों में प्रतिपादित सिद्धान्तों के सम्बन्ध में किए गए विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि उन्होंने काव्यशास्त्र विषयक नायक नायिका भेद, सखा सखी, दूत-दूती निरूपण, षड्ऋतु वर्णन, अलंकार छन्द काव्य लक्षण, काव्य प्रयोजन, काव्य कारण, काव्य भेद, काव्य वर्ण्य विषय स्थायी भाव विभाव, अनुभाव, व्यभिचारी भाव, रस, रीति, ध्वनि, गुण, दोष, एवं दोषोद्धार आदि का अतीव सुस्पष्ट एवं सारगर्भित विश्लेषण किया है। स्पष्टतः कवि का यह विश्लेषण कवि के एतद् विषयक गम्भीर अध्ययन एवं सुनिश्चितचिंतन का ही परिणाम है। संस्कृत तथा हिन्दी के पूर्वाचार्यों ने इसके लिए कवि का पथ पहले से ही प्रशस्त किया था।

राव गुलाबसिंह जी के रीति ग्रन्थों में पूर्ववर्ती संस्कृत तथा हिन्दी आचार्यों का प्रभाव दृष्टिगत होना है, जो स्वाभाविक ही है। उन्होंने अपने ग्रन्थों में कतिपय ऋण निर्देश भी किए हैं। कहीं कहीं वे पूर्वाचार्यों के प्रति श्रद्धाभाव दिखाते हुए उनका अनुगमन करते हैं तो कहीं कहीं वे उनकी त्रुटियों का निर्देश कर उनको दूर करने का आत्मविश्वासपूर्वक प्रयत्न करते हैं। काव्य नियम ग्रन्थ में आचार्य केशव दास की 'कवि प्रिया' का उल्लेख करते हुए काव्यवर्ण्य विषय के सम्बन्ध में उसके दोषों को दूर करने का आत्मविश्वासपूर्वक प्रयास किया है।[1]

अलंकारों के वर्गीकरण में अप्पय दीक्षित के 'कुवलयानन्द' का भी संकेत कवि ने किया है।[2] आचार्य मतिराम के 'ललित ललाम' तथा जसवंतसिंह के "भाषा भूषण' ग्रन्थों के अपने समय के टीकाकार के रूप में कवि ने टीका ग्रन्थों की रचना की है। अतः अलंकारों के विवेचन में इन आचार्यों का प्रभाव भी कवि के विवेचन में रहा था।

इस प्रकार राव गुलाबसिंह जी भी पूर्व सूरियों द्वारा प्रशस्त राजमार्ग पर चलते हुए अपनी समन्वयात्मक दृष्टि अनाग्रही प्रवृत्ति, तथा काव्यशास्त्र के अध्येताओं के लिए एक सर्वसंग्राहक रूप प्रस्तुत करते प्रतीत होते हैं।

राव गुलाबसिंह जी ने अपने रीति ग्रन्थों का विवेचन नायिका भेद से आरम्भ किया है। नायक विचार को द्वितीय स्थान प्राप्त है। नायिका जाति वर्णन में वे आचार्य केशवदास के अनुवर्ती रहे हैं। स्वकीया नायिका के पतिव्रता एवं सामान्या इस वर्गीकरण में कवि आचार्य भिखारीदास जी के[3] तथा गणिकाभिसारिका के

---

१ काव्य नियम, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छन्द ५।

२ लक्षण कौमुदी-हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, प्रकाश ६ छन्द ३१।

३ श्री भामिनी के भौन जो भोग भामिनी और।
तिन हू कों सुकियान में गने सुकवि सिरमौर॥

श्रृंगार निर्णय-भिखारीदास ग्रन्थावली, प्रथम संस्करण, पृ० १०४, छन्द ६३

विवेचन म रुद्रभट्ट से प्रभावित हैं।[1] नायिकाओं के विभिन्न वर्गीकरणों में कवि रस मंजरीकार भानुदत्त के अनुगामी दृष्टिगत होते हैं।

नायक विवेचन में उनके द्वारा प्रतिपादित नम सचिव नायक मता भेद संस्कृत के अग्नि पुराण काव्यालंकार शृंगार तिलक आदि ग्रन्थों पर आधारित हैं।[2]

नायिका भेद एवं अलंकारों का एकत्र विवेचन रसलीन कवि ने अपने "रसिका भूषण" ग्रन्थ म पहली बार किया था। उस पद्धति का प्रयोग तत्पश्चात् यादव राव शिव प्रसाद इन कवियों ने "रस भूषण" इस एक ही शीर्षक से लिखे ग्रन्थों म भी किया था।[3] कवि के वनिता भूषण तथा ग्रन्थ वनिता भूषण ग्रन्थों की रचना शैली इनसे प्रभावित है।

काव्य लक्षण, काव्य प्रयोजन काव्य कारण काव्य प्रकार आदि के विवेचन म राव गुलाबसिंह जी ने अग्निपुराण एवं विष्णु पुराण का आधार का मत अपने ग्रन्थों म स्पष्ट किया है। मम्मट, आनंदवर्धन इन आचार्य नामों का भी उल्लेख उनके ग्रन्थों म प्राप्त है। काव्यशास्त्र विषयक काव्य प्रकाश साहित्य दर्पण सरस्वती कण्ठाभरण, काव्यालंकार आदि ग्रन्थों म प्रतिपादित मतों से भी कवि प्रभावित प्रतीत होते हैं। ऐसा भी अनुमान असंगत प्रतीत नहीं होता कि कवि हिन्दी रीति आचार्यों में सर्वांग निरूपण करने वाले आचार्य चिंतामणि कुलपति सुरति मिश्र श्रीपति देव भिखारीदास आदि आचार्यों से भी प्रभावित रहे हों। संचारी भावों के विवेचन म कवि ने चौंतीस संचारी भावों की चर्चा की है जबकि अन्य आचार्यों के अनुसार उनकी संख्या तैंतीस है। आचार्य देव ने 'छल' इस चौंतीसवें संचारी की कल्पना प्रस्तुत की थी। इस का विचार राव गुलाबसिंह जी ने भी किया है। स्पष्ट यह आचार्य देव का ही प्रभाव परिलक्षित होता है।

इन्हों के विवेचन म कवि ने अपने पूर्ववर्ती किसी आचार्य का नाम निर्दिष्ट नहीं किया है फिर भी अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि इन्हों के विवेचन में भी वे अपने पूर्वाचार्यों के अवश्य ऋणी थे।

इन पूर्ववर्ती प्रभावों के होते हुए भी राव गुलाबसिंह जी की अपनी कुछ मौलिक मान्यताएँ हैं। यथा—अभिसारिका नायिका विवेचन म परकीया अभिसारिका इस नए भेद की कल्पना पूर्वाचार्यों द्वारा वर्णित किन्तु विस्तृत नर्म सचिव नायक मता भेद तथा छल संचारी का पुनःस्थापन एवं विषय प्रतिपादन की अद्यतनता का

---

1. शृंगार तिलक रुद्रभट्ट १ १ ३
2. काव्यालंकार—रुद्रट १२ १३ तथा शृंगार तिलक रुद्र भट्ट १ ३०
3. हिन्दी अलंकार साहित्य का आलोचनात्मक विवेचन—डॉ० ओमप्रकाश, प्रथम संस्करण पृष्ठ ५१८।

आग्रह तथा उदाहरणों के चयन में अभिव्यक्त मौलिकता कवि की रीति निरूपण की योग्यता का समग्र प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

राव गुलाबसिंह जी के रीति ग्रन्थों में विवेचित विषय वस्तु के आधार पर उनकी गणना हिन्दी रीतिकाल के आचार्य कुलपति, चिंतामणि, भिखारीदास आदि की परम्परा में की जा सकती है। डॉ० ओमप्रकाश ने इनकी गणना आचार्य केशव दास की परम्परा में की है।[1] राव गुलाबसिंह जी सर्वांग निरूपक रीति ग्रन्थकार हैं, रीति ग्रन्थों के सफल टीकाकार हैं अतः उन्हें सर्वांग निरूपक रीति आचार्य के रूप में मान्यता देना सर्वथा युक्तिसंगत है। यद्यपि नायिका भेद एवं अलंकार के विवेचन में वे अधिक रस लीन प्रतीत होते हैं उन्होंने काव्य के अन्य अंगों की उपेक्षा नहीं की है। हिन्दी के रीति आचार्य कवि शिक्षक आचार्य हैं। सरस एवं सुबोध पाठ्य ग्रन्थों का निर्माण कार्य उन्होंने किया है। हिन्दी के रीति आचार्यों ने भारतीय काव्यशास्त्रीय परम्परा को हिन्दी में सरस एवं सरल रूप में अवतरित करने का जो मौलिक कार्य किया था उसी को आधुनिक युग के आरम्भ में राव गुलाबसिंह जी ने भी आगे बढ़ाया है। कवि कर्म करने के इच्छुक कवियों के मार्गदर्शन के हेतु किया हुआ उनका यह कार्य स्वतः महत्त्वपूर्ण है। आधुनिक समालोचना में जो भारतीय परम्परा के दर्शन होते हैं उनके लिए इसी रीति परम्परा ने आधार प्रस्तुत किया है। राव गुलाबसिंह जी का योगदान इस रूप में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्वीकार किए जाने का अधिकारी है।

---

१ हिन्दी अलंकार साहित्य—डॉ० ओमप्रकाश, प्रथम संस्करण, पृष्ठ २०१–२०२।

५ | भक्ति एव दर्शन : स्वरूप विश्लेषण

रीति ग्र या के अतिरिक्त राव गुलाबसिंह जी न कतिपय भक्ति ग्र था की भी रचना की है। इसमे प्रौढता-विशालता एव विविधता की दष्टि से कृष्ण चरित प्रमुख ग्र थ है जो पाँच खण्डा मे विभाजित है। शेष ग्र थ लघुकाय स्तुति स्तोत्र के रूप म उपल ध हैं। इन ग्र था म अभि यक्ति भक्ति एव दशन के स्वरूप का विश्लेषण प्रमुख सिद्धान्तो के आधार पर क्रमश इस अध्याय म प्रस्तुत किया जा रहा है।

भक्ति--भक्ति श द की व्युत्पत्ति सस्कृत की 'भज' धातु से मानी जाती है जिसका अथ पूजन है। मानव एव देवचतना के बीच पारस्परिक आदान प्रदान का सम्ब ध वेद साहित्य से ही आरम्भ हो जाता है। हवि ग्रहण करने के लिए देवताओ का आवाहन अनुग्राह्य एव अनुग्राहक सम्ब ध का आध र बन कर भक्ति का अकुर बना। यद्यपि वेदो मे साधक तथा देवता के बीच वह तीव्र रागात्मक आवेश नही है, जो मध्ययुगीन कृष्ण भक्ति की विशेषता,है, तथापि उनम मानवीय राग का अभाव भी नही है।[1]

भक्ति के शास्त्रीय पक्ष के विवेचन म नारद एव शाडिल्य का योगदान अतीव महत्त्वपूण है। वे इस विषय के आचाय जाने जाते हैं। भक्ति सूत्रो की रचना करते हुए इस विषय को एक विस्तत आधार देने का प्रयास उ होन किया है। नारद ने भक्ति सूत्र २५ में भक्ति को कम, ज्ञान और योग से भी श्रेष्ठतर माना है। नारद के मतानुसार भक्ति स्वय प्रमाण रूप है। इसके लिये अ य प्रमाण की आवश्यकता नही है। उनके अनुसार भक्ति शा तिरूपा परमान दरूपा है।[2] नारद भक्ति सूत्र म भक्ति को परम प्रेम स्वरूपा अमृत स्वरूपा कहते हुए यह प्रतिपादन किया गया है कि उसे प्राप्त करने वाला मनुष्य सिद्ध और तृप्त हो जाता है। उसे पाकर मनुष्य किसी भी वस्तु की इच्छा नही करता। न वह शोक करता न वह द्वेष करता है न किसी

---

१ मध्ययुगीन हिन्दी कृष्ण भक्ति धारा और उसकी सम्प्रदाय-डा० मीरा श्रीवास्तव प्रथम सस्करण, पृ० ८-९।

२ भक्ति का विकास-डॉ० मुशीराम शर्मा, सन् १९५८ ई० स०, पृ० ८३-८४।

समारी वस्तु म आगक्त होना है और न उस वस्तु से प्रोत्साहित होता है ।[1]

शाण्डिल्य भक्तिसूत्र म भक्ति की व्याख्या करते हुए—"सा परानुरक्तिरीश्वरे ।" ईश्वर म अत्य त अनुरक्ति ही भक्ति कही गई है ।[2]

पाराशर पुत्र व्यास उसे पूजादि म अनुराग मानते है तो गर्गाचार्य कथादि म अनुरक्ति को भक्ति कहते हैं । यथा—

"पूजादिष्वनुराग इति पाराशर्य ।'

कथादिष्वति गर्ग ।"[3]

ईश्वर प्राप्ति के साधनो मे कर्म, ज्ञान व साथ भक्ति की गणना की जाती है । अन्य साधनो की तुलना म सहज सुलभ होने के कारण ही भक्ति मार्ग को आचार्यों ने प्रधानता दी है । यथा—

'अन्यस्मात सौलभ्य भक्तौ ।"[4]

महाभारत के नारायणी पुराण मे एकान्तिका के मार्ग की जो चर्चा है उसका अत्य त परिणत और परिष्कृत रूप श्रीमदभागवत पुराण मे प्राप्त होता है । एकात भक्ति का मार्ग पुराना है । महाभारत के शान्ति पर्व ३४९ वें अध्याय म पाच प्राचीन मतो का उल्लेख प्राप्त है । इनम पाचरात्र और पाशुपत मत सगुणोपासना-व्यापक मत है । इनम भक्ति तत्त्व की प्रधानता है । पाचरात्र के मूल आधार नारायण है और साधना मार्ग है ऐकान्तिक भक्ति । चतुर्व्यूह की कल्पना पाचरात्र मत की विशेषता है । श्रीमदभागवत गीता म 'वासुदेव' शब्द का प्रयोग परब्रह्म के रूप म हुआ है । भागवत पुराण म भगवान के तीन अवतार माने हैं—पुरुषावतार, गुणावतार एव लीलावतार । गीता म प्रतिपादित भागवत धर्म म भी भक्ति का स्थान महत्त्वपूर्ण है पाचरात्र म उसका स्थान और भी महत्त्वपूर्ण है ।[5]

श्रीमदभागवत पुराण म नवधा भक्ति की चर्चा की गई है । जो विविध रूपों म प्रकट होने वाली यह साधना विशेष है ।

---

१ सात्वस्मिन परम प्रेमरूपा । २ । अमृत स्वरूपाच ॥३॥
यल्लब्ध्वा पुमान सिद्धो भवति अमृतो भवति, तृप्तो भवति ॥४॥
यत्प्राप्य न किचिद्वाछति, न शोचति न द्वेष्टि न रमते नोत्साही भवति ॥५॥
नारद भक्ति सूत्र । सम्पादक—नन्दलाल सिन्हा, द्वितीय सस्करण ।

२ अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय—डा० दीनदयाल गुप्त, भाग २, द्वितीय सस्करण पृष्ठ ५२९ ।

३ नारद भक्ति सूत्र—१६ १७ । सम्पा० नन्दलाल सिन्हा, द्वितीय सस्करण ।

४ वही, सूत्र ५८ ।

५ अवतारवाद मध्यकालीन धर्म साधना—डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी तृतीय सस्करण पृष्ठ १२४ १२५ ।

'श्रवण कीर्तन विष्णोःस्मरण पादसेवन।
अर्चन वंदन दास्य सख्यमात्मनिवेदनम्।'[1]

इस नवधा भक्ति के संकेत ग्रन्थों में भी आंशिक रूप में प्राप्त होते हैं। बृहदारण्यकोपनिषद् में श्रवण, मनन निदिध्यास और साक्षात्कार का उल्लेख है।

भक्ति के इन रूपों पर विचार करने से यह स्पष्ट होता है कि श्रीमद्भागवत प्रतिपादित नव भक्तियों श्रवण, कीर्तन, स्मरण ये तीनों क्रियाएँ भगवान के नाम एवं लीला के साथ सम्बद्ध हैं। पाद सेवन अर्चन और वंदन का सम्बन्ध भगवान के स्वरूप के साथ लगाव है। दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन ये भाव हैं जिनका अपण भगवान को होता है।[2]

इसी नवधा भक्ति को विषय के अनुसार आचार्य परशुराम चतुर्वेदी जी ने निम्नलिखित तीन वर्गों में विभक्त किया है—

१ श्रवण कीर्तन स्मरण—इन तीनों भक्ति की दशाओं में साधक के लिए इष्टदेव के समक्ष उपस्थित रहना अनिवार्य नहीं है।

२ पादसेवन अर्चन व दन—इन तीनों दशाओं में उपासना के अवसर पर अपने इष्टदेव के सान्निध्य में बना रहना कदाचित अनिवार्य माना जा सकता है।

३ दास्य सख्य आत्मनिवेदन—इन तीन स्थितियों में भक्त के प्रति उसके इष्टदेव की ओर से न्यूनाधिक प्रतिक्रिया भी अपेक्षित रही होगी। 'आत्मनिवेदन को सबसे अंतिम एवं सर्वोत्कृष्ट प्रक्रिया माना जाता होगा।'[3]

'भक्ति रसामृत सिन्धु' में भक्ति के विविध रूपों का सांगोपांग वर्णन मिलता है। इसमें भक्ति के तीन प्रकार कहे गए हैं—

(१) साधन भक्ति (२) भाव भक्ति और (३) प्रेम भक्ति।

साधन भक्ति—साधना द्वारा साधित भक्ति को साधन भक्ति कहते हैं इसके द्वारा भक्त के हृदय में नित्य सिद्ध भाव प्रकट होता है। इंद्रियों की प्रेरणा अर्थात श्रवण कीर्तन आदि के द्वारा जिस साध्य रूप भक्ति का साधन किया जाता है उसे साधन भक्ति कहते है। भाव या प्रेम इसका साध्य होता है। इस साधन भक्ति के वैधी तथा रागानुगा ये दो प्रकार होते है। वैधी भक्ति वह है जिसमें राग प्राप्ति हेतु अनुराग उत्पन्न नहीं होता वरन शास्त्र शासन भय से भक्ति में प्रवृत्ति उत्पन्न होती

---

१ श्रीमदभागवत पुराण स्कन्द ७।५।२३। प्रकाशक—दामोदर सावलाराम आर्य मण्डली—सन १९२७ ई०।

२ अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय—डा० दीनदयालु गुप्त द्वितीय भाग द्वितीय भाग द्वितीय संस्करण पृ० ४२।

३ भक्ति साहित्य में मधुरोपासना—आ० परशुराम चतुर्वेदी प्रथम संस्करण, पृ० २

है। शास्त्र के जितने विधि निषेध हैं, वे सब वैधी भक्ति के अंतर्गत आते हैं। हरि के उद्देश्य से शास्त्र में जो क्रियायें प्रतिपादित हैं, वे वैधी भक्ति के मार्ग में मान्य हैं और ये क्रियायें भगवान के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करने के लिये तथा उसके प्रति प्रेम जाग्रत करने के लिये निर्धारित की गई हैं। वास्तव में प्रभु का स्मरण विधि है तथा उनका विस्मरण निषेध है।[1] अतः नवधा भक्ति की ये विधायें वैधी भक्ति के अंतर्गत आ जाती हैं।

नारदीय भक्ति सूत्र में परम प्रेमरूपा भक्ति का लक्षण बतलाते समय कहा गया है 'वह अपने समस्त कर्मों को भगवान के प्रति अर्पण करने तथा उनके किंचि मात्र भी विस्मृत हो जाने पर परम व्याकुल हो जाने में दीख पड़ती है। वह ठीक उसी प्रकार की है जैसी व्रज की गोपियों की भक्ति में देखी जाती है। जो न केवल उनकी आत्म निवेदनाशक्ति की ओर संकेत करता है अपितु इसमें उनकी उस 'परम विरहासक्ति' का भी समावेश आप से आप हो जाता है वस्तुतः उनकी कांता सक्ति के साथ चला करती है। आत्मनिवेदन का भाव अपने हृदय को पूर्णरूप से निरावृत कर अपने इष्टदेव के ऊपर सर्वथा आश्रित होने में देखा जाता है। शांडिल्य ने अपने सूत्रों में 'परानुरक्ति' की चर्चा करते समय प्रेम के भेदों में 'इतर विचिकित्सा 'तदर्थ प्राण स्थान, तन्मयता तदभाव प्रतिकूल्यादि' के नाम लिए हैं। इस प्रकार की भक्ति के कारण व्रज वनिताओं ने किसी अन्य प्रकार के साधना के अभाव में भी मुक्ति प्राप्त कर ली है। इससे 'आत्म निवेदन' की ही महत्ता का समर्थन होता जान पड़ता है। इसके आधार पर यह भी सिद्ध हो जाता है कि इसका सर्वोत्कृष्ट उदाहरण उक्त गोपियों की श्रीकृष्ण के प्रति उस प्रेमाभक्ति में ही मिलता है जो 'मधुरोपासना' कहलाकर प्रसिद्ध है।[2]

रागानुगा भक्ति साधन भक्ति का दूसरा रूप है। व्रजवासियों में प्रकाश्यमान भक्ति को रागात्मिका भक्ति कहते हैं। इस रागात्मिका भक्ति की अनुगा जो भक्ति है उसे अनुरागा भक्ति कहा जाता है। रागात्मिका भक्ति काम रूपा एवं सम्बन्ध रूपा भेद से दो प्रकार की होती है। काम रूपा भक्ति केवल व्रज देवियों में ही होती है। उनका यह विशिष्ट प्रेम किसी अनिर्वचनीय माधुरी को प्राप्त कर उन्हीं क्रीडाओं का कारण होता है जो काम में वर्णित होती है। भगवान में पिता आदि के अभिमान अर्थात कृष्ण का पिता, सखा, बन्धु, माता आदि--इस प्रकार की भावना पर

---

१ मध्ययुगीन हिन्दी कृष्ण भक्ति धारा और चैतन्य सम्प्रदाय-डा० मीरा श्रीवास्तव प्रथम संस्करण, पृ० ८२।

२ भक्ति साहित्य में मधुरोपासना आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, प्रथम संस्करण, पृष्ठ ५-६।

आधारित भक्ति, सम्बन्ध रूपा भक्ति कहलाती है।[1] राव गुलाबसिंह जी के ग्रंथों म भक्ति के वधी एव रागानुगा ये दोनो रूप देखन के लिए मिलते हैं। नवविधा भक्ति का विचार कवि क कृष्ण चरित काव्य के गोलोकखड मे प्रतिपादित है। य नवविधाएँ इस प्रकार वर्णित है--

पूजा, सुमरन कीतन सेवा जप रु प्रणाम।
आत्म निवेदन गुन श्रवन, दास्य भाव मतिधाम ॥[2]

श्रीमदभागवत म चर्चित नवविधा भक्ति की विधाओ से राव गुलाबसिंह जी की विधाओ मे कुछ भिन्नता प्रतीत होती है। श्रीमदभागवत क सख्य एव पाद सवन ये दो भेद यहा न दकर सेवा और 'जप' इन दो नए भेदो का निर्देश उन्होंने किया है। इन रूपो को वास्तव मे दास्य और स्मरण के अन्तगत लिया जा सकता है। कृष्ण चरित के विज्ञान खड म नवविधा भक्ति के नाम श्रीमदभागवत के अनुसार वर्णित हैं किन्तु उनमे प्रेम लक्षणा भक्ति को अधिक हितकारी कहा गया है।[3]

राव गुलाबसिंह जी के ग्रन्थो म प्राप्त नवधा भक्ति एव रागानुगा भक्ति क विभिन्न रूपो को यहाँ क्रम से प्रस्तुत किया जा रहा है।

१ श्रवण--अपने इष्ट एव उनके गुण विशेषो का किसी अन्य व्यक्ति क द्वारा किया जान वाला प्रशसात्मक वणन सुनकर भक्त के मन मे आन द की अनुभूति होती है। इस प्रशसा को सुनते हुए भक्त इष्ट की ओर अधिकाधिक आकृष्ट होता जाता है वह श्रवण भक्ति है।

राव गुलाबसिंह जी के साहित्य म श्रवण भक्ति के कतिपय उदाहरण यहाँ दष्टव्य हैं। कृष्ण चरित के मथुरा खड मे उद्धव से श्रीकृष्ण का सदेश उनकी कुशल सुनकर नन्द और यशोदा कृष्ण की ओर अधिक आकर्षित होते है। कुण्डिनपुर की

---

१ मध्ययुगीन हिन्दी कृष्ण भक्ति धारा और चतन्य सम्प्रदाय--डा० मीरा श्रीवास्तव प्रथम सस्करण प० ८२ ८३ ८४।

२ कृष्णचरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग गोलोक खड छन्द २९।

३ सुमरन कथन श्रवण हरि नामा। पद सेवन अचन रु प्रनामा।
दास्य, सख्य निज अपन कारी। प्रेम लक्षणा भक्ति हितकारी ॥
कृष्णचरित, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, विज्ञान खड प० ४ छद सख्या नही।

४ । हो तुम धन्य कृष्ण की पितु माई।
प्रम लक्षणा भक्ति तुम्हारी। है परिपूरन कृष्ण मवारा।
नन्द जसोमति ब्रज रखवारा। तनकहु साध न करहु उदारा ॥

(अगल पृष्ठ पर जारी

राज सभा मे याचक ब्राह्मण से कृष्ण के रूप एव गुण की प्रशसा सुनकर रुक्मिणी के माता पिता कृष्ण की ओर आकृष्ट होते हैं । उसे रुक्मिणी के लिए योग्य वर मानते हैं।[1] कृष्ण के रूप और गुण की चर्चा रुक्मिणी ने भी सुनी है। वह भी कृष्ण के प्रति आकृष्ट है। रुक्मि अपने माता पिता के मत का विरोध कर शिशुपाल की तुलना म श्रीकृष्ण को हीन बताता है उसकी निन्दा करता है। रुक्मिणी अपने इष्ट का विरोध सुनकर दुखी होती है। उसके मन म कृष्ण के प्रति आकर्षण और ही बढ जाता है। वह ब्राह्मण के हाथो सदेश भेज कर श्रीकृष्ण से अपनी लज्जा रक्षा के हेतु प्रार्थना करती है।[2] इससे यह स्पष्ट है कि नन्द यशोदा, रुक्मिणी के माता पिता एव रुक्मिणी गुण वर्णन श्रवण कर अपने इष्ट के प्रति अधिकाधिक आकर्षित हो जाते हैं। इस प्रकार भक्ति का वर्णन कवि ने विभिन्न प्रसगों में किया है।

२ कीर्तन—इष्ट का गुणगान, लीलागान कीर्तन है। यह एक ऐसा साधन है जिसके द्वारा इष्ट के प्रति आसक्ति अधिक विकसित होती है। राव गुलाबसिह जी के अनेक ग्रथो म परमेश्वर के पूजनीय प्रतीको के प्रति इस श्रेणी का आवर्षण देखने को मिलता हैं जिनम से कुछ उदाहरण यहाँ उद्धृत है—

कवि ने अपने रामाष्टक ग्रथ म राम की लीलाओ का गान किया है। प्रत्येक छन्द म कवि ने यह कहा है कि सुखमन्दिर की राममूर्ति उनके मन म सदैव

पिछले पृष्ठ से—
तुम्हरे सुत जुग पत्र पठावा। तिन्हें बाँचि सुखकर मन भावा ॥
है कल्यान सहित बल स्यामा। करि मथुरा के पूरन कामा ॥
एहैं कछु दिन मैं तुम पाही। सुख हो गुलाब मुदित महाही ॥
कृष्णचरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खड, पृ० ४४, छन्द सख्या नही।

१ नृप रानी हू करत भे यो मन माँहि विचार।
सब विधि रुक्मिनि योग्य वर वसुदेव कुमार ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, द्वारा खड छन्द ३१।

२ ताहि पत्रिका दै इमि भाषा। जाहु द्वारिका द्विज मृदु भाषा।
देव पत्रिका हरि के हाथा। कहियो विनय सहित इमि गाथा ॥
हौ तुम नाथ जगत प्रतिपाला। अन्तरजामी जन रखवाला ॥
म दासी हौ शरण तुम्हारी। राखौ मोरि लाज न वारी ॥
कृष्णचरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, द्वारिका खण्ड, छन्द ५१।

विराजती है ।[1] इससे कवि की इष्ट के प्रति बढन वाली आसक्ति प्रतिपादित होती है । रुद्राष्टक म भी भगवान शकर एव पार्वती म रूप एव गुणा का गान किया गया है । यहाँ भी प्रत्यक छ द मे कवि न यह कहते हुए इष्ट में अपनी लीनता व्यक्त की है कि मन को मोह लन वाले रूप म शकर एव पार्वती उनक मन म विराजत रह ।[2] बालाष्टक म पार्वती का गुणगान किया गया है ।[3] गगाष्टक की निमलता, उज्ज्वलता एव उसके उद्धारक रूप की ही प्रशसा कवि न की है ।[4]

शारदाष्टक तथा जगदम्बा स्तुति म भी कवि न सबद्ध देवताओं का रूप एव गुण का गान किया है ।[5]

---

१ या सुख मन्दिर मूरति राम,
निरतर मो उर माहि विराज ।
—गगाष्टक हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ।

२ या मन मोहन मूरति नाथ मया करि मा उर माँहि विराज ।
रुद्राष्टक हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग ।

३ आन देव आग जिन माँग भीख सीख मानि ।
माँग भीख बाला हि छुडाव भीख माँगनो ॥
बालाष्टक हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छ द ८ ।

४ गौर रग भ्राज रोत अम्बर विराज,
अग चन्द भाल साज मकरा सन प राजरी ।
कुभ कज अथ वरदान कर कजन म
हसित तुषार बिन्दु लखि ससि लाजरी ।
गगाष्टक हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छ द १ ।
पार पातकी हू तोय पान कर येक बार
ताहि छिन ही म निज तन म मिलावरी ।
हाडचाम काहू को कर आनि तेर माँझ
नाहू को ततच्छिन ही लोकप बनावेरी ॥
गगाष्टक हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छ द ५

५ अगरग अमल तुषार कुन्द इदु हुते
अम्बर समान वर अम्बर विलासिनी ।
वीणा दन्ड मडित अनूप कर कज माझ
नीरद बिसद बीच बिन्दनि निवासिनी ।
शारदाष्टक, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छ द १
सुखकरनी हरनी दुख सुमरि जगदम्बा ।
जगदम्बा स्तुति हस्तलिखित, राव मुकुदसिंह जी, बूँदी से प्राप्त छन्द ४

कृष्ण चरित्र मे स्तुति व गुणगान, लीला गान के अनेक प्रसग है। कृष्ण की परब्रह्म रूप म स्वीकृति तथा स्तवन भी इनमे प्राप्त होता है। परमेश्वर के निगुण एव सगुण रूप यहाँ प्रतिपादित हैं। गालोक खड म ऋषियो द्वारा कृष्ण की स्तुति की गइ है जिसम कृष्ण का योगी, अयोनि, अनन्त अव्यय, ज्योति स्वरूप निगुण, सगुण, पाप विहरति, साकार निराकार आदि विविध रूपो म वणन किया गया है।[1]

वसुदेव न जो कृष्ण स्तुति की ह उसम भी व कृष्ण को "साक्षात पुरुष केवलानन्द स्वरूप सबकी बुद्धि के साक्षी सुमति अनूप आदि अनेक गुण विशेषो से युक्त कहा गया है।[2] व दावन खड की स्तुति म कृष्ण को वनमाली नटवर आदि नामो म सम्बोधित किया गया है। कवि न कृष्ण क रूप का गान करत हुए कृष्ण को परों म घुघरू कटि म किंकिनी स शोभित कहा है। कृष्ण अपन रूप से कोटि मदनो का गव हरण करत हैं। ग्वालनियो को नचात हैं।[3]

एक अन्य प्रसग म ब्रह्मदेव, शकर, शेषनागादि देवता गण भी कृष्ण की अपरम्पार स्तुति करत हैं। इस प्रकार का सकेत कवि ने किया है। इस प्रकार से कीतन भक्ति को कवि राव गुलाबसिंह जी न सफलतापूवक अभिव्यक्ति किया है।

---

१ जय जय योगि अयोनि अनन्ता, अ यय ज्योति स्वरूपा।
निगुण सगुण अनघ साकारा निराकार बहुरूपा ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, गोलोक खड छन्द २४८

२ हो साक्षात पुरुष अरु केवलान द स्वरूप ।
हो गुलाब सबहिन की मति के साक्षी सुमति अनूप ॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, गोलोक खड, छन्द ३६६।

३ नटवर वप धरें वनमाली। करो कृपा कर मम रखवाली।
कटि किंकिन घूघरू पग बाज। मुख लखि कोटि मदन मद भाजै।
जो ग्वालन को नाच नचाव। सो व दावन खण्ड बनाव।
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, वृन्दावन खण्ड, छन्द २

४ सुन्दर मुरली मुकुट सर पहरे कुडल चार।
विधि शकर शेषादि सुर अस्तुति करत अपार ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, वृन्दावन खण्ड, छन्द ८२६।

३ स्मरण—इष्ट का नाम, रूप, लीला आदि की स्मृति का समावेश स्मरण में अन्तर्गत किया जाता है। इष्ट की अनुपस्थिति के माध्यम से ही इष्ट में मन लगा रहता है। उसकी विभिन्न स्वभाव विशेषतायें स्मरण हो जाती हैं। वृन्दावन खण्ड में कालिय नाग के प्रसंग में नन्दरानी यशोदा का विलाप, स्मरण भाव की अभिव्यक्ति करने वाला उत्कृष्ट प्रसंग उदाहरण स्वरूप यहाँ प्रस्तुत है। नन्दरानी कृष्ण के अदृश्य होने से दुःखी है। श्री कृष्ण की अनेक लीलायें उसके अन्तस्तल में स्मृति के रूप में घिर आती हैं। कभी माखन मिसरी में साथ कलेवा माँगने वाले श्रीकृष्ण उसकी आँखों में झूल उठते हैं तो कभी उसकी मधुर तोतरी बातें कानों में गूँज उठती हैं।[1]

४ पादसेवन—निरन्तर इष्टदेव के सान्निध्य में रहकर इष्टदेव की सेवा करना पादसेवन कहलाता है। राव गुलाबसिंह के साहित्य में पादसेवन भक्ति की अभिव्यक्ति अत्यल्प है।

कृष्ण की रानियों को इस बात का गर्व है कि श्रीकृष्ण पर उनका ही अधिकार है। कुरुक्षेत्र की यात्रा के प्रसंग में गोपियों की कृष्ण के प्रति तदात्म्य भावना देखकर वे अपने अभिमान को भूल, पश्चाताप से व्याप्त होकर कृष्ण चरणों में गिर पड़ती है।[2] उनका चरणों में गिर पड़ना उनकी पादसेवन भक्ति का शुभारम्भ कहा जा सकता है।

५ अर्चन—इष्टदेव की पुष्प, धूप दीप आदि बाह्य उपचारों से पूजा अर्चन कहलाती है। इष्ट के वैभव की अनुभूति पूजा भाव की प्रेरक होती है। वह भक्त में आराधना का भाव जगाती है। पूजा का मानसिक विधान भी भक्ति में प्रयुक्त होता है। श्रीकृष्ण अपने नए कार्य क्षेत्र मथुरा में पहुँचते हैं। उनके मथुरा प्रवेश पर मथुरा के धनवान वैश्यों द्वारा उनकी पूजा का वर्णन कवि ने किया है।

---

१ माखन मिसरी सहित कलेवा। कौन माँगि है मुहि सुख देवा।
मधुर तोतरी कहि कहि बाता। श्रवन तृप्त करि है को ताता॥
तुव मुख दरसन सनमुख कारा। नहिं त्रिलोक को राजा उदारा॥
तो बिन इकली सो न सुवना। कस कढि है सो जुग समरना॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, वृन्दावन खण्ड, छन्द १६८।

२ सब रानिन ने प्रेम कौं दीन्हा गर्व भुलाय।
हरि चरन में परि गई मनहि मन पछिताय॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, द्वारिका खंड,

इन वैश्यों ने सुगन्धी द्रव्य, तांबूल, दूध, दही अक्षत एवं फल, फूल आदि उपचार द्रव्यों से, सुवासन पर बैठाकर श्रीकृष्ण की पूजा की, तथा उन्हें प्रणाम कर प्रसन्न हुए। पूजा की प्रेरक अपनी आंतरिक इच्छा को भी उन्होंने इस प्रकार व्यक्त किया है 'भगवान, हम चाहते हैं कि यहाँ तुम्हारा राज्य हो हम तुम्हारी प्रजा बनें। हम वास्तव में तब ही सनाथ हो जाएँगे जब आपका राज्य यहाँ हो जाएगा।'[1]

६ वंदन—आराध्य के प्रति नमन वंदन भक्ति है। राव गुलाबसिंह जी के विभिन्न ग्रन्थों के अनेक प्रसंग वंदन भक्ति के अन्तर्गत विचारणीय हैं।

'ललित कौमुदी" ग्रंथ में कवि ने गणपति, सरस्वती भवानी शंकर ग्रहपति, गुरु, गोपाल, राम सीता, राधा, रमा आदि का भक्ति भाव पूर्ण वंदन करते हुए यह प्रार्थना की है कि वे कवि पर कृपा कर ग्रंथ लेखन की शक्ति प्रदान करें।[2] लक्षण कौमुदी तथा काव्य सिंधु में त्रिभुवन प्रतिपालक नन्दनन्दन एवं वृषभानुजा का सश्रद्ध वंदन किया गया है।[3] कृष्ण चरित में उत्पत्ति, स्थिति एवं प्रलय के

---

१ आगे जाय वश्य घनवाना। देखे अति सुन्दर मतिवाना।
तिनन गहि संग धु ताबूला। दूध दही अक्षत फल फूला।
करि पूजा आसन बैठाये। करि प्रणाम सबन सुख पाये।
बोले बहुरि अग्रमति वारा। होहु प्रभु यहाँ राज्य तुम्हारा।
इमि चाहत है हम भगवाना। ह्वै है तुम्हरी प्रजा सुजाना।
ह्वै हो राज्य प्राप्त तुम नाथा। तब ह्वै है हम सकल सनाथा।
कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खंड
छंद ५८।

२ गणप गिरा गिरजा गिरीश ग्रहपति गुरु गोपाल।
राम सिया राधा रमा मो पर होहु कृपाल॥
हाथ जोरि विनती करौ बार बार सिर नाय।
टीका ललित ललाम की तुम ही देहु बनाय॥
ललित कौमुदी, राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण, छंद १, २

३ (अ) नंद नंदन वृषभानुजा त्रिभुवन के प्रतिपाल।
विरच्या लक्षण कौमुदी सुखकर दीन दयाल॥
लक्षण कौमुदी, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग प्रकाश १,
छंद १

(ब) नंदनन्दन वृषभानुजा त्रिभुवन प्रतिपाल।
काव्य सिंधु रचना करौ सुखकर दीनदयाल॥
काव्य सिन्धु, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, तरंग १, छंद १

तारक तथा दीन दयालु राधाकृष्ण की वदना की गई है।[1]

कृष्ण चरित के गोलोक खण्ड म राव गुलाबसिंह जी ने राधापति के चरणों की वन्दना करते हुए लिखा है कि जो सुन्दरता म शारदीय कमला को मात करते हैं, दुरित समूहो का सहार करते है मुनियो का मनहरण करते हैं वे राधापति उन पर करुणा करें। कृष्ण प्रिया, त्रिभुवन की माता राधा से भी कवि ने सहायता की प्रार्थना की है।[2] वृदावन खड म कवि ने राधाकृष्ण के लीलामय रूप को व दना के छद म ही प्रस्तुत करते हुए कहा है कि यमुना के तट पर क्रीडा करने वाले बाँह डुलाते चलने वाले जगन्नाथ हरि एव राधा उन पर करुणा करें उनका अनुभ कर।[3] मथुरा खड म श्रीकृष्ण की मथुरा लीला की झाँकी प्रस्तुत की है। कृष्ण चरित्र की महत्ता अभि यक्त करते हुए उ होने कहा है कि व दावन लीला को समाप्त कर कस के वध के हेतु मथुरा म प्रवेश करने वाले श्रीकृष्ण उनका परमार्थ साधन कर द। कृष्ण के चरित्र को सब पापहर आयुकर धर्मार्थ काम एव मोक्ष इन चतु विध पुरुषार्थों की उपलब्धि का साधन स्वर्ग, मर्त्य पातालादि तीनो लोगो का वशीकरण तथा सुख दने वाला इन विभिन्न रूपो म वर्णित कर उसकी महत्ता बत लाई गई है।

---

१ उत्पत्ति पाल प्रल क कारक दीन दयाल।
पावन मन मो पर रहो राधा कृष्ण गुपाल ॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, विनान खड प्रारम्भिक छद छद सख्या नहीं।

२ शरद कमल छबि रद करन हरन दुरित समुदाय।
गुनि मनहर करुना करो राधापति के पाय ॥
प्रान पियारी कृष्ण की है त्रिभुवन की माय।
कृष्ण चरित बनन करो राधा होहु सहाय ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिदी साहित्य स० प्रयाग गोलोक खड, छद १ २

३ जमुना तट क्रीडा करत चलत डुलावत बाँह।
सो राधा हरि शुभ करो करुना कर जगनाह ॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिदी सा० स० व दावन खड छद १।

४ करि लीला ब्रज की सकल उद्यत कस वधाय।
मथुरा प्रविशत कृष्ण सो करो मोर परमाय ॥
सब पापहर आयुकर चारि पदारथ दानी।
वशी करन तिहु लोक को कृष्ण चरित सुखदानी ॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खड, छद १, २।

द्वारिका खंड म घट घट मे वास करने वाले शरणागत वत्सल, जगदीश, कृष्ण की भक्तिपूर्ण वन्दना कवि ने की है ।[1]

७ दास्य—इष्ट की सेवक से य भाव से की जाने वाली भक्ति दास्य भक्ति है । नम्रता पूर्वक प्रभु की सेवा इसमे अपेक्षित है । "जब तक भक्त को अपने स्वरूप का ज्ञान नहीं होता तब तक भगवान से उसका सम्बन्ध नहीं जुड पाता है । दास्य से भक्त को स्वरूप का बोध होना है द य भाव उत्पन्न होता है जो भक्ति का मूलाधार है ।[2] प्राय सभी भक्ति मे दास्य भक्ति भाव का समावेश हो जाता है । राव गुलाबसिंह जी के ग्रंथो म इस प्रकार की भक्ति के आधिक्य उदाहरण देखने को नहीं मिलते हैं ।

८ सख्य—इष्ट की सखा अर्थात मित्र भाव से भक्ति सख्य भक्ति के अ तगत अपेक्षित है । अत उद्धव सुदामा पाण्डव आदि के भक्ति भाव का विचार सख्य के अ तगत किया जाता है ।

उद्धव को गोपियो ने भी श्याम सखा ही माना है ।[3] सुदामा श्रीकृष्ण के गुरु भाई हैं । व जब कृष्ण म दिर म पहुँचते हैं तो उन्होने वहाँ के सेवको को अपना परिचय श्रीकृष्ण का मित्र एव गुरुभाई के रूप म ही दिया है ।[4] अत इनकी भक्ति सख्य के अ तगत स्पष्ट रूप से सिद्ध हो जाती है ।

९ आत्मनिवेदन—इष्ट के समक्ष अपने आपको पूर्ण रूप से निछावर कर देना नि श्रेय भाव से आत्मसमर्पण कर देना, आदि का समावेश 'आत्म निवेदन' भक्ति म हो जाता है । भक्त को अपने दोषो का यथावत ज्ञान होता है । अपने इष्ट

---

१ नमो सब घट वासकर नमो नमो जगदीश ।
शरणागत वत्सल नमो नमो अखिल अवनीश ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, द्वारिका खंड
छंद ८०२

२ मध्ययुगीन कृष्ण भक्ति धारा और चैत य सम्प्रदाय डॉ० मीरा श्रीवास्तव, प्रथम संस्करण, पृ० १२० ।

३ इक बोली यह स्याम पठायो । श्याम उनहि को सखा सुहायो ।
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खंड
छंद ३५५

४ भाषत अपनो नाम सुदामा । ब्रजन रावरो मित्र ललामा ।
अरु बोलत है कृष्ण को गुरभ्राता होय्यात ।
कृष्णचरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, द्वारिका खण्ड
छंद १११ एव १६

के समक्ष अपने इन दोषों को स्वीकार करते हुए इष्ट द्वारा उदारतापूर्वक, क्षमा की प्रार्थना वह करता है। उसके अन्तस्तल में यह विश्वास हो जाता है कि इष्ट अन्तर्यामी है, उनसे क्या छिपाना है? क्या छिपाया भी जा सकता है? अतः वह इष्ट से अपने उद्धार की, इष्ट की कृपा की कामना करता है।

कवि के शारदाष्टक एवं गंगाष्टक में आत्मनिवेदनात्मक भक्ति अभिव्यक्त हुई है। कवि ने अपनी दीनता, मतिहीनता को स्वीकार करते हुए शारदामाता से मंदता के विनाश की प्रार्थना की है।[1] इसी प्रकार मूढ़ता स्वीकार कर कवि अत्यंत युक्तिपूर्वक कहते हैं कि जब तक उनका उद्धार न होगा तब तक शारदामाता का मूढ़ता विनाशिनी नाम सार्थक कैसे होगा?[2] गंगाष्टक में कवि ने आत्मदोष की स्वीकृति देते हुए गंगा से प्रश्न किया है कि यद्यपि लोभ के लिए अनेक बुरे काम उन्होंने किए हैं, क्रोध, मोहादि सदैव उनके मन में विद्यमान रहे हैं, गंगा तो अधम से अधम पातकियों का उद्धार करने वाली है फिर उन्हें ही क्यों टाल दिया गया?[3] इस प्रकार नवधा भक्ति के विभिन्न रूपों की अभिव्यंजना राव गुलाबसिंहजी के ग्रंथों में हुई है।

माधुर्य भक्ति—राव गुलाबसिंह जी ने 'कृष्ण चरित' ग्रंथ में माधुर्य भक्ति

---

१ दीन जानि मोहि नैन कोरन सौं सारदरी।
एक बार दपि मात मंदता विनासिनी॥
शारदाष्टक, हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छंद १।

२ सुकवि गुलाब मैं हौं मूढ़न को पाल्क पै
रहत विसेस उरमाझ एक आसरी।
मेरी मंदता को जो न हरि है तो ह्वै है मात
मंदता विनासिनी के जस को विनासरी॥
शारदाष्टक हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छंद ५।

३ लोभ लागी कीने हैं कुचील काम राति घौस।
काम को गुलाम होय वाम रंग भीनौंरी॥
कोह मोह द्रोह को बसेरो उर ही में कियो।
गुरु द्विज देवन को मान पून लीनौंरी॥
सुकवि गुलाब मात यतो अघ ओघ मैं त, उधारनो
अधम उधारनी विचार तोहि की नौंरी॥
घोर पाप रौरवान कोटिन की पाँति हूते
तारिवे की बार का है मोहि टारि दीना री॥

म सलग्न हो गई। गोलोकोम्भवा यही राधा व दावन धाम मे अवतीण हुई और व्रज मण्डल मे भक्त जन की आराध्यवती बनी। रमण की इच्छा से धावन करती राधा श्रीकृष्ण के समीप आ पहुँची इसी स इसका नाम पडा। श्रीमामा का नाप भी राधा के व्रज मे उत्पन्न होने का कारण बताया गया है।[1] यथाथ म इसी पौरा णिक आधार को ग्रहण करते हुए राधा की उपासना मध्य युगीन वष्णव भक्ति में स्थान पा सकी है। इसक पूव कृष्ण भक्ति म राधा को स्थान प्राप्त नही है। कुछ विद्वानो का तो यह अभिमत है कि माधुय भाव की उपासना प्रवलित हो जान के बाद राधा को उसम स्थान प्राप्त हुआ है। राधा की उपासना प्रवनित हा जाने के बाद राधा को उसम स्थान प्राप्त हुआ है। राधा की उपासना होने ही माधुय भाव की भक्ति म नव जीवन का सचार हुआ और उसम रस की निझरिणी प्रवाहित हो उठी। वल्लभ सम्प्रदाय म स्वकीया माना गया है।[2] चत य सम्प्रदाय म राधा का वणन परकीया याता भाव से किया गया है। राधा का सागोपाग विवेचन करन वाले श्री रूप गोस्वामी न अपने 'उज्ज्वल नील मणि' तथा 'हरिभक्ति रसामृत सिन्धु' म जो राधा का वणन किया है वह परवर्ती माधुय भावपरक भक्तिसम्प्रदायो मे अनेक रूपों मे स्वीकृत और समादृत हुआ है।[3] हरिदासी सम्प्रदाय ने सखी भाव से राधा कृष्ण की युगल उपासना का प्रचार किया है। राधिका और कृष्ण व्रज विहारी नही निकुज विहारी है। इनकी इष्ट देवी श्री राधा न स्वकीया है न पर कीया है। उनके राधा कृष्ण दोनो एक ही तत्व है। भिन्नत्व होन हुए भी दोनो समत्व है। श्री राधा का स्वरूप परमोज्वल है। उनका स्वरूप देख कर देवागनाएँ तक मोहित हो जाती हैं। श्री राधा का ऐश्वय महान है। उनका सौन्दय महान है। निम्बाक सम्प्रदाय म राधा का जो रूप है वह स्वकीया रूप है। स्वकीया भाव को प्रतिपादित करन के लिए इस सम्प्रदाय म पुराणो क विविध प्रसगो को स्वपक्ष मे उपाहृत किया जाता है। राधा वल्लभ सम्प्रदाय म राधा को उस अनादि वस्तु का नित्य रूप स्वीकार किया गया है जो इस अखिल ब्रह्माड म व्याप्त होकर अपनी

---

१ राधावल्लभ सम्प्रदाय सिद्धात और साहित्य—डॉ० विजय द्र स्नातक, द्वितीय सस्करण पृष्ठ १८० ।

२ हिन्दी साहित्य म राधा—डा० द्वारिका प्रसाद मीतल प्रथम सस्करण, पृष्ठ १७७ स १७९ ।

३ राधा वल्लभ सम्प्रदाय सिद्धान्त और साहित्य—डॉ० विजय द्र स्नातक द्वितीय सस्करण, पृ० १८७ ।

४ हिन्दी साहित्य म राधा—डा० द्वारिका प्रसाद मीतल प्रथम सस्करण, पृ० २०५, २०७, २०८ ।

नित्य क्रीडा मे आन द की अभिव्यक्ति करती रहती है। हित हरिवश न राधा का स्वरूप निर्धारित करत हुए उसे रसरूप कहा है। उनकी आराध्या इष्ट देवी राधा परात्परतत्व श्रीकृष्ण की आरा या है तथा अन्य आचार्यों द्वारा वर्णित राधा से भिन्न एव स्वत त्र है। वह एक साधारण गोपी नही वरन रस की अधिष्ठात्री एव प्रेम मूर्ति है।[1]

राधा के इस विकास क्रम की पृष्ठिभूमि पर राव गुलाबसिंह जी द्वारा विवेचित राधा क स्वरूप को देखना युक्ति सगत होगा। कृष्ण चरित के गोलोक खड म राधा को कृष्ण की प्रिय पत्नी के रूप मे प्रतिपादित किया गया है। श्रीदामा के शाप के कारण उसन व दावन मे ज म लिया है। व दावन म बाल्य वय मे श्रीकृष्ण से ब्रह्मा द्वारा उसका विवाह कराया गया है। कवि का यह विवेचन श्रीमद भागवत ब्रह्म वैवत पुराण एव गग सहिता मे प्रभावित है।[2]

माधुय भाव की भक्ति के अ तगत यशोदा का वात्सल्य भाव पूण प्रेम, व्रज गोपियो की काता भाव पूण भक्ति एव राधा की प्रणय भावना विचारणीय है। इन सभी रूपियो क माधुय भाव का आधार कृष्ण की विभिन्न लीलाएँ हैं।

लीला–श्रीकृष्ण का समस्त लीलाओ को प्रमुखत दो वर्गों म विभाजित किया जा सकता है। अद्भुत लीला एव माधुय लीला । मध्ययुगीन कृष्ण भक्त कवियो ने कृष्ण चरित के गान म इन उभय विध वग की विभिन्न लीलाओ को प्रस्तुत किया है। राव गुलाबसिंह जी के कृष्ण चरित म भी उभय प्रकार की लीलाओ का वणन किया गया है। कृष्ण चरित क गान में सम्भवत यह अनिवाय ही है।

अदभुत लीला–श्रीकृष्ण क ज म से ही अद्भुत लीलाओ का प्रारम्भ हो जाता है। कृष्ण ज म क पश्चात उनक परमात्मरूप को देखकर वसुदेव देवकी द्वारा उनकी स्तुति और उस स्तुति स कृष्ण का प्रसन्न होकर कस वध का उन्हे आश्वासन देना, उन्ह सताप प्रदान करना राव गुलाबसिंह के भी "कृष्ण चरित" म

---

१ राधा वल्लभ सम्प्रदाय सिद्धान्त और साहित्य–डा० विजय द्र स्नातक, द्वितीय सस्करण, पृष्ठ १९७, १९९ २०० २०५।

२ कृष्ण गमन ह्या वणन कीनों। ग्रथ भागवत मैं जिमि चीनो।
धर ब्रह्म ववत मझारा। गग सहिता माहि निहारा ॥
वनत हौ यहि निनकी रीती। करि हरिचरतन म प्रीती।
कृष्णचरित—हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, द्वारिका खण्ड छ द १६००

वर्णित है।[1] यह अद्भुत, अनन्य तथा अचिंत्य ही है। इसी प्रकार की अद्भुत भाव से पूर्ण लीलाएँ गोलोक खंड में तथा मथुरा खंड में वर्णित हैं यथा पूतना, शकटासुर, तृणावर्त आदि असुरों का बाल वय में कृष्ण ने किया हुआ वध तथा चाणूर मुष्टिक आदि मल्लों से तथा कंस आदि से किशोर वय में किया हुआ युद्ध और उसमें कृष्ण की विजय। इन सारी लीलाओं में श्रीकृष्ण शिशु अथवा किशोर अवस्था वर्णित है तो उनके विरोधक उनकी तुलना में शक्ति, बुद्धि आदि में प्रौढ़ हैं समूह में आघात करते हैं फिर भी कृष्ण की विजय कृष्ण की अद्भुत शक्ति का परिचय देती है अतः ये अद्भुत लीलाएँ हैं।

माधुर्य लीला—माधुर्य लीलाओं को कृष्ण का स्वरूप, कान्ताभाव से भक्ति करने वाली गोपियों तथा राधा आदि के आधार पर विभाजित कर उनका विवेचन करना औचित्यपूर्ण प्रतीत होता है। बाललीला एवं बाल लीला के प्रसंग में अभिव्यक्त यशोदा के वात्सल्यभावपूर्ण भक्ति की अभिव्यक्ति राधाकृष्ण लीला गोपी कृष्ण लीला, रासलीला, कृष्ण के मथुरागमन के पश्चात् राधा एवं गोपियों की विरह विरह की दशा एवं भ्रमर के माध्यम से श्रीकृष्ण के प्रति उद्धव के समक्ष अभिव्यक्त उपालम्भ आदि का समावेश माधुर्य लीलाओं में हो जाता है। अतः क्रम से उनका विवरण यहाँ प्रस्तुत है।

बाल लीला—श्रीकृष्ण की बाललीलाओं को हिन्दी साहित्य में, सर्वाधिक प्रतिष्ठा सूरदास जी ने दी है। सूरदास जी ने इसके लिए गीत शैली प्रयोग किया है जिसमें एक गीत में एक एक भाव को बाँधा। में वे अत्यधिक सफल रहे हैं। राव गुलाब सिंह जी ने दोहा चौपाई पद्धति का प्रयोग किया है अतः एक एक चौपाई में एकाधिक भाव समा सके हैं। इन बाल लीलाओं के अभिव्यंजन में कवि ने अपनी भावुकता, निरीक्षण की सूक्ष्मता आदि गुणों का परिचय दिया है। बाल लीला के कतिपय उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैं।

कृष्ण रिंगते हैं, जिसमें हो वे कभी कभी किंकिणी एवं नूपुरों को बजाते हुए कवि ने वर्णित किए हैं। इन किंकिणी एवं नूपुरों की ध्वनि को सुनकर मानिनी गोपगण एवं सारा त्रिभुवन हर्षित हो जाता है।[2]

---

१ जै हो जीव मुक्त तुम सर्वविधि करि मुक्त धाम।
कंस मारि मैं अवनि को हरि हौं भारतमाम।
कृष्णचरित्र—हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग गोलोक खण्ड, पृष्ठ २९०

२ कबहुँ किंकिनी नूपुरन की बजावत सोर।
जिहि सुन मानी गोप त्रिभुवन हर्षित होइ।
कृष्ण चरित्र, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, गोलोक खण्ड, पृष्ठ ४१२

कभी अन्य बालको के साथ श्रीकृष्ण दधि माखन की चोरी करने के लिए चल जाते है। कभी वे गाय बछडा का छोड देते हैं तो कभी गोपियो के घरो के रिक्त बतनो को तोडकर फेंक दत है। कृष्ण की इन लीलाओ स गोपियाँ त्रस्त हैं। श्रीकृष्ण के विरुद्ध शिकायत लकर वे यशोदा के पास पहुँचती हैं। वे कहती हैं कि श्रीकृष्ण ने उनके घरो म अनथ कर दिया है। वह असमय मे बछडो को छोड दता है। गोपियाँ दख लेती हैं तो श्रीकृष्ण हसकर भाग जाता है। अपन साथियो का साथ म लकर वह चोरी छिपे दूध, दही, मक्खन खा जाता है। जब सारे खाकर तप्त हो जाते हैं तब गोरस ब दरा को द देता है। रिक्त बतनो का फेक दता है। सब बालक एक साथ आनन्द मनाते हैं कौतुक करते है। इस प्रकार की छेड करने म उन्हें जरा भी सकोच नही है। घर मे अगर कोई वस्तु न मिल तो वे क्रोध दिखाते हैं। अबोध बालको का यह कह कर धमकाते हैं कि वे घरो मे आग लगाएँग और बालको को जलाकर भस्म कर देंग। सारे बालक जब इन बातो को सुन कर भय के कारण रो उठते हैं तो श्रीकृष्ण हसकर भाग जाता है।[1] श्रीकृष्ण के विरुद्ध शिकायत सदव नही होती कभी ये ही गोपियाँ उन्हें अपन घर बुलाकर भी माखन खिलाती है। उन्ह दधि माखन खाते देख कर आनदित भी होती हैं।[2] चोरी

---

१ चोरी माखन आदि की करी घरन के माहि।
ताहि जनावन गोपिका जाय जशोदा पाहि।
कही तोर सुत हम घर माही। इहि विधि करत अनीति महाही॥
छोरि दत बछरन बिन काला। देखि हसि भागत तत्काला॥
चोरि दूध दधि माखन खावै। जब वह साथिन सहित अघावै॥
तब गोरस बनरन को दइ। सबमिलि कौतुक करै नितई॥
रीत भाडन फारि फँकावै। करत कुटव नन फरकावै॥
वस्तु न मिल तब करि क्रोधा। लरकन स इमि कहत अबोधा॥
अब तुम्हरे घर लाय लगहो। या क भीतर तुमहि जर हो॥
रोय उठ सुनि बालक मारा। तब हसि भाग सुवन तुम्हारा॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, गोलोक खण्ड, छन्द ५३५ ५३६।

२ पुनि गोपी कृष्ण कौं हँसि हँसि घरन बुलाय।
दधि माखन पय खवाय क निरख हिय हुलाय।
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, गोलोक खण्ड, छन्द ५४१।

करते हुए श्रीकृष्ण कभी रंग हाथों पकड़े भी जाते हैं।[1]

अपनी आयु के बढ़ने के साथ कृष्ण की अभिलाषाएँ बढ़ती हैं। वे अब गोचारण के हेतु वन में जाना चाहते हैं। माता से जब वे आज्ञा मांगने पहुँचते हैं, उनके कल्याण के विचार से माता उन्हें कहा कि तुम्हारे जनक पास हैं वे गोचारण विवेकपूर्वक करते हैं। श्रीकृष्ण एवं बलराम दोनों भाई उसे प्राणों से प्रिय हैं। अतः उसकी यह इच्छा है कि उसके ये दोनों पुत्र किंचित भी उसकी आँखों से ओझल न हों।[2] माता के ममत्व ने, वात्सल्य ने कृष्ण की अभिलाषा को कुंठित करना चाहा किन्तु बाल हठ के सामने माँ के ममत्व को पराभूत होना पड़ता है। एक दिन कृष्ण अपने साथियों के साथ गोचारण के लिए वन में जाते हैं। कवि ने इस प्रसंग का बालकों की लीला एवं क्रीड़ाओं का अतीव सुन्दर वर्णन प्रस्तुत किया है। गोचारण के हेतु जाने वाले बालक विभिन्न पुष्प गुच्छों से सजे हुए हैं। विविध नूतन फलों को साथ में लेकर वे जा रहे हैं। रास्ते में चलते चलते कोई भाग कर किसी मित्र को ताली देता है तो कोई हितकारी मित्र से गले लगता है। चोरी लाई हुई वस्तुओं का छिप छिपे प्रदर्शन भी किया जा रहा है। कहीं आगे भाग निकलने की स्पर्धा है, तो कोई बीन बजाता चलता है। कोई हंस बगुलों की चाल से चला जा रहा है तो कोई मयूर के समान नाच उठता है। कोई पेड़ों पर बैठे बन्दरों की पूँछ खींचता है तो कोई पूछ पकड़ कर पेड़ों पर जा बैठता है।[3]

---

१ माखन खात गह तिनहि परासनि नें जाय।
रह्यो श्याम मुख करन में दधि माखन लपटाय ॥

कृष्ण चरित, हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग गोलोक खंड छंद १४५।

२ धेनु चरावन मुहि पठाऊ। मुनि मैया वालो हित भाऊ ॥
तात तुम्हारे नाग जनका। धेनु चरावत सहित विवेका।
प्राण हूँते प्यारे अधिक हो तुम दोनों भ्रात।
तातें मो नैनन ते न्यारे होउ न तात ॥

कृष्ण चरित हस्त०, हिन्दी साहित्य स० प्रयाग वृन्दावन खंड छंद ५८ ५९।

३ कुसुम गुच्छ नूतन फल नाना। श्रवन सिरन पर धार जाना ॥
कोऊ भाजत दे तारी। दौरि मिलत कोऊ हित धारी ॥
चोरी वस्तु को उघरत लुकाई। काहू को का स्तेत बनाई ॥
कोऊ काहू भाषि इमि भाग। नैन नीरि रह को आग ॥
कोऊ काऊ वान्द बीन बजाव। बक मराल गति चल चलाव ॥
काउ तिन में मोरन सम नाच। कोउ काऊ हाथ पकरि हित राच।
तरु पर कपि बालन करी। काउ काऊ खावत पूछ धनरी ॥
पकरि पूछ कपि की कोऊ वारा। बैठ जाय गात्र तरु डारा ॥

कृष्ण चरित, हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, वृन्दावन खंड छंद ८०।

सभी ग्वाल वन में पहुँचते हैं। भोजन के समय कृष्ण के सुंदर वचनों को सुनकर सभी आनंदित होते हैं। बछड़ों को नदी पर पानी पिलाकर उन्हें छाया में चरने के लिए छोड़ कर अपने भोजन के लिए वे नदी किनारे पहुँच जाते हैं। सब अपना अपना भोजन निकालते हैं पत्तों को रखकर आसन ढूँढ कर लाते हैं। आसन के रूप में किसी ने फूल बिछाएँ हैं तो किसी ने घास का आसन बनाया है। किसी ने पेड़ के सुकुमार पत्तों से अपना आसन बनाया है तो कोई सुंदर पत्थर आसन के रूप में ले आया है। किसी ने पेड़ों की छाल का आसन बनाया है। भोजन की तैयारी की जाती है और ऐसी खुशी में भोजन सम्पन्न होता है।[1] श्री कृष्ण ने पौगंडावस्था में प्रवेश कर पिता से गोचारण की अनुज्ञा मांगी तो माता पिता अतीव आनंदित हुए। दस सहस्र गायों का दान देकर श्रीकृष्ण को गोचारण की अनुज्ञा दी। मुहूर्त देखकर श्रीकृष्ण गोचारण को निकले तो नंद ने दधि तिलक लगा कर अन्य ग्वालों के साथ उन्हें भेज दिया। ग्वालों के साथ अपनी धेनुओं को लेकर अतीव हर्ष के साथ श्रीकृष्ण कुसुमाकर वन में पहुँचते हैं वनश्री देखकर उनका आनन्द अधिक बढ़ता है।[2] धेनु चराने के विधिवत प्रारम्भ के पश्चात श्रीकृष्ण के

---

१ कृष्णचंद के वचन सुहाना। सुनि सबहो ने मन मुद माना।
जाय सरित बछरन जल पाया। प्रेरि चरन हित छवि छाया ॥
भोजन हित हिय में हुलसाना। बैठ सरिता तट मतिवाना।
काढ़ि काढ़ि भोजन सब वारा। हित जुत धरन लगे पनवारा ॥
भाजन हित किन्हुं फूल बिछाये। काहू ने तृण जाय जमाये।
धर पत्र किहु ने सुकुमारा। किहु ने पाथर धर सुठारा ॥
काहू ने तरु त्वचा धरि लीना। इहि विधि भाजन सादन कीना।
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, वृंदावन खण्ड, छंद ९३

२ होत भये वय पौगण्ड प्रवेशा। पितु सन में कही रमेशा।
अब मैं तुम्हारी सासन पाऊँ। तो वन धेनु चरावन जाऊँ ॥
नंद जसोमति सुनि हुलसाया। गणक बुलाय सुसमय सुधाया ॥
कार्तिक सुदि अष्टमी शुभ वार। दस हजार गोदान कराइ ॥
होत प्रभात कलेव कराया। नन्द महर दधि तिलक लगायो।
ग्वालन हू करि तिनहि अगारी। धरि गाय साथ धनधारी ॥
गे सब सुकुमार वन माही। हर्षित भे लखि सोभ महाही ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, वृन्दावन खण्ड, छंद १३८।

हुए कवि ने कहा है कि इस मिलन प्रसंग में राधा कृष्ण ऐसे प्रतीत हो रहे थे जैसे कनक लता तमाल वृक्ष से मिली हो, बादलों में बिजली सुशोभित हो और नील रंग के पहाड़ पर रत्नखानि की गई हो। निर्जन रास स्थान में राधा कृष्ण दम्पति रसमाण हो गए थे। विनोद गोवर्धन पर्वत पर जा कर पर्वत गुफाओं में नृत्य करते रहे। इस दम्पति की तुलना कवि ने रति एवं काम देव से की है। वे जमुना तट पर जाकर जलक्रीड़ा में लीन हो जाते हैं, हर्षित हो जाते हैं। श्रीकृष्ण राधा के हाथ का लीला कमल छीनने का प्रयास करते हुए सफल हो जाते हैं तो दोनों भी हर्षित हो जाते हैं।[1]

राधाकृष्ण की इन लीलाओं के कारण वृन्दावन में उनके विरोधक बढ़ते हैं। राधाकृष्ण को वृषभानु के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। वृषभानु आदि सभी अन्य ग्वाला इन लीलाओं के सम्बन्ध में जान कर चकित हो जाते हैं। नन्दराय के वैभव के कारण द्वेष को अधिक बढ़ाने में वे सफल नहीं होते हैं। क्षुब्ध वन गाय भी अपना अभिमान छोड़ देते हैं। नन्द सुत को भगवान रूप में स्वीकार करते हैं। वृषभानु भी सभी प्रमाणों को देखकर सन्देह रहित होकर घर चले जाते हैं। परिणामस्वरूप वृन्दावन के सभी निवासी इस बात को स्वीकार कर लेते हैं कि राधा कृष्ण की प्रिया है तथा कृष्ण राधा के प्रिय हैं। दोनों को उन्होंने गोलोक वासी मान लिया है।[2]

---

१ पुनि राधा हरि हाथ से अपनो हाथ छुड़ाय।
करती मनि मंजीर ध्वनि चली कुंजन मं जाय॥
जाय तासु ढिग कुंज विहारा। लीनी उर लपटाय पियारी॥
कनकलता जिमि मिलत माला। घन मिलि बिजुरी लसत रसाला॥
रत्नखानि करि जिमि गिरि नीला। तिमि भे राधा कृष्ण रसीला॥
निर्जन रास सथान मझारा। रमे दम्पति अति हित वारा॥
राधा सजुत मदन गुपाला। गोवर्धन गिरि जाय विशाला॥
नाचत भये कन्दरन माहीं। रति म मथ सम अति उत्साही॥
पुनि जमुना तट जाय किशोरा। करत भये लीला चित चोरा॥
करि प्रवेश श्यामल जल माहीं। करि क्रीड़ा में मुदित समाही।
राधा कर कंज को लक्ष दलन को ताहि।
लीनो छीनि गुपाल न हर्षि गुलाब मटाहि॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग गोलोक खण्ड ५१३ ५१४ एवं ५१५।

२ रोग तिनहि तिनमें तिहि जारी। जाय धरे वृषभानु अगारी॥
लखि वृषभानु आदि सब ग्वारा। अचिरज मानत भये अपारा॥

शेष अगले पृष्ठ पर

एक अन्य प्रसंग में कवि ने श्रीकृष्ण का कदम्ब की छाया के नीचे वेणु बजाता वर्णित किया है। कृष्ण की वेणु बजाती हुई मोहनी मूर्ति राधा ने देखी। उस मोहक रूप पर आसक्त होकर अपना ज्ञान गंवा बैठती है। श्रीकृष्ण के रूप को देखकर वह ठगीसी रहती है। इक टक श्रीकृष्ण की मूर्ति को देखते देखते उसके शरीर में कम्प छूटता और पसीना लगने हैं। राधा सुन्दर मूर्ति को मूर्तिवत अपने सामने देख कर कृष्ण भी विस्मित हो जाते हैं। उनकी आँखें बन्द हो जाती हैं। उंगलियाँ का चलना बन्द होता है। साँस भी बन्द होता है और मुरली रव भी धीरे धीरे बन्द होता है इस प्रसंग में राधा एवं कृष्ण का एक दूसरे के प्रति प्रीति देखकर प्रेम विवश राधा को उसकी सखियाँ घर ले जाती हैं।[1] राधाकृष्ण लीला में राधाकृष्ण की युगल लीला, उनका पारस्परिक प्रेम भाव कवि ने सफलता के साथ प्रस्तुत किया है।

गोपी कृष्ण लीला—गोपीकृष्ण लीला के अन्तर्गत श्रीकृष्ण के साथ की हुई गोपियों की सभी लीलाओं का समावेश हो जाता है। जिसमें चीरहरण लीला एवं रास लीला प्रधान है। राव गुलाबसिंह जी द्वारा वर्णित चीर हरण प्रसंग एवं रास लीला के स्वरूप को यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है—

चीर हरण लीला—व्रज की गोपियाँ अपने मन की इच्छा के अनुसार पति प्राप्ति

वैभव न दराय को लोका। अधिक बनावन भये अरोका।
गोपिन गोपन तजि अभिमाना। नन्द सुत हि जान भगवाना॥
करि वृषभानुहि सकल प्रमाना। गे न देह रहित निज धामा॥
जानि राधिकहि हरि की प्यारी। राधा के प्रिय हरि ही विचारी॥
मानन भे सब व्रज के वासी। दाउत को गोलोक निवासी॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, वृन्दावन खण्ड, छन्द ४२८।

[1] जमुना तीर कदम्ब की छाया। नटवर वपु धर मन भाया॥
मोहन मूरति बेनु बजाना। देखे अचानक मृदु मुसक्याना॥
गई बिसरितन की सुधि राधा। रही ठगीसी रूप अगाधा॥
इक टक चितवन कम्पत गाता। फरकत अधर बिम्ब से राता॥
लगी कमला स सरस सुहाई। चित्र लिखे से भव के होई॥
मन्द भये दग अंगुरी मासा। भया मधुर मुरली रव ह्रासा॥
लखि दोउन की प्रीति अपारा। भय सखिन मन आनन्द भारा॥
राधा लेय गई घर साई। प्रेम विवस अति व्याकुल होई॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, वृन्दावन, खण्ड, छन्द ४५९

के लिए यमुना म नहाने जाती हैं। वस्त्र किनारे पर रखकर जब तब वे नहा कर ऊपर आती हैं श्रीकृष्ण उनके वस्त्र कदम्ब वक्ष की शाखाओं पर लटका देते हैं। उन्होंने जब वस्त्र देने के लिए कृष्ण की प्रार्थना की तो कृष्ण ने उत्तर म कहा कि उन्होंने नग्न होकर स्नान किया है उसका दोष मिटाने को व सूर्य का प्रणाम करें। श्रीकृष्ण के प्रेम म डूबी गोपियां न कृष्ण की बात मान ली। व हाथ जोड कर प्रणाम करती हैं। उन्हें अतीव नम्र भाव से प्रणाम करते देख श्रीकृष्ण सन्तुष्ट हो जाते है। वस्त्रो को अपने कधो पर रखकर नीचे उतर आते हैं। गोपियो के वस्त्र वे उनको दे देते हैं। गोपियो ने बडे चाव से ही उन वस्त्रो को अतीव आनन्द के साथ स्वीकार किया। श्रीकृष्ण के द्वारा दिये गये उन वस्त्राभूषणो को पहन व ठगी सी रही, श्रीकृष्ण के आधीन हो गयी। श्री कृष्ण ने उनकी दशा देख उनके मन की पहचान अतीव प्रीति से गोपियो को यह आश्वासन देते हैं कि अब गोपियो का व्रत फल सकल्प कुछ ही दिनो म सत्य हो जायगा। गोपियां व्रतपूजन नेम छोड़कर अपने घर लौट जाएँ। इतना कह कर शारदीय पूर्णिमा को उनके साथ रास का आश्वासन भी कृष्ण उन्हें देते हैं।[1]

रास लीला–रास लीला की चर्चा कृष्ण चरित" म तीन विभिन्न प्रसगो म आती है। पहला रास वृन्दावन खण्ड मे है। गोपियो के चीर हरण प्रसग म श्रीकृष्ण ने इस रास का आश्वासन गोपियो को दिया था। दूसरी रास मथुरा खण्ड वर्णित है। द्वारिका खण्ड म कुरुक्षेत्र की यात्रा म तीसरा रास रचा जाता हैं।

प्रथम रास–चीर हरण के प्रसग म श्रीकृष्ण ने शारदीय पौर्णिमा के दिन रास रचने की बात कही थी। रास लीला का यह आश्वासन गोपियो के लिए अत्यन्त

---

१ तिन हि देखि बोले भगवाना। तुमने नग्न कीन असनाना।
तातें तासु मिटावन खोरी। रवि हि प्रणाम करो कर जोरी॥
सुनि हरि वचन प्रेम रसमानी। कीन प्रणाम जोरि जुग पानी॥
तब हरि वस्त्र कंध पर धारी। कहै प्रसन्न अति नमित निहारी॥
तरुत उतरि दिये बर बासा। लीन तियन खरी अमित हुलासा॥
धारि वसन भूषन तन साईं। रहि ठगीसी हरि बस होईं।
लखि तिनकी अति प्रीति गुपाला। बोले मन गति जानि दयाला।
अब तुम्हरा व्रत फल सकल्पा। है है सत्य गयें दिन स्वल्पा॥
सब जावे घर आपन तजि व्रत पूजन नम।
तुम सग पूयो शरद मे करि हो रास सप्रेम॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, वृन्दावन खण्ड,

प्रिय था, चितचाहा था। अतः तब से गोपियों के लिए एक दिन एक वर्ष सा बीतता सा अनुभव हुआ। वर्षाऋतु के बीत जाने पर शरद ऋतु का जैसे ही आरम्भ हुआ श्रीकृष्ण को भी रास का स्मरण हो आया। उन्होंने मोर मुकुट जड़ाऊ आभूषण पहन मन पसन्द वस्त्राभूषण पहन कर तीन घड़ी रात बीत जाने पर प्रीति सहित उत्साह से भरकर, गले में वनमाल, कटी में काछनी पहन कर नटवर रूप बना अपने भवन से निकल वन में आये वनश्री सुन्दरता देख कर और प्रसन्न हुए।[1] रास स्थान में पहुँचकर ऊँचे वृक्ष पर चढ़ श्रीकृष्ण ने मुरली बजाई। जिन गोपियों ने व्रतनेम का साधन किया था मुरली में उनका नाम लेकर उन्हें पुकारा। मुरली में राधा का नाम सुनकर राधा प्रेमातुर हुई। रास स्थान को ढूँढने के लिए वह ठगीसी बाहर निकली उस अपने शरीर का मान जरा भी न रहा।[2] श्रीकृष्ण के प्रेम में डूबी हुई गोपियाँ जो विरहाग्नि में जल रही थीं, मुरली की ध्वनि सुनते हुए अपने घर के सभी कामों को त्यागकर घर से निकल पड़ीं। श्रीकृष्ण के प्रेम में डूबी होने के कारण ही उन्हें यह सम्भव हुआ था। कोई गाय दुहने के काम को छोड़कर निकली तो कोई दूध औटने के काम का त्याग कर। एक की प्रेमासक्ति इतनी तीव्र थी कि वह अपने बालक को छोड़कर निकली। अन्य पति की सेवा छोड़कर बाहर

---

१ चीर हरन बिरियाँ घनश्यामा। करन रास लीला अभिरामा॥
अश्विन शुक्ल पूर्णिमा माँही। कही हुति अति हित चित चाही॥
तबतें इक दिन वर्ष समाना। बीतत हो गोपिन कौं जाना॥
वर्षा बीत शरद जब आई। करि के सुमरन रास कन्हाई॥
तीन घड़ी राका निशि बीती। तब उत्साह धारि जुत प्रीति॥
मोर मुकुट धरि नगन जराऊ। भूषन बसन विमल मनभाऊ॥
उर बन माल कछनी काछ। नटवर रूप बना करि आछ॥
निकसि भवन स बन म आय। श्री सुखमि बन छबि मनसुख पाय॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, वृन्दावन खण्ड, छन्द ४६१।

२ उच्च वंश प चढ़ि मतिवाना। बेनु बजाई मधुर महाना।
जिन जिन तिय साध्यो व्रत नेमा। तिन तिन को ल नाम सप्रेमा।
मुरली माँहि बुलाई सोइ। सुनि राधा प्रमातुर होइ॥
भई ठगीसी ढूँढि सधाना। रह्यो न तनक हु तनक भाना॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, वृन्दावन खण्ड, छन्द ४६५।

निकल पड़ी।[1] राधा के साथ इन अन्य गोपियों को आते देखकर श्रीकृष्ण ऐसे हर्षित हुए जैसे अतिवृष्टि में मयूर आनन्द से नाच उठता है। श्रीकृष्ण ने अपने हाथ में राधा का हाथ पकड़ा अन्य गोपियों को साथ में लेकर एकान्त स्थान में जा पहुंचे। वहाँ पहुंच कर उन्होंने विभिन्न प्रकार से क्रीड़ायें की और वे सब उस समय रसवन्त थे अतः मनवांछित काम करते रहे कृष्ण ने भी गोपियों की कामना पूर्ण की।[2]

इसी रास में गोपियों को छोड़कर, राधा के साथ श्रीकृष्ण एकान्त स्थान में चले जाते हैं। कृष्ण के चले जाने का भान जब गोपियों को हो जाता है वे श्रीकृष्ण को ढूँढने लगती हैं। श्रीकृष्ण को ढूँढते ढूँढते गोपियाँ विरह के कारण विह्वल हो जाती हैं। इस खोज में उन्हें जमीन पर कृष्ण के चरण चिह्न दिखाई देते हैं, जिनमें कृष्ण चरणों के ध्वज जलज जव आदि चिह्नों को देखकर उन्हें विश्वास हो जाता है कि वे चरणचिह्न श्रीकृष्ण के ही हैं। उनकी धूली गोपियों ने अपनी आँखों में लगाई तो श्याम का कुछ स्मरण हो आया। उन्होंने फिर से जब चरण चिह्नों को देखा वे क्रोध के कारण अधिक विकल हुई क्योंकि श्रीकृष्ण के चरण चिह्नों के साथ वहाँ राधा के भी चरण चिह्न विद्यमान थे। उन्हें यह विश्वास हो चुका कि कृष्ण उन्हें ठगाकर असली राधा के साथ क्रीड़ा करने अन्यत्र जा पहुँचे हैं। कृष्ण के चरण चिह्नों का अनुसरण करती हुई वे अजाव खिन्न मन से कोकिलादय वन में पहुंची। कृष्ण विरह से वे दुखी थीं उसमें ही राधा को अकेली छोड़ जाने का कृष्ण का व्यवहार उनकी इस खिन्नता का कारण बन गया था। कृष्ण गोपियों का कोलाहल सुनकर चकित हैं। गोपियाँ आ पहुंची हैं ऐसा राधा से

---

१ आनहु ब्रजबाला हरि रागी सुनि मुरली विरहा गनि दागी।
त्यागि त्यागि घर काम तमामा चलत भइ हरि हित सनि बामा।
गाय दुहन कोऊ तिंहि तजि धाई कोऊ पय औटावन तजि जाई।
तजि बालकन चलत भई एका, पति सुश्रुषा त्यागि अनेका।
कृष्ण चरित्र, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग वृन्दावन खण्ड,
छन्द ४६७।

२ हरि हुए लखि तिन को प्यारा जिमि केकी अतिवृष्टि मल्हार।
करमैं कर राधा को धारी सग अन्य सब गोप कुमारी।
जात भय एकान्त स्थाना तहँ क्रीड़ा कीना विधि नाना।
रसरस हु तिंहि समय तमामा करत भय मन वांछित कामा।
कृष्ण चरित्र, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग वृन्दावन खण्ड,
छन्द ४७९।

कहकर वे अन्तर्धान हो जाते हैं।[1] जब गोपियाँ उस स्थान पर पहुँचती हैं तो वे अकेली वेष्टोन राधा को ही वहाँ पाती हैं। गोपियाँ शीतलोपचार के द्वारा राधा की बेहोशी को दूर करने का प्रयास करती हैं। किसी ने उस पर चन्दन छिड़का, तो किसी ने कस्तूरी का सिंचन किया। किसी ने अगर का प्रयोग किया तो किसी ने कुंकुम का लेपन किया। राधा की बेहोशी दूर हुई तो चारों ओर उसने गोपियों को पाया। गोपियों के मुख पर प्रश्न चिह्न था कि श्रीकृष्ण कहाँ गए हैं? राधा ने इस प्रश्न का ममत्व कर उत्तर देते हुए कहा है कि श्रीकृष्ण कहाँ गए हैं यह वह नहीं जानती। राधा के उत्तर से गोपियों का संतोष कितना हुआ यह वह नहीं जानती। राधा के उत्तर से गोपियों का संतोष कितना हुआ यह तो वे ही जानें किन्तु उन्होंने इतना ही कहा— राधे तू धन्य है। तूने श्रीकृष्ण को अनन्त मान दिये हैं। इसी से श्रीकृष्ण के कंधे पर बैठकर तूने वनविहार किया है।"[2]

द्वितीय रास–मथुरा खण्ड में श्रीकृष्ण के वृन्दावन में पुनरागमन के बाद दूसरे रास का विवेचन प्राप्त है। कवि ने अतीव सुन्दर ढंग से इस रास लीला का

---

१   ढूँढ़त हरि हारी गोपी सारी। अति विरहाकुल भई अगारी।
उपर अवनि कृष्ण पद देखा। ध्वज पवि सुणि जव जलज परेखा।
तासु धरि गहि नैनन लगाई। जानी कछुक श्याम सुधि पाई।
तिनहि श्यामा पद देखा। भई विकल अन खाय विशेखा।
बोली राधा सहित सुजाना। गये नन्द नन्दन बन आना।
देखत पाद पदम के चिह्ना। पहुँची कालिन्दी वन खिन्ना।
सुनि कोलाहल गोपिन केरा। कृष्ण चन्द्र ह्वै चरित घनेरा।
बोले राधा से सुन प्यारी। आय पहुँची है गोप कुमारी।
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, वृन्दावन खण्ड, छन्द ५१९।

२   कोऊ चन्दन मृगमद अगर कुंकुम को द्रव सोय।
राधा पर छिरकत भई अति विरह ज्वर जाय।
विरह विकल गोपिन सौं यों बोली वह बाल।
मैं नहीं जानो कित गये कवि गुलाब नन्दलाल।
बोली राधे धन्य तू दीनो दान अपार।
तातें हरि कंध पै कीनो विपिन विहार।
कृष्णचरित—हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, वृन्दावन खण्ड, छन्द ५२६, ५२८, ५२९

प्रस्तुत किया है। राधादिक गोपियो के साथ मिलने के पश्चात श्रीकृष्ण रास मण्डल के स्थान पर पहुच जाते है। मुरली ध्वनि से उनके चित्त मे चेतना का सचार करात है। रासलीला प्रारम्भ हो जाती है। जितनी गापिया थी उतन रूप श्रीकृष्ण न धारण किए। व दावन के ईश्वर श्रीकृष्ण व दावन में रमते रह। श्रीकृष्ण का रूप माधुरी को प्रस्तुत करते हुए कवि न लिखा है कि उन्होंने पिताम्बर एव वन मालाओ को धारण किया है वे नूपर एव मजीरो का निनाद कर रह है। प्रभात कालीन सूय सदृश उनकी अग कान्ती है। उन्होने मस्तक पर मुकुट धारण किया है। मानो म सुवण के सु दर कुण्डल बिजली के समान चमकते हैं।[1] इस रास लीला मे श्रीकृष्ण गोपियो के साथ व दावन के विभिन्न उपवना म विहार करते दिखलाए गए हैं। श्रीकृष्ण गोपी समूहो के साथ गोवधन के ऊपर पहुँचते है। उन्होने यह अनुभव किया कि इन गोपियों के मन मे गव घर करता जा रहा है। गापिया के गव हरण के हेतु वे राधा के साथ अन्तर्धान हो जाते हैं।[2] फिर प्रकट होकर श्रीकृष्ण रासलीला रचते हैं। गोपियो का श्रीकृष्ण के साथ मिलन इसी प्रकार शोभित हुआ जिस प्रकार बादलो म बिजली का मिलन होता है।[3]

---

१ पुनि ताही मिली श्याम सुजाना। जाय रास मण्डल के थाना।
राधादिक गापीन समेता। मुरली ध्वनि कीनो चित चेता।
सूर सुता के निकट सुशीला। लागे करन रास की लीला।
हुती गोपिका जितने रूपा। धरि लीन श्रीकृष्ण अनूपा।
व दावन के ईश्वर श्यामा। व दावन मे रमे ललामा।
पीत बसन वनमाला धारी। नूपुर मजीरन रव कारी।
प्रात काल रवि की छवि न्यारा। घर शीश म मुकुट सुढारा।
सु दर दामिनी दमक समाना। पहिरे कचन कुण्डल नाना।
कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खड छद ५३३

२ व दावन वन उपवन नाना। पुलिन निकुज मनोज्ञ महाना।
दखन सब गोपिन साथा। गिरि गोवधन गेअज नाथा।
गोपी नत यूथन क माही। मान देखि त्रिभुवन दुखदाही।
राधा जुत न अन्तर्धाना। हरा हत गोपिन अभिमाना।
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग मथुरा खण्ड छन्द ५३६

३ मिलि गोपी धनश्यामा स भई शोभित इहि भाय।
जसे घन म बिजुरी मिली गुलाब सरसाय।
कृष्ण चरित, हस्त०, हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, मथुरा खड, छद ५७५

कालिंदी के सुंदर तट पर वृंदावन में श्रीकृष्ण गोपियों के साथ नाचते गाते रहे। दोनों एक रस में डूब से मिल गए थे। श्रीकृष्ण ने मुरली में सुंदर राग बजाया और गोपियाँ मूर्छित हुईं। सारी नदियाँ वेग हीन हुईं। नीडोदभव परब्रह्म ने अचलता धारण की। देवताओं के भवनों में भी देवपति ने जड़ता का अचलता का विस्तार किया। पंडों ने भी सहजता ग्रहण की जग में निद्रा फैल गई। इस प्रकार गोपियों के साथ सारी रात भर क्रीड़ा कर श्रीकृष्ण सुबह के पहले चार घटिका नंद मंदिर में लौट आए जिससे इस रास को कोई जान नहीं पाया।[1]

तृतीय रास—कुरुक्षेत्र की यात्रा में राधा एवं गोपियों से भेंट होने पर रानियों के आग्रह पर श्रीकृष्ण इस तीसरे रास की रचना करते बतलाए गए हैं। इस रासलीला में गोप कुमारियों के साथ राजकुमारियाँ भी सम्मिलित हैं। रानियों के आग्रह पर राधिका ने रास की तैयारी की, रानियों को भी तैयार होने को कहा जिससे सकल सुखकारी रास किया जा सके। तब रात्रि के आरम्भ में आसमान में चंद्रोदय के प्रसंग में यह महान रास आरम्भ हुआ राधा एवं हरि उसमें सम्मिलित हो गए। श्रीकृष्ण की जितनी गोपियाँ एवं राजकुमारियाँ थीं उतने रूप धारण किये और दो दो के बीच हो गए ताल, मृदंग, वेणु सखियों के कंठ आदि की आवाज में मेखलाओं के नूपुरों की मधुर खनकार मिलकर एक कोलाहल हो गया था। श्रीकृष्ण की कांति ऐसी थी कि कोटि मदनों की शोभा जिनकी कांतिमानता के समक्ष लज्जित है। कुंडल एवं मालाओं से तथा बहुमूल्य पीताम्बर से वे मण्डित थे। कंकन, बाजूबंद मुकुट आदि शोभित कुंकुम चंदन श्रीकृष्ण ने धारण किया था। रास के मध्य में राधा माधव स्त्रियों के साथ रममाण हो गए मानो चंदन के दो पेड़ों पर उमंग भरे पंछी शोभित हों। इस रास में सारी रात एक क्षण के समान समाप्त हुई। सभी सुखी हुए कवि कहते हैं कि उनके सुख का वर्णन शेषनाग

---

१ वृंदावन में श्री घनश्यामा। कालिंदी तट पर अभिरामा।
गोपिन संजुत गावन लागे। मिल परस्पर रस में पागे।
भगवत ने कल राग बजाई। सब गोपिन ने मूर्च्छा पाई।
वेगहीन भई सरिता सारी। नीडोदभव अचलता धारी।
देवन भौन गह्यो तिहिं बारी। देव पतिन जड़ता विस्तारी।
गही सजलता तरुन तहाही। छाई गई निद्रा जगमाही।
सब निशि केली किन तिन साथा। चव घटका तरक जदुनाथा।
नंदराज के मंदिर आये। रास केलि कोऊ जानन पाये।
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खण्ड, छंद ५७६

भी नहा कर सकते। रास की सु दरता देखकर कृष्ण की रुक्मिणी आदि रानियाँ सुख से पूण हुई।[1]

उपालम्भ--कृष्ण चरित मे 'उद्धव गोपी प्रसग' एक विशेष महत्व रखता है। श्रीकृष्ण के मथुरा चले जान पर गोपियाँ अथाह दुख सागर म डूब जाती हैं। कृष्ण के विरह मे तडपती हैं श्रीकृष्ण स पुनर्भेंट की अभिलाषा म तडपती रहती हैं। कृष्ण के प्रति उनकी जो कांताभक्ति है उसके अनुरूप ही उनका यह आचार है। श्रीकृष्ण गोपियो के प्रेम मे परिचित हैं। ज्ञानी उद्धव के ज्ञान विषयक अभिमान को दूर करने उसे प्रेमतत्वाधिष्ठित भक्ति क प्रभावपूण दशन करान हेतु सदेशों के साथ श्रीकृष्ण उसे व्रजभूमि म भेजते हैं।

उद्धव जब व दावन मे प्रवेश करत है तब उन्हे व दावन क कृष्णमय रूप क दशन हो जाते है। गायो के पीछे हाथ मे लकडी एव मुरली लिए सु दर ग्वाल बालक उन्हे दिखाई दिए। य बालक कृष्ण लीला गा रहे थे सु दर राग अलाप रहे थे। उन्होने मोर मुकुट एव वनमालाएँ धारण की थी। वे मुरली बजा रहे थे।[2]

---

१ बोली राधा करहु तयारी। करि हो रास सकल सुखकारी।
तब निशि म सध्या की बारा। होत च द्रमा को उजियारा।
कीनो रासारम्भ महाही। रूपे राधिका हरि तिहि माही।
ही जितनी त गोपकुमारी। अरु जितनी ही राजकुमारी।
तितने रूप धरे भगवाना। जुग जुग के बिच भय सुजाना।
ताल मद ग रू वेणु की सखि कठन को आन।
कल काची नूपुरन की मिलि भौ श द महान।
कोटि मदन की शाभा लजाना। भये मदन मोहन द्युतिवाना।
कुडल माला मडित चारा। पीताबर धर मोल अपारा।
कचन अगद मुकुट सुहाना। धारे कुकुम चदन जाना।
राधा माधव रास मझारा। रमे तियन के सग सुढारा।
जैसे जुग चदन के सगा राजत उडगन सहित उमगा।
रमत रास भे सगरी राती। बीत गई इक छिन की भाती।
भयो रो रास म सुख की साजा। ताहि न वणि सके अहि राजा।
लखि रास की छबि सुखसानी। रुक्मिनी आदि क कृष्ण की रानी।

कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हि दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारिका गढ़, छन्द १३०१, १३०२, १३०३।

२ येन हरत वनीघर श्यामा। लस होल्त ग्राल ललामा॥
गावत लीला कृष्ण की सु दर राग उचारि।

उद्धव को ये दर्शन बड़े ही प्रिय लगे । ब्रजभूमि में प्रवाहित प्रेम लक्षणा भक्ति से ज्ञानी उद्धव प्रभावित हुए बिना नहीं रहते । श्रीकृष्ण की माता पिता के सामने उनकी प्रेमलक्षणाभक्ति की वे प्रशंसा करते हैं ।[1]

इसके पश्चात उद्धव की ब्रज वनिताओं से भेंट हो जाती है । विरह के दुःख का अत्यंत प्रभावपूर्ण रूप उद्धव के समक्ष प्रस्तुत हो जाता है । गोपियाँ कृष्ण की रूप कर, लीलाओं का स्मरण करती हुई उद्धव के समक्ष एक भ्रमर के माध्यम से, उपालम्भ देती है जिसमें गोपियों की प्रेमलक्षणा भक्ति का अभिव्यंजन होता है ।

सारथी से गोपियों को ज्ञात होता है कि उद्धव कृष्ण के सखा हैं । इस वार्ता को जानकर सभी गोपियाँ हर्षित होती हैं उद्धव से एकांत में बैठकर श्रीकृष्ण के, चरित्र को सुनने की इच्छा से उद्धव के साथ वे कदली वन में पहुँच जाती हैं । राधा कृष्ण विरह में अपनी सुधबुध खोकर कदली वन में बैठी थी, कृष्ण चिंतन में डूबी थी ।[2]

उद्धव के समक्ष राधा कृष्ण विरह में अपनी दशा को प्रकट करती है । वह

नाचत ताल बजाय को उमग मोहन अनुहारी ।
मोर मुकुट वनमाल धर कर मुरली वर गात ।
चहुँ दिसि ते गायन पाठ आवत हिय हर्षात ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मथुरा खंड, छंद ३०२ ३०३, २०८ ।

१ हो तुम धन्य कृष्ण की पितु माइ ।
प्रेमलक्षणा भक्ति तुम्हारी । है परी पूरन कृष्ण मुरारी ॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, मथुरा खंड, पृ० ४४, छंद क्रमांक नहीं ।

२ इक बोली यह श्याम पठायो । होय उनहीं को सखा सुहायो ॥
इक बोली यह उद्धव नामा । आयो कालिन्दी के धामा ॥
पठयो पत्री दे वनमाली । इहिं विधि मैं जानी आली ॥
सो सुनि सब गोपी हर्षाई । पुनि आपस में इमि बतराई ॥
मनमोहन को अब व्यवहारा । सुन बैठि एकांत उचारा ॥
तान लेय उद्धव हि संगा । गई कदली वन धारि उमंगा ॥
हुती तहाँ वृषभानु कुमारी । जमुना तट वर कुंज मझारी ॥
बैठी वर मंदिर के माँही । कृष्ण ध्यान रत तनु सुध नाँही ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खंड, छंद १३५ ।

कहती है कि यमुना के तीर वे ही हैं जो कृष्ण के समय थे। वन भी वे ही हैं। क्रीडा स्थानों में भी कोई परिवर्तन नहीं आया। पवन आज भी मंद गति से बहता है। सुगंध से युक्त होकर बहता है। श्रीकृष्ण के बिना सारा नीरस है। मरती को जिलाने के लिए राधा कृष्ण को पुकारती है। अपनी विकल अवस्था में राधा शय्या पर मूर्छित होकर गिर पडती है। राधा की कृष्ण में तन्मयता देख कर उद्धव भी पसीज उठते हैं। सखियों के मुख मुरझा जाते हैं।[1]

गोपियों ने कृष्ण के व्यवहार का स्मरण कर अनेक प्रसंग उद्धव के सामने प्रस्तुत किये है। कृष्ण ने उन्हें एक बार त्याग दिया है फिर से कभी उनकी खबर नहीं ली है। गोपियां उद्धव से अपनी दशा कहते हुए बतलाती हैं कि वे अपने मन वाणी एवं शरीर से कृष्ण में लीन हैं। लोकमय रूढि लज्जा आदि त्याग कर त्रिभुवन के सिरताज कृष्ण का स्मरण करती हुई वे सिसक सिसक कर रो उठती हैं।

एक सखी कहती है कि उन्होंने कुलरीति, एवं कुलजनों का परित्याग किया है फिर भी श्रीकृष्ण ने उनकी प्रतिष्ठा नहीं रखी। अब उनके सन्देशों में वे कैसे विश्वास करें। वे अबलाएँ हैं। सभी प्रकार से हीन हैं। श्रीकृष्ण वियोग से क्षीण बन गई हैं।[1]

---

१ सुनि उद्धव के वचन रसाला। बोली राधा सुमरि गुपाला॥
वे ही है जमुना के तीरा। वे ही है वन गहन गभीरा॥
वे ही है क्रीडा के थाना। मंद सुगंधित है पवमाना॥
पै नहि मनमोहन बनमाली। तात दीखत नीरस खाली॥
हे हरि रमानाथ गुनखानी। कहाँ गये तुम जग सुख दानी॥
दर्शन देहु मोहि क्षमा आई। प्रभु मरती को लेहु जिवाई॥
ऐसे कहि राधा दुख मोई। पूरी सेज पै मूर्छित होई॥
तहँ उद्धव मन करुणा आई। ग आलिन के मुख मुरझाई॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मथुरा खंड,
छंद ३४७।

२ हमने करि मोहन से प्रीती। त्यागी दीन कुल जन कुलरीती॥
तऊ हरि ने हमको तजि दीनी। हमर कत की कानन कीनी॥
अब तिनके सदेश मझारा। करे कहाँ विश्वास उदारा॥
हम है अबला सब विधि हीनी। हरि वियोग से भई अति छीनी॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग मथुरा, खंड,
छंद १५८।

दूसरी कह उठी, हे सखि विद्या पढ़कर श्रीकृष्ण अब सूज बने है। मथुरा म अपने कुल मे हैं। व किसी प्रकार व्रज को याद ही नहा कर सकत। क्या व अपनी माता पिता को कभी याद करत हैं? क्या कभी पिछली बाता का उ ह स्मरण हो आता है? हम तो निराधार दासी हैं। वे अविनाशी क्यो हमारा स्मरण करेंग ?"[1]

अपनी विरह व्यथा का व्यक्त करत हुए गोपिया न कहा है कि विरह जनित भीषण व्यथा का काई दूसरा समझ नही सकता। केवल वही जीव जानता है जो भुक्त भोगी है किन्तु उस यथा का वणन करना उसके लिए भी सम्भव नही होता। भल ही हृदय में बाण लगे उसकी वेदना सही जा सकेगी, विरह की वदना सही नही जा सकती अत प्रिय विरह यथा किसी को भोगनी न पड। स्वामी निराश करते हुए किन्तु आशा देकर, उन्ह विकल दशा म छोडकर मथुरा गए हैं। इतना सम्भवत समुचित न था इसलिए अब उन्होने योग की चिटठी लिख भजी है। ठीक ही है निर्मोही लोगा का वत्त ही अति विचित्र हुआ करता है। गोपिया न उनके पतियो की सवा न की थी, उनके साथ अनेक बार वे झूठ बाली थी और अब अच्छा नाक कान कटवा लिए हैं उनके हृदयो म दया का वास कहाँ होगा? वे कठोर ही हैं।[2] उद्धव के साथ वार्तालाप म गोपिया की कृष्ण की लीला स्मति जाग्रत हो जाता

---

१ इक बोली ह हरि के मीता। तू है सब विधि परम पुनीता॥
आयो है हरि ही को प्रेरयो। हम ह न निज हित कर हेरयो॥
त है मेरो मान्य महाही। मांगी लेहु जो मन म आही॥
जसतस हमको हरि क पासा। पहुचाक करि सहित हुलासा॥
इक बोली अलि अब भगवाना। विद्या पढि के भय सुजाना॥
हैं मथुरा मैं निज कुल नाही। व्रज की सुरति करत क नाही॥
मातु पितु कौं कबहू ताता। सुमरत है कहि पिछली बाता॥
हम हैं बिन दामन की दासी। क्यो गुलाब सुमर अविनासी॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हि दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, मथुरा खड
छद ३६२।

२ व्यथा विरह जनित बलवाना। ताहि न जानि सक कोऊ आना॥
केवल जीव ही जानत ताही। सोऊ वर्नि सक तिहि नाही॥
लगो बान उरमाही भलाही। प्रिय बिछुरन जनि होहु कदाही॥
करि निराश द आशा साई। ग मथुरा तजि विकल महाई॥
ताहू पर लिखवायो योगा। अदभुत वत्त निर्मोही लोगा॥
निजपति कर न कीन उपचारा। तिहि सग छल बच भाषि अपारा॥

कहती है कि यमुना के तीर वे ही हैं जो कृष्ण के समय थे। वन भी वे ही हैं। क्रीडा स्थानो मे भी कोई परिवर्तन नही आया। पवन आज भी मन्द गति से बहता है। सुगध से युक्त होकर बहता है। श्रीकृष्ण के बिना सारा नीरस है। मरती को जिलाने के लिए राधा कृष्ण को पुकारती है। अपनी विकल अवस्था म राधा शय्या पर मूर्छित होकर गिर पडती है। राधा की कृष्ण मे तन्मयता देख कर उद्धव भी पसीज उठते हैं। सखिया के मुख मुरझा जाते हैं।[1]

गोपियो ने कृष्ण के व्यवहार का स्मरण कर अनेक प्रसग उद्धव के सामने प्रस्तुत किय हैं। कृष्ण ने उन्हे एक बार त्याग दिया है फिर से कभी उनकी खबर नही ली है। गोपियाँ उद्धव से अपनी दशा कहते हुए बतलाती हैं कि वे अपने मन वाणी एव शरीर से कृष्ण म लीन हैं। लोकमय, रूढि, लज्जा आदि त्याग कर त्रिभुवन के सिरताज कृष्ण का स्मरण करती हुई व सिसक सिसक कर रो उठती हैं।

एक सखी कहती है कि उन्हाने कुलरीति, एव कुलजना का परित्याग किया है फिर भी श्रीकृष्ण न उनकी प्रतिष्ठा नही रखी। अब उनके सदशो म वे कैसे विश्वास करें। वे अबलाए हैं। सभी प्रकार से हीन है। श्रीकृष्ण वियोग स क्षीण बन गई हैं।[2]

---

१ सुनि उद्धव के वचन रसाला। बोली राधा सुमरि गुपाला॥
वे ही है जमुना के तीरा। वे ही है वन गहन गभीरा॥
वे ही है क्रीडा के थाना। मद सुगधित है पवमाना॥
प नहि मनमोहन बनमाली। तात दीखत नीरस खाली॥
हे हरि रमानाथ गुनखानी। कहाँ गय तुम जग सुख दानी॥
दरशन देहु मोहि छाया आई। प्रभु मरती का लेहु जिवाई॥
ऐसे कहि राधा दुख भोई। पूरी सेज प मूच्छित होई॥
तहँ उद्धव मन करुणा आई। ग्वालिन के मुख मुरझाई॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मथुरा खड, छद ३४७।

२ हमने करि मोहन से प्रीती। त्यागी दीन कुल जन कुलरीती॥
तऊ हरि ने हमको तजि दीनी। हमरे कत की कानन कीनी॥
अब तिनके सदेश मझारा। करे कहाँ विश्वास उन्हारा॥
हम है अबला सब विधि हीनी। हरि वियोग से भई अति छीनी॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग मथुरा, खड, छद १५८।

दूसरी कह उठी, 'हे सखि विद्या पढ़कर श्रीकृष्ण अब सुजान बन गए हैं। मथुरा में अपने कुल में हैं। वे किसी प्रकार व्रज को याद ही नहीं कर सकते। क्या वे अपनी माता पिता को कभी याद करते हैं? क्या कभी पिछली बातों का उन्हें स्मरण हो आता है? हम तो निराधार दासी हैं। वे अविनाशी क्यों हमारा स्मरण करेंगे?'[1]

अपनी विरह व्यथा को व्यक्त करते हुए गोपियों ने कहा है कि विरह जनित भीषण व्यथा को कोई दूसरा समझ नहीं सकता। केवल वही जीव जानता है जो भुक्त भोगी है किन्तु उस व्यथा का वर्णन करना उसके लिए भी सम्भव नहीं होता। भले ही हृदय में बाण लग उसकी वेदना सही जा सकेगी, विरह की वेदना सही नहीं जा सकती अतः प्रिय विरह व्यथा किसी को भोगनी न पड़े। स्वामी निराश करते हुए किन्तु आशा देकर, उन्हें विकल दशा में छोड़कर मथुरा गए हैं। इतना सम्भवतः समुचित न था इसलिए अब उन्होंने योग की चिट्ठी लिख भेजी है। ठीक ही है, निर्मोही लोगों का वृत्त ही अति विचित्र हुआ करता है। गोपियों ने उनके पतियों की सेवा न की थी उनके साथ अनेक बार वे झूठ बोली थीं और अब अच्छे नाक कान कटवा लिए हैं उनके हृदय में दया का वास कहाँ होगा? वे कठोर ही हैं।[2] उद्धव के साथ वार्तालाप में गोपियों की कृष्ण की लीला स्मृति जाग्रत हो जाती

---

१ इक बोली हे हरि के मीता। तू है सब विधि परम पुनीता।।
आयो है हरि ही को प्रेरयो। हम हू ने निज हित कर हेरयो।।
तू है मेरो माय महाही। मोगी ल्हु जो मन में आही।।
जसतस हमको हरि के पासा। पहुँचाव करि सहित हुलासा।।
इक बोली अलि अब भगवाना। विद्या पढ़ि के भय सुजाना।।
हैं मथुरा में निज कुल नाहीं। व्रज की सुरनि करत कै नाही।।
मातु पितु कों कबहू ताता। सुमरत है कहि पिछली बाता।।
हम हैं विन दामन की दासी। क्या गुलाम सुमर अविनाशी।।
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खंड, छंद ३६२।

२ व्यथा विरह जनित बलवाना। ताहि न जानि सक कोऊ आना।।
केवल जीव हो जानत ताही। सोऊ बनि सक तिहि नाही।।
लगो बान उरमाही भलाही। प्रिय बिछुरन जनि होहु कदाही।।
करि निराश द आशा साई। गे मथुरा तजि विकल महाई।।
ताहू पर लिखवायो योगा। अद्भुत वस्त निर्मोही लोगा।।
निजपति कर न कीन उपचारा। तिहि सग छल वच भाषि अपारा।।

है। इन स्मृतियां को अभिव्यक्त करती हुई ये कहती है कि व्रज की सांकरी गलियों में श्रीकृष्ण ने अनेक बार उनका पट पकडा था। हठकर, दोनों भुजाओं में पकड कर उन्हें गले लगाया था। उस प्रियतम को देखना उन्हें कब सम्भव होगा? वह वह दिन दिखाई देगा? जो विधि लिखित है वही होकर रहेगा। उसे कौन टाल सकता है?[1]

राधा ने भी श्रीकृष्ण के विरह में अपनी विह्वलता व्यक्त करते हुए अपनी कांता भाव की भक्ति का परिचय दिया है। वह कहती है कि उसने सदैव श्रीकृष्ण का स्मरण किया है। श्रीकृष्ण के विरह के कारण उसकी भूख एवं नींद पूर्ण रूप से नष्ट हुई है। उसे सदैव श्रीकृष्ण का स्मरण रहता है। वह शोक समुद्र में डूबी हुई है। उद्धव ही अब उसके उद्धारक है। राधा का उद्धार करने से अपार पुण्य की प्राप्ति उद्धव को होगी अतीव सुखकारी यश के वे अधिकारी होंगे।[1] राधा उद्धव से यह प्रार्थना करती है कि वे श्रीकृष्ण से उनकी भेंट कराएँ। राधा के वचनों में श्रीकृष्ण की महानता का जो स्वरूप ज्ञान उद्धव को हुआ उससे उद्धव आश्चर्य चकित हो जाते हैं। ज्ञानी उद्धव महाज्ञानी बनते हैं पूर्ण प्रवीण हो जाते हैं।[3] श्रीकृष्ण

कटवाय छिन में श्रुति नासा। तिहि उर कहीं दया कर बामा॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मथुरा खंड
छंद ३९०।

१ सांकरी सुंदर गलिन मझारा। गहि हमरा पट बारम्बारा॥
हठिकरि पकरि जुगल भुज मांही। हृदय लगात हुपि महाही॥
अस प्रीतम को लखि है प्यारी। कब ह्वै है वह दिन सुखकारा॥
जो विधि लिखित ललाट मझारा। नहिं कोऊ ताहि उलंघन हारा॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मथुरा खंड,
छंद ३९९।

२ । मैं सुमरत हो सदाही।
नींद भूख भजि गई समूरी। रहा याद हरि ही की पूरी।
डूबी शोक समुद्र मझारा। तू ही है कारक उद्धारा।
ह्वै है तो को पुण्य अपारा। पै है जस अति ही सुखकारा।
—कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मथुरा खंड,
छंद ४३६

३ इमि राधा के वचन सुनि उद्धव अचिरज कीन।
महाज्ञान को पाय कै पूरन भयो प्रवीन॥
—कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खंड
छंद ४५१

के पत्र मे ध्यान धारणा की जो बात कही गई थी, राधा न उसकी कडी आलोचना करते हुए कहा है कि ध्यान धारणादि तो विधवाओ के व्यवहार हैं। श्रीकृष्ण सदश पति प्राप्त हो जान पर उन्हें कसे अपनाया जाय। अर्थात अपनान पर श्रीकृष्ण का ही अपमान होगा।[1] राधा बेहाल हो जाती है उसकी व्याकुलता के कारण गोपियाँ भी व्याकुल हो उठती हैं। राधा को पुकारती हुई उसे गलाती हैं। राधा का फिर स उपचार कर जब उस होश आ जाता है तो शोक समुद्र म डूबी हुई वह सिर झुका कर बैठी रहती है।[2]

गोपियो की कान्ताभाव से युक्त मथुरा भक्ति से प्रभावित होकर, उनके प्रति समवदना के भाव रखने हुए उन्होंने श्रीकृष्ण के लिए जो सदेश दिए उसको साथ मे लेकर उद्धव फिर मथुरा म लौट आते हैं। व्रज की दशा का अनुमान कृष्ण को है। व्रज का हाल क्या है? ऐसा प्रश्न उद्धव मे करते हुए वे स्वय बेहाल हो जाते हैं। कृष्ण के मन म व्रज के प्रति अधिक अनुकम्पा को उद्दीप्त करने के अपने प्रयास मे राधा की दशा का यथा तथ्य रूप प्रस्तुत करते हुए उद्धव कहते हैं कि राधा न अपन आभूषणों को छोड दिया है। वह अतीव क्षीण बनी हुई है। उसके वस्त्र मलीन हुए हैं। पीडा में डूबी राधा को सखिया न श्वेत वस्त्र से ढँक रखा है। वह समूच विश्व से स्वतन्त्र केवल कृष्ण म लीन है। राधा क समान राधा ही ह। तीनों लोक म उसकी समता करन वाली कोई नही है।[3] गोपियो को शपथपूर्वक श्रीकृष्ण स भेंट

---

१ ध्यान धारणा नान तो है विधवा व्यवहार।
हम कस धार ताहि प्रभु लहि तुमस भर्तार ॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, मथुरा खड, छद ४६५।

२ लखि राधा की विकलता सब गोपी अकुलाय।
रोवत भई पुकारि क बार बार उर लाय ॥
पुनि करि क उपचार बहु राधहि चेत कराय।
डूबा शोक समुद्र म बठि सब सिर नाय ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, मथुरा खड, छद ४७१।

३ भूषन वर्जित अति मलिन अति ही छीन शरीरा।
राखी ढकी सित वसन म आलिन पागी पीरा ॥
है तुम म तत्पर वहै जगत अदभुत आहि।
राधा सम तिहुँ लोक म दूजी दीखत नाहि।
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, मथुरा, खड, छन्द ४९३, ४९५

है । इन स्मृतियों को अभिव्यक्त करती हुई वे कहती हैं कि ब्रज की सकरी गलियों में श्रीकृष्ण ने अनेक बार उनका पट पकड़ा था । हठकर, दोनों भुजाओं में पकड़ कर उन्हें गले लगाया था । उस प्रियतम को देखना उन्हें कब सम्भव होगा ? वह वह दिन दिखाई देगा ? जो विधि लिखित है वही होकर रहेगा । उसे कौन टाल सकता है ?[1]

राधा ने भी श्रीकृष्ण के विरह में अपनी विह्वलता व्यक्त करते हुए अपनी कांता भाव की भक्ति का परिचय दिया है । वह कहती हैं कि उसने सदैव श्रीकृष्ण का स्मरण किया है । श्रीकृष्ण के विरह के कारण उसकी भूख एवं नींद पूर्ण रूप से नष्ट हुई है । उसे सदैव श्रीकृष्ण का स्मरण रहता है । वह शोक समुद्र में डूबी हुई है । उद्धव ही अब उसके उद्धारक है । राधा का उद्धार करने से अपार पुण्य की प्राप्ति उद्धव को होगी अतीव सुखकारी यश के वे अधिकारी होंगे ।[1] राधा उद्धव से यह प्रार्थना करती है कि वे श्रीकृष्ण से उनकी भेंट कराएँ । राधा के वचनों में श्रीकृष्ण की महानता का जो स्वरूप ज्ञान उद्धव को हुआ उससे उद्धव आश्चर्य चकित हो जाते हैं । ज्ञानी उद्धव महाज्ञानी बनते है, पूर्ण प्रवीण हो जाते हैं ।[2] श्रीकृष्ण

कटवाय छिन में श्रुति नासा । तिहि उर कहाँ दया कर वासा ॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मथुरा खंड
छंद ३९० ।

१ सकरी सुंदर गलिन मझारा । गहि हमरा पट बारम्बारा ॥
हठिकरि पकरि जुगल भुज माँही । हृदय लगा । हर्षि महाही ॥
अस प्रीतम को लखि है प्यारी । कब ह्वै है वह दिन सुखकारी ॥
जो विधि लिखि हापत भये गई वस्तु कोऊ ताहि उत्पन हारा ॥
कृष्ण चरित हस्त० हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मथुरा खंड,
छंद ३९१ ।

३ पट वृषभानु नंद उपनंदा । वृद्ध तरुण बालक सुख कंदा ॥
गुंजमाल, वनमाल सवशी । मोर मुकुट धर लकुट प्रससी ॥
चल सकल ह्वै पूरन कामा । नाचत गावत हरि गुन ग्रामा ॥
सखि मुख हरि आगम सुनि राधा । प्रेम प्रफुल्लित होय अबाधा ।
उठि धायत हैं ह्वै बलकारी । मृतक पुरुष जिमि अमृत धारी ।
आलिन के वचन हर्षाई । दीने वर भूषन समुदाई ॥
देख कमलिनी हिय हर्षानी जिमि भ्रमरि को गंध सुहानी ।
बत्तीस आठ द षोडश लारा । यूथ गोपिका लेय उदारा ॥
कृष्ण चरित, हस्त०, हिंदी साहित्य स०, प्रयाग, मथुरा खंड, छंद ५१८ ।

के पत्र में ध्यान धारणा की जो बात कही गई थी, राधा न उसकी बडी आलोचना करते हुए कहा है कि ध्यान धारणादि तो विधवाओ के व्यवहार हैं। श्रीकृष्ण सदश पति प्राप्त हो जान पर उन्हें कस अपनाया जाय। अर्थात अपनान पर श्रीकृष्ण का ही अपमान हागा।[1] राधा बहोश हो जाती है उसकी व्याकुलता क कारण गोपियाँ भी व्याकुल हो उठती हैं। राधा को पुकारती हुई उस गलाती हैं। राधा का फिर स उपचार कर जब उस होश आ जाता है ता शोक समुद्र म डूबी हुई वह सिर झुका कर बठी रहती हैं।[2]

गोपिया की कान्ताभाव से युक्त मधुरा भक्ति से प्रभावित होकर, उनके प्रति समवेदना के भाव रखते हुए उन्होंने श्रीकृष्ण क लिए जो सदेश दिए उनको साथ म लकर उद्धव फिर मथुरा म लौट आते हैं। व्रज की दशा का अनुमान कृष्ण को है। व्रज का हाल क्या है ? एसा प्रश्न उद्धव स करते हुए वे स्वय बहाल हो जाते हैं। कृष्ण के मन मे व्रज के प्रति अधिक अनुकम्पा को उद्दीप्त करने के अपने प्रयास में राधा की दशा का यथा तथ्य रूप प्रस्तुत करते हुए उद्धव कहते हैं कि राधा न अपन आभूषणों को छोड दिया है। वह अतीव क्षीण बनी हुई है। उसके वस्त्र मलीन हुए हैं। पीडा म डूबी राधा का सखिया न श्वेत वस्त्र से ढक रखा है। वह समूच विश्व से स्वतन्त्र केवल कृष्ण म लीन है। राधा क समान राधा ही है। तीनों लोक म उसकी समता करन वाली कोई नही है।[1] गोपियो को शपथपूवक श्रीकृष्ण स भेंट

१ ध्यान धारणा नान तो है विधवा व्यवहार।
हम वस धार ताहि प्रभु लहि तुमम भर्तार॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, मथुरा खड, छद ४६५।

२ लखि राधा की विकलता ... के अनुसार दशन के लिए ...
रोवत ...

१ तहं तात जुय गोपिका आई। कृष्ण मिलन हित हिय हर्षाई॥
आय सखि जुत सम्मुख प्यारी। बठाये आसन गिरी धारी॥
करि पूजन पूछी कुशलता। इक टक निरखि हृदय हर्षाता॥
तबही करत भई शृगारा। हरि बिछुरत हित जेहे सारा॥
पान मध नहि चदन लाये। अमत समान अन्न बिसराये।
नयन करयो नहि हास्य न कीनों। तन सुधि त्यागि कृष्ण मन दीनों।
आनदाश्रु छोरती सोई। बोली गद्गद् वचन सुख मोई।
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खण्ड, छन्द ५२५

प्रयोग किया गया है। फिलासफी शब्द का अर्थ है विद्यानुराग। 'फिलासफी' की उत्पत्ति विश्व की अपूर्व एवं आश्चर्यकारक वस्तुओं के रहस्य को जानने के हेतु हुई है। भारतीय दार्शनिक की दृष्टि, पाश्चात्य दार्शनिक की अपेक्षा कहीं अधिक व्यावहारिक लोकोपकारिणी सुव्यवस्थित तथा सर्वांगीण होती है।[1]

पाश्चात्य देशों में जीवन की दृष्टि संघर्षशील रही है। अतः दार्शनिक चिंतन को गौण स्थान प्राप्त रहा है। प्राचीन काल से भारत में ब्रह्म विद्या सब विद्याओं में श्रेष्ठ मानी गई है। उपनिषदों में व्यवस्थित चिंतन से भी अधिक आत्मिक आलोक के साधन हैं। उपनिषदें हमारे समक्ष केवल अमूर्त दार्शनिक पदार्थों का संसार ही नहीं अपितु आत्मिक एवं अमूल्य अनुभव का संसार भी उद्घाटित करती हैं। इनका लक्ष्य व्यावहारिक है। ज्ञान मुक्ति का साधन है। एक विशिष्ट जीवन प्रणाली द्वारा ज्ञान का अनुसरण ही दर्शन है ब्रह्म विद्या है।[2]

भारत वर्ष में दर्शन शास्त्र की लोकप्रियता अन्य देशों की तुलना में अधिक रही है। दर्शन, धर्म एवं जीवन का गहरा सम्बन्ध भारत में रहा है। प्राचीन दार्शनिकों ने ब्रह्म तथा आत्मा की एकता प्रतिपादित की है। आत्मा को पहचानना, उसका साक्षात्कार करना ब्रह्म के साक्षात्कार का सबसे बड़ा उपाय माना जाता रहा है। आत्मसुख की प्राप्ति ज्ञानोपलब्धि का अंतिम फल माना गया है। आत्म साक्षात्कार के लिए उपनिषदों ने तीन साधनों की चर्चा की है—यथा—श्रवण, मनन एवं निदिध्यास। विपदग्रस्त प्राणियों को विपत्ति से सदैव की मुक्ति प्राप्त करा देने के प्रधान उद्देश्य से भारतीय दर्शन अनुप्राणित है। प्राप्त व्यावहारिक स्थिति में संतोष की प्रेरणा भारतीय दर्शन मनुष्य मात्र को देता है। विश्व जीवन में एक नैतिक व्यवस्था है। उसी को स्वीकार करते हुए कर्मफलानुसारी जीवन दृष्टि भारतीय दर्शन ने मनुष्य मात्र को दी है। सांसारिक दुख का कारण अविद्या बताकर उन्होंने ज्ञान को मुक्ति का साधन बतलाया है। अतः स्वतंत्र चिंतन के बावजूद भारतीय दर्शन के विभिन्न सम्प्रदायों में एकता है विरोध नहीं सामरस्य है। इन सम्प्रदायों ने अपनी-अपनी दृष्टि से परमतत्व का सुन्दर विवेचन किया है वे एक दूसरे के पूरक हैं।[3]

सामान्यतः दार्शनिक विचारों के अंतर्गत ब्रह्म माया जीव, जगत परमेश्वरा

---

१ भारतीय दर्शन—आचार्य बल्देव उपाध्याय, स० १९७१ ई० संस्करण पृ० ४,५।

२ उपनिषदों की भूमिका—डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन—अनुवादक रामनाथ शास्त्री, प्रथम संस्करण, पृष्ठ २०।

३ भारतीय दर्शन—आचार्य बलदेव उपाध्याय स० १९७१ ई० संस्करण पृष्ठ २० से २६ तक के विवेचन के आधार पर।

वतार आदि का विवेचन किया जाता है। राव गुलाबसिंह जी के दार्शनिक विचार प्रमुखत उनके कृष्ण चरित काव्य में देखने को मिलते हैं। अत राव गुलाबसिंह जी द्वारा अभिव्यक्त दार्शनिक विचारों का विवेचन यहा प्रस्तुत किया जा रहा है।

ब्रह्म—अद्वैत वेदांत दर्शन में ब्रह्म को जगत की उत्पत्ति स्थिति तथा लय का कारण कहा गया है। ब्रह्म की एक मात्र सत्ता व ज्ञान के अभाव में जीव की सत्ता मानी गई है। जीव उपासना के हेतु ईश्वर की कल्पना करता है। ईश्वर जगत का स्वामी एव नियता है। इसी से जीव उसकी उपासना करता है। वह ईश्वर को दया दाक्षिण्य, अगाध करुणा आदि गुणों से मडित मानता है। यही ब्रह्म का सगुण रूप है। सगुण ब्रह्म की कल्पना, व्यावहारिक दृष्टि से तथा उपासना के निमित्त की गई है। पारमार्थिक दृष्टि से ब्रह्म निरगुण ही है।[1] राव गुलाबसिंह जी ने श्रीकृष्ण को त्रिभुवन नाथ ब्रह्म, अज, अव्यक्त, अनादि एव अनत प्रतिपादित किया है। वे स्थिति पालन एव लय के कारक हैं। ब्रह्मदेव की प्रार्थना पर उन्होंने अवतार ग्रहण किया है।[2] श्रीकृष्ण के द्वारा इसी बात की भी पुष्टि कवि ने कराई है। श्रीकृष्ण स्वय यह कहते है कि वे ही ब्रह्मा, विष्णु एव शिव हैं सारे विश्व के पालनकर्ता है। दुष्ट जनों का नाश करने वाले सभी प्रकार से विश्व का पालन करने वाले तथा विश्व का सहार कर विश्राम लेने वाले हैं।[3] राव गुलाबसिंह जी ने श्रीकृष्ण को सर्वव्यापक सर्वात्मन रूप में प्रतिपादित कर उन्हे वासुदेव

---

१ भारतीय दर्शन–आचार्य बलदेव उपाध्याय स० १९७१ ई० सस्करण पृ०३५१–५२ तक के विवेचन के आधार पर।

२ (अ) जनि मारहु यह है मम भ्राता। तुमहि न जानत त्रिभुवन नाथा।
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिंदी साहित्य स० प्रयाग, द्वारिका खड, छद १५८।

(आ) हे श्रीकृष्ण ब्रह्म भगवता। अज अव्यक्त अनादि अनता॥
हे कारक पालक लयकारा। विधि विनता लहि मैं अवतारा॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, द्वारिका खड, छद ९५८

३ मैं ही हों विधि, विष्णु शिव सब जग को प्रतिपाल।
मैं ही हों खल जनन को नाश कर विकराल॥
कर पालना जगत की सब ही विधि अभिराम।
पुनि ताको सहार क आप लेन विश्राम॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, द्वारिका खड, छद ७०६,१५८१

कहा है ।[1]

राव गुलाबसिंह जी ने श्री कृष्ण का चतुर्भुजधारी परमेश्वर के रूप में भी वर्णन किया है ।[2] इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि ईश्वर के निर्गुण एवं सगुण रूप कवि को ग्राह्य हैं । श्रीकृष्ण के नाम महात्म्य को अभिव्यक्त करते हुए कवि ने कृष्ण नाम में सम्मिलित "क" कार कोटि जन्म के पातकों का नाश करने वाला कहा है तो नानवत "ऋ" कार कर्मफल के बंधन का नाशक है । 'ष" कार के उच्चारण मात्र से गर्भवास समाप्त हो जाता है तो 'ण" कार से मृत्यु के कष्ट समाप्त हो जाते हैं ।[3]

---

१ (अ) महाविष्णु के रोम मंझारा । बसत सदा ब्रह्मांड अपारा ।
तात वासु नाम है तामा । तुम हो ताके देव प्रकासा ।
तात वासुदेव यह नामा । है तुम्हरो महि मैं अभिरामा ।

कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, द्वारिका खंड, अंतिम छंद, छंद संख्या नहीं

(आ) वायु अग्नि आकाश जल महि तारा जन माँहि ।
देखि देखि श्रीकृष्ण ओ हर्षित होय महाहि ।

कृष्ण चरित हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग विज्ञान खंड प० ४, छन्द संख्या नहीं

२ (अ) रथ चलाय भूपति हितकारी । बिदा करें हरि सहित कुमारी ॥
चलन लगे तब भूपति सारा । रोवन लगे स्वयंवर वारा ॥
तब हरि नें धरि क भुज चारी । जुग भुज से गहि राजकुमारी ॥
जुग हाथन मैं धरि धनु बाना । समर करन लाग भगवाना ॥
लसत भये भूपति सब कसे । मृगपति आगे मृग गन जसे ॥

कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, द्वारिका खंड ३३१

(आ) करि अनुकम्पा दीन दयाला । उतरि पिलंग तैं जन प्रतिपाला ॥
तुरतहि लीन उठाय पियारी । धरि चतुर्भुज रूप बिहारी ॥
इक करतें तिहि केश सवारा । दूजें करतें अश्रु निवारा ॥
तीज करतें पवन करि । चौथो कर उर लाय ॥
बहुरि उठाय प्रियाहि । प्रभु लीनी हृदय लगाय ॥

कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, द्वारिका खंड, छंद ३८९, ३९०

३ कोटि जन्म के अघन को हरैं 'क' कार तुरत ॥
कर्म फन्दन को नाश कर 'ऋ' कार मतिवत ॥
गर्भवास को नाश । होत "ष" कार उचार तैं ॥
मिटत मृत्यु को त्रास । तागु 'ण' कार बखानत ॥

कृष्ण चरित, हस्त०, हिंदी साहित्य स० प्रयाग, गोलोक खंड, छंद ४०८,४०९

वष्णव दशनो म भगवान अथवा ब्रह्म की कल्पना विविध रूपा म प्राप्त होती है। निम्बाक मत म ब्रह्म की कल्पना सगुण रूप से की गई है। श्रीकृष्ण ही परब्रह्म है। वे दोषहीन, कल्याण गुण की राशि है।[1] वल्लभाचाय के मत मे ब्रह्म सवधम विशिष्ट अगीकृत किया गया है। उसमे विरुद्ध घर्मों की स्थिति भी नित्य माना गई है। भगवान की महिमा मानव मन के लिए अनवगाह्य है। वह "अणोर अणीयाम" होकर भी "महतो महीयान' हैं। वह अनेक रूप है। भक्ताधीन है। श्रीकृष्ण ही परब्रह्म हैं।[2]

राव गुलाबसिह जी ब्रह्म का विवेचन जहाँ एक आर निम्बाक मत के अनु सार सगुण रूप मे करते हैं वहाँ दूसरी ओर वल्लभ मतानुसार सव घम विशिष्ट मानते हैं। अत ऐसा प्रतीत होता है कि वे निम्बाक एव वल्लभ सम्प्रदायो की ब्रह्म सम्ब धी धारणाओ से प्रभावित हैं।

माया–भारतीय दाशनिक परम्परा मे माया के सम्ब ध म विचार करते हुए उस विद्या एव अविद्या माया इस रूप मे विभक्त किया है। अविद्या माया जीव की ब्रह्म साधना म कठिनाइयाँ निर्माण कर उसे जगत के भ्रम म फँसाती है। ब्रह्म प्राप्ति से दूर रखती है। विद्या माया ब्रह्म साधना की सहायिका मानी गई है। माया के विषय मे विचार प्रस्तुत करते हुए कवि ने कहा है माया के फ दे में[3] सारा जगत फँसा हुआ है। मैं और मेरा तथा तू और तेरा म उलझा हुआ है। परमेश्वर की माया स मोहित होकर लोग पाप म डूब रहते हैं। य विषय लोलुप लोग इसी माया के वश हाकर परमश्वर को नही जानत हैं।[4] योग माया कृष्ण की शक्ति स्व रूप है अपनी इसी माया का प्रयोग कर कृष्ण न यशोदा, गापियो आदि को भरमाया

---

१ अष्ट छाप और वल्लभ सम्प्रदाय, भाग १, डॉ० दीन दयालु गुप्त, द्वितीय सस्करण पृ० ४५।

२ भारतीय दशन–आचाय बलदव उपाध्याय–सन १९७१ ई० सस्करण, प० ४१४।

३ यह मैं हो यह मोर यह तेरो तू आहि।
इहि विधि माया फँद मैं सब जग फँस्यो महाहि॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, द्वारिका ख ड, छ द १३९२।

४ मम माया मोहित सकल लीन पाप मैं होय।
मोहि न क्यो हो जानि सक विषय विलोलुप लोय॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, मथुरा खण्ड, छन्द १५८।

है।[1] इसी योग माया की सहायता से मथुरावासी द्वारिका पहुँचाए गए हैं।

माया के विवेचन में अविद्या माया के स्वरूप का विचार भी राव गुलाबसिंह जी ने प्रस्तुत किया है तो याग माया के रूप म माया श्रीकृष्ण की शक्ति स्वरूपा भी वर्णित है। इस विवेचन पर श्रीमदभागवत के विचारो का प्रभाव स्पष्टत परिलक्षित होता है।

राधा का दार्शनिक स्वरूप—कृष्ण को परब्रह्म, परमात्मा के रूप म प्रस्तुत करन के साथ राधा का भी दार्शनिक रूप म विचार करना अनिवार्य हो जाता है। तत्त्व का विचार करत हुए उसे श्रीकृष्ण की ह्लादिनी शक्ति माना गया है। राव गुलाबसिंह जी न राधा कृष्ण के युगल रूप को प्रस्तुत कर उन्हे समान माना है।[2] राधा क प्रेम के कारण ही भगवान ने मानव दह धारण की थी। यद्यपि राधा और कृष्ण के शरीर दो है, भिन्न भिन्न है, वे दोनो एक ही बतलाए गए हैं।[3] राधा के नाम का महात्म्य प्रतिपादित करते हुए कवि न कहा है कि राधा का नाम सुनने म मोह, लोभ, शोक बाधक्य, मरण आदि भाग जात हैं।[4] राधा, श्री, विरजा एव धरती, श्रीकृष्ण की इन चार स्त्रियो म राधा सबसे अधिक प्रिय है।[5] राधा के साथ

---

१ हरि माया प्रेरित गई सब बात भुलाय।
कवि गुलाब करतो रही काम पूववत माय ॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, गोलोक खण्ड छन्द ३९३।

२ ... रूप गुण कृष्ण सम है ... ना के माहि।
पहिल आई याहि त अधिक अवस्था ... हि ॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, गोलोक खण्ड, छन्द ४२०।

३ राधा ही के प्रेम करी भय मनुज भगवान।
राधा हरी हरी राधिका है एकहि वपु जान ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, गोलोक खण्ड, छन्द ४२१।

४ मोह लोभ भयो शोक रु जरा मरण जग माहि।
भाजत राधा नाम सुनि यह गुलाब सचि आहि ॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, गोलोक खण्ड, छन्द ४२६।

५ राधा श्री, विरजा अवनि ए हरि की तिय चारि,
कवि गुलाब तिन मैं हु ही राधा अधिक पियारि ॥
कृष्णचरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, गोलोक खण्ड, छन्द ३९।

के कारण श्रीकृष्ण को मानव शरीर धारण करना पडा है ।[1] राधा कृष्ण की शक्ति रूपा के रूप म वर्णित है ।

अवतार—भगवान के अवतारो का विवेचन करत हुए राव गुलाबसिंह न यह कहा है, "गाय, साधु सुर, वेद आदि की रक्षा के हेतु भगवान स्वय अवतार धारण करते हैं । वे लोक कल्याण मे अत्य त निर्लिप्त भाव से काम करते हैं[2] पर मेश्वर के छ अवतारा का विवेचन कवि ने किया है । वे अवतार हैं—अशाश, अश, आवेश, कला पूण एव परिपूण । मरीचि आदि अशाश अवतार हैं तो ब्रह्मादिक अशावतार है । भागवादि आवेश अवतार है, तो कूम कपिलादि कला अवतार है । नरसिंह एव रामावतार पूण अवतार हैं तो गोलोक निवासी श्रीकृष्ण च द्र की परि पर्णावतार है ।[3] भक्ति भावानुसारी वे पथक पथक दीखते हैं । जहाँ पूण चिह्न लक्षित होता है वही परिपूर्णावतार है, परिपूणरूप है ।

---

१ ताते धरि करि मनुज तनु भरत खण्ड म जाय ।
वसो तहाँ मानुप चरित करो महा मनभाय ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, गोलोक खण्ड, छन्द ५१ ।

२ गाय साधु सुर द्विज निगम इनकी रक्षा हेत ।
करुना कर भगवान हरि स्वेच्छा तनुधरि लेत ॥
काम करत हरि आन तिनमे लिप्त न होय ।
ज्यो नट लीला करत पर आप न मोहित होय ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग गोलोक खण्ड, छन्द १७ १८ ।

३ षटविधि हरि अवतार बखाना । त अशाश अरु अश प्रमाना ।
त्यो आवेस रु कला कहावें । पूरन पूरन तम बुध गावे ॥
मरीचयादि अशास हि जानो । ब्रह्मादिक को अश बखानो ॥
भावबादि आवेस उदारा । कला कूम कपिला दिक सारा ।
पूरन नरहरि राम कहाहा । स्वेत द्वीपाधिप हरि आहा ।
परि पूरन तम हैं सुख रासी । कृष्ण चन्द्र गोलोक निवासी ।
है सब ब्रह्माड न क स्वामी । कर्ता हर्ता त्रिभुवन नाम ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिन्दी सा० सम्मेलन, प्रयाग, गोलोक खण्ड, छन्द १९ ।

४ भक्ति भाव करि जनन को पृथक पृथक दरसाहि ।
पूर्णचिह्न जिहि माहि सो परिपूरन तम आहि ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग गोलोक खण्ड, छन्द २२ ।

हो जाते हैं, भगवान भी पूर्ण रूप से उनके आधीन हो जाते हैं।[1] जो भगवान के भक्तों को कष्ट देते हैं ब्राह्मण एव गायत्री को पीडा देते हैं, जो हिंसक हैं यन एव देवता का द्वेष करते हैं भगवान अल्पकाल में उनका विनाश करते हैं।[2] राधा भगवान की लक्ष्मी से प्रिय है किन्तु भक्त राधा से भी अधिक प्रिय हैं।[3] भक्त से भी भगवान शिव उन्हें अधिक प्रिय है क्योंकि वे श्रेष्ठ वैष्णव हैं।[4] परमेश्वर श्रीकृष्ण के भक्तों का सत्कार कर मनुष्य ससार सागर से पार हो जाते हैं।[5] श्रीकृष्ण ही जन्म, मृत्यु बाधक्य रोग आदि के कष्टों का हरण करते हैं वे ही ससार सागर को पार कराते हैं।[6] भक्तों को दर्शन देने के हेतु भगवान स्वय चले जाते हैं।[7] भक्तों की रक्षा के हेतु

१ मन्त्री, नारि सुता दि तजि भक्त रहैं ममलीन।
म हू सबको त्यागि कै रहौं तिन हि आधीन॥

कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग गोलोक खण्ड, छद ११०।

२ जो भक्तन से करत विरोधा। द्विज गायत्री पीड करि क्रोधा।
हिंसक, सुर, मख द्वेष विघारी। विनशत अल्पहि कल मझारी।

कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, गोलोक खण्ड, छन्द १११।

३ लक्ष्मी हू तैं राधिका अधिक पियारी आहि।
राधा हु तें भक्त है प्यारे मोहि महाहि॥

कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, मथुरा खण्ड, छद १८३।

४ भक्तहू तें शिव है प्यारा। नहि कोउ शिव तें अधिक उदारा॥
जो नर शिव शिव रट सुजाना। निहि सग डोल शिव भगवाना॥

कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खण्ड छन्द १७४।

५ परमेश्वर श्रीकृष्ण के भक्त न को सत्कार।
करत गुलाब मनुष्य ते होत भवार्णव पार॥

कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मथुरा खण्ड, छन्द ४४३।

६ जन्म मृत्यु रोग रु जरा आदिक कष्ट अपार।
तिनके हारक कृष्ण हैं तारक भव के पार॥

कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, मथुरा खण्ड, छन्द ४४४।

७ भक्त दर्शन दन हित चलत भये घनश्याम॥

कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, मथुरा खण्ड छद ५१२।

भगवान सगुण रूप धारण करते है [1] भगवान भक्त का सम्मान भी करत हैं। महर्षि नारद के स्वागत मे उ होने स्पष्ट रूप से कहा है कि दुलभ स त की भेंट से य उप कृत हैं।[2] सुदामा की भेंट के प्रसग म वे उक्त भेंट से पूण काम हो जाने का प्रति पादन करते हैं।[3] भक्त के सकट मे उसकी आत पुकार सुनकर भगवान दौड पडते हैं। गजे द्र मुक्ति इसका उदाहरण है। पाडवो को सारी पृथ्वी जीतने पर भी राज्य नही मिलेगा ऐसा जानकर वे इन्द्र प्रस्थ का जाते हैं।[4] बलराम के गुणगान करने वाले लोग कृष्णच द्र के वश हो जाते हैं परमपद की प्राप्ति कर लेत हैं।[5] भक्त से थोडी वस्तु पाकर भी भगवान सतुष्ट हैं। अभक्त बहुमूल्य वस्तुएँ दे तो भी व उन्हें नही भाती। पत्र पुष्प फल अथवा पानी देन वाला भक्त भी उन्ह प्रिय है।[6] भक्त के

---

१ भक्त न की रक्षा अरथ सगुण होत जगपाल ॥

कृष्ण चरित हस्तलिखित, हि दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, मथुरा खण्ड छ द ५९२।

२ मनो करि द ान दियो हमको मुनिवर आय।

ब्रह्मासक्त हमस न को दुलभ स त मिलाय ॥

कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग द्वारिका खण्ड छ द ८१७।

३ तुम सुख सजुत माग मे आये हमर धाम।

तुम्हरे दर्शन करि भयो म परिपूरन काम ॥

कृष्ण चरित हस्तलिखित, हि दी साहित्य स० प्रयाग, द्वारिका ख ड, छन्द ११२९

४ पकर यो गज को ग्राह न तब गज भयो बिहाल।

गोरि गरुड हुत अधिक लियो बचाय गुपाल ॥

सगरी महि जीत तऊ मिल इनसे राज।

इन्द्रप्रस्थ को याहि तें चल्यो प्रथम व्रजराज ॥

कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, द्वारिका खण्ड, छन्द ८७८ ८८४।

५ इमि अन त बलराम के गुण गुण गाव लोय।

सो पाव सुख परम पद कृष्ण चन्द्र बस होय ॥

कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिंदी साहित्य स० प्रयाग, द्वारिका ख ड छन्द १०८३

६ थोरि वस्तु देय मुहि भक्ता। सा म लेहु होय अनुरक्ता।

दय अभक्त वस्तु मुहि भारी। सो न होत है मुहि हितकारि।

पत्र पुष्प, फल कवल पानी। भक्ति सहित मुहि अरप नानी ॥

कृष्ण चरित हस्तलिगित हिंदी साहित्य स० प्रयाग, द्वारिका ख ड, छंद ११३७।

विषय म अपनी आत्मीयता को राधा स स्पष्ट करते हुए भगवान ने कहा है कि जो उनको आना घर कर स्मरण करता है भगवान सदव उसके साथ रहत है। राधा भगवान को दिन रात स्मरण करती है तो वे भी राधा का दिन रात स्मरण करते हैं।[1] भगवान म पूण रूप से भावना रखने वाले भक्त ससार म विरल ही होते है।[2]

कमफल भाग्यवाद–कमफल एव भाग्यवाद एक ही सिद्धान्त क दो रूप हैं। इस जन्म का भाग्य पूवजन्म कर्मों का फल माना जाता रहा है। दोनो म कुछ भिन्नता होने क कारण दोनो नाम प्रचलित रह है। मूलत सिद्धान्त कमफल का है किन्तु प्रयत्न एव भाग्य य दो विचार धाराएँ उसके साथ समाविष्ट हो गई हैं। प्रयत्न एव भाग्य एक दूसरे के विरोधी दृष्टिकोण है उनका सघष मानव जीवन का विषय बना हुआ है। इस विषय के प्रतिपादन मे राव गुलाबसिंह जी ने लिखा है– 'मनुष्य अपने कर्मों के अनुसार जन्म ग्रहण करता है।'[3] ब्रह्मदेव ने जो भाग्य म लिखा है वह अटल है उसे बदला नही जा सकता।[4] 'कम के अनुसार ही मनुष्य स्वग अथवा नरक का अधिकारी बनता है।'[5] 'हानि लाभ सुख दुख सब कुछ दवाधीन है। समय आन पर भाग्य के अनुसार जो हम मिलना है मिल जाता है।'[6]

---

१ सुमर मोहि धारि मम आसा। रहो निरन्तर ताक पासा।
तुम सुमरत हो मुहि दिन रना। त्या म सुमरत तुमहि सुनना।
कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिंदी साहित्य स०, प्रयाग द्वारिका खड छद १२८८।

२ हैं दुर्लभ ससार म एसे भक्त सुजान।
जिनकी भगवान भाव म रहत भावना नान।
कृष्णचरित, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, विज्ञान खण्ड, पृष्ठ ४, छन्द सख्या नही।

३ आत जात ससार हु कमन क अनुसार।
कमहि त गुरु लघु चलन उपजत जन्तु उदार॥
कृष्णचरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मथुरा खड, १४९।

४ जो विधि लिख्यो लिलार मैं व्है है वही निदान।
यातें जाऊ म नहु धर हि धरों हरि ध्यान॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य स०, प्रयाग द्वारिका खड, छद १०९१।

५ जात स्वग म सत्व रत, जगत बसत रजलीन॥
नरक परत तम लीन सब निगुण है हरि लीन॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, विज्ञान खण्ड, पृ० १ छन्द सख्या नही।

६ हानिलाभ दुख सुख कुजस सुजस दव आधीन।
प्राप्त होत अपन समय शोच न करहू प्रवीन॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिंदी साहित्य स०, प्रयाग, द्वारिका खड, छद १४३।

भगवान सगुण रूप धारण करते है ।[1] भगवान भक्त का सम्मान भी करत हैं। महर्षि नारद के स्वागत मे उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा है कि दुलभ सन्त की भेंट से वे उप कृत हैं।[2] सुदामा की भेंट के प्रसग मे वे उक्त भेंट से पूण काम हो जाने का प्रति पादन करते हैं।[3] भक्त के सकट मे उसकी आर्त पुकार सुनकर भगवान दौड पडते हैं। गजेन्द्र मुक्ति इसका उदाहरण है। पाडवो को सारी पृथ्वी जीतने पर भी राज्य नही मिलेगा ऐसा जानकर वे इन्द्र प्रस्थ को जाते हैं।[4] बलराम के गुणगान करने वाले लोग कृष्णचन्द्र के वश हो जाते हैं परमपद की प्राप्ति कर लेते हैं।[5] भक्तो से थोडी वस्तु पाकर भी भगवान सतुष्ट हैं। अभक्त बहुमूल्य वस्तुएँ दे तो भी वे उन्हे नही भाती। पत्र पुष्प फल अथवा पानी देन वाला भक्त भी उन्हे प्रिय है।[6] भक्त के

---

१ भक्त न की रक्षा अरथ सगुण होन जगपाल ॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, मथुरा खण्ड छन्द ५९२।

२ भली करि दरसन दियो हमको मुनिवर आय।
प्रहासक्त हमसे न को दुर्लभ सन्त मिलाय ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारिका खण्ड छन्द ८१७।

३ तुम सुख सजुत मारग मे आये हमरे धाम।
तुम्हरे दरसन करि भयो म परिपूरन काम ॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य स० प्रयाग, द्वारिका खण्ड, छन्द ११२८

४ पकर्यो गज को ग्राह न तब गज भयो बिहाल।
दौरि गरुड हुत अधिक लियो बचाय गुपाल ॥
सगरी महि जीत तऊ मिल इनसे राज।
इन्द्रप्रस्थ को याहि त चल्यौ प्रथम ब्रजराज ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, द्वारिका खण्ड, छन्द ८७८ ८८४।

५ इमि अनन्त बलराम के गुण गुण गाव लाय।
सो पाव सुख परम पद कृष्ण चन्द्र बस होय ॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिंदी साहित्य स० प्रयाग, द्वारिका खण्ड छन्द १०८३

६ थोरि वस्तु न्य मुहि भक्ता। सो म लेहु होय अनुरक्ता।
दय अभक्त वस्तु मुहि भारी। सो न होत है मुहि हितकारि।
पत्र पुष्प फल केवल पानी। भक्ति सहित मुहि अर्प्प नानी ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य स० प्रयाग, द्वारिका खण्ड, छंद ११३७।

विषय मे अपनी आत्मीयता को राधा से स्पष्ट करते हुए भगवान ने कहा है कि जो उनको अपना घर कर स्मरण करता है भगवान सदैव उसके साथ रहते हैं। राधा भगवान को दिन रात स्मरण करती है तो वे भी राधा का दिन रात स्मरण करते हैं।[1] भगवान मे पूर्ण रूप से भावना रखने वाले भक्त ससार मे विरले ही होते हैं।[2]

कर्मफल भाग्यवाद—कर्मफल एवं भाग्यवाद एक ही सिद्धान्त के दो रूप हैं। इस जन्म का भाग्य पूर्वजन्म कर्मों का फल माना जाता रहा है। दोनों में कुछ भिन्नता होने के कारण दोनों नाम प्रचलित रहे हैं। मूलतः सिद्धान्त कर्मफल का है किन्तु प्रयत्न एवं भाग्य ये दो विचार धाराएँ उसके साथ समाविष्ट हो गई हैं। प्रयत्न एवं भाग्य एक दूसरे के विरोधी दृष्टिकोण हैं उनका सघर्ष मानव जीवन का विषय बना हुआ है। इस विषय के प्रतिपादन मे राव गुलाबसिंह जी ने लिखा है— "मनुष्य अपने कर्मों के अनुसार जन्म ग्रहण करता है।"[3] ब्रह्मदेव ने जो भाग्य मे लिखा है वह अटल है उसे बदला नहीं जा सकता।"[4] "कर्म के अनुसार ही मनुष्य स्वर्ग अथवा नरक का अधिकारी बनता है।"[5] 'हानि लाभ सुख दुख सब कुछ देवाधीन है। समय आने पर भाग्य के अनुसार जो कुछ मिलना है मिल जाता है।"[6]

१ सुमर मोहि धारि मम आसा। रहो निरन्तर ताके पासा।
तुम सुमरत हो मुहि दिन रैना। त्यो मै सुमरत तुमहि सुनैना।
कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य स०, प्रयाग, द्वारिका खण्ड, छन्द १२८८।

२ है दुर्लभ ससार मे एसे भक्त सुजान।
जिनको भगवान भाव मे रहत भावना नान।
कृष्णचरित, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, विज्ञान खण्ड, पृष्ठ ४, छन्द सख्या नहीं।

३ आत जात ससार है कर्मन के अनुसार।
कर्महि ते गुरु लघु चलन उपजत जन्तु उदार॥
कृष्णचरित, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, मथुरा खड, १४९।

४ जो विधि लिख्यो लिलार मैं सो है है वही निदान।
यातै जाऊँ मैं नहू घर हि धरौं हरि ध्यान॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिंदी साहित्य स०, प्रयाग द्वारिका खड, छन्द १०९३।

५ जात स्वर्ग मे सत्व रत, जगत बसत रजलीन॥
नरक परत तम लीन सब निर्गुण है हरि लीन॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग विज्ञान खण्ड, पृ० १ छन्द सख्या नहीं।

६ हानिलाभ दुख सुख कुजस सुजस दैव आधान।
प्राप्त होत अपने समय शोच न करहू प्रवीन॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित हिंदी साहित्य स०, प्रयाग, द्वारिका खड, छन्द १४३।

प्रयत्न करने पर ही जब हार हो जाती है तब दैव विपक्षियों को ही दक्षिण कहा जाता है।[1] सभी कार्य परमेश्वरेच्छानुसार होते हैं।[2] समय के साथ शत्रु मित्र बदलते रहते हैं।[3]

इस अध्याय में विवेचित राव गुलाबसिंह जी की भक्ति एवं दर्शन सम्बन्धी अभिव्यक्त विचारों के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि केवल रीति आचार्य कवि नहीं अपितु एक सहृदय भक्त कवि भी है। भक्ति के क्षेत्र में वैधी भक्ति एवं रागानुगा भक्ति दोनों ही रूपों की भक्ति का प्रतिपादन कवि ने किया है। यद्यपि ग्रन्थ के विवेचन में निम्बार्क एवं वल्लभ सम्प्रदाय से वे प्रभावित प्रतीत होते हैं। वे अन्य देवताओं की स्तुति भी करते हैं। अतः यह स्पष्ट है कि किसी सम्प्रदाय विशेष में कवि की भक्ति भावना आबद्ध नहीं है। कवि की प्रवृत्ति सर्व समन्वयात्मक रही है।

---

१ ज्यों पुतली को मनुज खिलारी। नाच नचावत मन अनुहारी॥
यों सब कर्म फलद जगनाथा। करत चराचर जीवन साथा॥
तजहु सोक मनको मति धामा। धीरज धर होय सब कामा॥
भल अनभल की थिरता प्यारा। नहि देहन मे रह इक सारा॥
भे सनरह बर हरि स हारयो। अक्षौहिणी तेइस दल धायो॥
जीत्यौ एक बार रन नाँही। शोच हुप मा यौ मन नाँही॥
अबहू आपुन अति रन धीरा। हार समर माँहि लहि पीरा॥
अपनो समय बाम है। जादु को दक्षिण विख्याता॥

कृष्ण चरित हस्तलिखित हिंदी साहित्य स० प्रयाग द्वारिका खंड छंद १४४।

२ शम्बर ने प्रद्युम्न को दियो सिंधु में डारि।
तिहि मछली निगलत भई हरि की इच्छा धारि॥

कृष्ण चरित हस्तलिखित हिंदी साहित्य स० प्रयाग, द्वारिका खंड, छंद १९६।

३ चन्द्र हि राखत मित्र चकोरा। तउ भखि अग्नि तजत इव घोरा॥
जलज मीत है जल रवि दाऊ। उखर गारत जारत सोऊ॥
जो विधि लिखित ललाट मझारा। नहि कोऊ ताहि उलंघन हारा॥

कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य स० प्रयाग, मथुरा खंड, छंद ३९९।

६ | प्रकीर्ण साहित्य

रीति तथा भक्ति ग्रन्थों के अतिरिक्त राव गुलाबसिंह जी का प्रकीर्ण साहित्य भी उपलब्ध होता है जिसके अन्तर्गत नीति टीका, अनुवाद एवं काव्य ग्रन्थों का समावेश हो जाता है। सुविधा की दृष्टि से इन सभी ग्रन्थों की विशेषताओं का समालोचन इस अध्याय में एकत्रित रूप में किया जा रहा है।

नीति साहित्य–नीति शब्द का सम्बन्ध संस्कृत की 'नी' धातु से है, जिसका अर्थ ले जाना होता है। धात्वर्थ की दृष्टि से नीति वह है जो ले जाय या आगे ले जाय। व्यापक अर्थ में नीति मनुष्य की सर्वांगीण उन्नति की ओर पथ प्रदर्शन करने वाली मानी गई है। संकुचित अर्थ में नीति शब्द युक्ति, हिकमत, उपाय दृष्टिकोण इनके समानार्थक रूप में भी प्रयुक्त मिलता है। अतः यह स्पष्ट है कि नीति की आवश्यकता मनुष्य को बहुत पहले से रही है। नीति का प्रधान लक्ष्य लोक रक्षा की वृद्धि उत्पन्न करना है।[1]

नीतिशास्त्र का विस्तृत विवेचन महाभारत के शान्तिपर्व में पितामह भीष्म ने किया है। नीति शास्त्र की परम्परा ब्रह्मदेव से मानी गई है। इसका रूप संक्षिप्त बनते बनते शुक्राचार्य की शुक्रनीति तक पहुंचता है।

हिन्दी में नीति साहित्य प्रभूत मात्रा में प्राप्त होता है। भक्तिकाल में कबीर, तुलसी, रहीम आदि कवियों ने अपने काव्य में नीति सम्बन्धी विचार प्रस्तुत किये हैं। सम्राट अकबर के दरबार के बीरबल एवं नरहरि महापात्र के नीति विषयक पद प्रसिद्ध हैं। सोलहवीं शताब्दी के अन्त में जमाल नामक एक मुसलमान कवि हुए जिनके नीति के दोहे राजस्थान में प्रख्यात हैं। वृन्द सतसई के रचयिता वृन्द कवि नीतिकार कवि के रूप में ख्याति प्राप्त हैं। कविवर बिहारी भी नीतिकार के रूप में मान्यता प्राप्त हैं। रीतिकालीन साहित्य में शृंगारी कविता के अतिरिक्त नीति काव्य रचना की प्रवृत्ति भी रही है।[2] नीतिकाव्य लोक जीवन से सम्बद्ध काव्य है। लोक जीवन की विभिन्न अनुभूतियों को सूक्ति के रूप में नीति काव्य में

---

१ हिन्दी नीति काव्य डा० भोलानाथ तिवारी प्रथम संस्करण, पृष्ठ २–३।
२ हिन्दी साहित्य का इतिहास–सम्पादक डा० नगेंद्र प्रथम संस्करण, पृष्ठ ३९६।

ममस्पर्शी अभिव्यक्ति मिली है। घाघ दीनदयाल गिरी आदि कवि लोक जीवन से सम्बद्ध कविता के कारण मा य हो चुके हैं। नीति का य का निर्माण आश्रयदाता राजाओ को नीति या लोक व्यवहार की शिक्षा देने के लिए भी होता रहा है। नीति विषयक रचनाओ का परीक्षण करने पर ज्ञात होता है कि नीति का य दो रूपो म लिखा गया है--स्वत त्र नीति ग्र थ के रूप म और शृगार तथा भक्ति के ग्र थो म प्रसगानुसार लिखित नीति छन्दो के रूप मे।

नीति के व्यापक अथ के कारण समाज को स्वस्थ एव सन्तुलित पथ पर अग्रसर करने व्यक्ति को धम अथ काम मोक्ष की उचित रीति से प्राप्ति कराने के जिन विधि या निषेध मूलक वयक्तिक और सामाजिक नियमो का विधान देश काल एव पात्र के सदभ म किया जाता है उन्ह नीति शब्द स अभिहित किया जाता है।[1] अत नीति के अ तगत राजा राज्य एव प्रशासन सम्बद्ध नीतियो का समावेश भी किया जाता रहा है। भारतीय साहित्य मे मनुस्मृति के विशिष्ट अध्यायो कौटलीय अथशास्त्र तथा शुक्रनीति जैसे ग्रन्थो म इसका विवेचन प्राप्त होता है। हिन्दी के भक्ति एव रीतिकालीन नीति कवियो के ग्र थो म राजनीति शास्त्र विषयक ग्रन्थो का अभाव ही रहा है।

राव गुलाबसिंह जी की ग्रन्थ सम्पत्ति मे नीति सि धु नीतिचन्द्र सूक्त शतक एव नीति मजरी--ये चार स्वत त्र नीति विषयक ग्र थ हैं। कृष्ण चरित म प्रसग वश नीति का विवेचन किया गया है। स्वत त्र नीति विषयक ग्रन्थों म स नीति सि धु एव सूक्तशतक अप्राप्य ग्रन्थ है। नीतिच द मे नीति सि धु के विषय म कवि न निम्नलिखित सकेत किया है--

विधि भाषी कवि नीति को भाषा भाषि सचेत।
नीति सिन्धु मैंने किया रीझ राम की हेत॥[2]

इस सकेत स यह स्पष्ट होता है कि यह ग्रथ रामसिंह जी क लिए कवि न लिखा था। ब्रह्मदेव द्वारा प्रतिपादित एव परम्परागत नीति का भाषा म प्रतिपादन नीति सिन्धु का विषय रहा है।

कवि राव गुलाबसिंह विरचित सूक्त शतक ग्रन्थ का भी उल्लेख ग्र थ सूचियो म प्राप्त है कि तु यह एक अनुपलब्ध ग्रन्थ है। शीषक स ऐसा अनुमान होता है कि यह सूक्तों क विषय म विवेचन करन वाल सौ छन्दो का एक सकलना त्मक ग्रन्थ रहा था।

नीतिचन्द्र ग्रन्थ नीतिसिन्धु का सार ग्रन्थ है। इस सम्बन्ध म कवि न ग्रन्थ म ही स्पष्ट सकेत निम्नलिखित रूप म किया है --

१ हिन्दी नीति डॉ० भोलानाथ तिवारी प्रथम सस्करण, पृष्ठ ४।
२ नीतिचन्द्र राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण प्रथम कला ततीय प्रकाश, छन्द ४९

"प विस्तर लखि पद्य कछु ठौर ठौर सं लीन ।
नीति सिन्धु को सार गहि नीति चन्द्र रचि दीन ।"[1]
+ + +
'नीति सिन्धु स उपज्यो नीतिछन्द्र तम टार ॥"[2]

नीति चन्द्र को यद्यपि नीति सिन्धु का सार रूप ग्रन्थ कहा गया है वह एव सक्षिप्त ग्रन्थ नहीं है। प्रकाशित ग्रन्थ म पूर्वाध एव उत्तरार्ध मिलकर उसकी पष्ठ सख्या २१० है। उसम सोलह कलाएँ एक सौ प्रकाश तथा १८७६ छन्द हैं। इस स अनुमान होता है कि इस नीति सिन्धु ग्रन्थ काफी बडा रहा होगा।

शुक्र नीति-राव गुलाबसिंह ने नीतिचन्द्र का निर्माण शुक्रनीति से प्रभावित होकर किया है। उनके अनुसार नीति के क्षेत्र म शुक्र ग्रन्थ सवश्रेष्ठ ग्रन्थ है।[3]

रचना काल की दृष्टि से नीति ग्रन्थों की परम्परा म शुक्रनीति कौटलीय अर्थशास्त्र के बाद की रचना मानी गई है। अनुमानत यह रचना सन ४ थी ५ वीं शताब्दी इसवी की रचना है।[4] मध्ययुग एव उनके उपरान्त न्याय एव कानून के व्याख्याओं न इस ग्रन्थ को एक आधारभूत ग्रन्थ माना है।[5] इस विवेचन से राज नीति शास्त्र में इस ग्रन्थ की योग्यता स्व स्पष्ट हो जाती है।

शुक्रनीति नीति चन्द्र-शुक्रनीति ग्रन्थ कुल पाच अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय म राजकृत्याधिकारों का विवचन किया गया है। इस विवचन मे नीतिशास्त्र का उपक्रम, उसकी प्रशसा, राजा का नीतिशास्त्र मे ज्ञान प्रबोधन, राजा के देवांश होने का निर्देश, उसके ७ गुण, प्रजा रजन, इन्द्रिय जय की आवश्यकता, विनाशकारण, राजा के व्यवहार का निर्देश साम तादि भेद, राजधानी, राजोचित भवन सभा भवन, मन्त्री भवन प्रजा वग स्थान, धमशाला, राजमाग आदि का निर्माण, राजा का कतव्य आदि का विवेचन किया गया है। द्वितीय अध्याय म राजा अकेले सभी काम निपटाने म अक्षम होता है अत उसे सहायकों की

---

१ नीतिचन्द्र राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण प्रथम कला ततीय प्रकाश, छन्द ५०
२ , ,, उत्तराध। छन्द ५१
७ शुक्रनीति को सार गहि कह्यौ इहाँ सक्षेप ॥
+ +
है न शक्र की नीति सम तीन लोक म कोय।
नीति च द्र, राव गुलाबसिंह प्रकाशित, प्रथम सस्करण, षोडश कला त्रयोदश प्रकाश, छन्द १९७-१९८।
४ Hindu polity Dr Kashi prasad Jayaswa L plFourth d 5
५ , ,, ,, p 6

आवश्यकता है यह स्पष्ट करते हुए अच्छे, बुरे सहायकों की नियुक्ति से लाभ, हानि, युवराजादि विचार, अमात्यादि विचार, अधिकारव्यवस्था, अधिपति लक्षण, राजा की विरक्ति अनुरक्ति, विभिन्न पत्र यथा आना पत्र, जय पत्र, आदि के लक्षण, आय व्यय मूल्य परिभाषा आदि का विश्लेषण किया गया है। तृतीय अध्याय में नव राष्ट्र के सामान्य लक्षणों का विवेचन करते हुये धार्मिक आचरण, प्रजा के शुभ योग्य आचरण, व्यवहार नियम, स्त्रियों के स्वत्व की अनधिकारिता, दम्पति आदि के बीच साक्षी आदि का विचार किया गया है। चतुर्थ अध्याय सात प्रकरणों में विभक्त है। सुहृद प्रकरण में मित्र लक्षण, विभिन्न पुरुषों के लक्षण आदि का विवेचन किया गया है। कोश निरूपण प्रकरण में कोश लक्षण, मूल्य विचार, सग्रहित धन रक्षा आदि की चर्चा की गई है। राष्ट्र प्रकरण में आश्रम नाम, आश्रम कृत्य, स्त्रियों के नित्य कृत्य, ध्यान प्रतिमा आदि का विश्लेषण किया गया है। लोकधर्म निरूपण में लोकधर्म सभा जान का नियम क्रम निर्णय, भृति निर्णय, दिव्य निषेध आदि बातें प्रस्तुत की गई हैं। दुर्ग निरूपण प्रकरण में विभिन्न दुर्ग भेदों का विचार किया है। सेना निरूपण प्रकरण में सैन्य व्यवस्थापन, अदरलक्षण, व्यूह लक्षण, सनिक प्रशिक्षण, सनिक त्याज्य कर्म व्यूहों का अभ्यास आदि का विवेचन किया गया है। पाँचवे अध्याय में खिल नीति निरूपण में पूर्व एवं अन्य विषयों का स्पष्टीकरण किया गया है।"[1]

नीति चद्र में विवेच्य वस्तु को भी यहाँ तुलनार्थ प्रस्तुत किया जा रहा है—

प्रथम कला के प्रथम प्रकाश में नृप समय का विवेचन है। इस में महाराज रामसिंह एव राजकुमारों का विवरण दिया गया है। द्वितीय प्रकाश कवि वंश वर्णन को प्रस्तुत करता है। कवि ने अपनी वंश परम्परा एव ग्रंथ सम्पदा का विवरण यहाँ दिया है। तृतीय प्रकाश में ग्रंथ भूमिका का विवेचन करते हुये नीति शास्त्र परम्परा और उस परम्परा में नीति सिंधु एव नीति चद्र के निर्माण का सकेत किया गया है। चतुर्थ सूची प्रकाश में ग्रंथ की समग्र अनुक्रमणिका प्रस्तुत की गई है।

द्वितीय कला के प्रथम प्रकाश में नीति प्रशसा की गई है। द्वितीय तप प्रकाश में तप का श्रेष्ठत्व प्रतिपादन करते हुए राजा के लिये तप की उपयोगिता बतलाई गई है। सात्विक राजस, तामस, नृप लक्षणों का विवेचन किया गया है। तृतीय कर्म प्रकाश में प्रारब्ध कर्म कर्मफल भोग आदि का विवेचन किया गया है। चतुर्थ राज्यांग प्रकाश में स्वामी, सुहृद अमात्य, कर्म कोश दण्ड गढ़ आदि सप्त राज्यांगों का निर्देश किया गया है। पंचम प्रकाश में दैवात् से उत्पन्न राजा के गुणों

[1] शुक्रनीति-सपादक, प० ब्रह्मशकर मिश्र, स० १९६८ ई० सस्करण।

की चर्चा की गई है।

तृतीय कला के प्रथम प्रकाश मे विषयो का विवेचन किया गया है। मन के लिये ये विषय विष सम है इस प्रकार प्रतिपादन किया गया है। द्वितीय प्रकाश म जुवादि दाप गुणो का विवेचन किया गया है। बिना रीति के जुवा नारि, दारु अनथ कारी होते हैं किन्तु रीति सहित इनका प्रयोग करने से ये धनदायी ही सिद्ध होते हैं ऐसा प्रतिपादन किया गया है। ततीय प्रकाश मे नृप गुण दोषो की चर्चा की गई है। चतुथ नृप विद्या प्रकाश मे दडनीति, वार्तात्रयी एव आ वीक्षकी आदि चार नप विद्यायें यहाँ विवेचित की गई है। पचम प्रकाश म सज्जन दुजनो की सगति का प्रभाव वर्णित है।

चतुथ कला के प्रथम प्रकाश मे सामत एव राजा की मर्यादाओ का विवेचन प्रस्तुत किया गया है। द्वितीय प्रकाश म पाठशाला विषयक नियमो का विचार किया गया है। ततीय प्रकाश म नृप दिन कृत्य का विवरण दिया गया है। चतुथ प्रकाश म ग्राम रक्षको के काय एव नियुक्ति का विवेचन कवि राव गुलाब सिंह ने किया है। पचम प्रकाश म राजा की आज्ञा के स्वरूप का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। षष्ठ प्रकाश म राजा के खच का प्रमाण एव उसके पाडित्य का प्रतिपादन किया गया है। सप्तम प्रकाश म भोजन विष एव क्रीडा का विवेचन किया गया है। अष्टम जनश्रुति प्रकाश म जनश्रुति से राजा को किस प्रकार लाभ उठाना चाहिए इसका सकेत किया गया है। नवम प्रकाश म अकेला राजा राज्य कर नही सकता अत राजकुल के अ य योग्य व्यक्तियो की विभिन्न अधिपति के रूप म नियुक्ति करते हुये शासन सम्हालन की बात कही गई है। दशम प्रकाश म सभा विषयक एव एकादश प्रकाश मे सम्पत्ति एव विपत्ति की दशा म राजा के कत्त य कम का विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

पचमी कला के प्रथम प्रकाश म राजा अपने अधिकारियो पर निभर है। इसका प्रतिपादन कर मत निर्धारण म भी इनकी मत्रणा अनिवाय कही गई है। द्वितीय प्रकाश म युवराज काय का विवरण दिया गया है। तृतीय प्रकाश म अच्छे एव बुरे सेवको क लक्षण प्रतिपादित किए गये हैं। चतुथ प्रकृति प्रकाश है। इसम पुरोहित प्रतिनिधि, प्रधान, सचिव, मत्री, प्राडविवाक, पडित, सुमत्र, अमात्य एव दूत आदि के लक्षणो का विचार प्रस्तुत किया गया है।

षष्ठी कला के प्रथम प्रकाश म अधिकारियो की नियुक्ति के विषय म निर्देश दान किया गया है। द्वितीय प्रकाश म गजपति, अश्वपति, रथवान, असवार, चाबुकसवार, वाजि सवक, कोशाधिप, वस्त्राधिप आदि विभिन्न राज अधिकारियो के लक्षण दिये गये हैं।

सप्तमी कला के प्रथम प्रकाश म पहरेदार के कत्तव्य, अ य सेवको के

वक्तव्य का विचार प्रस्तुत किया गया। द्वितीय प्रकाश में मन्त्रियों के कर्तव्य विचार किया गया है। तृतीय नृप पंचम प्रकाश में राजा को अपने अधिकारियों को किस प्रकार सम्मानित करना चाहिए। इसका विवरण कवि ने किया है। चतुर्थ प्रकाश में शासन पत्र, मांग पत्र, दान पत्र आदि की उत्तम पद्धति का विवेचन किया गया है।

अष्टमी कला के प्रथम प्रकाश में संचित धन, अनिश्चित स्वामित्व निश्चित भेद, साहजिक आदि आय के तथा पुनरावर्तक निधि स्वत्वनिवर्तक, प्रतिष्ठा आदि व्यय भेदों का विचार प्रस्तुत किया गया है। द्वितीय प्रकाश में प्रशासनिक कार्यों में सम्मति किस प्रकार दी जाती है उसकी पद्धति विवेचित है। तृतीय प्रकाश में सत्या विचार किया गया है। चतुर्थ प्रकाश में मजूरी देने के नियमों का विवेचन किया गया है। पंचम प्रकाश में पुष्प फल मृदु हास्य आदि के द्वारा सेवकों का सत्कार सम्मान के विषय में विवरण किया गया है। षष्ठ प्रकाश में अधिकारियों की नियुक्ति में जाति का विचार किस प्रकार किया जाय इसका विवेचन किया गया है।

नवमी कला के प्रथम प्रकाश में सामान्य कर्तव्यों का विवेचन सभी मनुष्यों के हितार्थ किया गया है। द्वितीय प्रकाश में विद्या धन, आदि के कारण जो मद अभिमान होता है, उसका विचार किया गया है।

दशमी कला के प्रथम प्रकाश में वशीकरण के अर्न्तगत लोगों को प्रसन्न करने के उपायों का विवेचन प्रस्तुत किया गया है। द्वितीय प्रकाश में भूपणादि के विषय में विचारों को अभिव्यक्त किया गया है।

एकादशी कला के प्रथम प्रकाश में मित्र शत्रु के लक्षण प्रतिपादित हैं। द्वितीय प्रकाश में स्वभाविक मित्र एवं शत्रु का विवेचन किया गया हैं। तृतीय प्रकाश में मित्रादि के सामादि उपाय चर्चित किए गये हैं। चतुर्थ प्रकाश में नय दंड के परिणामों का विचार प्रस्तुत किया गया है। पंचम प्रकाश में अपराध भेद का विवेचन है तो षष्ठ प्रकाश में दंड विधान की चर्चा की गई है।

द्वादशी कला के प्रथम प्रकाश में कोष का विचार किया गया है। इसमें उत्तम, मध्य नीच श्रेणियों में गिना जाने वाला धन, कोष एवं बल का सम्बन्ध आदि का विवेचन प्रस्तुत किया गया है। द्वितीय प्रकाश में रत्न विचार, तृतीय प्रकाश में धातु, विचार, चतुर्थ प्रकाश में शुल्क विचार आदि का विवरण दिया गया है।

त्रयोदशी कला के प्रथम प्रकाश में देश नियम तथा जाति कर्म पर विचार प्रस्तुत किये गया है। द्वितीय प्रकाश में विद्या एवं कला का विवेचन किया गया है। तृतीय प्रकाश में पूजा प्रतिमाओं पर विचार प्रकट किए गये हैं। सभी धर्म के विषय में भी प्रतिपादन किया गया है। चतुर्थ प्रकाश में न्याय नियम पर विचार

प्रस्तुत किये गये हैं तो पचम प्रकाश में निणय के सम्बन्ध में प्रतिपादन किया गया है। पष्ठ प्रकाश में धर्म स्थान तथा समय का विचार किया गया है। सप्तम प्रकाश में प्रश्न विचार, अष्टम प्रकाश म दुहाई विचार, नवम में अभियोग विचार प्रस्तुत किए गए हैं। दशम प्रकाश में आह्वान विचार, एकादश प्रकाश में मुख्तयार के विषय में, द्वादश प्रकाश में जामिन के विषय में विचार अभिव्यक्ति किये गए हैं।

चतुर्दशी कला के प्रथम प्रकाश में पण, भाषा दोष, पक्षाभास आदि का विवेचन किया गया है। द्वितीय प्रकाश म पूर्वोत्तर पक्ष के पश्चात क्रिया पायदान से तृतीय चरण कहा गया है। तृतीय प्रकाश म लेख्य विचार पस्तुत किए गये हैं। चतुर्थ प्रकाश म साक्षी साक्षी योग्य अयोग्य साक्षी, साक्षी प्रश्न आदि का विवेचन किया गया है। पचम प्रकाश म प्रमाण, अप्रमाण, लेख साक्षी, भुक्ति का विचार अभिव्यक्त किया गया है। पष्ठ प्रकाश मे भुक्ति सप्तम प्रकाश म दिव्य, अष्टम प्रकाश म व्यवहार, व्यवहार पुनर्विचार का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। नवम प्रकाश म स्वतन्त्र परतन्त्र विचार, दशम प्रकाश म विभाजन विचार अभिव्यक्त है।

पचदशी कला के प्रथम प्रकाश म दुर्ग विचार, द्वितीय प्रकाश म सेना बल विचार तृतीय प्रकाश म सेना प्रमाण विचार, चतुर्थ प्रकाश म गज, पचम प्रकाश म अश्व, पष्ठ प्रकाश मे भौंरी विचार आदि का विवेचन किया गया है। सप्तम प्रकाश म अश्वरग अश्व हिताहित एव कशाघात, ऋतु के अनुसार खान-पान गति आदि का विचार किया गया है। अष्टम प्रकाश म बल, ऊँट, मनुष्य के वय का विचार प्रस्तुत है। नवम प्रकाश में अश्व आदि के दाँतो के सम्बन्ध म विवेचन किया गया है।

षोडश कला के प्रथम प्रकाश म युद्ध नियमो का विवेचन किया गया है द्वितीय प्रकाश म सधि, विग्रह, यान, व्यूह आश्रम, द्वधी भाव आदि षड्गुणों का विचार किया गया है। तृतीय प्रकाश की विषय वस्तु यत्न प्रशसा है तो चतुर्थ प्रकाश म रण म सम्मुख, विमुख, मरण के फलाफल का विवेचन प्रस्तुत किया गया है। पचम प्रकाश म उत्तमादि युद्ध का विवरण किया गया है। पष्ठ प्रकाश म युद्ध अवध्य, सप्तम प्रकाश में युद्ध विजय अष्टम म विजयात विधि आदि का विश्लेषण किया गया है। नवम प्रकाश म सेना शिक्षा, दशम म जन रक्षण, एकादश प्रकाश म भृति दान, द्वादश प्रकाश मे धार्मिक नियम त्रयोदश प्रकाश म नृप नियम आदि का विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

राव गुलाबसिंह जी ने नीतिचद्र की रचना म यह स्पष्ट कर दिया है यह ग्रथ शुक्रनीति पर आधारित ग्रथ है। उसका सार ग्रहण करते हुए नीतिचन्द्र की

रचना उद्धृत की है। इस सार ग्रहण में कवि ने निश्चय ही उन बातों को असार माना होगा जो इन बातों के विचार से काल बाह्य हो चुकी हों। जिन राजपूतों को भेंट करने के हेतु यह ग्रंथ निर्मित है उनका विचार करते हुये भी सारविहीन बातें त्यागी गई हों।[1]

विस्तार भय के कारण समग्र नीतिचंद्र ग्रंथ में शुक्रनीति के प्रभाव का सुसंगत प्रतिपादन करना संभव नहीं है अतः कुछ प्रतिनिधिक उदाहरणों को यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

राजा के द्वारा मत प्रदान – राजा राज्य के प्रशासन का प्रातिनिधिक रूप में सर्वोच्च शासक है। उसके मत प्रदान करने पर उसका अनुसरण ही योग्य एवं स्वाभाविक है। सलाहकारों द्वारा बार में किया जाने वाला मत प्रदान राजा के मत के प्रति अविश्वास का निदर्शक है। भिन्न मत के अनुसार राजा अपना मत परिवर्तित करता रहे तब राजा की दृष्टि से वह अनिष्ट है। मत निर्धारण की अक्षमता ही इससे प्रमाणित होगी। शुक्रनीति बिना सलाहकारों की सहायता के मत प्रदान की स्वतन्त्रता राजा को नहीं देती। राजा के लिए इस विषय में नीति निर्धारण करते हुये यह संकेत शुक्रनीति ने किया है कि राजा विद्वान होते हुए भी अपनी सभा के सभ्य, मंत्री प्रकृति आदि के मत का अनुसरण करें।[2] राव गुलाबसिंह ने इस बात को यथा तथ्य रूप में नीतिचंद्र में प्रतिपादित किया है। वे लिखते हैं— सभी विद्याओं में निपुण होने पर भी, स्वयं विद्वान होने पर भी राजा मंत्रियों की मंत्रणा में रहे, अपने मत को प्रकाशित न करें।[3]

---

१ निपुन दक्षि नय विनय मैं चारिहु राज कुमार।
नजर हेत तिनकी चु यो नीतिचंद्र अतिसार॥
नीतिचंद्र राव गुलाबसिंह, प्रथम संस्कार प्रथम कला प्रथम प्रकाश छंद ९

२ सभ्याधिकारि प्रकृति–सभासत्सुमते स्थित।
सर्वादास्यात्प्रप प्राज्ञ स्वमते न कदाचन॥
शुक्रनीति–द्वितीय अध्याय श्लोक ३ संपादक ब्रह्मशंकर मिश्र सं १९६८ ई संस्करण।

३ सब विद्या मे निपुण नप जो सुमन्त्र बिन होहु।
मन्त्रिन बिन मन्त्राथ को एक न चित सोहु॥
सभ्य सभासद प्रकृति पुनि अधिकारिन मत माँहि।
रहै प्रान नृप सवदा रहै न निज मत माँहि॥
—नीतिचंद्र प्रकाशित प्रथम संस्करण,
पंचमी कला, प्रथम प्रकाश छंद २, ३।

राज्याधिकार--राज्याधिकारियो की सख्या शुक्रनीति ने दस स्वीकार की है इन दस राज्याधिकारिया क नाम इस प्रकार दिए गए हैं--पुरोध अथवा पुरोहित प्रतिनिधि, प्रधान, सचिव, मत्री, प्राडविवाक, पडित सुमत्र, अमात्य एव दूत ।[1] शुक्रनीति म एक अ य मत के रूप मे अष्ट प्रकृतिया का भी सकेत मिलता है। यह मत सम्भवत शुक्रनीति के पूववर्ती नीति ग्रथा मे प्रतिपादित था और शुक्रनीतिकार उसस मत भिन्नता रखते थ। ये अष्ट प्रकृति इस प्रकार हैं--पडित, प्रधान अमात्य सचिव, मत्री सुमत्रक, अमात्य, प्रतिनिधि एव प्राडविवाक ।[2] शुक्रनीति मे प्रतिपादित पुरोहित एव दूत इन दानो को प्रकृति के रूप म मा यता इस मत के अनुसार नहीं है। यह मत शुक्रनाति के काल में अत्यधिक प्रभावी होगा तभी शुक्रनीतिकार को अपने मत की अभि यक्ति के पश्चात उसका उल्लेख करना पडा हो।

नीतिचद्र क विवेचन म इन दोना भी मता की चचा राव गुलाब सिंह जी ने की है। उ होने लिखा है--पुरोहित, प्रतिनिधि, प्रधान, सचिव, मत्री, प्राडविवाक, पडित, सुमत्र, अमात्य, दूत ये राजा की दस स्वतत्र प्रकृति है। कुछ लोग राजा की आठ प्रकृति मानते हैं। ये अष्ट प्रकृति हैं--पडित, मत्री, सचिव, सुमत्र, प्रधान प्रतिनिधि प्राडविवाक और अमात्य।[2] (अ)

---

१ पुरोधाश्च प्रतिनिधि प्रधान सचिवस्तथा।
मत्री पाडविवाकश्च पडितश्च सुमत्रक ॥
अमात्यो दूत इत्येता रान प्रकृतयो दश।
दश मान्याधिका पूव दूता ता क्रमश स्मता ॥
शुक्र नीति सपादन प० ब्रह्मशकर मिश्र, स १९६८ ई०
अध्याय २ श्लोक ७१ ७२

२ अष्ट प्रकृतिभिर्युक्ता नप कश्चित्स्मत सदा।
सुमत्र, पडितो मत्री, प्रधान सचिव स्तथा ॥
अमात्य प्राडविवाकश्च तथा प्रातिनिधि स्मृत ।
एता भृति समात्वष्टौ रान प्रकृतय सदा ॥
शुक्रनीति-सपादन-प० ब्रह्मशकर मिश्र, स० १९६८ ई० अध्याय २, श्लोक ७३-७४।

२ (अ) बहु लक्षण सम्पन्न करि प्रथम पुरोहित जानि।
प्रतिनिधि और प्रधान पुनि चौथो सचिव बखानि ॥
मत्री प्राडविवाक पुनि पडित और सुमत्र।
पुनि अमात्य अरु दूत य दश नप प्रकृति स्वतत्र ॥

(शेष अगले पष्ठ पर)

अधिकारी योग्यता–राजा के इन अधिकारियों की योग्यता एवं कार्य विभाग का विस्तार से विवेचन शुक्रनीति एवं नीतिचंद्र में प्राप्त है। पुरोहित इन अधिकारियों में ज्येष्ठ माना गया है। उदाहरण रूप में उसकी योग्यता का विवेचन दृष्टव्य है—

पुरोहित—शुक्रनीति पुरोहित को मंत्रानुष्ठान से युक्त, कर्मरत, इंद्रिय एवं क्रोध जित लोभ मोह से विरक्त अथर्व धर्म षडंग सहित धनुर्वेद को जानने वाला तथा जिसके कोप के भय से राजा भी धर्म नीति रत बनता हो नीति, शस्त्रास्त्र, व्यूहादि में उसे कुशल मानती है। वह शाप एवं अनुग्रह की क्षमता रखने वाला माना गया है।[1]

राव गुलाबसिंह जी ने पुरोहित के शुक्रनीति में विवेचित गुणों का ही अनुमोदन किया है।[2]

(अगले पृष्ठ का शेष)

दूत अरु श्रमसैं अधिक पूव दूत के जानि ।
आठ प्रकृति हैं नृपति की कोऊ कहत प्रमानि ।।
पंडित मंत्री सचिव त्यौं जानि सुमंत्र प्रधान ।
प्रतिनिधि प्राड्‌विवाक पुनि अष्टम अमात्य सुजान ।।

नीतिचंद्र प्रकाशित प्रथम संस्करण, पंचमी कला चतुर्थ प्रकाश छंद ५८ से ६० ।

१ मंत्रानुष्ठान संपन्नस्त्रैविद्य कर्मतत्पर ।
जितेंद्रिय जितक्रोधो लोभ मोह विवर्जित ।
षडंग वित्सांग धनुर्वेद विच्चार्थ धर्मवित् ।।
यत्कोपभीत्या राजापि धर्मनीति रतो भवेत ।
नीति शस्त्रास्त्र व्यूहादि कुशलस्तु पुरोहित ।
सैवाचार्य पुरोधा य शापानुग्रहा क्षम ।।

शुक्रनीति, पं० ब्रह्मशंकर मिश्र, सं० १९६८ ई० संस्करण, अध्याय २ छंद ७८ से ८१ ।

२ जुत मंत्रानुष्ठान कर्मरत होय त्रयी वित ।
जित इंद्रिय जितक्रोध लोभ अरु मोह रहित चित ।।
अथ धर्म षट अंग सांग धनुर्वेद हि जानत ।
जिहि कोप भय स नृपहु रहत नित्य धर्म नीति रत ।।
नय शस्त्र अस्त्र व्यूहादि में कुशल पुरोहित नहिं धर्म ।
आचार्य पुरोधा सोय जो शापानुग्रह करि सके ।।

नीतिचंद्र, राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण, पंचमी कला, चतुर्थ प्रका। छंद ६४

सम्मति प्रणाली–राजा की सम्मति राजकीय एवं प्रशासनिक कार्यों में किस पद्धति से ली जाय इसके सम्बन्ध में शुक्रनीति में समुचित निर्देशन किया गया है। एक सुविहित प्रणाली से होकर ही कोई बात राजा की सम्मति के हेतु राजा तक पहुँचनी चाहिए इस प्रकार का शुक्रनीति का आग्रह है। मान्यता देने से पहले कोई लेख मंत्री, प्राड्विवाक आदि देख लें। उस लेख पर प्रकृति के मंत्री अपनी मान्यता दें। तत्पश्चात वह लेख युवराज के पास भेजा जाय। युवराज उस पर "अंगीकृत किया जाय" इस प्रकार अपना मत प्रकट कर राजमुद्रा तथा राजमान्यता के हेतु राजा के पास पहुँचावें। राजा उस पर 'स्वीकार किया गया" ऐसा लिखकर मुद्रा एवं हस्ताक्षर करें।[1]

राव गुलाबसिंह जी ने इस विषय में शुक्रनीति का पूर्णरूपेण अनुसरण किया है ऐसा प्रतीत होता है। वे लिखते हैं–'जब राजा किसी बात पर अपनी सहमति प्रकट करना चाहते हैं तब वे अपने सभी मंत्री एवं प्रकृति में विचार के हेतु उसे भेज कर यह चाहते हैं कि जो लेख सहमति के हेतु प्रस्तुत किया गया है, वह अविरोधी रूप में प्रस्तुत किया गया है इस प्रकार स्पष्ट संकेत किया जाय। तत्पश्चात् एक-एक अधिकारी गण अपने मतव्य प्रकट कर क्रम से युवराज तथा राजा तक पहुँचने पर राजा उस पर 'अंगीकृत' इस प्रकार लिख कर मुहर लगाकर अपनी मान्यता दे दें।[2]

---

१ लेखानुपूर्व कुर्यान्धि दृष्ट्वा लेख्य विचार्य च।
मंत्री च प्राड्विवाकश्च पंडितो दूत संज्ञक ॥
स्वा विरुद्ध लेख्य मिदं लिखेयुः प्रथमं त्विव।
अमात्य साधु लिख्य न मत्स्येतत्प्राग्लिखेदनम ॥
सम्यग्विचारित मिति सुमंत्री विलिखेनत।
सत्य यथार्थ मितिच प्रधानश्च लिखत्स्वयम ॥
अंगी कर्तु योग्य मिति तत प्रातिनिधिर्लिखेत।
अंगी कर्त य मितिच युवराजा लिखेत स्वयम ॥
लेख्य स्वाभिमत चदविलख्यच्च पुराहित।
स्व स्व मुद्रा चिह्नित च लेख्यान्ते कुर्यु रेव हि ॥
अंगीकृतमिति लिखन्मुद्रयश्च ततो नृप ॥
शुक्र नीति–सम्पादन प० ब्रह्मशंकर मिश्र–स० १९६८ ई० अध्याय २ छंद ३६५ से ३७०।

२ नप निज लेख्य निसान तौ ज्यों इच्छा त्यों धारि।

(शेष अगले पृष्ठ देखें

सामान्य नीति सिद्धान्त–सामान्य नीति सिद्धान्तों के विवेचन में कवि ने शुक्रनीति का सफलता पूर्वक अनुसरण किया है। जिनमें से कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किए गए हैं।

शत्रु भेद–शुक्रनीति के ततीय अध्याय में शुक्रनीति छ प्रकार के शत्रुओं को स्वीकार करती है। यथा–आग लगाने वाला, विष देने वाला, शस्त्रोन्मत्त, धन अपहरण करने वाला, क्षेत्र एवं स्त्री का अपहरण करने वाला।[1] राव गुलाबसिंह जी ने नीति चन्द्र में इनका इसी रूप में विवेचन किया है।[2]

मनुष्य दोष–मनुष्य के विकास में उसके कतिपय दोष बाधक होते हैं। उन्नति की अभिलाषा रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को उससे बचना चाहिए इस प्रकार शुक्र नीति का आग्रह है। शुक्रनीति ने जिन छ दोषों की चर्चा इस प्रसंग में की है वे

दपि लेख माफिक करो सबको लेख्य विचारि ॥
मन्त्री प्राडविवाक पुनि पंडित दूत स सोध।
सकल लिखे यह लेख है इसमें रहित विरोध ॥
साधु लिखित है यह महा यों अमात्य लिखि देय।
भल विचारत है यहै यों सुमन्त्र लिपिन्नय ॥
सत्य यथार्थ हि है यहै यों प्रधान लिख आय।
अंगी करने योग्य इति प्रतिनिधि हू लिपि थाप ॥
है अंगी कर्त य यों युवराज लिपि ठान।
है निज अभिमत लेख्य यों लिखैं पुरोहित जान ॥
निज मुद्रा चिह्न न कर लख्य अंत मैं सब।
अंगीकृत यों लिखि नृपति मुद्रा करै अगब ॥
नीतिचन्द्र राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण, कला ८, समति लख्य प्रकाश २ छंद ३७ से ६२।

१ अग्निदो गरदश्चैव शस्त्रोन्मत्तो धनापहृ।
क्षेत्रदार हरश्चैतान षडविधा आततायिन ॥
शुक्रनीति–सम्पादक प० ब्रह्मशंकर मिश्र, सं० १९६८ ई० संस्करण, ततीय अध्याय श्लोक ४२

२ अग्नि लगाये जहर दे धन हर शस्त्र उठाव।
खेत हर दारा हरै आततायी षट भाव ॥
नीतिचन्द्र, राव गुलाबसिंह, प्रथम संस्करण कला १ सामान्य कर्तव्य प्रकाश १, छंद ३४।

इस प्रकार है–निद्रा, तद्रा भय, क्रोध, आलस्य एव दीर्घ सूत्रता।[1] राव गुलाबसिंह जी ने इन दोषों को नीति सिन्धु में प्रतिपादित करते हुए उन्हें अतीव घातक कहा है।[2]

इस विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि नीतिचन्द्र की रचना में शुक्रनीति का मात्र अनुवाद कवि का लक्ष्य नहीं था। शुक्रनीति से सूत्रों का चयन करते में जहाँ कवि ने अपनी मौलिक सूझ को अभिव्यक्त किया है वहाँ शुक्रनीति के सूत्रों को सहज सुबोध रूप में प्रस्तुत कर अपनी एतद् विषयक क्षमता का भी परिचय दिया है। ग्रंथ रचना में प्रकरण के संयोजन में शुक्रनीति से भिन्न योजना प्रस्तुत है जो कवि की मौलिकता को सिद्ध करती है।

नीतिमाला नीतिमजरी–नीति के सम्बन्ध में 'नीति मजरी' राव गुलाबसिंह का दूसरा उपलब्ध ग्रन्थ है। नीति मजरी ग्रन्थ की रचना का आधार "नीति माला" ग्रन्थ रहा है। इस विषय में नीति मजरी में कवि ने इस प्रकार उल्लेख किया है–

'रामसिंह नृ दीन की कृपा दृष्टि लहि आव।
देखि नीति माला करी भाषा करी भाषा भनित गुलाब॥'[3]

डॉ० भोलानाथ तिवारी ने अपने ग्रन्थ में नीति विषयक संस्कृत ग्रन्थों की जो सूची दी है उसमें 'नीतिमाला' नामक दो ग्रथों का उल्लेख प्राप्त होता है।[4] ये दोनों ग्रंथ नारायण एव सदानद नामक दो भिन्न ग्रंथकारों द्वारा रचित हैं।

नारायण द्वारा रचित नीतिमाला की उपलब्ध प्रति का सपादन रामानु

---

१ षड्दोषा पुरुषेणेह हातव्या भूतिमिच्छता।
निद्रा तद्रा, भय क्रोध आलस्य दीर्घ सूत्रता॥
प्रभवति विघाताय कायस्य त न सशय।
शुक्रनीति सपादन–प० ब्रह्मशकर मिश्र, स० १९६८ ई० संस्करण, अध्याय ३, श्लोक ५६–५७

२ आलस तद्रा, नींद, भय, दीर्घसूत्रता रोस।
सपति चाहक पुरुष ये तजे सदा षट दोष॥
ये अतिघातक हों ही कारज नाहि।
कह गुलाब कवि याम सशय नाहि॥
नीतिचद्र, राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण, कला ९, सामान्य कर्तव्य प्रकाश, छद १,४६ ४६

३ नीति मजरी, राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण, छद ६।

४ हिन्दी नीति काव्य–डॉ० भोलानाथ तिवारी, प्रथम सस्करण, पृ० ३७–३८।

आचारी एवं श्रीनिवासचारी ने किया है। इनके अनुसार नारायण का जीवनकाल ई० स० १०७५ ई० एवं स० १२५० ई० के दरमियान पड़ता है। अत उनके "नीतिमाला' ग्रंथ का रचनाकाल ग्यारहवीं शताब्दी ईसवी एवं तेरहवीं शताब्दी के बीच का ही माना जाना चाहिए।

नारायण द्वारा रचित नीतिमाला ग्रंथ दस अधिकारों म विभाजित है। क्रमश इन दस अधिकारों के विषय इस प्रकार हैं–ब्राह्मणों म कमकाण्ड वेदांत की योग्यता, विश्व अस्तित्व ब्रह्म परिणाम ब्रह्म का स्वरूप शक्ति विशेष विविध स्वरूप निर्णय, मोक्ष साधन मोक्ष स्वरूप आदि।[1]

सदानन्द मिश्र द्वारा रचित नीति माला ग्रंथ की भूमिका में उन्होंने ग्रंथ लेखन के अपने मतव्य को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि इस ग्रंथ की रचना में एक आठ के लगभग नीति विषयक छन्दों का सकलन प्रस्तुत करना उनका उद्देश्य था। महाभारत आदि प्राचीन एवं पचतत्र जसे नवीन ग्रंथों स विभिन्न नीति विषयक छन्दों का चयन करते करते यह ग्रंथ दो सौ दस श्लोकों का सकलन बना है। इस ग्रंथ म सस्कृत नीति श्लोकों की हिन्दी गद्य भाषा म लिखी हुई ग्रंथकार की टीका भी प्राप्त है। इस ग्रंथ की विषय वस्तु इस प्रकार है–प्रथम तीन प्रास्ताविक एवं प्रार्थना के श्लोक हैं। नीतिमाला शीर्षक म लगभग ३७ श्लोक हैं, जिसम विविध विचार दिये गए हैं। तत्पश्चात खलनिंदा के १७, सज्जन प्रशसा के २९, धन प्रशसा के १२, विद्या प्रशसा क १८, पुत्र दोष गुण कथन ८, कलत्र दोष गुण कथन–२२, अदृष्ट वर्णन २० तथा नीति सार मे ६४ श्लोक सकलित किए गए हैं।[2]

राव गुलाबसिंह जी के ग्रंथ नीति मजरी के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि जिस नीति माला के आधार पर उन्होंने अपने ग्रंथ की रचना की है वह सदानद मिश्र द्वारा रचित नीति माला' ग्रंथ है। नारायण द्वारा लिखित नीति माला का प्रतिपाद्य विषय नीति मजरी के विषय से पूर्णत भिन्न होने के कारण उसका आधार ग्रंथ के रूप म विचार अनावश्यक है। नीति मजरी म सदानन्द मिश्र की 'नीति माला के प्रतिपाद्य विषयों के अलावा सेवक धर्म तथा कवि वश इन दो शीर्षकों के अंतर्गत कतिपय छन्दों की रचना कवि ने की है।

नीति विषयक विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत सकलित सूत्रों का प्रातिनिधिक *रूप से विचार करते हुए नीतिमाला का प्रभाव कहाँ तक इस ग्रंथ पर पड़ा है यह* देखना आवश्यक है। अत क्रम स उनका विवेचन यहाँ किया जा रहा है–

---

१ नीतिमाला–नारायण, *सपादन*, रामानुजाचारी, *श्रीनिवासचारी*, *स० १९४० ई०* सस्करण।

२ नीतिमाला–सदानद मिश्र, प्रथम सस्करण, सन् १८७२ ई०।

नीति कथन—नीति कथन म सामा य व्यवहार के विषय म विभिन्न दष्टिया स विचार प्रस्तुत किए गए हैं । शील ही सभी मनुष्यो का भूषण है । इस बात को नीति मालाकार न इस प्रकार प्रतिपादित किया है—"ऐश्वय का भूषण सुजनता है शौय का भूषण वाणी का सयम है । ज्ञान का उपशम विनय है । योग्यता को देख कर सपत्ति व्यय धनिको का भूषण है । तापसो का क्रोध त्याग प्रभुता का क्षमा, धम का निर्याजता, आदि भूषण है किन्तु सभी समयों मे सबके लिए एक मात्र भूषण शील ही है ।"[1] राव गुलाबसिंह जी ने नीति मजरी म इन्ही विचारो को प्रतिपादित किया है ।[2]

खलनिन्दा—खलो की निन्दा करते हुए दुष्टो की दूषण देखने की जो प्रवत्ति रहती है उसकी तुलना मक्षिका क साथ करते हुए लिखा गया है सुन्दर शरीर पर जिस प्रकार व्रण ही मक्षिका का आकषण बनता है उसी प्रकार स दर का य मे भी दुजन दोष देखते है ।[3] राव गुलाबसिंह जी ने खलनिंदा' के विवेचन म स्पष्टत इन्ही विचारो को प्रतिपादित किया है ।[4]

सज्जन पुरुष—सज्जनो की प्रशसा सभी समयो म होती आई है । सज्जनो की प्रशसा में नीतिमाला कार ने कतिपय सुन्दर उदाहरण दिए हैं यथा— विपत्ति म पडने पर भी सत अपनी परोपकार की वत्ति नही छोडते राहु के मुह मे पडकर चन्द्रमा

---

१ ऐश्वयस्य विभूषण सुजनता शौयस्य वाक्सयमो ।
ज्ञानस्योपशम शमस्य विनयो वित्तस्य पात्रे व्यय ।
अक्रोधस्तपस क्षमा प्रववितुधम्मस्य निर्याजता ।
सर्वेषामपि सव काल नियत शील परभूषणम् ॥
नीतिमाला—सदानद मिश्र प्रथम सस्करण—श्लोक ५ ।

२ समतु ज्ञानकोठान समहुको बिनय बखानो ।
धनको पात्र हि दान तपहु को क्रोध घटानो ॥
प्रभुता भूषन क्षमा धम को छलत तज्जनता ।
सबको भूपन शील करो सचय सज्जनता ॥
नीति मजरी, राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण छद ११

३ अति रमणीये का यपि पिशुनो दूषणम अन्वेषयति ।
अति रमणीय वपुषि व्रणमिव मक्षिका निकर ॥
नीति माला—सदानद मिश्र प्रथम सस्करण, श्लोक ४३ ।

४ अति रमणीय हु का य मे नीच दोषही देख ।
ज्यों अति सु दर वपुष मे माखी गन व्रण पेख ।
नीति मजरी, राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण, छद ४८ ।

लोगों को दान धर्म की ही प्रेरणा देता है।' सूरज बिना मांगे कमल को विकसित करता है चन्द्र कुमुदों को विकसित करता है। बादल धरती को पानी देते हैं इनके समान सन्त भी परोपकार करते रहते हैं।" राव गुलाबसिंह जी ने यथातथ्य रूप में इन्हीं उदाहरणों का नीति मंजरी में उन्मुक्त प्रशंसा के अपने विचारों में प्रयोग किया है।'

धन प्रशंसा—धन मानव जीवन का जीवनाधार है। अर्थ माहात्म्य का प्रतिपादन करते हुए नीतिमालाकार ने प्रतिपादन किया है—जब तक मनुष्य धनोपार्जन करता है तब तक ही परिवारीय लोग उसके अधीन रहते हैं जर्जर होने पर कोई उसकी बात तक नहीं मानता। दुनिया में भोजन से कौन वश में नहीं होता मृदंग भी मुखलेपन से मधुर ध्वनि करता है।' नीति मंजरी में राव गुलाबसिंह जी ने अपनी भाषा में इन्हीं विचारों को रूपान्तरित कर प्रस्तुत किया है।'

---

१ अहो महत्वम् महतामपूर्वम् विपत्तिकालेऽपि परोपकारः।
यदास्यमध्य पतितोऽपि राहोः कलानिधिः पुण्यचयम् ददाति॥

नीति माला सदानन्द मिश्र प्रथम संस्करण श्लोक ६९

२ पद्माकरं दिनकरो विकचीकरोति चन्द्रो विकासयति कैरव चक्रवालम्।
नाभ्यर्थितोऽपि जलदः सलिलम् ददाति सन्तः स्वयं परहितेषु कृताभियोगाः॥

नीति माला सदानन्द मिश्र, प्रथम संस्करण श्लोक ७०

३ विपति परहू सन्त नहि छाडत पर उपकार।
चन्द राहु मुख मे परयो पुन्य करावत चार॥
बिन चाहही भानु फुलावत कमल बन।
चन्दहु बिनय बिहीन बिकासै कुमुदगन॥
बिन माँगें ही जलद सलिल भरि देत धर।
त्यों आपहि परहेत सन्त उपकार कर॥

नीति मंजरी राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण, छन्द ७२ ७३।

४ यावत् वित्तोपार्जन शक्तस्तावन्निज परिवारोरक्तः।
तदनु च जरया जर्जर देहे वार्तां कोऽपि न पृच्छति गेहे॥

नीति माला, सदानन्द मिश्र प्रथम संस्करण, श्लोक ९२।

५ को न याति वशं लोके मुखे पिण्डेन पूरितः।
मृदंगो मुख लेपेन करोति मधुर ध्वनिम्॥

नीति माला—सदानन्द मिश्र प्रथम संस्करण श्लोक ९३।

६ जब लगि धन उपजा सकै तब लगी कुटुम अधीन।
याही तें जर जर भयें बात हु सुनत कही न॥

(शेष पृष्ठ बदले पर)

विद्या प्रशंसा-विद्या का सम्मान धन से भी अधिक है इस बात को स्पष्ट करते हुए नीति माला कार ने लिखा है 'विद्या बिना जीवन उतना ही हीन है जितना घृत के बिना भोजन, वस्त्रों के बिना आभूषण, स्तन के बिना नारी होती है।" विद्वत्व की नपत्व से भी तुलना नहीं की जा सकती। कारण यह है कि नपत्व का सम्मान स्वदेश में ही होता है किन्तु विद्वान सर्वत्र पूजनीय माने जाते हैं। चन्द्रमा नक्षत्रों में भूषण है पति नारी का भूषण है, राजा पृथ्वी के भूषण हैं किन्तु विद्या सब के लिए भूषणास्पद होती है।' राव गुलाबसिंह जी ने इन विचारों को यथातथ्य रूप में हिन्दी भाषा में प्रस्तुत किया है।'

पुत्र गुण दोष विचार-पुत्र प्रत्येक माँ बाप को प्रिय है। उसके गुण दोषों के विषय में नीति के अन्तर्गत विचार होता आया है। नीतिमाला कार ने पुत्र के विषय में विवेचन करते हुए लिखा है "शतमूर्ख पुत्रों से एक गुणी पुत्र ही अच्छा होता है, रात के अंधकार को हटाने में तारागण नहीं एक चन्द्रमा ही समर्थ होता है।" "एक कुपुत्र समूचे परिवार के विनाश कारण उसी प्रकार बनता है जिस प्रकार एक वृक्ष में लगी आग से समस्त वन प्रदेश जलकर भस्म हो जाता है।' अजन्मा, मृत एवं मूर्ख इनमें से अंतिम अर्थात मूर्ख की तुलना में प्रथम दो अच्छे हैं, उनसे जो दुःख प्राप्त होता है वह तात्कालिक है किन्तु अंतिम के कारण प्राप्त दुःख प्रत्येक क्षण

(अगले पृष्ठ का शेषांश)

होत स्ववस नर जगत में को नहीं भोजन लेय।
मुख लेपत ही चून सों मुरज मधुर ध्वनि देय ॥
नीति मंजरी राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण छन्द ९४ ९५।

१ वस्त्र हीनमलंकार घृतहीन च भोजनम।
स्तन हीन च या नारी विद्या हीन च जीवनम ॥
विद्वत्त्वंच नपत्वंच नैवतुल्य कदाचन।
स्वदेशे पूज्यते राजा विद्वान सर्वत्र पूज्यते ॥
नक्षत्र भूषण चन्द्रो नारीणाम भूषणम् पति।
पृथिवी भूषण राजा विद्या सर्वस्य भूषणम ॥
नीतिमाला, सदानन्द मिश्र प्रथम संस्करण, श्लोक १०५, १०८, ११२।

२ घृत बिना भोजन बसन बिन भूषण कुच बिन बाम।
ऐसे विद्या हीने को जीवन जान तमाम ॥
पंडित अरु नरनाथ ये कबहु बराबर नाँहि।
नृप पूजित निज देस मे पंडित सब जग माँहि ॥
शशि भूषण तारान को तिय भूषण पति जानि।
राजा भूषण भूमि को विद्या सबको मानि ॥
नीति मंजरी, राव गुलाबसिंह, प्रथम संस्करण, छन्द १०७, ११०, ११४।

मे अनुभूत करना पडता है।[1] राव गुलाबसिंह न इन्हा विचारों को इसी रूप म प्रतिपादित किया है।[2]

नारी (कला) गुण दोष विचार–नारी चरित्र एक अनाकलनीय मानी हुई बात है। नीति मालाकार ने इसी बात को स्पष्ट करते हुए लिखा है–मुख शारदीय चन्द्रमा वचनों स अमृत रस धार किन्तु मन छुरी की धार सदृश नारी क चरित्र को जानना चाहिए। वह न रूप देखती है न वयस को देखती है। वह रूप अथवा कुरूप पुरुष का देखकर केवल भोग की ही अभिलाषा रखती है।[3] राव गुलाबसिंह न नारी चरित्र सम्बन्धी विचारो का तद्वत मान कर नीति मजरी म उसका पुरस्कार किया है किन्तु भोगाभिलाषी नारी रूप के विवेचन म किंचित् परिवर्तन किया है। वे लिखते हैं स्त्री वय एव यौवन को देखती नहीं सुन्दर वा असुन्दर पुरुष को देख कर केवल भोग का ही विचार करती है।[4] नारी का यह एक मात्र रूप नहीं है

---

१ वरमको गुणी पुत्रो नच मूर्ख शत रपि।
एकश्चन्द्र तमो हंति नच तारा गणैरपि॥
एके नापि कु वृक्षण कोटरस्थेन वह्निना।
दह्यते तद्वन सव कु पुत्रण कुल यथा॥
अजात मत मूर्खाणाम वरमाद्यौ न चान्तिम।
सुकृत दुःख करा वाद्या अंतिमस्तु पद पद॥

नीतिमाला सदानन्द मिश्र, प्रथम सस्करण श्लोक ११८ १२२ १२३।

२ गुणी पुत्र एक ही भलो मूरख शतहु विकार।
एक चन्द सब तम हर तारा गनहु न तार॥
इक कुवृक्ष की अग्नि करि सब ही वन जरि जाय।
त्यौ ही एक कपुत्र तें सकल सुवन नसाय॥
नभयो म यो रु मूलु मैं जुग भल तताय न नीक।
जुग सुत इक बर दुख करत ततीय तु छिन छिन फीक॥

नीति मजरी राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण छन्द १२०, १२४ १२५।

३ शरत पद्मोत्सव वक्त्र वचश्च श्रवणामृतम।
हृदय क्षुरधाराम स्त्रीणा कोविद चेष्टितम॥
नता रूपम वाक्षते नासा वयसि सस्थिति।
सुरूपम् वा विरूपम वा पुमान नित्येव भुञ्जते॥

नीति माला सदानन्द मिश्र प्रथम सस्करण श्लोक १२७ १३१।

४ वदन शरद के चन्दमो वचन अमृत परिमान।
मन छुरिका की धार सम तिय चरित को जान॥

(शेष पष्ठ अगले पर)

उसका माता, गहिणी का रूप समाज म सदव पूजनीय रहा है। नीतिमालाकार ने नारी के इन रूपों का भी विचार किया है। उनके अनुसार पुत्रोत्पत्ति, गहदीप्ति के रूप म नारी पूजनीया है। स्त्री रूप लक्ष्मी के बिना घर की शोभा नही है।' 'स्त्री अपत्य, धम काय शुश्रुषा, रति मे उत्तम होती है। स्वग सुख, पितकाय सभी पत्नी के अधीन हैं।' राव गुलाबसिंह जी ने प्रथम छ द का यथावत रूपा तर किया है किन्तु द्वितीय छन्द 'अपत्य' के बदले 'सम्पति' का प्रतिपादन किया है।[2]

अदष्ट वणन–अदष्ट अथवा दव गति स कोई भी मुक्त नही है। दवता गण भी जब दव गति म आबद्ध हैं तो मनुष्य कहा मुक्ति पा सकता है। इसी बात का प्रतिपादन नीति मालाकार न करत हुए स्पष्ट किया है 'अपन कम के फेरे मे पड कर ब्रह्मदेव किसी कुम्हार के समान विश्व निमाण म लगे हुए हैं। विष्णु दशा वतार धारण कर दुख दूर करने के काय म स्वय पीडा उठा रहे हैं। शकरजी रुद्र होकर भी भीख मांगत है सूय आकाश म भटकने को बाध्य होता है ऐसे इस कम को प्रणाम है।' किसी निद्रालय के दरवाजे पर मस्त हाथी झूम रह हो सुवण मय आभषणो से सज्जित अश्व थिरक रहे हो वीणा, वणु आदि मनोहारी वाद्य निद्रा स जागते हो––ऐसा स्वर्गोपम सुख धम के कारण ही प्राप्त हो सकता है।'[3]

(पिछले पष्ठ का शेषाश)

देख तिया न वश को जोवन देखे नाहि ।
रूप कुरूप नर लख केवल भोग ही चाहि ॥

नीति मजरी, राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण छ द १२९, १३३ ।

१ प्रजनाथ महाभागा पूजार्हा गह दीप्तय ।
स्त्रिय श्रियश्च गहेषु न विशेषोक्ति कश्चन ॥
अपत्य धम कार्याणि शुश्रूषा रति उत्तमा ।
दारा धीन स्तथा स्वग पितणामात्मनश्चह ॥

नीतिमाला–सदान द मिश्र प्रथम सस्करण श्लोक १४२ १४४ ।

२ सुत उपजावन सुख करन पूजित घर की ज्योति ।
तिय लक्ष्मी बिन भवन में कहो कहा छबि होति ॥
सम्पति कामनु धम के शुश्रुषा रति नीक ।
तिय अधीन है स्वग सुख पितकानहू अति ठीक ॥

नीति म जरी, राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण, छन्द १४०, १४६ ।

३ ब्रह्मा यन कुलालवन्नियमितो ब्रह्माड भाडोदरे ।
विष्णुर्येन दशावतार गहनन्यस्ता महासकटे ॥
रुद्रोयेन कपालपाणि पुट के भिक्षाटन कारित ।
सूर्यो भ्राम्यति नित्यमव गगणे तस्म नम कमण ॥(शेष पृष्ठ अगल पर)

राव गुलाबसिंह जी ने द्वितीय छन्द के 'धर्म' शब्द के स्थान पर 'पुण्य" इस प्रकार शब्द परिवर्तन कर इन्हीं बातों का प्रतिपादन अपने ग्रंथ में किया है। उसी प्रकार मूल नीतिमाला के निद्रालसा" शब्द को छोड़ दिया है। सूर्य के साथ चन्द्र का भी विचार प्रस्तुत किया है।[1]

नीति सार—नीति सार नीपत्र के अन्तर्गत सदानंद मिश्र ने अनेक सूक्तियों को संकलित किया है। उदाहरणार्थ जीवन की क्षण भंगुरता का प्रतिपादन करते हुए उन्होंने लिखा है चित्त वित्त जीवित एवं यौवन सभी चंचल हैं चलाचला से से व्याप्त जीवन में वही जीवित रहता है जिसे कीर्ति प्राप्त है।"[2] मनुष्य जीवन में लोभ की महत्ता का विवेचन करते हुए उन्होंने बताया है 'लोभ से क्रोध निर्माण होता है। लोभ से काम वासना जन्म लेती है। लोभ से ही मोह एवं नाश होना है। अतः लोभ सभी पापों का मूल कारण है।[3] संचय की वृद्धि किस प्रकार होता है उसे नीतिमालाकार ने इस प्रकार स्पष्ट किया है बूँद बूँद पानी से घट भरता

यन्ननागा मदभिन्न गंड करटा स्तिष्ठंति निद्रालसाद्वारे।
हेम विभूषणाश्च तुरगावल गंति यत्रपिता ॥
वीणा वेणु मृदंग शंख पटह सुप्तस्तु यद्युते।
ततसव सुरलोक देव सदृश धर्मस्य विस्फूर्जितं ॥
नीतिमाला—सदानंद मिश्र प्रथम संस्करण श्लोक १४६ १४९।

१ विधि कुलाल ज्यो जगत कर्म बस रचत है।
विष्णु हु घरिदनरूप दुख नस तचत है।
रुद्रहु माँगत भीख सूर नित भ्रमत है।
नमो नमो ते कर्म सबहि को ल्गत है ॥
जो मतंग मदमस्त द्वार घुमरत खरे।
नाचत तरल तुरंग हेम अभरन भरे।
वीणा वेणु दर मुरज पटह ध्वनि मन हरे।
सो सुख सुख इहि लोक पुण्यविन को करे ॥
नीति मंजरी—राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण, छंद १४८ १५१।

२ चलच्चित्त चलद्वित्त चलज्जीवित यौवनम।
चलाचल मिदं सर्व कीर्ति यस्य सजीवति ॥
नीतिमाला—सदानंद मिश्र प्रथम संस्करण, श्लोक १६८।

३ लोभात क्रोध प्रभवति लोभात काम प्रजायते।
लोभात मोहश्च नाशश्च लोभ पापस्य कारणम ॥
नीतिमाला—सदानंद मिश्र, प्रथम संस्करण, श्लोक १७४।

है, सद्हेतु से विद्या धर्म, धन का सचय उसी प्रकार होता है।[1] राव गुलाबसिंह जी ने इन विचारा का सुन्दर भाषा मे रूपान्तर प्रस्तुत किया है।[2]

सेवक धम–नीतिमालाकार का अनुसरण करने के पश्चात कवि राव गुलाब सिंह जी ने "सेवक धम का विवेचन करने वाले कतिपय छद लिखे हैं। ये छद नीतिमाला ग्रथ में नही हैं। अत इस अनुमान को प्रश्रय मिलता है कि कवि ने इन छन्दो की रचना स्वय की है। राजाश्रित सेवको के विषय म कवि के विवेचन को प्रातिनिधिक रूप मे यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।" राजा को रिझाने के लिए सेवक को शीलवान सुज्ञ विद्या सीखा हुआ, विनयी, शिल्पादि गुणों से युक्त होना चाहिए।[3] नम सचिव राजा के साथ किंचित भी अप्रिय नही बोलता किन्तु सभा म हास्य के माध्यम स ऐसी बातें कहता है जो मम को छेद दें।[4]

मूलत नीतिमाला ग्रथ सन १८७२ ई० म प्रकाशित है। कवि का नीति मजरी ग्रथ सवत १८४१ वि० अर्थात सन् १८८४ ई० म प्रकाशित है। अत इन दोनो ग्रथों के रचनाकाल म समाज के नीति विषयक मूल्यो मे अधिक परिवतन सम्भव प्रतीत नहीं होता। इसी से कवि ने अपनी रचनायें अधिकाशत नीतिमाला ग्रथ का ही अनुसरण करत हुये जीवन विषयक नीति सूत्रा को सफलता के साथ प्रस्तुत किया है। कतिपय सूत्रो म परिवतन भी किया है तो कुछ नए नीति सूत्र

---

१ जल बिन्दु निपातन क्रमश पूयत घट।
सदहतु सव विद्यानाम धमस्यच धनस्यच॥
नीतिमाला–सदानन्द मिश्र, प्रथम सस्करण, श्लोक २००।

२ जीवन, जोवन चित्त धन सब चचल न रहाय।
जा को जय या जगत म सो जीवित दरसाय॥
काम क्रोध अरु मोह पुनि नाश लोभ त होय।
लोभ ही कारन पाप को याहि तजो सब कोय॥
बूद बूद जल डारते क्रम से घट भरि जाय।
त्यों ही विद्या धम धन तनक तनक सरसाय॥
नीति मजरी, राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण, छन्द १६९, १७५, २०१।

३ नृपहि रिझावन कारन सेवक शील सुजान।
सीखे विद्या विनय अरु शिल्पादिक गुण आन।
नीति मजरी, प्रकाशित, प्रथम सस्करण, छ द २११।

४ नरम सचिव सग नपति के तनक न अप्रिय भाखि।
ते छेदत हैं मरम को हास्य सभा म नाखि॥
नीति मजरी, राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण, छद २२०।

जोड़े भी है।

नीति सूक्तियों के रूप में लिखे गए ग्रंथों में सामान्यतया जिन विषयों का विचार किया जाता है उनमें भाग्य, सज्जन दुर्जन, दया, विद्या, धन मित्र शत्रु आदि विषयों का विवेचन मिलता है।[1] राव गुलाबसिंह का नीति मंजरी ग्रंथ इसी परम्परा का ग्रंथ है।

प्रासंगिक नीति विचार—राजनीति तथा सामान्य नीति विषयक लिखित स्वतंत्र ग्रंथों के अतिरिक्त प्रासंगिक रूप में जीवन विषयक नीति सिद्धान्तों का प्रतिपादन कवि राव गुलाबसिंह जी के कृष्ण चरित ग्रंथ में भी प्राप्त होता है। उनका भी प्रातिनिधिक रूप में विवेचन यहाँ द्रष्टव्य है।

शरणागत की रक्षा—शरणागत की रक्षा भारतीय रक्षा भारतीय परम्परा में सदैव की जाती रही है। देवकी कंस की बहन एवं शरणागत है। कंस का ध्यान इस परम्परा की ओर आकर्षित कर वसुदेव देवकी को मरने से बचा लेते हैं।[2]

कपट नीति—जीवन क्षेत्र में कपटनीति का आचरण भी कभी कभी अनिवार्य हो जाता है इस बात का प्रतिपादन करते हुए राव गुलाबसिंह जी ने लिखा है वक्रता को आवश्यक हो जाता है।[3]

अधर्माचरण—कंस के दरबारियों की अधम प्रवृत्ति के बावजूद कुछ सहृदय व्यक्ति भी उस दरबार से सबद्ध थे। श्रीकृष्ण एवं बलराम की उनसे अधिक प्रभावी मल्लों से भिड़न्त में अधर्माचरण का विचार करने वाले दरबारी यहाँ अब अनर्थ ही होगा ऐसा कहकर दरबार छोड़ते हुए कवि ने दिखाए हैं।

---

१ हिंदी नीति काव्य, डा० भोलानाथ तिवारी प्रथम संस्करण पृष्ठ ३८।

२ पोष्य शरणागत बहिन यह है अवध्य महिपाल।
सभा जोरि बुध जनन सों पूछि लेहु इहि काल॥

कृष्ण चरित हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, गोलोक खण्ड छंद २११।

३ बहुत वक्रता अग्नि के निकट हु के बचि जाय।
दूरहू के कितने तरुन दे उडि जाय जराय॥
यों विचारि वसुदेव मन कपट रूप दरसाय।
पूजि कंस को विविध विधि बोलत यें इहि भाय।

कृष्ण चरित हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग गोलोक खण्ड छन्द २१५ २१६।

४ रामकृष्ण को अति सुकुमारा। लखि सब नर नारि पुकारा।
कहाँ बाल सुकुमार शरीरा। कहा मल्ल गिरि सम रस धीरा।

शेष अगले पृष्ठ पर

अन्य—कवि ने कुछ अन्य नीति तत्वों का भी प्रसगवश प्रतिपादन किया है। यथा— जो दूसरा को कष्ट देता है वह चौगुन कष्ट प्राप्त करता है।[1] 'बुरे वश की भामिनी व्यभिचारिणी ही होती है अतिकामी पुरुष को प्राप्त कर भी उसमे कोई परिवर्तन नही होता।[2] 'क्षत्रियो को रण विमुख नहा होना चाहिए।[3] वीरो म अवीरता निंद्य ही है।[4] क्षत्रिय को रण मे मृत्यु आने पर वही पद प्राप्त होता है जो दीर्घ तप साधना के द्वारा मुनियो को प्राप्त होता है।[5] स्वामी अथवा

तिन म तिन ही लरावत राजा। करि अधम अति करत कुकाज।।
सभा अधम निरत तजि या ही। चलो वश कल्याण न आहा।
यौं कहि गय बहुत तिहि बारी। रहे तहा तिन विनय उचारी।
हे हरि इन बालन बल दई। मारो मल्ल भूपति मेई॥
कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मथुरा खण्ड छन्द १०२।

१ जेय आन को कष्ट सो तात चौगुन कष्ट।
पावन है यह धम की मर्यादा है स्पष्ट॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारिका खण्ड, छन्द ५०५।

२ बुरे वश भव भामिनी विभिचारिन हा होय।
लहि अति कामी पुरुषको क्यो हु न त्याग सोय॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, द्वारिका खण्ड छन्द ५०७।

३ उत्तम मध्यम अध करि राखयो प्रजहित जाय।
क्षात्र धम को जानतो सुर न रनम जाय॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, द्वारिका खण्ड, छन्द १०१४।

४ घरमैं मरनो नीक नहि क्षत्रियन को रन टारि।
वीरन माहि अवीरता निंद्य अधम विचारि॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, द्वारिका खण्ड, छन्द १०२३।

५ दीरघ तपस मुनि लहै जो उत्तम पद जाय।
रन में सन्मुख मरत ही सूर तुरत तिहि पाय।
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, द्वारिका खण्ड, छन्द १०२९।

मित्र को रण म छोड देने वाला अन्त म नरक म जाता है । उसका जीवन निंद्य हो जाता है ।[1]

राव गुलाबसिंह के नीति साहित्य के विवचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि हि दी नीति साहित्य परम्परा मे व अपना एक विशेष महत्व रखते हैं । हिन्दी नीति साहित्य मे स्वत त्र नीति ग्रथ रचे गए हैं और भक्ति एव रीति के ग्रथो म भी प्रसगवश नीति सूत्रा का प्रतिपादन किया गया है । राव गुलाबसिंह जी ने इस परम्परा का सफलतापूवक निवाह नीति मजरी एव कृष्ण चरित के नीति सूत्रो के द्वारा किया है । राजनीति, राज्य प्रशासन विषयक ग्रथा के अभाव की पूर्ति अपने नीतिचन्द्र ग्रथ के द्वारा कर नातिशास्त्रकार के रूप मे अपनी योग्यता प्रमाणित की है । अत राव गुलाबसिंह जी नीतिशास्त्र के एक सक्षम, विद्वान पडित व नाते मा यता के अधिकारी सिद्ध होत हैं । रीति एव भक्ति क समान नीति के क्षेत्र मे भी उनका योगदान अत्यन्त महत्वपूण माना जाएगा ।

टीका साहित्य–राव गुलाबसिंह जी की साहित्य कृतियो म रीति, भक्ति एव नीति ग्रथों के साथ कुछ टीका ग्रथ भी उपल ध होते हैं । अत एक टीकाकार के रूप म भी राव गुलाबसिंह जी का मूल्याकन आवश्यक हो जाता है ।

किसी ग्रथ के अध्ययन म टीकाकार अध्येताओ का मागदशक होता है । टीका लेखन म टीकाकार म ग्रथ की गहराई म पहुँचने की क्षमता अपेक्षित होती है । टीका म केवल शब्दाथ ज्ञान कराना टीकाकार से अपेक्षित नही होता अपितु अपनी पारदर्शी दृष्टि से रचना के अन्तरग म झाँकते हुए रचना का भाव गत अथ कल्पना की स्पष्टता उसम झलकने वाली कलात्मकता का अभिव्यजन, पाठकों के मन में उठने वाली सभवनीय आशकाए तथा उनका समाधान आदि बातो का विवेचन भी टीकाकार से वाछनीय होता है । टीका म टीकाकार की प्रतिभा, उसकी प्रत्युत्पन्नमति उसके तक के प्रतिपादन की कुशलता आदि गुणो का परिचय भी अध्येताओ को मिलता है । यही टीकाकार की मौलिकता कहलाती है ।

राव गुलाबसिंह जी न महाकवि मतिराम के ग्रथ 'ललित ललाम" ग्रथ की टीका ललित कौमुदी' नाम से तथा जसवत सिंह कृत 'भाषा भूषण" की टीका 'भूषण चन्द्रिका' नाम से लिखी है । इन दोनो ग्रथो स कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैं–

---

१ स्वामी अथवा मित्र को तजि रन से भगि जाय ।
अ त नरक म सो पर जीवत निंद्य रहाय ॥
कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हि दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, द्वारिका खण्ड, छन्द १०३३ ।

भाषा भूषण की टीका भूषण चन्द्रिका

१ मूल छद

जिहि कीनो परपच सब अपनी इच्छा पाइ।
ताका हौ बदन करौ हाथ जोरि सिर नाइ ॥[1]

टीका–जिसने सब ससार बनायो है अपनी खुसी पाय करि क । तिसको मैं नमस्कार करो हो । हाथ जोरि करि क, सिर नवाय करि क ।[2]

भूषण चन्द्रिका के छद १ की टीका म मगलाचरण क तीन प्रकार राव गुलाबसिंह जी न कहे हैं । उनम स नमस्कारात्मक प्रकार के अतगत वदना क यह छद है ।

२ मूल छद

क्रिया वचन मैं चातुरी यहै विदग्धा रीति ।
बहुत दुराएहू सखी लखी लक्षिता प्रीति ॥[3]

टीका–क्रिया म वचन मे चतुराई करै यह विदग्धा नायिका रीति है । क्रिया म चतुराई कर सो क्रिया विदग्धा नायिका है । वचन से चतुराई करै सो वचन विदग्धा नायिका है । बहुत छिपाय से वी जाकि प्रीति सखी न लखी सो लक्षिता नायिका है ।[4]

जसवत सिंह ने अपने मूल छद मे विदग्धा के भेद स्पष्ट रूप स नही किय किन्तु राव गुलाबसिंह ने क्रिया विदग्धा एव वचन विदग्धा इन भेदो को स्पष्ट रूप से निर्देश कर टीका म स्पष्टता और अपनी भाष्यकारिता का परिचय दिया है ।

३ मूल छद–[5]

गोप कोप धीरा कर, प्रगट अधीरा कोप ।
लखन धीर अधीर को कोप प्रगट अरु गोप ॥[5]

टीका–गुप्त रोस कर सो धीरा नायिका है । प्रगट रोस कर सो अधी

---

१ भाषा भूषण–जसवन्त सिंह ग्रथावली सपा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, प्र सस्करण, छन्द २

२ भूषण चन्द्रिका हस्तलिखित सार्वजनिक पुस्तकालय बूदी छन्द १० की टी

३ भाषा भूषण, जसवन्त सिंह ग्रथावली, सपा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, प्र सस्करण, छद १३

४ भूषण चन्द्रिका, हस्तलिखित, सार्वजनिक पुस्तकालय, बूदी, छद २१ टीका ।

५ भाषा भूषण–जसवत सिंह ग्रथावली, सपा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, प्र सस्करण छद २२ ।

नायिका है। धीरा धीरा नायिका को लक्षणा हैं धाप को प्रगटवो कर गुप्तवो कर प्रश्न—पति क प्रम म लीन होय सो स्वकीया है तो खडिता दि भद स्वकीया म कस ? उत्तर—स्वकीया दो प्रकार की है प्रतिव्रता स्वकीया साधारण स्वकीया। खडितादि भद साधारण म जानिये। प्रश्न—खडिता मे और धी आदि म कौन भेद है। उत्तर—थारो कोप रहै तब तो खडिता है तासो अधिक अधिक कोप होय न बोल तब मानिनी तासो अधिक कोप भय वक्रोक्ति करि बाल तब धीरा दि भद होय। या ही त मुग्धा खण्डिता होय। मुग्धा म धीरादि भद नहीं होय। क्योंकि मुग्धा अति मान मन है इनके उदाहरन मत्कृत व्यग्याथ चद्रिका म स्पष्ट है।[1]

इस छ द की टीका म प्रारम्भ म राव गुलाबसिंह जी ने मात्र अथ दिया है। तत्पश्चात विभिन्न शकाओ के समाधान म अपनी भाष्यकार व्याख्याकार की योग्यता को ही सिद्ध किया है। धीरादि भेदो की चचा करते हुए कोप को उनका प्रवत्तक लक्षण प्रतिपादित किया है। स्वकीया के सम्ब ध म उठाई गई आशका का समा धान करते हुए खडिता एव धीरादि भेदो को लेकर प्रस्तुत की गयी आशका का भो तकपूण उत्तर देकर आधिक उदाहरणा के हेतु अपने ग्रथ व्यग्याथ चद्रिका की ओर सकेत भी किया है।

ललित ललाम की टीका ललित कौमुदी

१ मूल छ द

बीना बनु निनाद, मृग मोहि अचल करि च द।
सौध सिखर ऊपर जहा दम्पति करत अन द॥[2]

टीका—बीना और बनु के शब्द क मगन को मोहि क। च द्रमा को अचल करि क जहाँ ब दी म दम्पति महलनि के सिखर क ऊपर आन द करते है। अथात च द्रमा क रथ क मग वाहन हैं उनके मोहे रथ रकत हैं।[3]

यहा भी छ द का सरल अथ देकर कवि न छ द म निहित भाव को अतीव सु दर रूप मे अभि यक्त किया है।

२ मूल छ द

प्रान पियारो मिल्यो सपन मैं परि जब तक न सुख नींद निहोर।
कत को आइ चाल्यो ही जगाय सखी कहूँ बन पियूष निचोरें॥

---

१ भूषण चद्रिका हस्तलिखित सावजनिक पुस्तकालय, बूँदी छद ३० की टीका
२ ललित ललाम, मतिराम ग्र थावली चतुथ सस्करण, छद ११
३ ललित कौमुदी राव गुलाबसिंह प्रकाशक भारत जीवन प्रेस काशी प्रथम सस्करण छ द ७८ की टीका।

यों मतिराम भयो हित म सुख बाल के बालम सो दग जोरें ।
ज्यो पटमे अति ही चटकीलो चढ रग तीसरी बार बोर ॥[1]

टीका–सखी की उक्ति सखी स–प्रान प्यारो सपन म मिल्यो अव निहोर स राव नीद आई तव तस ही सखी ने जगाय के पति के आइब क बचन अमत के निचोड सो कह्यो । मतिराम कहै बालम सौ नत्र मिलते ही नायिका के हिय म ऐस सुख भयो जैंमो तीसरी बार डुबने से वस्त्र म अत्यत चटक्कार रग चढ़ै अथात नायिका को तीन बार सुख भयो, स्वप्न म, सखी के कहने म, देखे से, इहाँ नायिका उपमेय पर उपमान को समान वणन है याने उपमा है ।[2]

यहा कवि ने छन्द का स्पष्टीकरण अत्यन्त सुलझे हुए रूप म प्रस्तुत किया है ।

टीका ग्रथा के इन उदाहरणो के सूक्ष्म अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि कवि एक सफल टीकाकार भी हैं । टीका म ब्रजभाषा गद्य का सफल प्रयोग राव गुलाबसिंह न किया है । यह गद्य रूप खडी बोली के निमाण काल मे उसके साथ स्पर्धा करता सा प्रतीत होता है । गद्य निमाण के क्षेत्र म राव गुलाबसिंह जी का यह योगदान महत्वपूर्ण माना जाएगा ।

अनुवाद साहित्य––एक अनुवाद कर्ता के रूप मे राव गुलाबसिंह जी की क्षमता का विचार करने से पहले एक सफल अनुवाद कर्ता के लिए जिन गुणो की अपेक्षा की जाती है उन पर सक्षेप म विचार करना आवश्यक हो जाता है ।

भाषा पर अधिकार––एक अनुवाद कर्ता एक भाषा मे रचित साहित्य म अभिव्यक्त भाव एव विचारो की दूसरी भाषा के माध्यम स पुन प्रतिपादित करता है । अत मूल रचना की भाषा एव अनुवाद की भाषा इन दोनो भाषाओ पर प्रभुत्व होना अनुवाद कर्ता की प्रथम आवश्यकता है । सम्बद्ध भाषाओ की रचना पद्धतिया उनकी खूबिया, विशेषतायें पर्यायी शब्द योजना आदि भाषा रचना विषयक सभी बातो का समावेश भाषा प्रभुत्व के अ तगत किया जाता है ।

आत्मीयता–आत्मीयता मानव स्वभाव का एक एसा गुण है कि जिस कारण किसी विषय के प्रति लगाव निमाण हो जाता है । इसी आत्मीयता के कारण स्वीकृत काय, सरसता, कुशलता एव सफलता के साथ सम्पन्न होता है । बिना आत्मीयता के कोई काय सम्पन्न भल हो हो किन्तु उसमे सरसता नही आ सकती । अनुवादकों इसके लिए अपवाद नही है ।

---

१ ललित ललाम, मतिराम ग्र थावली, चतुथ सस्करण, छन्द ४२
२ ललित कौमुदी प्रकाशक भारत जीवन प्रेस काशी, प्रथम सस्करण, छ द ८२ की टीका ।

अनुवादशास्त्र कला—अनुवाद का एक शास्त्र है तो सफल अनुवाद एक प्रतिभा सम्पन्न कला भी है । अनुवाद के विभिन्न रूप देखन मे आते हैं यथा शब्दानुवाद भावानुवाद आदि । शब्दानुवाद म शब्द के लिए प्रतिशब्द देन का प्रयास किया जाता है । अनुवाद कर्ता की प्रारम्भिक अवस्था म इस प्रकार के अनुवाद सम्भव है । इस प्रकार के अनुवाद म भाषा रचना पद्धति क दोषों की सम्भावना रहती है । मूल रचना के भाव एव विचार भी उचित रूप म अभिव्यक्त नही होते । भावानुवाद मे एक भाषा मे अभिव्यक्त भावो को दूसरी भाषा क माध्यम से यथा योग्य रूप मे रूपान्तरित कर अभिव्यक्त करने का प्रयास किया जाता है । इस प्रकार के अनुवाद म अनुवाद आवश्यकता के अनुसार मात्र प्रतिशब्द का विचार न करते हुए, भाषा का प्रकृति, भाषा की शब्द सम्पदा रचना शैली आदि का विचार किया जाता है । शब्द चयन ऐसी सुन्दरता से किया जाना है कि रचना सौष्ठव स परिपूर्ण अनुवाद म मूल भाव एव विचार अविकल रूप से अभिव्यक्त हो जाते हैं । इसी प्रकार का अनुवाद वास्तव म सफल अनुवाद कहा जा सकता है ।

राव गुलाबसिंह जी ने अपने कतिपय ग्रथ संस्कृत ग्रथो के आधार पर लिखे है । उन ग्रथो म उनके मूल उपजीव्य ग्रथो क कुछ सुन्दर छ द सुन्दर अनुवाद के रूप म कवि न प्रस्तुत किय हैं । कवि साहित्य सम्पदा म आदित्य हृदय' ऐसा ग्र थ है कि जो वाल्मीकि रामायण के युद्ध काण्ड म वर्णित आदित्य हृदय का समग्र अनुवाद है । अत अनुवाद साहित्य के प्रसग उक्त ग्रथ के कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किए जा रहे हैं ।

१ ततो युद्ध परिश्रान्त समरे चिंतया स्थितम ।
रावण चाग्रतो दृष्ट्वा युद्धाय समुपस्थितम ।।
दवतेश्च समागम्य द्रष्टुमभ्या गतो रणम ।
उपगम्या ब्रवीद्राम अगस्त्यो भगवानस्तदा ।।
राम राम महाबाहो श्रुणु गुह्य सनातन ।
येन सर्वानरीन्वत्स समरे विजयिष्यत ।।[1]

—युद्धकाड आदित्य हृदय श्लोक १ २ ३

जुद्ध श्रमित चि ता सहित विस्मित भे श्रीराम ।
सन्मुख रावन युद्ध हित उदित लखि बलधाम ।।
सुरन सहित रन लखन हित मुनि अगस्त्य तिहिवार ।
आये तह लखि राम से बोले ऋषि हित कार ।

---

१ वाल्मीकि रामायण युद्धकाड, आदित्य हृदय स्तोत्र, श्लोक १ २ ३

रामवत्स सुनि परम शुचि है इक स्तोत्र पुरान ।
जात सबही अरिकौं झट जीत हुगे जान ॥[1]

—आदित्य हृदय, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छन्द १ २, ३

२ सब मगल मागल्य सब पाप प्रणाशनम ।
चिन्ता शोक प्रशमन आयुवधनमुत्तमम् ॥
रश्मिवत समुद्यत देवासुर नमस्कृतम ।
पूज्यस्व विवस्वत भास्करम् भुवनेश्वरम ॥[2]
मगल सब मगलन को सब पाप छय कार ।
नाशन चिंता शोक को आयु बढावन हार ॥
रश्मिमान भुवनेश्वर सु सुमुद्यत श्रीमान ।
तपन सुरासुर नमस्कृत सब सुरारम प्रमान ॥[3]

३ नम पूर्वाय गिरए पश्चिमायाद्रये नम ।
ज्योतिगणानाम् पतसे दिनाधिपतये नम ॥
जयाय जय भद्राय हयश्वा यनमोनम ।
नमो पूव गिरीनाथ अस्तगिरी नाथ नमामी ।
ज्योतिगणपति नमो नमो दिनयाति सुखदायी ।
नमो जय इ जयभद्र नमो हयश्व उच्चरा ।[5]

मूल आदित्य हृदय स्तोत्र स उदधृत छन्द एव कवि कृत अनुवाद के सूक्ष्म अध्ययन से कवि की अनुवाद क्षमता का प्रमाण सहज ही म प्राप्त होता है ।

संस्कृत भाषा एव साहित्य पर राव गुलाबसिह को अधिकार प्राप्त है । उनके प्रति कवि के मन म आत्मीयता है । मातृभाषा हिन्दी के प्रति कवि का महत्व स्वाभाविक रूप से अधिक है संस्कृत म सचित ज्ञान राशि का हिन्दी भाषा म लाने का प्रारम्भ सन्त कवियो ने विशेष कर कबीर जसे द्रष्टा सन्त ने किया था । भक्ति एव रीति ग्रथों मे वह परम्परा विकसित हुई है । राव गुलाबसिह जी का यह

१ आदित्य हृदय हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, एव राव मुकुन्दसिह बूँदी, प्रति, छन्द १, २ ३

२ वाल्मीकि रामायण आदित्य हृदय स्तोत्र युद्धकाड, श्लोक ५ ६ ।

३ आदित्य हृदय हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग एव रावमुकुन्दसिह बूँदी प्रति, छन्द ५, ६

४ वाल्मीकि रामायण, युद्धकाड आदित्य हृदय स्तोत्र, श्लोक १६, ५७

५ आदित्य हृदय, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, एव राव मुकुन्द सिह, बूदी प्रति छ द १९

अनुवाद कार्य उसी परम्परा का कार्य है। इन अनुवादों में कवि की विद्वता, सरस रसिकता जनहित की दृष्टि, प्रतीत होती है जो कवि को उच्चकोटि के समाज सेवियों में समाज हितैषियों की श्रेणी में रखने में समर्थ है।

कोश साहित्य—राव गुलाबसिंह जी ने दो कोश ग्रन्थों की रचना की है एक का नाम गुलाब कोश और दूसरे का नाम सिंधु कोश' है। भारतीय कोश साहित्य की परम्परा प्राचीन एवं समृद्ध है। अन्य संस्कृत कोशों की तुलना में अमरसिंह के अमर कोश की लोकप्रियता अधिक है। विद्वानों ने इस ग्रन्थ पर अनेक टीकायें लिखी हैं, जिनकी संख्या चालीस है।[१]

अमरकोश—कोश साहित्य में संस्कृत का अमर कोश सबसे महत्त्वपूर्ण माना जाता रहा है। संस्कृत व्याकरण में जो महत्त्व पाणिनि के अष्टाध्यायी का है वही संस्कृत कोश साहित्य में अमरसिंह के अमरकोश का है।[2] मध्ययुगीन शिक्षा पद्धति में विशेष रूप से संस्कृत भाषा एवं साहित्य के अध्ययन में 'अमर कोश का अध्ययन अनिवार्य ही रहा है।

भाषा कोश—मध्यकालीन हिन्दी कोश साहित्य संस्कृत कोश साहित्य की सुदृढ़ आधार शिला पर विरचित है।[3] डा० अचलानन्द जखमोला ने अपने शोधग्रंथ में मध्यकालीन ७० से अधिक कोशों पर विचार किया है। ये कोश प्रमुखतः संस्कृत कोशों के अनुवादित आधारित रूप हैं। बौद्धिक स्तर समृद्धि एवं कलात्मक अभिव्यक्ति की दृष्टि से अनुवादित कोश भी महत्त्वपूर्ण माने जाते रहे हैं। इन कोशों में से अमर कोश के आधार पर विरचित ७ कोशों का विवेचन डा० अचलानन्द जखमोला के शोध ग्रन्थ हिन्दी कोश साहित्य में उपलब्ध होता है।[४]

गुलाब कोश एवं नाम सिन्धु कोश के आधार ग्रन्थ—गुलाब कोश की रचना में राव गुलाबसिंह ने रचना के आधारभूत ग्रन्थों का स्पष्ट संकेत किया है। यथा—

अखिल कोश अमरादि कोश सरो सार अगाध।[5]

०० ०० ००

---

१ हिन्दी कोश साहित्य—डा० अचलानन्द जखमोला प्रथम संस्करण पृ० ३३।

2 " Amarkosa occupies the same dominent position in lexicography as panini in Grammar —A History of Sanskrit Literature by—A A Macdonall 1961 ed pp 437

3 हिन्दी कोश साहित्य—डा० अचलानन्द जखमोला प्रथम संस्करण प० १।

४ हिन्दी कोश साहित्य—डा० अचलानन्द जखमोला, प्रथम संस्करण, प० ३१ से ३३।

`

विश्व मेदिनी आदि की निश्चित आशय पाय ।
क्रिया काड चौथो सकस शेष त्रिकाड मिलाय ।।[1]

इससे यह स्पष्ट होता है कि अमर कोश एवं विश्वमेदिनी कोश का स्पष्ट निर्देश कवि ने किया है। इन उद्धरणों में आए हुए "अखिल कोश" "अमरादि" "आदि की" पद यह भी स्पष्ट करते हैं कि कवि ने अन्य कोशों का भी अपनी रुचि के अनुसार प्रयोग किया है। इन कोशों के नामों का कोई संकेत कवि ने नहीं किया है। अतः इस तर्क को प्रश्रय मिलता है कि इन कोशों की अत्यल्प सहायता कवि ने ली होगी और इसी से नाम निर्देश करना उन्होंने अनावश्यक समझा होगा। संस्कृत कोशों में से यास्क के निघण्टु, व्याडि, वररुचि, भवतरि, भागुरि आदि प्रमुख कोशों का सम्भवतः कवि ने प्रयोग किया होगा।[2] कवि ने इनसे कितनी सामग्री का चयन किया होगा यह स्वतन्त्र शोध विषय है। अतः गुलाब कोश के प्रधान आधारभूत ग्रंथ "अमर कोश" के साथ ही उसका तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

नामसिन्धु कोश—"नाम सिन्धु कोश" में आधारभूत कोशों का उल्लेख कवि ने इस प्रकार किया है—

रामाश्रम मत जुत अमर शेष त्रिकाड हुलीन ।
देखि मेदिनी आदि किय कोश गुलाब नवीन ।
विस्तर कोश गुलाब तजि तिहिं सारहि लेय ।
नामसिन्धु कीनो विशद चारि भाग तिहिं नेय ।[3]

ऊपर के छन्दों में नामसिन्धु कोश के आधार का जो संकेत मिलता है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि रामाश्रम मत से युक्त अमर कोश, त्रिकाड शेष, मेदिनी आदि के आधार पर गुलाब कोश का सार इस रूप में नामसिन्धु कोश की रचना राव गुलाबसिंहजी ने की है। रामाश्रम नाम से भानुजी दीक्षित ने अमर कोश की टीका लिखी है, रामश्रम मत से रामाश्रमी टीका की ओर ही कवि ने सम्भवतः संकेत किया है।

अमरकोश— अमरकोश रावगुलाब सिंह के कोश साहित्य का प्रमुख आधार ग्रंथ है 'अमर कोश' तीन काण्डों में विभक्त है। इन तीन काण्डों की रचना एवं प्रत्येक काण्ड की पंक्तियों का विवरण नियमानुसार है—

प्रथम काण्ड—प्रास्ताविक पंक्तियाँ १ से १०, स्वर्ग वर्ग ११ से १४२ पंक्तियाँ,

---

१ गुलाब कोश हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, चतुर्थ काड, छंद १
२ हिन्दी कोश साहित्य—डा० अचलानन्द जखमोला, प्रथम संस्करण, पृ० ३१ से २३ तक।
३ नाम सिन्धु कोश, राव गुलाबसिंह, प्रथम संस्करण, प्रथम भाग, छंद ८, ९।

व्योम वग १४३ से १४५ पक्तियां दिग्वर्ग—१४६ स २१५ पक्तियां, कालवग २१६ स २७७ पक्तियां, धी वग २७८ से ३११ पक्तियां, शब्दादि वग ३१२ से ३६२ पक्तियां नाट्य वग ३६३ स ४३८ पक्तियां, पाताल भोगि वग ४३९ से ४६० पक्तियां नरक वग ४६१ स ४६७ पक्तियां वारिवग ४६८ से ५५३ काण्ड समाप्ति ५५४ स ५५७ एव क्षेपक पक्तियां ५७।

द्वितीय काण्ड—वग भेद ५५८ से ५५९ पक्तियां भूमिवग ५६० से ५६३ पक्तियां पुरवग ५९४ स ६३३ पक्तियां, शैलवग ६३४ स ६४९ पक्तियां वनौषधि वग ६५० से ९८८ पक्तियां, सिंहादि वग ९८९ स १०७४ पक्तियां, मनुष्य वग १०७५ स १३५३ पक्तियां, ब्रह्मवग १३५४ स १४६८ पक्तियां, क्षत्रिय वग १४६९ से १७०७ पक्तियां, वश्य वग १७०८ से १९२९ पक्तियां शूद्रवग १९३० से २०२५ पक्तियां एव क्षपक पक्तियां ६२४।

तृतीय काण्ड—वगभेद २०२६ स २०२७ पक्तिया, परिभाषा २०२८ से २०२९ पक्तियां विशेष्य निम्न वग २०३० से २२५० पक्तियां सकीण वग २२५१ २३३५ पक्तियां नानाथ वग २३३६ स २८४९ पक्तियां अयय वग २८५० से २८९५ पक्तियां लिगादि वग २८९६ से २९८७ पक्तियां, काण्ड समाप्ति २९८८ से ३९८० पक्तियां क्षपक १४ पक्तियां।

तीनो काण्डो के कुल क्षेपक पक्तियो को जोडने से समग्र ग्रथ के क्षेपक पक्तियो की सख्या ९५ हो जाती है। क्षपक पक्तियो को मूल ग्रथ के पक्तियो के साथ जोडन पर ग्रथ का पक्तियो की सख्या ३०८४ हो जाती है।[1]

गुलाब कोश को छद सख्या का विस्तत विवेचन ग्रथ परिचय क प्रसग म किया गया है, अत पुनरुक्ति दोष स बचन के लिए केवल तौलनिक विचार के हेतु यहाँ उसका यथावश्यक अश प्रस्तुत किया जा रहा है।

प्रथम काण्ड ३४३ छद, द्वितीय काड ९९० छद तृतीय काड ६८३ छद तथा त्रिकाड शप चतुथ काण्ड १२१३ छद।

अमर कोश म तीन ही काड रचित होने स गुलाब कोश का त्रिकाण्ड शेष चतुथ काण्ड का आधार अमर कोश नही माना जा सकता। मूल अमर कोश ग्रथ म 'त्रिकाण्ड शप' नाम स एक ग्रथ पूरक सन १३०० ई० लगभग पुरुषोत्तम देव नामक विद्वान् न जोडा है।[2] राव गुलाबसिंह जी न अपन चतुथ काण्ड का नाम भी

१ अमर कोश—अमर सिंह सपादक, श्री वा० ल० पणशीकर निर्णय सागर प्रकाशन सन् १९५१ ई०।

2 "A suppliment to it is Trikand sesa' by Purushottama Deva, perhaps as late as A D 1400'
—A History of Sanskrit Literature by A A Macdonall 1961 Ed p p 437,

'त्रिकाण्ड शेष' ही रहा है जिससे यह तथ्य प्रगट पाता है कि उन्होंने अन्य कोश ग्रंथों के साथ पुरुषोत्तम देव विरचित 'त्रिकाण्ड शेष' का आधार भी ग्रहण किया होगा।

नामसिन्धु कोश की रचना गुलाब कोश के समान ही है। उसमें 'काण्ड' के स्थान पर "भाग" एवं 'वर्ग' के स्थान पर "तरंग" लिखकर नाम मात्र परिवर्तन किया है। चतुर्थ भाग में "हंससार तरंग" एवं "संख्या तरंग" नाम से नए तरंग जोड़े गए हैं। नामसिन्धु कोश के चार भागों की छंद संख्या इस प्रकार है—प्रथम भाग ३५३, द्वितीय भाग ६५८, तृतीय भाग ४०२, चतुर्थ भाग ३०६ कुल १७१९।

राव गुलाबसिंह जी के गुलाब कोश, नामसिन्धु कोश एवं उनके प्रधान उपजीव्य 'अमर कोश' से प्रातिनिधिक उदाहरण तुलनार्थ यहाँ प्रस्तुत हैं—

स्वर्ग वर्ग

अमर कोश स्वर स्वर्ग स्वर्ग नाक त्रिदिव त्रिदिवा लया। ११
सुरलोको द्यो दिवो द्व स्त्रियां क्लीबे त्रिविष्टपम्। १२

गुलाब कोश स्वर्ग नाक स्वर त्रिदिव कहि त्रिदशालय सुरलोक।
दिव रु त्रिविष्टप द्यो नभ रु नाक भवन स्वर्लोक ॥२३

नामसिन्धु कोश स्वर्ग नाक स्वर त्रिदिव पुनि त्रिदशालय सुरलोक।
दिव रु त्रिविष्टप द्यो नभ रु नाक भवन स्वर्लोक ॥२३

धी वर्ग

अमर कोश बुद्धिर्मनीषा धिषणा धी प्रज्ञा शेमुषी मतिः। २७८
प्रेक्षोपलब्धिश्चित्संवित्प्रतिपज्ज्ञप्ति चेतना ॥ २७९

गुलाब कोश प्रज्ञा धिषणा शेमुषी बुद्धि मनीषा सोय।
धी मति संवित चेतना चित प्रतिपत होय ॥१॥

नाम सिन्धु कोश में ऊपरि निर्दिष्ट छंद में चित शब्द के बदले प्रज्ञा शब्द की पुनरुक्ति की गई है।

पाताल भोगि वर्ग

अमर कोश अधो भुवन पाताल बलि सद्म रसातल ॥ ६३९
नाग लोको घ कुहर शुषिर विवर बिलम ॥ १४०

गुलाब कोश नाग लोक बलि सदम पुनि अधो भुवन पाताल।
पच रसातल कुहरतो सुषिर रु विवर रसाल ॥१॥

नाम सिन्धु में यह छन्द समाविष्ट नहीं है।

वारि वर्ग

अमर कोश समुद्रोऽब्धिर कूपार पारावार सरित्पति ॥४६८
उद वा नुदधि सिन्धु सरस्वान् सागरोर्णव ॥४६९

गुलाब कोश नामसिंधु कोश

सिंधु अब्धि अर्णव उदधि जलनिधि सागर जोय ।
अकूपार रत्नाकर रु सरित अपांपति होय ॥१॥

नामसिंधु कोश के चतुर्थ भाग में हम सार तरंग तथा संख्या तरंग के प्रतिनिधि उदाहरण भी यहां दृष्टव्य हैं--

व्यसन के सात भिन्न भिन्न--

मृगया द्यूत रु नारि मद अथ दाप चव घोर ।
कठिन दंड ये त्याज्य हैं व्यसन सात चित चोर ॥[1]

दोय के १७ नाम

अयन, नयन गजदंत भुज कथा शिखाऊ पानि ।
नदी कूल द्विज जन्म पद पक्ष राम सुत मानि ॥
खड्गधार रउ मुख और लेखनी इक ।
अहि रसना सुरवद्य सत्रह दोय निसक ॥[2]

अमर कोश को नामलिंगानुशासन भी कहा गया है । इसमें नामों का लिंग भेदानुसार विवेचन किया गया है । गुलाब कोश एवं नामसिंधु कोश की पुष्पिका में 'नामानुशासन' इस प्रकार का निर्देश राव गुलाबसिंह जी ने किया है।

इस विवेचन के आधार पर जो निष्कर्ष निकलते हैं वे निम्नानुसार है ।

१ गुलाब कोश एवं 'नामसिंधु कोश' प्रमुखतः अमरकोश के आधार पर रचे हुए ग्रंथ हैं । उनकी रचना में अन्य कोशों की सहायता ली गई है । ये ग्रंथ अनुवाद ग्रंथ नहीं है अतः उन्हें मौलिक रचनाएं स्वीकार किया जाना चाहिए । अपने ग्रंथों की पुष्पिका में 'स्वकृत' शब्द का प्रयोग भी उनका मौलिक होना प्रमाणित करता है ।

२ अमर कोश में नामों का संकलन लिंग भेद का विचार करते हुए लिंगानुसारी क्रम में किया गया है । गुलाब कोश एवं नामसिंधु कोश में केवल नामों का ही विचार प्रस्तुत किया गया है । संस्कृत की तीन लिंगात्मक रचना प्रणाली एवं हिंदी की दो लिंगात्मक रचना पद्धति इनका समन्वय तथा हिंदी में लिंग भेद निर्धारण की समस्या के कारण कठिनाई का अनुभव करते हुए राव गुलाबसिंह ने लिंग भेद का विचार ही न किया होगा । इसी कारण गुलाब कोश के तृतीय काण्ड

---

१ नामसिंधु कोश--राव गुलाबसिंह प्रकाशित प्रथम संस्करण चतुर्थ भाग, हम सार तरंग छंद १७४ ।

२ नाम सिंधु कोश--राव गुलाबसिंह, प्रथम संस्करण, चतुर्थ भाग, संख्या तरंग छंद २ ३ ।

म लिंगादि सग्रह का विचार राव गुलाबसिंह ने नही किया है। अत लिंग विचार की अनुपस्थिति म नाम सकलन का राव गुलाबसिंह जी का काय महत्वपूर्ण ही मानना चाहिए।

३ राव गुलाबसिंह जी का नामसिन्धु कोश ग्रन्थ गुलाब कोश ग्रन्थ का केवल सारूप ही नही है अपितु हमसार तरग एव सख्या तरग उसम अधिक जोड गए हैं। अत यह एक स्वतन्त्र ग्रथ हो जाता है।

राव गुलाबसिंह जी के इन दोनो कोशो से उनका महत्त्व स्वत स्पष्ट हो जाता है। संस्कृत कोशों के आधार पर विरचित होने स ग्रथो म कही कही सफल अनुवाद का रूप भी देखने को मिलता है। संस्कृत साहित्य म सचित ज्ञान भण्डार को हिन्दी भाषा में ले आने का कवि का यह प्रयास निस्सदेह एक स्पृहणीय काय है। ज्ञानवृद्धि के साथ ज्ञान प्रचार के गुरुतर काय के साधन रूप मे इसका शैक्षिक तथा सामाजिक महत्व भी है। राव गुलाबसिंह जी के संस्कृत एव हिन्दी दोनो भाषाओ पर प्रभुत्व होने का यह प्रमाण ही है।

इस विवेचन के आधार पर राव गुलाबसिंह जी को एक सफल कोशकार के रूप म निःसदेह स्वीकार किया जा सकता है। उनके कोश ग्रथ उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के महत्त्वपूर्ण कोश ग्रन्थ माने जा सकते हैं।

प्रकीर्ण अध्याय के अन्तगत विवेचित राव गुलाबसिंह जी के विभिन्न ग्रथो के सूक्ष्म अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि व एक सफल नीतिशास्त्रकार एव टीकाकार तथा समथ अनुवादक एव कोशकार थ।

७ | काव्य कृतियो का साहित्यिक मूल्याकन

किसी भी साहित्यकार की श्रेष्ठता का परिचय उसकी साहित्य कृतिया क आधार पर ही पाया जा सकता है। साहित्य समालोचना के विभिन्न मानदण्ड साहित्य कृतियों के मूल्याकन मे सहायक सिद्ध होते हैं। साहित्य का मू याकन पाश्चात्य एव भारतीय इन दोनो पद्धतियो स किया जाता है। राव गुलाबसिह जी के समय पाश्चात्य समालोचन पद्धति भारत म प्रचलित नही हुई थी। उनकी का य कला भारतीय परम्परा मे विकसित थी। अत राव गुलाबसिह जी की का य कृतिया का साहित्यिक मूल्याकन भारतीय समीक्षा पद्धति के अनुसार करना औचित्य पूण होगा। भारतीय समीक्षा पद्धति म का य की रमणीयता सौ दय सपन्नता चमत्कार पूणता, चित्ताकषकता को परखन के लिए रस ध्वनि अलकार रीति, वक्रोक्ति सिद्धा तो का महत्त्वपूण स्थान रहा है। इस अध्याय मे सुविधा की दष्टि स का य शास्त्र के उपयुक्त सिद्धा तो के अतिरिक्त छ द एव भाषा का भी समावेश किया गया है।

रस—साहित्य म रस का प्रथम विवेचन भरत मुनि के नाटयशास्त्र में प्राप्त होता है। भरत क रस निष्पत्ति विषयक सूत्र की विस्तत विवेचना भटट लोल्लट, शकुक, भट्टनायक एव अभिनव गुप्त इन आचार्यों ने प्रस्तुत की। रस सम्प्रदाय की प्रतिष्ठा बढाने म ग्यारहवी शती म भोजराज बारहवी शती म रामचन्द्र गुणचन्द्र, चौदहवी शती म भानुदत्त एव विश्वनाथ सोलहवी शती म रूप गोस्वामी तथा सत्रहवी शती म पडितराज जगन्नाथ के नाम महत्त्वपूण हैं। रस सिद्धा त मूलत दश्य का य के स दभ म स्थापित हुआ था। आचाय विश्वनाथ न उसे काव्य की आत्मा घोषित कर दृश्य के साथ श्र य का य म भी रस की स्थापना की।[1] भरत ने नाटयशास्त्र में आठ रसो का स्वीकार किया था। कालक्रम म शात वात्सल्य एव भक्ति ने भी स्वतन्त्र रस के रूप म मा यता प्राप्त करने स रसो का सख्या आठ से नौ और अ त म ग्यारह बनी। राव गुलाबसिह जी की का य कृतिया

---

१ हि दी साहित्य कोश—सपादक डा० धीरेन्द्र वर्मा, प्र० भा०, प्र० स०, पृ० ६३२।

से विभिन्न रसों के उदाहरणों के आधार पर रस की अभिव्यक्ति में उनकी सफलता को यहाँ विवेचित किया जा रहा है।

शृंगार—शृंगार रस को भोज ने रस राज के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त कराई है। अधिकांश काव्याचार्य इसी मत के साथ सहमत हैं। राव गुलाबसिंह जी ने शृंगार रस को प्रमुखता दी है। उनके काव्य में सयोग एवं वियोग शृंगार के सुंदर उदाहरण प्राप्त होते हैं।

सयोग शृंगार—सयोग शृंगार में नायक एवं नायिका के परस्पर अनुकूल दर्शन स्पर्शन, आलिंगन आदि का समावेश होता है। सयोग में केवल शारीरिक सान्निध्य ही नहीं तो मानसिक सान्निध्य का भी विशेष स्थान रहता है।[1] मनमोहन के रास्ते में अचानक मिलने पर गोप वधू की दशा का सुंदर चित्रण दृष्टव्य है—

मनमोहन आज अचानक ही मग माँहि मिल्यो चित जाहि पग्यो।
गुरवा गुर लोगन के डर में उरवा उर लावन को उमग्यो।
लखि सौति महेलिन को उपहास गुलाब कहै मन भीत पग्यो।
अब सभय ही नहि अंक लग्यो असहाय निसंक कलंक लग्यो॥[2]

यहाँ पर रति स्थायी है। मनमोहन आलंबन है। गोपवधू आश्रय है। अचानक मिलना उद्दीपन है। अंक लगाना अनुभाव है। आवेग हर्ष, औत्सुक्य, भय, संचारि भाव हैं। इन सारे अंग एवं उपांगों से पुष्ट स्थायी रति भाव सयोग शृंगार के रूप में प्रकट हुआ है।

राधा एवं कृष्ण शृंगार रस के आराध्य के रूप में रीति काल की कविता में माने जाते हैं। उनके सयोग का एक सरस चित्र देखिए—

जमुना तीर कदंब की छाया। नटवर वेष धर मन भाया।
मोहन मूरति वंनु बजाता। लखे अचानक मृदु मुसक्याता।
गई बिसरी तनकी सुधि राधा। रही ठगी सी रूप अगाधा।
इक टक चितवत कंपत गाता। फरकत अधर बिंब से राता।
लखि कमला सें सरस सुहाई। चित्र लिखे से भये कन्हाई।
मद मय दग अगुरी सासा। भयो मधुर मुरली रव–हासा।
लखि दोऊन की प्रीति अपारा। भय सखिन मन आनंद भारा॥[3]

यहाँ रति स्थायी है। कृष्ण एवं राधा एक दूसरे के आलंबन तथा आश्रय

---

१ भामला राजदरबार के हिंदी कवि–डा० कृष्ण दिवाकर प्र० स०, पृ० २९६।
२ प्रेम पचीसी–हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छन्द ११।
३ कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, वृन्दावन खंड छंद ४५१।

है। दोनों का अनुपम रूप, कृष्ण की वेष भूषा वेणु बजाना यमुना का तीर कदम्ब की छाया से सारे उद्दीपन हैं। राधा का ठगासा रह जाना इक टक देखना, गात्रों का कम्पन अधरों का फड़कना अनुभाव है। श्रीकृष्ण का चित्रवत बनना, आँखों का मूँदा जाना, मुरली पर चलने वाली अंगुलियों का रुक जाना मुरली स्वर का धीरे धीरे कम हो जाना श्रीकृष्ण के पक्ष में अनुभाव है। औत्सुक्य हर्ष मोह जड़ता सि संचारी भाव है। इस प्रकार इसके सभी अंगों से पुष्ट स्थायी रति भाव की शृंगार रस के रूप में सुंदर अभिव्यक्ति यहाँ हुई है। जिस शृंगार रस के प्रसंग में आरम्भ कर्ता नायक है अथवा नायिका है इसका स्पष्ट संकेत नहीं मिलता उसे संयोग शृंगार में अंतर्गत "उभयारब्ध संयोग शृंगार कहा गया है।'[1] अतः यह प्रसंग उभयारब्ध' संयोग शृंगार के अंतर्गत रखा जा सकता है।

विप्रलम्भ शृंगार—शृंगार में संयोग के साथ ही साथ विप्रलम्भ की स्थिति महत्वपूर्ण मानी गई है। उत्कट अनुराग के होते हुए भी जहाँ प्रिय समागम न हो सके वहाँ विप्रलम्भ शृंगार होता है। आचार्य विश्वनाथ ने वियोग को संयोग की पुष्टि के लिए आवश्यक माना है।[2] विरहावस्था में कहीं शारीरिक नैकट्य का अभाव होता है तो कहीं मानसिक नैकट्य का। यह अभाव भी कुछ समय के लिए होता है जिसका परिहार पुनर्मिलन में होता है। अतः संयोग एवं विप्रलम्भ परस्परावलम्बी होते हैं। आचार्यों ने विप्रलम्भ शृंगार को सामान्यतया पूर्वराग मान प्रवास करुण इन चार भेदों में विभक्त किया है। राव गुलाबसिंह जी की साहित्य कृतियों से विप्रलम्भ के विभिन्न उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किए जा रहे हैं।

पूर्वराग—प्रत्यक्ष चित्र स्वप्न अथवा गुण श्रवण इनमें से किसी भी रूप में आलम्बन के दर्शन कर लेने से उत्पन्न पारस्परिक अनुराग का वर्णन पूर्वराग में आ जाता है। दाम्पत्य सम्बन्ध के अभाव में तथा लोकलज्जा आदि के कारण इसके अंतर्गत प्रच्छन्नता और अस्पष्टता अधिक रहती है।[3] राव गुलाबसिंह कृत पूर्वराग का वर्णन प्रस्तुत है—

एक समय ललिता रु विशाखा। मुख्य सखिन राधा सें भाखा।
जाके गुण तू सुण सुणावे। सो हरि नित्य तोर पुर आवे।

---

१ रस सिद्धांत स्वरूप विश्लेषण डॉ० आनन्द प्रकाश दीक्षित, प्रथम संस्करण पृ० ३१५।

२ न विना विप्रलम्भेन संयोग पुष्टिमश्नुते।
—साहित्य दर्पण-आचार्य विश्वनाथ, सम्पादक डॉ० सत्यव्रतसिंह सं० १९५७ ई० संस्करण पृ० २४०

३ भोसला राजदरबार के हिन्दी कवि-डॉ० कृष्ण दिवाकर, प्र० सं०, पृ० २९९।

नीर अपटा मैं छिन छबि की छटा मैं आन
बठ हैं अटा मैं हसि घन की घटान मैं ।[1]

प्रिय एव प्रिया का शारीरिक नकटय होते हुए भी उनम मानसिक वैमन्य नहीं है। सयोग शृगार के अनुकूल वातावरण एव प्रकृति के होते हुए भी विप्रलम्भ की अभिव्यक्ति यहाँ है। नायक आलम्बन है। नायिका आश्रय है। प्रकृति उद्दीपन है। अटपट बन बोलना लटपट होना आदि अनुभाव है। विषाद उन्माद आदि सचारी भाव हैं। सभी रसागो से पुष्ट रति स्थायी भाव यहाँ अभिव्यक्त है। नायिका एव नायक के कोप के कारण यह छ द प्रणय मान विप्रलम्भ का सुन्दर रूप प्रस्तुत करता है।

प्रवास विप्रलम्भ--प्रिय के विदेश गमन के कारण नायिका के मन की जो दुखमयी मानसिक अवस्था होती है वह प्रवास विप्रलभ कहलाती है। नायक विदेश से नियत अवधि मे लौटकर नही आते हैं। नायक की स्मृति नायिका को अत्यधिक विह्वल कर देती है। विरहाग्नि की तीव्रता के कारण कृशता, पाडुता क्षीणता, जडता आदि बातें नायिका के शरीर म उदभूत होती है। विप्रलभ शृगार के अन्य भेदो की तुलना म प्रवास विप्रलभ का वणन साहित्य मे प्रभूत मात्रा म प्राप्त होता है। राव गुलाबसिंह जी का यह उदाहरण दृष्टव्य है--

छह बक मडली नभ मडल म
जुगनू चमक ब्रज नारिन जर हैरी।
दादुर मयूर चीन झींगुर मच है सोर
दौरि दौरि दामिनी दिसान दुख द हैरी।
सुकवि गुलाब ह्व है किरच करेजन की
चौंकि चौंकि चौपन सौं चातक चिचरी।
हसन ले हँस उडि जहै ऋतु पावस म
एहे घनश्याम घनश्याम जो न ऐ हैरी ॥[1]

प्रियतम की उपस्थिति म जो बातें प्रिय हैं, आल्हादकारी हैं, वे ही उनकी अनुपस्थिति मे कष्टकर होती है। आसमान म उमडि बक मण्डली, जुगनू की चमक ब्रजनारियो को जलाती है। मढक मयूरों का शोर, दौड दौड कर दसो दिशाओ म दमकने वाली दामिनी दुखदाई है कलेजे के लिए कृपाण है। चमक से चौंक कर चातक भी चित्कार करते हैं। हँस हँसिनियो को साथ मे लेकर पावस ऋतु मे उडते जा रहे हैं। बादल तो आए हैं कि तु घनश्याम नही आए हैं। यहाँ घनश्याम

१ पावस पच्चीसी–हस्तलिखित, हि दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, छ द १।
पावस पच्चीसी–हस्तलिखित–हि दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, छ द ९।

आलम्बन हैं व्रजनारियाँ आश्रय हैं। आसमान में उड़ने वाली बक पंक्ति जुगनू की चमक आदि उद्दीपन है। नायिका का कथन अनुभाव है। प्रवास विप्रलम्भ शृंगार रस का भली भाँति अभिव्यंजन यहाँ हुआ है।

श्रीकृष्ण का संदेश लेकर उद्धव ब्रजभूमि में आते हैं। राधा अपनी दशा का निवेदन उनसे करती हुई कहती है—

। मैं सुमरत हौं तिनहिं सदाही।
नींद भूख भजि गई सबुरी। रही याद हरि ही की पूरी।
डूबी शोक समुद्र मझारा। तू ही है कान्ह उद्धारा।
तू हैं तो को पूरण अपारा। पै हैं जस अति ही सुखकारा॥

श्रीकृष्ण यहाँ आलम्बन हैं। राधा आश्रय है। स्मरण उद्दीपन है। नींद एवं भूख का भाग जाना अनुभाव है। दुःख शोक संचारी भाव हैं। इन सब से युक्त रति स्थायी है। यहाँ भी प्रवास विप्रलम्भ शृंगार का सफल रूप प्रस्तुत होता है।

हास्य रस—किसी व्यक्ति या वस्तु की साधारण से अनोखी नहीं बिगड़ी हुई आकृति किसी की अनोखी ढंग की वेश भूषा तथा बातचीत, विचित्र प्रकार की चेष्टाएँ अनोखे चमत्कार आदि असंगति पूर्ण बातों को या क्रियाओं को देखकर हृदय में जो विनोद भाव उत्पन्न होता है वही हास्य रस कहलाता है। इसमें अधिकतर आलम्बन का वर्णन मात्र यथेष्ट होता है। राव गुलाबसिंह जी के साहित्य में हास्य रस का एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है—

होरी को समाज साजि आये वृषभानु द्वार
गावत बजावत उमाग फाग ग्वाल की।
उतै समाज साजि आई वृषभानु लली,
गाय गाय गारी लाग डारन गुलाल की।
सुकवि गुलाब घिर मिल गये दोऊ घाक,
तबही पकरि लीन नारिन गुपाल की।
बिछुआ लगाय पहिराय पट नारिन के।
अंजन अँजाय के नचायो नन्दलाल को॥

फाग का समय हँसी मजाक का समय होता है। सामान्य जीवन का असाधारण तब साधारण बन जाता है। श्रीकृष्ण का वेश लेकर नारियों के वस्त्र में

१ कृष्णचरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, मथुरा खण्ड छन्द ८६६।
२ काव्य प्रदीप—राम बहोरी शुक्ल, सोलहवाँ संस्करण पृ० ७१।
३ काव्य नियम, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द

उस सजाना, अंजन लगाकर नाचना हँसी का विषय है। यहाँ श्रीकृष्ण आलम्बन है। नारियों के वस्त्र पहनाना बिंदी लगाना अंजन लगाना उद्दीपन है। नृत्य, संगविनय अनुभव हैं। हास स्थायी भाव है। अत रस के सभी अंगों से पुष्ट हास्य रस का सुंदर अभिव्यंजन यहाँ हुआ है।

करुण रस– प्रिय व्यक्ति अथवा वस्तु का अनिष्ट हानि, का नाना के कारण जो क्षोभ ग्लानि या क्लेश उत्पन्न होता है उसी की अत्यंत प्रभावशाली अभिव्यक्ति करुण रस में होती है। भवभूति ने 'एको रसो करुण एव निमित्त भेदात्' कहकर को ही एक मात्र रस माना है।[1] कवि के कृष्णचरित काव्य का कालीय नाग के दलन का प्रसंग करुण रस के उदाहरण स्वरूप यहाँ उद्धृत है। गद कालीदह में गिरने के साथ श्रीकृष्ण भी कालीदह में कूद पड़ते हैं। वे कालीदह से ऊपर नहीं आते। अतः यशोदा एवं वृन्दावन निवासी उन्हें कालीदह में डूबा मान कर विलाप करते हैं।

सुनि जसुमति के वचन दुखवाला। विलपन लगी सब व्रजबाला॥
नर तिय बालक वृद्ध जुवाना। वृन्दावन के सब सुख खाना॥
कालीदह तट ऊपर ठाढ़े। रोवत भे विरहानल डाढ़॥
हरि रस भीनी गोप कुमारी। विलपन लगी अति दुखधारी॥[2]

श्रीकृष्ण जो इष्ट हैं उनके नाश की कल्पना आलम्बन है। यशोदा एवं वृन्दावन निवासियों का विलाप उद्दीपन है। रुदन अनुभाव है। नैराश्य ग्लानि संचारी भाव है। करुण रस के इन सभी अंगों से शोक स्थायी भाव पुष्ट होता है। करुण रस की सफल अभिव्यक्ति यहाँ हुई है।

वीर रस–आचार्यों ने वीर रस के चार भेद माने हैं––युद्धवीर, दानवीर दयावीर, धर्मवीर।[3] राव गुलाबसिंह जी की कविता में उक्त वीर रस के चारों भेदों के उदाहरण प्राप्त होते हैं। वीर रस के चारों भेदों का एक एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है––

युद्ध वीर–वीर रस के सभी भेदों में युद्धवीरत्व प्रधान माना गया है। सामान्यतया वीर से युद्धवीर ही अभिप्रेत होता है। श्रीकृष्ण द्वारा कंस की हत्या होने पर जरासंध कृष्ण से युद्ध करने आ पहुंचा है, इस प्रसंग का चित्र कवि ने कितनी

---

1. काव्यशास्त्र–डा० भगीरथ मिश्र द्वितीय संस्करण पृष्ठ २६८।
2. कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, वृन्दावन खंड, पृष्ठ १६८।
3. भोसला राज दरबार के हिंदी कवि–डा० कृष्ण दिवाकर, प्रथम संस्करण, पृष्ठ ३०९

तुलना के साथ प्रस्तुत किया है, देखिए—

जरासंध की सैन सजाग। बाजा बाजन लगे अपारा।
मुनि जदि सेन जे गाऊ बाजा। शंख बजावत न ब्रजराजा।
जरासंध नृप तिन ही निहारी। बोल्यो कठिन वचन रिसधारी॥
हे दुष्टाधम बालक स्यामा। अजुन निरकुस मारक मामा।
हे कुविचारी कुटिल कुमारा। दहन योग्य न तू संगि जाऊ॥
रे रोहिणी के सुवन सुरारा। तू मम सन्मुख आउ उदारा।
तू हू जीवन चहत सुनाई। मिल्यो पितु मातुन सो घर जाई॥
न तु ह्वै है स्वगन को घाता। मरि है रोय रोय पितु माता॥[1]

यहाँ श्री कृष्ण आलम्बन हैं। उनका शंख बजाना उद्दीपन है। श्रीकृष्ण एवं बलराम को लक्ष्य कर कहे गए दुष्ट वचन अनुभाव है। क्रोध उग्रता आदि संचारी भावों से पुष्ट स्थायी भाव उत्साह वीर रस को निष्पन्न करता है।

दानवीर—दान करने में उत्साह जहाँ देखने में आता वहाँ दानवीर यह उपभेद होता है। दान करने वाले सभी दानवीर नहीं कहलाते। वे अधिकतर दानी या दाता की मर्यादा का ही स्पर्श करते हैं। दान के लिए बड़े से बड़े कष्ट सहकर भी प्रसन्नता पूर्वक दान देनेवाला ही दान वीर माना जा सकता है। दान वीर के लिए याचक कैसा है या वह क्या माँगता है आदि बातें गौण हैं। याचक का संतोष ही उसके लिए परम उपलब्धि है। उसने आश्रय दाता राजा रामसिंह दान वीरता का बड़ा प्रभावी चित्र प्रस्तुत किया है—

या ठौर और माँग बिन वा न बिन माग देत।
रावत विचार या तौ वा तौ अविचार सौ।
रीझि रीझ देत या गुनिन को विचार मान
निगुनी गुनीन को वा देत इकसार सौ।
सुकवि गुलाब या भी आदर अपार करै।
छत्र हसम वा तौ मूक मन्दार सौ।
रावराज भूमा को महिपाल रामसिंह धीर।
भू लोक विराजत हैं कल्प वृक्ष दारसौ॥

यहाँ दानवीर की सारी विशेषताएँ प्रस्तुत हैं। उत्साह स्थायी भाव है। याचक आलम्बन है। राजा रामसिंह आश्रय है। याचक की याचना गुणों पर रीझना

---

१ कृष्ण चरित्र, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग मथुरा खण्ड, छन्द ६१०।

२ काव्य नियम हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छन्द ३१।

सम्मान करना आदि उद्दीपन है । याचक पर सन्तुष्ट होकर बिना माँग हो गुणी जनों को सम्पत्ति देना अनुभाव है । हर्ष संचारी है । कल्पवृक्ष की शाखा से तुलना प्रस्तुत करते हुए रामसिंह जी के दातृत्व को श्रेष्ठ प्रतिपादित कर दानवीर की श्रेणी में कवि उन्हें रखते हैं ।

दयावीर–दयावीर में दया का पात्र आलम्बन होता है । आलम्बन की दयनीय अवस्था को दूर कर उसका संरक्षण करने के विषय में उत्साह स्थायी उत्पन्न होता है–रीवा नरेश राघवेंद्र सिंह जी के सुपुत्र जादवेंद्र सिंह की दयावीरता का कवि कृत वर्णन बड़ा ही मार्मिक है––

आदि जुग माहि तो प्रियव्रत, दधीच, पृथु
बलि सिवि आदि में दया विशेष छावती ।
भीषण, करन, परमादि दया धारी भये
पिछले जमाने माझ विक्रम को पावती ।
सुकवि गुलाब या कराल कलि मैं तो
निरदय क्रूरता जिहान मन भावती ।
राघवेंद्रसिंह के सपूत जादवेंद्रसिंह
पर दुख देखि दया तेरे उर आवती ।[1]

यहाँ दुखी व्यक्ति आलम्बन है जादवेंद्रसिंह आश्रय है । पिछले जमाने तक तो दयावीर देख गये हैं किन्तु विद्यमान कराल कलि काल में तो निर्दयता, क्रूरता ही प्रिय बनानी देखने को मिलती है दुखिया की दयनीय अवस्था उद्दीपन है । दुख देखकर उसे समाप्त करने की इच्छा अनुभाव है । हर्ष धृति संचारी है । इस प्रकार दया के विषय में उत्साह स्थायी भाव यहाँ पुष्ट हो वीर रस के रूप में प्रस्तुत है ।

धर्मवीर–लोकमान्य परम्परा की रक्षा करना धर्मवीर का प्रमुख कर्तव्य होता है । कृष्ण चरित्र में कृष्ण का रूप प्रधान रूप से धर्मवीर का ही है । धर्म रक्षा आततायियों का निदालन इन्हीं कार्यों के लिए श्रीकृष्ण का अवतार है । कृष्ण के इस रूप को कवि ने निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया है ।

ह्वै हौ जीवनमुक्त तुम सब विधि करि वाम ।
कंस मारि मैं अवनि को हरि हौ भार तमाम ॥[2]

श्रीकृष्ण यहाँ आलम्बन है । कंस के अत्याचार, उद्दीपन है कंस वध का एवं धरती के भार को दूर करने का आश्वासन अनुभाव है । धैर्य वक्ता संचारी

१ मान्य नियम हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छंद ३८ ।
२ कृष्णचरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग गालोक सं०, छंद २८० ।

भावों से युक्त धम रमा म उत्साह स्थायी भाव है। रस के सभी अगो से धमवीर रस की सुदर अभिव्यक्ति यहाँ हुँ।

भयानक रस–भयप्रद अनिष्टकारी दृश्य को देखने से, उसका श्रवण करने से, स्मरण करने से भयानक रस निष्पन्न होना है। राव गुलाबसिंह जी ने श्रीकृष्ण के कस की राजसभा में प्रवेश करने से पूव धनुप भग से भयानक रस का सुदर उदाहरण प्रस्तुत किया है। देखिए—

चलत भयें दिग्गज तिहि वारा। बाधर भये महि के जन सारा।
सो सुनि डरप्यो कस विशेषा। धनु रक्षक करि रोप अशेषा।
धाले पतरहु का चहु धाई। बामक सकल भागि नहि जाई।
यो कहि क भट शस्त्रन लेई। आये कृष्ण च द्र ढिग तेई
तव कुपि राम कृष्ण बल्धारा। धनुप ख ड गहि कीन प्रहारा
तास मूछित भय कितेही। भिन्न पाद नख भय कितेही
छिन्न बाहु श्रुनि भये अपारा। पाँच सहस्त्र भट महिमैं डारा।
भाग मथुरा के जनसबा। भे गुलाब अरि हितु अगर्वा॥
कोलाहल पुर म भयो भयो समय भयकार।
भोजराज के सीस त पह्यो छत्र तिहि वार॥[1]

धनुप भग की भीषण ध्वनि यहाँ आलम्बन है। लोग एव कस आश्रय है। लोगो की अधीरता, उनका भाग जाना अनुभाव है। कोलाहल समय की भयकारिता उद्दीपन है। जुप्सा, मोह आदि सचारी हैं भय स्थायी है। इन सभी अगो के योग से भयानक रस यहाँ निष्पन्न है।

रौद्र रस–विरोधी पक्ष द्वारा अपमानास्पद व्यवहारा से, तथा गुरु निंदा, देश द्रोह के कारण रौद्र रस की अभिव्यक्ति हाती है। राव गुलाबसिंह के कृष्ण चरित में रौद्र रस के भी कुछ प्रसग हैं। कस के दरबार मे मुष्टिक और चाणूर कृष्ण और बलराम पर छोड जाते हैं। उस प्रसग म कृष्ण एव बलराम की लीलाओ म रौद्र रस का उत्कृष्ट दृष्टव्य है—

तब श्रीकृष्ण कोपि करि तासा। पकरि हाथ मैं हाथ प्रकासा।
कसान्तिक क दखत ताही। अति भ्रमाव पटक्यो महि माँही।
तान फूट्यो शिर तिहि करा। निकज्यो मुखत रुधिर घनरा।
रिगरि प्रान बिन कोनो ताही। लखि हर्षे नर नारि महाही
तदत बलज मुष्टिक मा या। प्रानहीन अवनि मैं डा यो।
मल्लकूट हरि सकरि आयो। ताहि मारी बल भूमि गिरायो।

---

१ कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य स०, प्रयाग, मथुरा खड, छद ६४ ६५।

नलतोनल मारि भगवाना। शेष मल्ल भय भीत पलाना।
तब सब सखा जाय हरि पाँही। कूदन ह्वयन लग महाही।[1]

चाणूर एवं मुष्टिक यहाँ आश्रय हैं। अ याय कारी रूप म उनका कृष्ण एव बलराम पर आक्रमण उद्दीपन हैं। हाथ परहना भमाना, पटकना अनुभाव है। अमष उग्रता आदि सचारी के सयोग स भाव स्थायी परिपुष्ट होकर रौद्र रस के रूप म व्यजित हुआ है।

बीभत्स रस—घृणित वस्तुआ को देखन स वा सुनने स बीभत्स रस निष्पन होता है। बीभत्स रस का विवेचन सामा यतया अ य रसो के सहायक रूप म किया जाता है। राव गुलाबसिंह जी के गगाष्टक ग्रथ म भक्ति के सहायक रूप म बीभत्स का अभि यजन स्तनीय है—

घोर पातकी तोय पान कर एक बार।
ताहि छिन ही मैं निज तन मैं मिलावरी॥
हाड चाम काहू को पर जो आनि तेरं गोन
ताहूँ को ततच्छिनही लाक्य बनावरी॥
सुकवि गुलाब सुर लोक माँहि गनि थोरा।
कूकर और सूकरादि लायन पठावरी॥
दीन रट मेरी नाँ सुन है सो दया की निधि।
मोहि देषि मात तोहि का ह घिनि आवरी॥[2]

यहाँ हाड चाम कूकर, शकरादि की लाशें आलबन हैं। उनकी चचा उद्दीपन है। देखकर घणा को व्यक्त करना कप आदि अनुभाव हैं। भय, आवग, आदि सचारी भावो से पुष्ट जुगुप्सा स्थायी भाव है। अत बीभत्स रस की सफल अभिव्यक्ति यहाँ हुई है।

अदभुत रस—किसी भी प्रकार के वचित्र्यपूण, अदभुत तथा आश्चय कारक वणन मे अदभुत रस की सष्टि होती है। राव गुलाबसिंह जी के का य म पूतना वध का प्रसग इस रस के उदाहरण स्वरूप यहाँ प्रस्तुत है—

उर लपटाय कही यह बारो। है सब ही को प्रान पियारो।
गुन मैं नारायण सम आही। कामरूप इहि सब कोउ नाही।
यो बतरावत ही तिहि बारा। कर से कुच गहि नद दुलारा।
तुरत प्राण खचि तन लीनो। विष जत छीर अमत समकीनो।
होय सुकविकल परी महि माँही। छाडि छाडि करि सोर महाही।

---

१ कृष्णचरित हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग मथुरा राड छ० ११२
२ गगाष्टक, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छ द ५

निकरी पर दग भई बिहाला । कर पग रिगरन लगी बिन्हाला ।
नेवद सनी अति रोवन लागी । सोक सुनि दग दिसि भय पागी ।
शैलन सहित अवनि अति कापी । त्रिभुवन म ‾याकुलता ‾यापि ।[1]

यहाँ, श्रीकृष्ण आलबन है । पूतना आश्रय है । श्रीकृष्ण की पूतना द्वारा प्रगसा उद्दीपन है । पूतना का विरल होना चिल्लाना, बेहाल हो जाना, हाथ पर पटकना अनुभाव है । भ्रम चपलता, प्रलाप, सचारी भावा से पुष्ट विस्मय स्थायी भाव है । अद्भुत रस की सु दर अभि यक्ति यहा हुइ है ।

नात रस––नात रस की गणना शृगार एव वीर रस के साथ प्रधान रस के रूप म की जाती है । कवि के कृष्ण चरित काव्य म शातरस के भी कुछ उदाहरण प्राप्त होते है । द्वारिका गड का एक उदाहरण यहा उद्धृत है––

भली करी दशन दिया मुनिवर आय ।
ग्रहासक्त हम से न को दुलभ सत मिलाय ।[2]

श्रीकृष्ण की गहासक्तता यहाँ आलबन है । महर्षि नारद के दरान उद्दीपन है । रोमाच ग्लानि अनुभाव हैं । हर्ष, धृति, मति स्मरण सचारी भावों से पुष्ट निव द स्थायी भाव यहाँ है । नात रस की उत्कृष्ट अभि‾यक्ति यहाँ हुई है ।

वात्सल्य रस––वात्सल्य एव भक्ति को स्वतत्र रस म मानकर उन्हें शृगार के अतगत ही अधिकाश सस्कृत आचार्यों न माना है । वात्सल्य एव भक्ति को स्वतत्र रस मानने वाले आचाय भोज, भानुदत्त, विश्वनाथ आदि सस्कृत साहित्य म भी रह हैं । आचाय विश्वनाथ ने वात्सल्य को रस के रूप म प्रतिष्ठा प्राप्त करा दी है ।[3] अत उन्हें रस रूप मे स्वीकार कर उनका एकाध उदाहरण प्रस्तुत करना औचित्यपूण होगा । वात्सल्य रस के अनेक उदाहरण राव गुलाबसिंह जो के कृष्ण चरित म प्राप्त हैं । कृष्ण पर आने वाले सकटो के कारण कृष्ण के प्रति यशोदा की वत्सलता दृष्टव्य है–

बिधि नें मोहि एक सुत दीनों । ताहू सन विघन घन कीनों ।
बच्यो मृत्यु के मुख ते आजा । आगे ह्वै है कौन अकाजा ।
कहाँ करों जाऊँ किहि ठामा । कहाँ बसौ अब तजि यह धामा ।
धन तनु, ग्रह रत्नादिक नाना । सबत वर सुत कुशल निदाना ।
परमेश्वर पूजन मन कामा । दान रु देवन के घर धामा ।
करवाऊँगी मैं हितकारा । जो रहि है सुत सें यह बारा ।

---

१ कृष्ण चरित, हस्त०, हिन्दी साहित्य स०, प्रयाग गोलोक खड, छन्द ३४५
२ वही, द्वारिका खण्ड, छन्द ८१७
३ काव्यशास्त्र–डॉ० भगीरथ मिश्र, द्वितीय सस्करण, पृ० २९४, २९५

इक सुत है हमरो दुग टाली । सूरगात की लकरी आली ।
अब मैं जा बसि हो तिहि ठोरा । रहि है सुख मैं बालक मोरा ।[1]

यहाँ कृष्ण आलबन है । यशोदा आश्रय है । कृष्ण पर आने वाले सकट कृष्ण की उक्त सकट प्रसगो की लीला शौय उद्दीपन है । यशोदा के वचन अनुभाव है । भविष्य की चिंता तथा मगल कामना सचारी भाव हैं । इन सभी उपकरणो से स्थायी भाव पुत्र स्नेह पुष्ट होकर वात्सल्य रस म परिणत होता है ।

भक्ति रस—आचाय विश्वनाथ ने वात्सल्य को रस के रूप म स्थापना की तो पडितराज जगन्नाथ न भक्ति का रस रूप म प्रवतन किया ।[2] भक्ति को रस रूप मे मधुसूदन सरस्वती एव रूप गोस्वामी न प्रतिष्ठा प्राप्त करा दी है । भक्ति पर पिछले अध्याय म विस्तत विवचन किया गया है । अत यहाँ एकाध उदाहरण प्रस्तुत करना औचित्य पूण होगा । राव गुलाबसिंह जी के शारदाष्टक ग्रथ म एक उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है—

जसे चित चातक लगाय रहै नीरद मैं
नीरज विशेष रवि ही मैं हित ठानैरी ।
ससिकर और नित लागत चकोर दग
मग अनुराग हक राग मांझ मानैरी ।
सुकवि गुलाब जसे सफरी पतगन के
ग्रसत हमेस जल दीपन म प्रानरी ।
जस दिन रन रहै यक आस तेरी तऊँ,
कौन हत यरी भात मोहि तू न जानै री ।[3]

शारदा माता आलबन है कवि स्वय आश्रय है गद् गद वचन अश्रु अनु भाव व्यग्रता चिंता सचारी भाव आदि स पुष्ट देव रति स्थायी भाव से भक्ति रस की निष्पत्ति यहाँ स्पष्ट रूप स लक्षित होती है ।

प्रकृति चित्रण—रस विवेचन के अ ग रूप मे प्रकृति चित्रण का विचार करना भी आवश्यक प्रतीत होता है । का य म प्रकृति चित्रण का विशेष महत्व माना जाता रहा है । रस विवेचन मे प्रकृति का उद्दीपन रूप मे चित्रण अधिक मात्रा मे प्राप्त होता है । कही कही आलबन रूप म एव अलकार के रूप म भी प्रकृति का चित्रण किया जाता रहा है । राव गुलाबसिंह जी के का य म आलबन, उद्दीपन,

---

१ कृष्ण चरित हस्त०, हिंदी साहित्य सम्मलन प्रयाग, गोलोक खड, छद ३८७
२ रस गगाधर—प० जगन्नाथ, अनुवाद—रा० ब० आठवले, प्रथम सस्करण, पृष्ठ ११६ ११७
३ शारदाष्टक हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, छद ७

अलंकरण, पृष्ठभूमि आदि विभिन्न रूपों से प्रकृति चित्रण उपलब्ध होता है। इन सभी रूपों का विस्तार सहित विवेचन परिमित पृष्ठों की सीमा में असंभव प्रतीत नहीं होता। अतः यहाँ केवल रस से संबद्ध आलंबन एवं उद्दीपन रूप में प्रकृति चित्रण के उदाहरण प्रस्तुत हैं—

आलंबन—नाम जत सागर अगाध जल धारी है।
फूले कल कंज करैं मंजु अलि पुंज गुंजन,
लरत तरंग चित चारत निहारी है।
सुकवि गुलाब राजहंस चक्र कारंडि
विपुल विहंगम की रजति न्यारी है।
ठौर ठौर पथि पुर नारी नर केलि करैं,
मानो रति काम ही तमाम मन धारी है।[1]

यह प्रकृति वर्णन बड़ा ही आकर्षक बन पड़ा है। प्रकृति के सौन्दर्य को देखते तो सभी हैं किन्तु उसका उतनी ही सुन्दरता के साथ वर्णन करना कुछ प्रतिभा सम्पन्न कवियों के बस की बात होती है। यहाँ भी राव गुलाबसिंह जी की कुशलता स्पष्ट परिलक्षित होती है। 'आलंबन रूप प्रकृति चित्रण में प्रकृति साधन न बनकर साध्य बन जाती है।'[2]

उद्दीपन—मानवीय भावों को उद्दीपन करने के हेतु काव्य में प्रकृति चित्रण साधन रूप में किया जाता है। शृंगार रस के उभय पक्ष संयोग एवं वियोग में प्रकृति इस रूप में उद्दीपन विभाव के रूप में चित्रित है। उसका बड़ा महत्त्व है। मानव मन की लहरों को लहरित करने वाली प्रेरणा के रूप में इसका अस्तित्व स्वीकार्य है।

बीर बसंत बयार करैं तन घाव करोल विशेष त्रिशूल सी।
कानन माहिं दरार परै अलि कोकिल कूकन की अतिशूल सी।
क्यों बिन नाह गुलाब निबाह करौ नव सायक मैं प्रतिकूल सी।
नैन को अति ही दुख दानि परै मकरंद गुलाब के फूल सी।[3]

विरहिणी नायिका के विरह दुख की पीड़ा को उद्दीप्त करने वाला यह वसंत ऋतु का वर्णन है। संयोग की प्रिय बातें विरह में अप्रिय लगती हैं। वही यहाँ अभिव्यक्त हैं।

संयोग के प्रसंग का चित्र भी दृष्टव्य है—

---

१ काव्य नियम, हस्त०, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छन्द १०५
२ हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण, डा० किरण कु० गुप्ता प्रथम सं०, पृ० ३२
३ काव्य नियम, हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छन्द १७१

जमुना तीर कदम्ब की छाया । नटवर वेष धर मन भाया ।
मोहन मूरति वन बजाता । लखे अचानक मदु मुसक्याता ।
गई बिसरी तन की सुधि राधा । रही ठगीसी रूप अगाधा ।
इकटक चितवत कपत गाता । फरकत अधर बिम्ब मे राता ।
लखि कमल सै सरस सुहाइ । चित्र लिखे से भय क हाई ।
मन्द भय दग अगुरी सासा । भया मधुर मुरली ध्व हासा ।
लखि दोउन की प्रीति अपारा । भय सचिन मन अनद भारा ।
राधा लय गई घर सोई । प्रेम विवस अति व्याकुल होई ।[1]

यमुना तीर कदम्ब की छाया जस प्रकृति के सान्निध्य म राधा एव कृष्ण का प्रम किस प्रकार प्रस्फुटित है इसका सरस सु दर चित्र कवि ने यहाँ प्रस्तुत किया है ।

राव गुलाबसिह जी की का य कृतिया म अभि यक्त रसा क विवचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि ने अपन का य म सभी रसो की यथोचित मात्रा म प्रयोग किया है । रस के सहायक के रूप म आलम्बन एव उद्दीपन रूप म प्रकृति चित्रण भी सफलता के साथ किया गया है । यद्यपि प्रसगानुरूप सभी रसो का आविष्कार कवि के का य म हुआ है फिर भी ऐसा प्रतीत हाता है कि उनकी रुचि शृगार एव भक्ति रस म विशष रूप से थी ।

ध्वनि–ध्वनि भारतीय का य शास्त्र का एसा महत्त्वपूण सिद्धा त है जिसन का य की आत्मा के रूप म अपन आपको स्थापित करन का प्रयास किया है । ध्व यालोककार आन दवधनाचाय न लिखा है--

'का यस्यात्मा ध्वनिरिति बुधय समाम्नाता पूव ।

ध्वनि सिद्धा त की आलाचना क कारण इसका महत्त्व कुछ घट गया था कि तु अभिनव गुप्तपादाय एव आचाय मम्मट के द्वारा पुन स्थापना के बाद ध्वनि सिद्धा त एक महत्त्वपूण और श्रेष्ठ का य सिद्धा त के रूप म स्वीकृत हुआ है । इसके अनुसार ध्वनि का य सर्वोत्तम का य है । गुणीभूत का य मध्यम का य है तथा व्यग्यहीन का य है या अश्रेष्ठ का य है ।

ध्वनि सिद्धा त की सबस महत्त्वपूण विशेषता यह है कि इसन अपन क्रोड म का य म सम्ब ध रखने वाले समस्त सिद्धा त तत्वा को समेट लिया है । याकरण स्फोटवाद इसके मूल म है । पूववर्ती वर्णां के उच्चारण के सस्कार क साथ अ तिम वण क उच्चारण के अनुभव के अथ की अभि यक्ति स्फोट है ।[2]

---

१ कृष्ण चरित हस्तलिखित हि दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, वृ दावन ख ड, छद ४५९ ।

२ का यशास्त्र–डा० भगीरथ मिश्र द्वितीय सस्करण, पृ० २३४ ।

जिस प्रकार शब्द के अलग अलग वर्णों के उच्चारण से अर्थ की अभिव्यक्ति नहीं होती उसी प्रकार से अभिधा तथा लक्षणा इन शब्द शक्तियों से सम्पूर्ण अर्थ, विशेष रूप से मार्मिक अर्थ की अभिव्यक्ति नहीं होती। यह मार्मिक अर्थ व्यंजना शक्ति से प्राप्त होता है। अभिधा और लक्षणा के उपरान्त व्यञ्जना से ध्वनित होने वाला अर्थ, चमत्कारिक अर्थ ध्वनि है। ध्वन्यालोककार ने ध्वनि अनुकरण के रूप में माना है।

व्यञ्जना की प्रधानता के आधार पर ध्वनि सिद्धान्त के अन्तर्गत काव्य के तीन भेद माने गए हैं-१ ध्वनिकाव्य, २ गुणीभूत व्यंग्य और ३ अवरकाव्य।

ध्वनि काव्य-वाच्यार्थ से अधिक चमत्कारपूर्ण व्यंग्य जहां हो ध्वनि काव्य है।

गुणीभूत व्यंग्य-वाच्यार्थ से व्यंग्यार्थ गौण अथवा कम चमत्कारपूर्ण हो वह गुणीभूत व्यंग्य काव्य है।

अवर काव्य-जहाँ व्यंग्यार्थ न हो वह काव्य अवर काव्य है।[1]

व्यंग्यार्थ, वाच्यार्थ एवं लक्ष्यार्थ पर आश्रित होता है अतः ध्वनि भी अभिधा एवं लक्षणा पर आधारित है। इसी आधार पर ध्वनि के दो भेद किए गये हैं। १ लक्षणामूला ध्वनि और अभिधामूला ध्वनि। ध्वनि काव्य के कतिपय उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैं-

लक्षणामूला ध्वनि-अधिक चमत्कार व्यंग्यार्थ में जहाँ पर वाच्यार्थ का प्रयोजन नहीं रहता वहां व्यंग्यार्थ लक्ष्यार्थ पर आश्रित रहने से लक्षणामूला ध्वनि होती है। इसके दो भेद हैं-१ अर्थान्तर सङ्क्रमित २ अत्यन्त तिरस्कृत।

अर्थान्तर सङ्क्रमित वाच्य ध्वनि-जिस ध्वनि में वाच्यार्थ अपना पूर्ण तिरोभाव न करके अपना अर्थ रखते हुये भी अन्य अर्थ में सङ्क्रमण करता है, वहाँ अर्थान्तर सङ्क्रमित वाच्य ध्वनि मानी जाती है।[2]

> ह्वै कल्याण सहित बलश्यामा। करि मथुरा के पूरन कामा।
> ऐहैं कछु दिन मैं तुम पाही। ह्वै हो मुदित गुलाब महा ही।[3]

'करि पूरन मथुरा के कामा' में मथुरा से मथुरा के निवासी, शत्रु मित्र आदि का समावेश है वाच्यार्थ पूर्ण तिरोभाव यहाँ नहीं है। अतः यहाँ अर्थान्तर सङ्क्रमित वाच्य ध्वनि है।

अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ध्वनि-जिस ध्वनि में वाच्यार्थ का सर्वथा तिरस्कार

---

१ काव्यशास्त्र-डा० भगीरथ मिश्र द्वितीय संस्करण पृ० २५०।

२ साहित्य समीक्षा के सिद्धान्त, डॉ० गोविन्द त्रिगुणायत, प्रथम भाग, द्वितीय संस्करण, पृ० २७४

३ कृष्णचरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, पृ० ४४ छन्द संख्या नहीं

अथवा त्याग हो जाता है वह अत्यन्त निरस्कृत वाच्य ध्वनि है ।

इक बोली हरि मैं अनुरागी । सुनि रे अलि माधव बड़भागी ।
कपट भर्यो जाको मोहक हाता । है तद्धत ही भकुटि विलासा ।
अस मन मोहन के वश मोंही । त्रिभुवन की सब वनिता आंही ।[1]

यहा पर कपट भरा होने पर सब वनिताओं का वश होना बाधित है। व्यग्याथ यह है कि वह कपटी छली है किन्तु मन मोहक है अत वनिताओ का उसके वश में होना अटल है । यह व्यग्याथ अत्यन्त तिरस्कृत वाच्य ध्वनि है ।

अभिधा मूलक ध्वनि–जिस ध्वनि म वाच्याथ वाछनीय प्रयोजनीय हो और वह अन्य परक या व्यग्य निष्ठ हो वह अभिधामूलक ध्वनि है । इस ध्वनि म व्यग्याथ वाच्याथ पर आश्रित रहता है । इस ध्वनि के दो भेद है–

१ सलक्ष्य क्रम व्यग्य ध्वनि । २ असलक्ष्य क्रम व्यग्य ध्वनि ।

सलक्ष्य क्रम व्यग्य ध्वनि–वाच्याथ का स्पष्ट बोध होने पर जहाँ उसके बाद व्यग्याथ के प्रकट होने का क्रम रहता है, वहाँ पर सलक्ष्य क्रम व्यग्य ध्वनि होती है। इसे अनुरणन ध्वनि भी कहा जाता है । इसके भी तीन भेद हैं–शब्दशक्तिउदभव अनुरणन ध्वनि । २ अर्थ शक्ति उद्भव अनुरणन ध्वनि ३, शब्दार्थोदभव अनुरणन ध्वनि ।[2]

भो रही त औरैं भाँति घोर घन ओर ओर
दौर वर दामिनि दिशान मैं न भावेंरी ।
चोरें चित चातक चिचाय गोत पीतम की,
मोर मन मुखा न सुखा सुनावेरी ।
सुकवि गुलाब जोर हित बक माल छाय,
आय आय वीर वधू धीरज धगावेंरी ।
फरि फेरि फरक हमारे वाम नैन भुज
आज मन भावन को आवन जतावरी ।[3]

इसम प्रथम पक्ति म भेदकातिशयोक्ति, द्वितीय पद मे शुद्धापह्नुति अलङ्कारा का सौन्दय व्यग्य है । यहाँ सलक्ष्य क्रम व्यग्य ध्वनि है।

असलक्ष्यक्रम व्यग्य ध्वनि–जब वाच्याथ और व्यग्याथ का पौर्वापय क्रम प्रतीत नही होता तब उसे असलक्ष्य क्रम व्यग्य ध्वनि कहते हैं ।[4] वाच्याथ ग्रहण करते ही

१ कृष्णचरित–हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खड छद ३५५
२ काव्यशास्त्र–डा० भगीरथ मिश्र–द्वितीय सस्करण, पृ० २५२ ।
३ वृहद व्यग्याथ चन्द्रिका हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छद ४८६
४ शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त डा० गोविन्द त्रिगुणायत, प्रथम भाग, द्वितीय सस्करण, पृ० २७५

इस व्यंग्यार्थ से अनुभूत हो जाते हैं।

भाव भेद के आधार पर असंलक्ष्य क्रम व्यंग्य ध्वनि के ५ भेद हैं। यहाँ–रस ध्वनि रसभास, भावोदय, भावशांति, भावशबलता। संक्षेप में इनका सोदाहरण विवेचन यहाँ प्रस्तुत है—

रसध्वनि–जहाँ वर्णन से रस व्यंग्य हो वहाँ रसध्वनि है।[1] रस की चर्चा के प्रसंग में इसी अध्याय में इसके अनेक उदाहरणों की चर्चा की गई है अतः उसकी पुनरुक्ति यहाँ करना अवांछनीय प्रतीत होता है।

भावध्वनि–जहाँ पर अपुष्ट स्थायी अथवा प्रमुखता से संचारी भाव का प्रकाश हो वहाँ भावध्वनि है–[2]

लखि पिय बिनती रिस भरी चितव चंचल भाय।
नव खंजन से दगन में लाली अति छवि छाय॥[3]

यहाँ क्रोध स्थायी अपुष्ट है। अतः भाव ध्वनि है।

रसाभास––जब रस निष्पत्ति में किसी भी प्रकार का अनौचित्य दोष आ जाता है तब उसे रसाभास कहा है।[4] वास्तव में यह रस दोष है परन्तु आभास के रूप में भी आनन्दकारी होने के कारण इसे ध्वनि के भीतर माना गया है।

धरयो यज्ञ मण्डल के माँही। चंदनादि करि अर्चित आही।
दश हजार जन तिहि रखवारा। खरे चहुँदिशि अति हुशियारा।
तासु मनोहर शोभ निहारी। हर्षे सखन सहित बनवारी।
जान लग हरि जब तिहि पासा। लगे निवारन रक्षक तासा।
तउ न रुके धनु के ढिग आया। वाम हस्त में ताहि उठाया।
पुरवासिन के देखत ताही। कीना कृष्ण सगुन छिन माँही।
खचि कर्ण लौ कर धारी। करयो बीच सें भंग बिहारी।
डारि दिया महि में हुपाता। ईख खण्ड कौं जिमि गज माता॥[5]

अब इस प्रकार से धनुष भंग होने पर उनके रक्षकों का यदु युद्ध करने का उत्साह अनुचित है अस्वाभाविक है–

---

१ काव्यशास्त्र–डॉ० भगीरथ मिश्र, द्वितीय संस्करण, पृ० २५५
२ वही, पृ० २५५
३ वृहत वनिता भूषण–हस्तलिखित हिन्दी सा० सम्मेलन, प्रयाग, छन्द १६१
४ शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त–डॉ० गोविन्द त्रिगुणायत, प्रथम भाग द्वितीय संस्करण पृ० २७६
५ कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खण्ड छन्द ६२

सो मुनि डग्यो कस विशेषा । धनुरक्षक करि रोप अशेषा ।
बोल पकरहु या को धाई । बालक सकल भागी नही आई ।
यो कहिके भट गस्त्रन लेई । आवे कृष्ण चन्द्र ढिग तेई ।[1]

भावाभास—जहां पर भाव में कोई अनौचित्य हो वहां भावाभास होता है—[2]

सो सुनि शोक सनी सगरी तिय ज्यों दुख दीन निशागम कोकी ।
शोक मग्न हरषाय गुलाब प्रवीन तिया कस बीन बिलोकी ।[3]

यहां हर्ष का भाव व्यर्थ ही प्रतीत होने से भावाभास है ।

\+ + +

कोमल प्रेम भरे न सुने वच जोरत हाथ न और लखायो ।
आलि न लाल न मैन निहारि दया पतहू नही मो मन भायो ।

यहां पर भी रोष भाव व्यर्थ ही होने से भावाभास है ।[4]

भावोदय—जहां पर किसी प्रसंग में भाव के उदय होने में आकर्षण हो वहां भावोदय होता है ।

चन्त तमहि जसुमति इमि भाषा । रहे प्रान दरस अभिलाषा ।
लाल चुराई तुमने गया । सो तुम बिन घर आतन भया ।
हेरत तुमहि वन के मांही । बिडरी फिरत रहत घर नाही ।
अस्ति मांस गे सूकि विशेषा । केवल प्रान रहे अवशेषा ।
जब कोऊ कहि है कृष्ण न ऐहैं । सुनतहि सब व्रजजन मरिजैहैं ।
व्रजवासिन सम त्रिभुवन माही । परम भक्त तुम्हरो कोउ नांही ।
है यह मम विनती तहं जाई । दरसन देय हरो दुख साई ।
यो कहि लाए भट सुसारी । बरदीनी व्रजचन्द अगारी ।
मुनि स दश व्रज की विपति जानी नयन भरि नीरा ।
कर कम्पत मुरलीउ दयलाई पुलक शरीरा ।
नयन मूंदि व्रज ध्यान धरि मोह मग्न घनश्याम ।
भरि उसास रोवन लगे ले ले व्रज को नाम ।।[5]

सन्देश श्रवण एवं स्मरण के बाद प्रेम भाव का उदय चमत्कारपूर्ण है ।

---

१ कृष्ण चरित-हस्तलिखित, हिन्दी सा० सम्मेलन प्रयाग मथुरा खंड छन्द ६४
२ काव्यशास्त्र डा० भगीरथ मिश्र द्वितीय संस्करण पृ० २५६
३ बृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका—हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छन्द २८३
४ वही, छन्द ३३६
५ कृष्णचरित-हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खण्ड, छ द, ५०४, ५०६

भावशान्ति--जहाँ पर किसी उठे हुए भाव की समाप्ति में विशेषता देखी जाती है वहाँ पर भावशान्ति होती है।[1]

तब बोली इक तिय बिलखानी । पुनि आयो अक्रूर सयानी ।
इन वर कृष्ण हि लेय पलायो । जाय कंस स्वामि हि मारवायो ।
अब हम कह हरि तहँ ल जहै । मास दिह निज स्वामिहि द है ।
यह ज मी है कौन कुचाला । देत सबहि को कष्ट कराला ।
जसे विषधर कोपित कारा । देत जनुन कौं भय इकसारा ।
यों बतरावत रथ निग आई । अगुरी सारथि गाल लगाई ।
बोली काको है रथ राहा । वेग बतावहु सहित सनेहा ।
बोल्यो सारथि उन्धव आये । समाचार मान्व के लाय ।

+ + +

इक बोली यह श्याम पठाया । होय उनहि को सखा सुहायो ।
इक बोली यह उद्धव नामा । आयो कालि न द क धामा ।
पठयो पत्री द वनमाली । इहि विधि मैं जानी आली ।
सो सुनि सब गापी हर्षाई ।[2]

क्रोध के पश्चात् हुए का यह भाव भावशान्ति है।

इस समग्र विवेचन के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि कवि न ध्वनि के सभी भेदोपभेदों का सफल प्रयोग अपने का य में किया है।

अलकार--शब्द युत्पत्ति के अनुसार अलकार शब्द की युत्पत्ति है अलकरोतीति अलकार । अथात् वह अलकार है जो किसी की शोभा बढ़ाएँ किसी को अलकृत करे। अलकारो के प्रयोग स अभि यक्ति म स्पष्टता, भावो म प्रभ विष्णुता और प्रपणीयता तथा भाषा में सौ दय का सम्पादन होता है।[3] भामह, दण्डी, उदभट तथा रुद्रट जसे अलकारवादी का य मे अलकारो को महत्त्वपूर्ण मानते हुए गुण और अलकार से रहित कविता को विधवा के समान घोषित करते हैं--भूषालकार रहिता विधवव सरस्वती। इनके मत म सु दर से सु दर रमणी का मुख भी अलकारा के बिना शोभा नही पाता ठीक उस ही सु दर से सु दर काव्य भी अलकारो के अभाव मे श्रीहीन दिखाई पडता है 'न का तमपि निभू प विभाति वनितानम ।'[4] अलकारा के विषय म अलकारवादियो की प्रवत्ति उन्हे काव्य

---

१ काव्य शास्त्र डा० भगीरथ मिश्र, द्वितीय सस्करण, पृ० २५६
२ कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हि दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, मथुरा खण्ड, छ द ३३५
३ हि दी साहित्य कोश--स० डा० धीर द्र वर्मा भाग १, प्रथम सस्करण पृ० ६०
४ कुवलयान द--व्याख्या, डा० भोलाशकर यास द्वितीय सस्करण निवेदन पृ० [illegible]

शोभाकारक स्थायी धर्म के रूप में मानने की रही है किन्तु ध्वनि एवं रसवादी आचार्य उन्हें शोभा के सृष्टिकारक नहीं वर्द्धिकारक एवं अस्थायी रूप में स्वीकार करते हैं। आचार्य विश्वनाथ ने अलंकारों को काव्य शोभा बढ़ाने वाले रस भाव आदि के उत्कर्ष में सहायक, शब्द और अर्थ के अस्थिर धर्म माना है।

अलंकारों को प्रधान रूप से दो विभागों में वर्गीकृत किया जाता है। १ शब्दालंकार और २ अर्थालंकार। शब्दालंकार में शब्द गत चमत्कृति का प्राधान्य होता है। अर्थालंकार में अर्थगत चमत्कृति का प्राधान्य होता है। शब्द एवं अर्थ दोनों की चमत्कृति होने से उभयालंकार माना जाता है। प्रत्येक अलंकार की अपनी अपनी विशेषता होती है। मूल तत्व की एकात्मकता का विचार करते हुए अर्थालंकारों का वर्गीकरण किया जाता है। रुय्यक ने अपने अलंकार सर्वस्व ग्रन्थ में अर्थालंकारों का वर्गीकरण इस प्रकार किया है—१ सादृश्य गर्भ २ विरोध गर्भ ३ शृंखलाबन्ध ४ तर्क न्याय मूलक ५ वाक्य न्याय मूलक ६ लोक न्याय मूलक ७ गूढ़ार्थ प्रतीति मूलक।[1]

रुय्यक के अलंकार सर्वस्व के आधार पर राम बहोरी शुक्ल जी कृत वर्गीकरण इस प्रकार है—१ साम्य मूलक २ विरोध मूलक ३ शृंखला मूलक ४ न्यायमूलक ५ गूढ़ार्थ प्रतीति मूलक।[2] विशेषण एवं गम्यार्थता के भेद साम्य मूलक अलंकार में समाविष्ट हैं। तर्क वाक्य, एवं लोक न्याय मूलक अलंकारों का समावेश न्याय मूलक वर्ग में किया गया है। अतः यह वर्गीकरण ही अधिक तर्क संगत प्रतीत होता है। अर्थालंकारों के विवेचन में इस वर्गीकरण के आधार पर विवेचन किया जायगा।

राव गुलाबसिंह जी के काव्य में लगभग सभी अलंकारों का प्रयोग न्यूनाधिक मात्रा में दृष्टिगोचर होता है। शब्दालंकारों में प्रधान रूप से यमक एवं अनुप्रास अर्थालंकारों में सादृश्य मूलक एवं विरोध मूलक अलंकारों का प्रयोग अधिक मात्रा में हुआ है। अलंकार विवेचन में शब्दालंकार और तत्पश्चात अर्थालंकार यह क्रम रखा गया है।

शब्दालंकार—शब्दालंकारों में अनुप्रास, यमक, श्लेष, वक्रोक्ति एवं चित्र अलंकारों की विवेचना की जाती है। इन अलंकारों के उपभेद भी हैं। राव गुलाबसिंह जी की कविता में प्रयुक्त कुछ अलंकारों के प्रयोग को यहाँ दिखाना अभीष्ट होगा जिससे कवि की अलंकार प्रयोग की योग्यता एवं तद्‌गत काव्य सौन्दर्य के दर्शन किए जा सकेंगे।

---

१ कुवलयानन्द—व्याख्या, डा० भोलाशंकर व्यास द्वितीय संस्करण, निवेदन पृ० ६७–६८

२ काव्य प्रदीप—राम बहोरी शुक्ल, १६ वाँ संस्करण, पृ० १२९, १३०

अनुप्रास—जब वाक्य में एक अथवा अधिक व्यंजन एक से अधिक बार आवें तो अनुप्रास अलंकार माना जाता है। यहाँ स्वरों की समानता आवश्यक नहीं मानी जाती है। केवल स्वरों की समता में व्यंजन समानता का सा चमत्कार नहीं होता। श्रुति मधुरता अनुप्रास की विशेषता कही जाती है। अनुप्रास के छेक, वृत्ति, श्रुति लाट एवं अन्त्य ये पांच भेद माने जाते हैं। लाटानुप्रास में शब्दों की पुनरावृत्ति होती है तो अन्य भेदों में वर्ण की आवृत्ति होती है।

राव गुलाबसिंह जी के काव्य से अनुप्रास के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

छेकानुप्रास—एक अथवा अनेक वर्णों का दो बार प्रयोग छेकानुप्रास कहलाता है।[1]

कहा रहे आये न पिय या कहि रहि सिर नाय।[2]

यहाँ 'क' एवं 'हि' इन वर्णों का दो बार प्रयोग हुआ है इसी प्रकार छेकानुप्रास का एक और उदाहरण देखिए—

पिय आवन को यह दिवस मरों एहें आज।[3]

य व ह इन वर्णों का दो बार प्रयोग यहाँ हुआ है।

वृत्यानुप्रास—जहाँ एक वा अनेक व्यंजनों का कई बार सादृश्य हो वहाँ वृत्यानुप्रास अलंकार होता है।[4]

साजि सिंगार सवारि स्वअंग अनंग तरंग उठे चित चाही।
आय गई रति मंदिर में गुन आगरि नागरि रंग उमाही॥
चौंप चढ़ाय हँसे हरषाय पर जन नायक हो मन माँही।
नाह निहारि कहै तउ नारि सरोजन ऊपर सोवत नाही॥[5]

स, ग न आदि वर्णों की अनेक बार आवृत्ति यहाँ हुई है।

वृत्यानुप्रास के अनेक उदाहरण कवि के काव्य में प्राप्त होते हैं।

श्रुत्यानुप्रास—मुख के भीतर किसी एक ही स्थान से उच्चरित होने वाले वर्णों की आवृत्ति होने पर श्रुत्यानुप्रास होता है।[6]

भूति विभूषित गातन में कर शूल ललाट कलाधर राज।
गंग तरंग किरीट जटा अहि मार गुलाब महा छवि छाज॥

---

१ काव्य प्रदीप—रामबहोरी शुक्ल, सोलहवाँ संस्करण, पृ० १०८
२ काव्य सिन्धु हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, तरंग १, छं द १
३ बृहद् वनिता भूषण हस्तलिखित छं द २४२
४ काव्य प्रभाकर जगन्नाथप्रसाद भानु द्वितीय संस्करण पृ० ४५०
५ बृहद् व्यंग्यार्थ चंद्रिका, हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छं द ३
६ काव्य प्रदीप—राम बहोरी शुक्ल सोलहवाँ संस्करण, पृ० ११३

भूल गिशान साव गुर मजुत द्वार हिमाचल क वय गाज ।
या मनमाहन मरति नाथ मया करि भो उर माहि विराज ।[1]

ओष्ठ्य वर्णों की सुन्दर आवत्ति यहाँ हुई है ।

अन्त्यानुप्रास—छ द क चरण क अन्त म जहाँ एक अथवा अनेक वर्ण समान हो वहाँ अ त्यानुप्रास होता है ।[2]

नगि मो पकज सो अमल स्पण सा छविधाम ।
वा रति जाको मुख निरखि मोहित भो घनश्याम ।[3]

माल लस सिर जालन की अरु भाल कलाधर बालक राज ।
सीस जटा जल मालन में कल याल विसाल विभूषन साज ।
वाहन वल घरे पज नाल गुलाब उमा अरधग निवाज ।
या मन मोहन मूरति नाथ मया करि भो उर माहि बिराज ।[4]

इन छ दो म अ त्यानुप्रास का सफल प्रयोग किया गया है । ज वर्ण एव 'म की चरणान्त मे समानता अतीव सुन्दर रही है । अन्त्यानुप्रास क भी अनक उदाहरण कवि के का य म प्राप्त होने है ।

यमक—जहाँ शब्द या वाक्याश एक स अधिक बार आत हैं लकिन उनक अथ सवत्र भिन्न होने हैं वहाँ यमक अलकार होता है ।[5]

हमन ल हँस उडि ज है ऋतु पावस म,
ऐहैं घनश्याम घनश्याम जा न ऐहैं री ।[6]

यहा घनश्याम पद की पुनरुक्ति है । दोनो के अथ भिन्न है । एक अथ है बादल और दूसरा है श्रीकृष्ण । अत यमक अलकार है ।

श्लेष—जहाँ कोई शब्द एक बार ही प्रयुक्त हो और उसत दो या अधिक अथ निकले तब वहा श्लेष अलकार होता है । श्लेष का अथ है चिपका हुआ ।[7]

पनी पतित गुलाब की करी अनुकम्प निहारी ।[8]

---

१ रुद्राष्टक हस्त० हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छ द ४

२ शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धात डा० गोविंद त्रिगुणायत द्वि० सस्करण, प० ३०२

३ का यनियम हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, छ द ३१२

४ रुद्राष्टक छन्द १

५ का य प्रदीप—राम बहोरी शुक्ल सालहवा स० प० ११०

६ पावस पच्चीसी—हस्त० हिंदी साहि य सम्मलन प्रयाग छन्द ९

७ शास्त्रीय समीक्षा क सिद्धा त—डा० गोविंद त्रिगुणायत प्रथम भाग, द्वितीय सस्करण प० ३०४

८ गगाष्टक—हस्तलिखित—हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, छ द ९ ।

'गुलाब' शब्द एक बार ही प्रयुक्त हुआ है किन्तु उसके दो अर्थ निकलते हैं—१ गुलाब का फूल और २ स्वयं गुलाब कवि। अतः गुलाब के स्थान पर पर्यायवाची किसी दूसरे शब्द के प्रयोग से ये अर्थ बने नहीं रहेंगे। अतः श्लेष अलंकार के प्रयोग का यह सुन्दर उदाहरण है।

वक्रोक्ति—जहां किसी उक्ति में वक्ता के अभिप्रेत आशय से भिन्न अर्थ की कल्पना की जाय वहाँ वक्रोक्ति अलंकार माना जाता है। इसके श्लेष वक्रोक्ति एवं काकु वक्रोक्ति के ये दो भेद हैं।[1]

आन तुहिं दूतत्व सिखाया। मधुरी बानी विनय बतायो।
हम सब जानत हैं तुव कामा। कर न तोर बिसास निकामा।[2]

गोपियाँ उद्धव से बातचीत करती हुई उसे 'द्विरेफ' सम्बोधन करती हुई कृष्ण सन्देश पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करती हैं। मधुरी बानी का सामान्य अर्थ ग्रहण मीठी बातें ही है किन्तु उच्चारण के भेद से कड़वी लगने वाली बातें इस प्रकार का अर्थ होगा। उद्धव के पक्ष में सामान्य अर्थ ग्रहण होगा जब गोपियों का अभिप्रेत अर्थ उन्हें जलाने वाली बातें होगा। अतः यहां काकु वक्रोक्ति का सुन्दर ढंग से अभिव्यंजन हुआ है।

शब्दालंकारों में कवि ने जिन अलंकारों के सफल प्रयोग किए हैं उनके उदाहरण यहां प्रस्तुत किए गए हैं। सूक्ष्म अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि लाटानुप्रास एवं चित्र इन शब्दालंकारों में कवि की विशेष रुचि प्रतीत नहीं होती है।

अर्थालंकार—शब्दालंकारों की तुलना में अर्थालंकारों की संख्या बहुत बड़ी है। विस्तार भय से सभी अर्थालंकारों के उदाहरण प्रस्तुत करना वाछनीय प्रतीत नहीं होता है। अतः कतिपय उत्कृष्ट अर्थालंकारों के उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किए जाएंगे। जिससे कवि के अलंकार सौष्ठव की कल्पना की जा सकेगी। सुविधा के हेतु रुय्यक के वर्गीकरण पर आधारित रामबहोरी शुक्ल जी का वर्गीकरण आधारभूत मानकर विवेचन किया जाएगा।

साम्य मूलक—साम्य मूलक अलंकारों में दो वस्तुओं के रूप या आकार एवं धर्म अर्थात् गुण तथा क्रिया में समता की भावना को सामने रखकर उक्ति में चमत्कार उत्पन्न किया जाता है। साम्य मूलक अलंकारों को १ अभेद प्रधान २ भेद प्रधान, ३ भेदाभेद प्रधान, ४ प्रतीति प्रधान एवं ५ गम्य प्रधान, ६ अर्थ वैचित्र्य प्रधान इन उप भेदों में विभक्त किया जाता है।[3]

---

१ काव्य प्रदीप, राम बहोरी शुक्ल सोलहवां संस्करण, पृ० १२३
२ कृष्ण चरित हस्त०, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग मथुरा खण्ड, छं० ३५८
३ काव्य प्रदीप—राम बहोरी शुक्ल, सोलहवां संस्करण, पृ० १२९, १३०

इन उपभेदो को ध्यान म रखत हुए साम्य मूलक अलकारा क कतिपय उदा हरण दष्ट य हैं।

रूपक—रूपक अलकार में उपमेय का उपमान में अभेद रूप म आरोप किया जाता है।[1] रूपक अलकार क दो भेद हैं—१ अभेद रूपक २ तद्रूप रूपक। इन दोनो भेदो के भी सम, अधिक, न्यून इस प्रकार तीन तीन उपभेद हैं। रूपक के साग, निर ग एव पर पतित ये भ य तीन भेद भी माने जाते हैं।[2]

मुखचद प्रकाश हुलास भरी गुरु सतन को सतकार कर,
ननदीन निहारिय हरषै वर सौतिन सौतन कौं न डर।
दग राजन से अवलोकि अली पति सो रति मैं समभाव भर,
कर कजन त पग धाय सदा सब सासन सासन सीस धरै।[3]

मुखचद्र में मुख पर चद्रमा का अभेद रूप से आरोप है अत अभेद रूपक है।
हुलास म प्रकाश का आरोप भी अभेद रूप से है—मुख स अभि यक्त हुलास एव चद्रमा से अभिव्यक्त प्रकाश दोनो म परिणाम अथवा क्रिया का अभदत्व है अत यहाँ भी अभेद रूपक है।

दग राजन म भी अभेद रूपक ही है किन्तु दगा की त्रिविध प्रकार की क्रिया यहाँ वर्णित है—ननदीन हरष सौतिन सो तनको न डर पतिसो रमि म सम भाव खजन क दग से नायिका के दगो की अधिकता यहाँ वर्णित है।

कर कजन म भी अभेद रूपक ही है। कर कजो से पग धोने की बात कह कर उपमय से अधिकता ही यहा वर्णित है। अत यहा अधिक अभद रूपक है।

अत यह निश्चय पूवक कहा जा सकता है कि कवि ने रूपकालकार का सफल प्रयोग किया है।

२ अपह्नुति—जहाँ प्रकृत (उपमय) का निषेध करके अप्रकृत (उपमान) का स्थापन (आरोप) किया जाता है वहाँ अपह्नुति अलकार होता है। अपह्नुति के भी सात प्रकार हैं।

सुकवि गुलाब रविजा क तट आव छाई
फिरत लुभाई सी सुहाई अहिरीन है।

---

१ शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धात—डा० गोविंद त्रिगुणायत, प्रथम भाग, प्रथम स०, पृ० ३०६

२ का य शास्त्र—डा० भगीरथ मिश्र—स० २०२९ वि० स०, पृ० १५८–१५९

३ बहद् यग्याथ चद्रिका हस्त० हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, छ द ५५

४ का य दपण—राम दहिन मिश्र, चतुथ स०, पृ० ३६७

मरे जानि नीर मिस आई गिरिजाई यह,
बिप्ररी नरी न ऐसी आसुरी सुरीन है ।[1]

मेरे जानि नीर मिस आई गिरिजाई यह' म उपमेय अहिरीन का निषेध करके उपमान गिरिजाई का आरोप किया गया है अत अपह्नुति अलकार है। किन्तु प्रत्यक्ष निषेध न करके अप्रत्यक्ष रूप से 'मिस' शब्द के द्वारा निषेध व्यक्त किया गया है अत कैतवापह्नुति या आर्थी अपह्नुति है।

मोर होत और भांति घोर घन ओर ओर,
गोरें वर दामिनी दिशान मैं न भावरी।
चोरें चित चातक चिचाय गोत पीतम को,
मोर मन मुखा न सुखा सुनावरी।
सुकवि गुलाब जोर हित बकमाल छाय।
आय आय वीर वधू धीरज घरावरी।
फरि फेरि फरकि हमारे वाम नन भुज,
आज मनभावन को आवन जतावरी।[2]

यहाँ 'चोर चित चातक' मे चातक के चिचाने से पीतम का गोत तो मोहित है किन्तु नायिका के मन को मोडने में वह सुख नही सुनाता कहकर—नही इस निषेधात्मक शब्द द्वारा मन न मोडना आरोपित है अत शुद्धापह्नुति है।

तनकहु मन मोर नही भूषन वसन सवनात।
सखि कहि पिय की है कथा नहि सखि की बात।[3]

यहाँ पति की कथा प्रकट होते हुए दक्ष नायिका ने सखि का बहाना बनाकर बात छिपाई है अत यह छेकापह्नुति है।

अत अपह्नुति के विविध उपभेदो के प्रयोग मे कवि सफल हैं।

उल्लेख—जहाँ एक ही वर्णनीय विषय का निमित्त भेद से अनेक प्रकार का वर्णन हो वहाँ उल्लेख अलकार है। उल्लेख अलकार के दो भेद माने गए हैं।[4]

रग भूमि मे गत भगवाना। दीखे निज निज भाव समाना।
मल्लन कुलिश रूप निहारा। पुरुषोत्तम वर नरन निहारा।
तियन मनोभव मन अनुमाना। गोप गसन निज बाधव जाना।
दुष्ट नयन जाम मद दानी। तत्व विचारे मुनि विज्ञानी।

---

१ बहत व्यग्यार्थ चद्रिका, राव गुलाब सिंह प्रथम स० छन्द ११६
२ वही, हस्त०, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छन्द ४४६
३ बृहद् वनिता भूषण, छन्द ७८
४ काव्य दर्पण—रामदहिन मिश्र—चतुर्थ स०, पृ० ३६७

पितुन प्रान प्रिय मान बाला । कस रायन काल कराला ।
जदु वशिन न रक्षक चीना । औरन लखे बाल बल पीना ।
सबहि मनोहर रूप विलोकी । इकटक रह दगचल रोकी ।
कस कुवलयापीड विनासा । लखि गुलाब मन मो जुत त्रासा।[१]

कस की रगभूमि म प्रवेश करने वाले श्रीकृष्ण को देखकर देगने वाले दर्शको के भेद से, उनकी मनोवृत्ति के अनुकूल उल्लेख यहाँ है । यहाँ प्रथम उल्लेख अलकार है ।

४ भ्रातिमान—जहाँ भ्रम से किसी अन्य वस्तु मान लें वहाँ भ्रम या भ्राति अलकार होता है ।[२]

विमनी जनी न उवाव अगराग अगन म,
भूली सी तमोलनि तमोल सुधि द्यावना ।
नायनि हू पायन मैं जावक अमावै नाहि
रहत छली सी अली अजन अँजावना ।
गुकवि गुलाब कीर, खजन कपोत, कोक
चौंकत चकोर पिक हस हुलसाव ना ।
कौन हतु होत विपरीत नई यासन मैं
बठी जिहि मौन दासी दीप दरसोवेना ।[४]

नायिका के रूप की अतिशयता दरसाने के हतु भ्रम अलकार का बडा सुदर एव सफल प्रयोग यहाँ प्रस्तुत है । तमालिन, नाइन, सखियाँ भ्रम मे पडकर तम्बूल देने का जावक रचाने का अजन अजाने का काम नही करती । भ्रम यह कि व इन कामा को कर चुकी हैं । वास्तविकता यह है कि नायिका के रूप की सुदरता ही इतनी है कि ताम्बूल न खाकर भी उसका मुख ताम्बूल खाय-सा भासित है पावो की ललाई मे जावक का भ्रम एव आँखो के काले रग मे अजने का भ्रम है ।

५ सन्देह—जहाँ किसी वस्तु के सम्बन्ध म सादृश्य मूलक सन्देह हो वहाँ यह अलकार होता है । कि 'क्या' धौं' 'किधो आदि शब्दो द्वारा सन्देह प्रकट किया जाता है । कही कहीं इन शब्दो के प्रयोग के बिना भी सदहालकार होता है ।

हौ हुलस रति सी मुनि कीरति त्या पति क गुन म मति पोव ।
देखन को अकुलात रहै कुसलात सुन मन नन्द नगोव ।

१ कृष्ण चरित, हस्त०, हिंदी साहित्य स०, प्रयाग, मथुरा खण्ड छन्द ८१
२ काव्य प्रदीप-रामबहोरी शुक्ल, सोलहवाँ स० प० १७९
३ वृहद व्यग्याथ चद्रिका हस्त० हिंदी सा० स०, प्रयाग, छद २७५
४ काव्य दपण-रामदहिन मिश्र, चतुथ स०, पृ० ३६६

प जब लाल लख ल्लचाय गुलाब लजाय इत उत होवैं ।
जानि न जाय सुचाल कुचाल किशलम स म्मग बात न जोवे ।[1]

पति के गुण में सदव लीन रहने वाली, उसकी कीर्ति सुनकर रति सी उल्लसित रहने वाली उसके दशन के लिए अकुलाने वाली पति का कुशल सुनकर जिसके मन का आन द आखों से प्रकट होता है ऐसी यह नायिका जब प्रिय लल चायी आखो से उसे देखत हैं तो उनकी आंखो से आँखें नही मिलाती झुका लेती है। किन्तु यह जाना नही जा सकता सुचाल अर्थात लज्जाभाव से ये आँखें झुकी है अथवा कुचाल याने अपराधी भाव से झुकी है । सदेह वाचक शब्द के प्रयोग के बिना यहाँ सदेहालकार है ।

कनक लता सी, कमला सी, कमनीय महा,
पकज की मालिका सी कधो माल तारिका ।[2]

नारी की सु दरता के विवेचन मे उपमा के साथ सन्देह अलकार सफल प्रयोग यहा दष्टि गोचर होता है । कधो' शब्द के द्वारा सादश्यमूलक सम्बन्ध म सन्देह अभिव्यक्त है ।

६ प्रतीप—प्रतीप का अथ है विपरीत उलटा । इस अलकार म उपमान म उपमेय करपना करना अनेक प्रकार की विपरीतता दिखाई जाती है ।[3]

मुकवि "गुलाब' हेरया हास्य हम्निाच्छि म
हीरा बहु खनिन में हिम हिमवान मे ।
राम ! जस रावरो गुमान करै कोन हतु
या के सम दखो लमै चद आसमान में ।

इसमे च द्रमा आदि प्रसिद्ध उपमानो को उपमेय बनाकर वणनीय उपमान राजा रामसिह के यश का अनादर किया गया है ।

नील कौल नीलमनि, जमुना तरगन की
छबि दबि जात ऐस आभा क आगार है ।[5]

बाला की कातिमानता का विचार प्रस्तुत करते हुए राधा के बालो की सुन्दरता के सामने नीलकौल, नील मनि जसे प्रख्यात उपमान उपमा के अयोग्य घोषित हैं ।

---

१ वहद् व्यग्याथ चद्रिका—हस्तलिखित, हिंदी सा० सम्मेलन, प्रयाग, छद ४७०
२ का य नियम, हस्तलिखित, हि दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, छद ६८
३ काव्य दपण रामदहिन मिश्र चतुथ सस्करण, पृ० ४१५ ।
४ काव्य दपण " , पृ० ४१५ ।
५ काव्य नियम, हस्तलिखित, हि दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छद २८०

कवि ने अपने का"य मे प्रतीप अलकार के भेदोपभेदो का कितनी मार्मिकता से प्रयोग किया है यह उपराक्त उदाहरणो मे स्वत प्रमाणित है ।

७ व्यतिरेक--उपमान की अपेक्षा उपमेय के उत्कष वणन को व्यतिरेक अलकार कहते है ।[1] "यतिरेक अलकार के भी ४ भेद मान गए हैं।

ये हैं तिहुलोकन के दभ महामोभमन से ।
पाहन के थमन की सम कया उचार हैं ॥
करभ कर नही मैं दबके हुमस रहे ।
कदली विचारनि की बात ही विदार है ।
सुकवि गुलाब ऐस सलोने झु डा दड हैं
न याही त विचार गजनीश घूरि डार है ।
इनम लुनाई है राधे तौर उरन सी,
ये तो मन मोहन क मोह फदवार है ।[2]

राधा क उरु की सु दरता के वणन म कवि ने उरु के उपमानों की तुलना म उपमेय का उत्कष यहा वणन किया है । यह "यतिरेक अलकार का बडा सु दर उदाहरण है ।

मजुता ललाई माहि पल्लव कतल कर,
शुचि शुभता न करै कमल निवास है ।
लालीन कुटाय दियो लालन प्रवालन को,
सुखमा न मोखे थल कमल तमाम हैं ।[3]

राधा के चरणो के वणन म चरणों के सारे उपमाना की तुलना म उपमेय का उत्कष यहाँ वणित है । यतिरक अलकार का बडा सु दर प्रयोग यहाँ किया गया है ।

८ सहोक्ति--"सह अथ बोधक शब्दा के बल से एक ही शब्द से अर्थो का बोधक होता है, वहाँ सहोक्ति अलकार होता है--

वृ दा सग व दावन माही । शोभित भये मुकुद महाही ।
+ + +
सग लेय गोपाल गन चलन लगे तिहि बार ।[4]

---

१ का य प्रदीप रामबहोरी शुक्ल सोलहवाँ सस्करण, पृ० १५० ।
२ काव्य नियम-हस्तलिखित, हि दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, छन्द ३३८ ।
३ काव्य नियम-हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, छन्द ३३९ ।
४ कृष्णचरित हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मलन प्रयाग, मथुराखड छन्द५३६
५ वही „ „ वृन्दावन खण्ड छद ४४ ।

तहू 'मग" चलि सखि भारी । रति रभादि लजावन वारी ॥[1]

इन सभी उदाहरणों में 'मग' शब्द के द्वारा एक हो सम्बन्ध की अभिव्यक्ति हुई है।

९ तुल्य योगिता—जहा गुण या क्रिया द्वारा अनेक प्रस्तुत उपमेय या अप्रस्तुत उपमानो का एक ही धर्म कहा जाय वहाँ यह अलंकार होता है।[2]

वानी के, भवानी के, न रानी के सुरेशहू की।
असुरी सुरी के न फनी की भामिनी के है।
रभा के सुकेसी के न किन्नरी नरी न हू व।
मनका तिलोत्तमान ब्रह्म रमनी के है।
सुकवि गुलाब मजुघोषा के घृताची कना।
और उरवसी के न शचि भगनी के है।
मैन धरती के ऐस है व हरिनी के हरि।
नीके नैन जस वृषभानु नन्दिनी के है।[3]

वृषभानु नन्दिनी की आँखों की तुल्यता वानी भवानी आदि की आँखों के साथ न होना एक ही धर्म यहाँ वर्णित है। तुल्य योगिता का एक सफल प्रयोग यहाँ हुआ है।

१० दृष्टान्त—जहाँ उपमेय, उपमान और साधारण धर्म का बिम्ब प्रति बिम्ब भाव हो वहाँ दृष्टांत अलंकार होता है।[4]

सौतिन सग सखिन समाज हुती पिय बोलत बात बिशोकी
ता बिरिया पति प्रात बिदेस बिचार कह्यौ अलि आय अरोकी।
सो सुनि शोक सनो सगरी तिय ज्यौं दुख दीन निशा गम कोकी,
शोक सम हरषाय गुलाब प्रवीन तिया कस बीन बिलोकी।[5]

यहाँ सगरी तिय' उपमेय वाकी उपमान दुख दीन' बिम्ब प्रति बिम्ब भाव स्पष्ट है। निशा गम देख चक्रवाकी दीन और दुखी है और प्रियतम का सुबह विदेश जाने का विचार भी निशागम में नारियों को इसलिए दुखी कर देता है कि रात समाप्त होने पर प्रिय वियोग स्पष्ट है।

११ दीपक—प्रस्तुत और अप्रस्तुत के एक धर्म कहने को दीपक अलंकार

---

१ कृष्णचरित हस्तलिखित हिंदी सा० सम्मेलन वृदावन छन्द छंद ४८।
२ काव्य दर्पण—रामदहिन मिश्र चतुर्थ संस्करण पृ० ३७६।
३ काव्य नियम—हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छंद २९२।
४ काव्य प्रदीप—रामबहारी शुक्ल सोलहवाँ संस्करण पृ० १५४।
५ वृहद व्यंग्यार्थ चंद्रिका—हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छंद २६१।

कहते है। इसके २४ उपभेद माने जाते हैं।[1]

वधू तिहारै सासरै है वन बाग अपार।
खाडव, नन्दन, चत्ररथ सम सुरूप सुखसार।[2]

धरती के वन बाग को खाडव, नन्दन, चत्ररथ के समान सुन्दर एवं सुखकर बतलाकर–वर्ण्य–अवर्ण्य प्रस्तुत अप्रस्तुत की एक धमता यहाँ प्रस्तुत है। अतः दीपक अलकार है।

हरी छरी कर माल उर धरि, आवत न दलाल।
सरसाने लखि विकल भई सरसाने लौं बाल।[3]

यहाँ 'सरसाने' पद की दो भिन्न अर्थ में आवृत्ति है अतः पदावृत्ति दीपक अलकार है। सरसाई लौं सी बालिका विकल है क्योंकि नन्दलाल को हरी छरी लेकर आते हुए देखकर उसने उन्हें रोष के साथ माना है। अतः कवि ने अतीव सफलता के साथ दीपक अलकार का प्रयोग किया है।

१२ विनोक्ति—जहाँ एक के बिना दूसरे को शोभित या अशोभित कहा जाय वहाँ विनोक्ति अलकार होता है।

विरहानल चल जरनि जिय रासी रोरि प्रवीन।
तऊ जानी आलीन न बिन लाली छबि छीन।[4]

बिन शब्द की सहायता से छबि छीन नायिका का अशोभित होना यहाँ वर्णित है।

सब तन लाली दूरि गई जरि विरहानल ताप।
तऊ मन मोहन अलिन कोपीरी प्रभा अमाप।[5]

जहाँ बिन शब्द का प्रयोग नहीं है विरहानल के ताप से ललाई छिप गई पीत हो गई है नायिका अशोभित है किन्तु प्रिय के आने पर नायिका की पीली प्रभा जो शक्तिहीनता का परिचायक है मन मोहन वाली थी अर्थात अशोभित भी अशोभित है अतः यहाँ भी विनोक्ति अलकार का बड़ा ही सुन्दर प्रयोग हुआ है।

उपमा—उपमा अलकार बड़ा प्रचलित अलकार है। उसके ४ अंग माने जाते हैं—उपमेय उपमान, वाचक, और धर्म। उपमा अलकार के पूर्णोपमा, लुप्तो

---

१ काव्य दर्पण–रामदहिन मिश्र, चतुर्थ संस्करण, पृ० ३७७।
२ वृहद् वनिता भूषण हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छंद १२८
३ वही , ,, छंद १३०।
४ काव्य दर्पण–राम दहिन मिश्र चतुर्थ संस्करण पृ० ३९५।
५ बृहद् वनिता भूषण–हस्तलिखित हिंदी सा० सम्मेलन प्रयाग छंद १७३।
६ ,, ,, छंद १७४।

पमा, मालोपमा, रसनोपमा, उपमयोपमा आदि भेद मान जाते है ।[1]

पूर्णोपमा—जहाँ उपमान, उपमेय, धर्म और वाचक चारो अग हो वहाँ पूर्णोपमा होती है ।[2]

पूरण शशि सो वदन अरु कुच अता पीन उतग ।[3]

यहा शशि उपमान है वदन उपमेय है, सो वाचक शब्द है और पूरण धर्म है । उपमा के चारो अग यहाँ विद्यमान है । पूर्णोपमा का बडा ही सफल प्रयोग यहा हुआ है ।

लुप्तोपमा—जहा उपमा, उपमेय, धर्म और वाचक इन चारो मे से एक, दो अथवा तीन का लोप हो—कथन न किया जाय वहाँ लुप्तोपमा होती है ।[4]

कर किसलय मदु कज से पाय, नैन मृग नैन ।
लसत रमा कहि सिंह सी, पिक मधुरे सिय बैन ॥
गिरिजा दृग मृग सोहत गति गजराज ।
भाषत लुप्ता आठ हियो कवि राज ॥[5]

'कर किसलय' म वाचक शब्द लुप्त है अत यहाँ वाचक लुप्तोपमा अलकार है । 'कज से पाय' म धर्म का विवेचन नहीं है अत धर्म लुप्तोपमा अलकार है । नैन मृग नैन म धर्म एव वाचक शब्द लुप्त होने के कारण धर्म वाचक लुप्तोपमा है ।

लसत रमा म उपमेय एव वाचक शब्द प्रयुक्त न होने से वाचकोपमेय लुप्ता अलकार है । कटि सिंह सी म उपमान एव धर्म लुप्त है अत धर्म उपमान लुप्तोपमा अलकार है । पिक मधुरे सिय बैन' मे उपमान एव वाचक शब्द लुप्त है । अत वाचकोपमान लुप्तोपमा अलकार है । गिरिजा दृग मृग म उपमान, धर्म, एव वाचक शब्द लुप्त है । यहाँ धर्मवाचकोपमान लुप्तोपमा अलकार है । गति गजराज म उपमेय धर्म एव वाचक शब्द लुप्त है । अत धर्म वाचकोपमेय लुप्तोपमा अलकार है ।

मालोपमा—जहा एक उपमेय के अनेक उपमान कहे जाय वहाँ मालोपमा अलकार होता है ।[6]

---

१ का यशास्त्र—डा० भगीरथ मिश्र सवत २०२९ वि० सस्करण पृ० १५३ १५४
२ काव्य दर्पण—रामदहिन मिश्र चतुर्थ सस्करण पृ० ३५२ ।
३ बहद व्यग्यार्थ चद्रिका—हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छद २३
४ का य प्रदीप—रामबहोरी शुक्ल, सातवा सस्करण, पृ० १३५ ।
५ बहद वनिता भूषण हस्तलिखित हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छद १९ २०
६ काव्य दर्पण—रामदहिन मिश्र, चतुर्थ सस्करण, पृ० ३५६ ।

सारस सो अमल निसाकर सुधाकर सो
दारद सो पारद सो नारद बिचार सो ।
गगाजल धारन सो सुरतरु डारन सो
सार घनसार सा सुरग बसु सार सा ।
सुकवि गुलाब हीर सो हिमाचल सा
नीरद सो छीरधि सा हुरक पहार सा ।
प्रबल प्रतापी महिपाल रामसिंह धीर तेरो
तेरो जस लसत हरा क उर हार सा ।[1]

अपने आश्रयदाता राजा रामसिंह जी क यश की उज्ज्वलता क प्रतिपादनाथ कवि न अनक उपमानो का प्रयोग किया है। मालापमा अलकार का सफल प्रयोग यहाँ दृष्टव्य है ।

अनन्वय--जहाँ एक ही वस्तु को उपमान उपमय भाव म वर्णित किया जाय वहाँ अनन्वय अलकार होता--[2]

मुख सो मुख दृग से दग हि, कच स कच दरसाहि ।
अग उरोज से उरोज जनक सुता क आहि ।।[3]

जनक सुता के मुख दग कच एव उरोज के व ही उपमान यहाँ वर्णित हैं, अत यहाँ अन्वय अलकार का अत्य त सफल प्रयोग दृष्टिगत होता है ।

उत्प्रेक्षा--जहाँ प्रस्तुत की--उपमय की--अप्रस्तुत रूप म--उपमान रूप म सम्भावना की जाए वहाँ उत्प्रेक्षा अलकार होता है । उत्प्रेक्षा अलकार के भी वाच्या और प्रतीय माना य दो भेद हैं । 'मन 'मानो आदि वाचक शब्दो का उत्प्रेक्षा म प्रयोग हो तो वह वाच्या उत्प्रेक्षा है। जहाँ वाचक श द न हो वह प्रतीय माना उत्प्रेक्षा है । वाच्योत्प्रेक्षा भी तीन प्रकार की होती है । १ वस्तु २ हतु ३ फल । इनके भी प्रत्यक के उक्त और अनुक्त इस प्रकार क उपभेद है ।

कारी सटकारी अहितारी सी प्रभाव कारी ।
लटकत जघ नीच अलि की कतार सी ।
मानो हेम पट्टिका पै मैन तरवारी धरी ।
कहै हम धलि ही प रविजा सुधार सी ।[4]

---

१ काव्य नियम--हस्तलिखित--हिंदी साहित्य सम्मलन, प्रयाग छ द १० ।
२ काव्य प्रदीप, राम बहोरी शुक्ल, सोलहवाँ सस्करण, पृ० १४१
३ बहद वनिता भूषण हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छ द २२
४ काव्य वणन, राम दहिन मिश्र--चतुथ सस्करण पृ० ३७० ।
५, काव्य नियम, हस्तलिखित--हिंदी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, छद ९९२ ।

उपमा एवं सन्देह अलंकारों के साथ यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार का सुन्दर प्रयोग हुआ है। वेनी की सुन्दरता की कल्पना करते हुए प्रस्तुत बनी की अप्रस्तुतत "मैंन तरवार' में सम्भावना की गई है। अतः यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार है।

अतिशयोक्ति--लोक मर्यादा के विरुद्ध वर्णन करने को, प्रस्तुत को बढ़ा चढ़ा कर कहने को अतिशयोक्ति अलंकार कहते हैं।[1] इसके सात भेद हैं--१ रूपकातिशयोक्ति २ भेदकातिशयोक्ति ३ सम्बन्धातिशयोक्ति ४ असम्बन्धातिशयोक्ति और ५ अक्रमातिशयोक्ति ६ चपलातिशयोक्ति ७ अत्यन्तातिशयोक्ति।

भेदकातिशयोक्ति--जहाँ उपमेय के अन्यत्व वर्णन में अभिन्नता होने पर भी भेद का कथन किया जाता है वहाँ भेदकातिशयोक्ति होती है--[2]

> भोर ही तें और भाँति घोर घन और ओर
>
> दौर कर दामिनी दिसान मैं न भावरी।
>
> घोरे चित चातक चिचाय गात पीलम को
>
> मोरे मन मुरवा न सुरवा सुनावैरी॥[3]

प्रथम पंक्ति में "औरे भाँति" द्वारा भिन्नता का वर्णन हुआ है। अतः भेदकातिशयोक्ति अलंकार है।

सम्बन्धातिशयोक्ति--जहाँ असम्बन्ध में सम्बन्ध की कल्पना की जाय वहाँ यह अलंकार होता है।[4]

> शनि लै ऊँचे गिरि शिखर पर चढ़ी पुष्प की चाह।
>
> उतरत विचले तन वसन कटक लग अथाह॥[5]

यहाँ नायिका अपने 'सुरत' को गुप्त रखना चाहती है किन्तु छिपाने के बहाने असम्बन्ध की कल्पना करती है पुष्प की आशा में शनि से ऊँचे गिरीशिखर पर चढ़ना और उतरते समय शरीर के बीच वाले हिस्से में वस्त्र में काँटे लगना अर्थात दोष शरीर कष्टों से मुक्त रहना असम्भव ही है अतः यहाँ सम्बन्धातिशयोक्ति अलंकार है।

असम्बन्धातिशयोक्ति--जहाँ सम्बन्ध में असम्बन्ध की कल्पना की जाय वहाँ यह अलंकार होता है।[6]

---

१ काव्य प्रदीप--राम बहोरी शुक्ल, सोलहवाँ संस्करण, पृ० १९१।

२ वही, पृ० १९३

३ बृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका हस्तलिखित, हिन्दी सा० सम्मेलन प्रयाग छं द ४४६

४ काव्य दर्पण, रामदहिन मिश्र, चतुर्थ संस्करण पृ० ३७४

५ वन्द वनिता भूषण, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छं द १११

६ काव्य प्रदीप--रामबहोरी शुक्ल, सोलहवाँ संस्करण, पृ० १९४

सखि मुहि मूछित परत महि इन राखी भरिबाय ।
पर उपकारी दीन हित नहि इन सम सुरनाथ ।[१]

यहाँ भी नायिका नायक के द्वारा बाहों भी भरी हुई सखी न देखी है। कि तु अपनी सुरत को छिपाने मे नायिका असम्ब ध्त्व की कल्पना करती है--मैं मूछित हो धरति पर गिर रही थी कि इन्होने मुझे हाथो से पकड बचाया इनके समान दूसरा के हितू इन्द्रदेव भी नही हैं। सम्ब ध म असम्ब ध की कल्पना के कारण यहाँ असम्बन्धातिशयोक्ति अलकार है।

व्याजस्तुति--स्तुति के वाक्यो द्वारा नि दा और नि दा के वाक्यो द्वारा स्तुति करने व्याजस्तुति अलकार कहते हैं।[२]

स्वारथ मैं रत हैं सबही परमारथ साधन नाहिं न कोऊ ।
है परमारथ म रत लोग गुलाब कहै विरले जग जोऊ ।
जो परमारथ स्वारथ हीन सुआलस लोभिन कीरति खोऊ ।
हो तुम नीति निधान लला परमारथ स्वारथ साधत दोऊ ।[३]

प्रस्तुत छन्द म स्वार्थ परमार्थ की चर्चा करते हुए स्वार्थ परमार्थ हीन आलसी लोभी होकर कीर्ति को खो बठने की बात कही है। नायिका नायक को लक्ष्य कर उसको परमार्थ एव स्वार्थ साधन पर स्तुति करती लक्षित होती है। कि तु वस्तुत नायक की निन्दा ही है क्योकि रात म नायक पर स्त्री समागम का परमार्थ करते हैं तो दिन मे अपने घर म आकर स्वार्थ मे लगे रहने की बात यहाँ व्यजित है। अत स्तुति वाक्यो द्वारा नि दा करने के कारण व्याजस्तुति है।

पर्यायोक्ति--अभिलषित अर्थ का विशेष भगी के साथ कथन करने को पर्यायोक्त अलकार कहते हैं।[४]

कोऊ नही बरज निसि वासर स्वारथ ल अपन मनचल ।
माच कछू परको न कर अति हानि तऊ अविचार न टार ।
होइम होइ गुलाब कहै घरमैं कटु वाचक कूकर पाल ।
हाय दई किहि कारन य सगरे पुरलोग बिडाल न पाल ।[५]

नायिका मुरगा (कटु श्रव्य) के बोला को सुनकर सुबह हुई जान कर नायक के चले जाने से दुखि है कि तु अपने दुख को अन्य मार्ग से व्यक्त करती है। अत

---

१ बन्ह वनिता भूषण हस्तलिखित हि दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द ११८
२ काव्य दर्पण, रामदहिन मिश्र चतुर्थ सस्करण पृ० ३९१
३ बृहद् व्यग्यार्थ च द्रिका--हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द १५९
४ काव्य प्रदीप--रामबहोरी शुक्ल सोलहवाँ सस्करण पृ० २०७
५ बृहद् व्यग्यार्थ च द्रिका हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छन्द १२५

यहाँ पर्यायोक्त अलंकार है ।

अर्थान्तरन्यास—जहाँ विशेष से सामान्य या सामान्य से विशेष का साधर्म्य या वैधर्म्य के द्वारा समर्थन किया जाए वहाँ अर्थान्तरन्यास अलंकार होता है ।[1]

मवक पति है सुभग पर मो पति मम बहु हैन ।
ग्लत स्याम मुख मुख मो चख तनक छवन ।[2]

यहाँ सामान्य के द्वारा विशेष का वैधर्म्य द्वारा समर्थन है ।

परिकरांकुर—साभिप्राय विशेष्य कथन को परिकरांकुर अलंकार कहते हैं ।[3]

प्रात आय निशि बास को आन बनायो धाम ।
भाल लाल लखि लाल को बातन मानी वाम ।[4]

"लाल" यह साभिप्राय विशेष्य है—प्रिय अर्थ में प्रयुक्त होना ही है किन्तु यहाँ भाल प्रदेश की लाली के कारण यौगिक रूप में प्रयुक्त है । जिससे यह स्पष्ट होता है कि नायक अन्यत्र रति कर आये हैं ।

विरोधमूलक—जिन अलंकारों में दो वस्तुओं का कार्य कारण विच्छेद होने से आपस में विरोध प्रकट होता है वे अलंकार विरोधमूलक अलंकारों के वर्ग में आते हैं । विरोधमूलक वर्ग के कतिपय अलंकारों का विवेचन यहाँ प्रस्तुत है ।

विरोधाभास—जहाँ यथार्थत विरोध न होकर विरोध के आभास का वर्णन हो वहाँ यह अलंकार होता है ।[5]

जिनके चरनन की रज चारा । सेवन सागर मुता सुतारा ।
का गनतो हम दीनन केरी । है तन मन करि हरि की चेरी ।[6]

गोपियों का यह कथन कि श्रीकृष्ण हम दीनों की गिनती क्यों करेगा" एक ओर तो 'तन मन से हरि की चेरी' दूसरी ओर जिससे प्रत्यक्ष विरोध न होते हुए भी आभास यहाँ अभिव्यक्त होने से यह विरोधाभास का सुन्दर उदाहरण है ।

विशेषोक्ति—प्रबल कारण होते हुए भी कार्य सिद्ध न होने के वर्णन को विशेषोक्ति कहते हैं । इसके तीन भेद हैं ।

---

१ काव्य दर्पण रामदहिन मिश्र चतुर्थ संस्करण, पृ० ३८९
२ बृहद वनिता भूषण हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छंद ३२५
३ काव्य प्रदीप–रामबहोरी शुक्ल सोलहवाँ संस्करण, पृ० २१९
४ बृहद वनिता भूषण–हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छन्द १८२
५ साहित्य के सिद्धान्त विदर्पण एवं समीक्षा आचार्य गिरिजा दत्त त्रिपाठी, प्रथम संस्करण, पृ० २६५
६ कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, मयूरखण्ड, छंद ३५५
७ काव्य दर्पण–रामदहिन मिश्र–चतुर्थ संस्करण, पृ० ३९९

हृप मद्दा रह सत समागम हृपन सौतिन के अरसा मैं ।
हौत न ग्रापम म वरसा सखि हात सदा वरसा वरसा म ।[1]

चित्र है मुग्धा कलहान्तरिता नायिका का । नायिका मुग्धा है इसी से मौन रहकर अपने दुख को आँसुओं के द्वारा अभिव्यक्त कर रही है । सखि उसे आँसू बहाने नहीं चाहिए यह समझाती हुई यह कहती है ग्रीष्म मे वर्षा कम ' अर्थात आसू या वर्षा भी नही हानी चाहिए ।) वह तो वर्षा ऋतु मे होती है ।" ग्रीष्म म वर्षा निषध और वषा म वर्षा की स्थापना मे परिसख्या अलकार है । यह प्रश्न रहित वाच्य निषेध उपभेद है ।

समुच्चय--जहाँ समुदाय का एकत्र होना वर्णित हो वहाँ यह अलकार होता है ।[2]

प्रिय आये लखिन तिय हरषी हँसी जमाय ।
कपी अनुरागी बहुरि बठी सिमटि जाय ॥[3]

प्रिय के आगमन को देखकर हृप या हसी एक साधन पर्याप्त है जब कि यहाँ अन्य साधन वर्णित हैं । यह प्रथम समुच्चय अलकार है ।

सम--यह विषम के विपरीत है । इसके तीन भेद हैं । यथा योग्य वर्णन प्रथम सम है । कारण के अनुकूल जहा काय हो द्वितीय सम है । विना विघ्न के काय सिद्धि होने के वणन म ततीय सम है ।

प्रम पास गसि बस वियो द दनि दान रसाल ।
गुन गरबीलो बाल न विद्या निधि नन्दलाल ॥[4]

नायक एव नायिका यथा योग्य वणन यहाँ किया गया है अत प्रथम सम अलकार है ।

मीलित-- जहा दो पदार्थो म सादश्य लक्षित होता है दोनो की भिन्नता मिट जाती है वहा यह अलकार होता है ।

देखि देखि सजनी सयाना सब कचन क,
रँग सम अँगन मैं भूषन बनावना ।

---

१ वहद यग्याश चन्द्रिका--हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छद ३३०

२ काव्य प्रभाकर--जगन्नाथ प्रसाद भानु द्वितीय सस्करण, पृ० ५३२

३ बहत् वनिता भूषन हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छ द ३११

४ काव्य दपण रामदहिन मिश्र चतुथ सस्करण पृ० ४०१ ४०२

५ बहत् वनिता भूषण हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छ द २६०

६ काव्य प्रदीप राम बहारी शुक्ल सोलहवाँ सस्करण पृ० २४४

नायनि हू लाय लाय मलि मलि भूलि जाय,
जावक लगायो ना लगायो पार पावँना ।'

पावों म जावक ऐसा मिल जाता है कि एक रग हो । अत यहाँ मीलित अलकार है ।

उ मीलित---जहाँ दो पदार्थों के सादश्य म भेद न होने पर भी किसी कारण भेद का पता लग जाने का वणन हो वहाँ उन्मीलित अलकार होता है ।'

स्वप्न मल त मिलि रहे केसर लागी माल ।
जागत ही जानी परै होत सेत रग बाल ॥'

स्वप्न मल मैं प्रिया प्रियतम का मिलन सादश्य म अभेद रूप ही है । कि तु जागन पर सर लगे कमर के कारण मिलन के रहस्य का पता लग जाता है । अत यहाँ उ मीलित अलकार है ।

गूढाथ प्रतीति मलक---गूढाथ प्रतीति मूलक अलकारा म व्यग्य स छिपा कर या उलटी बातें कही जाती है । इस वग के कुछ उदाहरण दष्टव्य हैं ।

सूक्ष्म---जहाँ किसी सकेत चष्टा आदि और आकार से लक्षित रहस्य को किसी युक्ति से सूचित किया जाय वहाँ सूक्ष्म अलकार होता है ।'

वप बनाय सखी गन में तिय उठि रही मन आनन्द भीनो ।
आय तहाँ इन आन सखी कर कज खिल्यो कर में गहि लीनो ॥
हत जनाय कछू मुसकाय गुलाब वह पग क ढिग कीनो ।
कौन विचार विचारि वधू कलीका करनी सजनी कर दीनों ॥'

नायिका सखियों म सान द बठी है एक अ य सखि ने आकर खिला हुआ कमल नायिका के हाथ म दिया है । यह सकेत है प्रियतम मिलनोत्सुक है । नायिका न रहस्य पूण रीति स इस सकत के सम्ब ध म अपना स देश दिया है । मुस्कराकर खिला कमल अपन पावों के नजदीक झुकाया और स देश वाहिनी सखी को स देश स्पष्ट न हो कोई गलती उससे न हो इसलिए अपने हाथ की कमल कली सखि को सौंप दी जिसम नायक बात को समझ सक । कमल पाँवों के निकट ले जाना गुबन का प्रतीक है और कली कमलो क मूँद जान का प्रतीक है अत भाव यह कि सध्या क बाद नायिका नायक से मिलगी । सूक्ष्म अलकार का बडा सुन्दर रूप यहाँ

---

१ वहद व्यग्याथ च द्रिका--राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण, छ द २७०
२ का य प्रभाकर--जगन्नाथ प्रसाद भानु द्वितीय सस्करण, पृ० ५५१
३ वहद वनिता भूषण--हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग छन्द ३९२
४ काव्य दपण--रामदहिन मिश्र चतुथ सस्करण पृ० ४२१
५ वहद वनिता भूषण--हस्तलिखित हि दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, छन्द ४०१

प्रस्तुत है।

स्वभावोक्ति—बालक आदि की स्वाभाविक चेष्टा आदि के चमत्कारपूर्ण वर्णन में स्वभावोक्ति अलंकार होता है।[1]

मुकुट लकुटि पर पीत धर लाय लली घर हाल।
पायन पारि मुरारि को हर्षित कीनी बाल॥
त्यौरी मौन मरोर धरि लखि बैठी शिरनाय।
बात बनाय विनोद की लीनी वेग बुलाय।[2]

त्यौरी मौन मरोर चुककर बैठना एक मानवति के स्वभाव को मान को अभिव्यक्त करने की चेष्टाएं है। अतः यहां स्वभावोक्ति अलंकार है।

उभयालंकार संसृष्टि—संसृष्टि उभयालंकार वर्ग का अलंकार है। तिल तण्डुल न्याय के अनुरूप जहां अलंकारों की एकत्र स्थिति हो फिर भी वे पृथक् पृथक् लक्षित हों वहां संसृष्टि अलंकार होता है। इसके तीन भेद हैं।[3]

आज लखी इक गोप सुता करि कुंभन से कुच की छबि अना।
है महि चम्पक की तनसी द्युति आनन सी ससि की दुति है ना॥

"आननसी में उपमा एवं मुख की सुन्दरता के समक्ष चन्द्रमा की तेजस्विता को फीकी बताकर प्रतीप का प्रयोग होने से संसृष्टि अलंकार है। दोनों अर्थालंकार हैं अतः अर्थालंकार संसृष्टि उपभेद है।

इस विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि राव गुलाबसिंह जी के काव्य में सभी वर्गों के अलंकार परिलक्षित होते हैं। अलंकार के नियोजन में, भावाभिव्यक्ति की, मार्मिकता स्पष्टता भावसौन्दर्य उक्ति की आकर्षकता, प्रभावोत्पादकता आदि की दृष्टि से अलंकारों का सहज एवं सफल प्रयोग राव गुलाबसिंह जी के काव्य में हुआ है।

रीति—काव्य समीक्षा के सिद्धान्तों में रीति सिद्धान्त का भी अपना महत्त्व है। रीति सिद्धान्त के समर्थक आचार्यों की मान्यता के अनुसार रीति ही काव्य की आत्मा है। रीति के स्वरूप को देखते हुए आचार्य वामन ने रीति को विशिष्ट पद रचना के रूप में घोषित किया और अन्ततोगत्वा रीति सिद्धान्त को इसी रूप में

---

१ काव्य प्रदीप—रामबहोरी शुक्ल सोलहवां संस्करण पृ० २५५

२ वृहद् वनिता भूषण—हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छन्द ४२२, ४२३

३ काव्य दर्पण—रामदहिन मिश्र चतुर्थ संस्करण पृ० ४२३

४ वृहद् नायिका चन्द्रिका—हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द ११५

मा यता मिली।[1]

रीति की धारणा और महत्व क विषय म विद्वानों मे मतभेद हैं। अ य सम्प्रदायों के आचार्यों न भी इसकी चर्चा की है। रसवादी आचाय विश्वनाथ ने इस 'उपकर्त्री रसादिना' कहा है।[2] काव्य मे वण योजना का एक विशेष महत्व है। वर्णों की आवृत्ति स जहाँ काव्य एक ओर श्रुति मधुर बनता है वहाँ भावानुकूल वण चयन स रसास्वादन म भी सहायता प्राप्त होती है। अत वण योजना के द्वारा का य का अ तरग एव बाह्य कलेवर सुदर हो उठता है। वर्णों की नियत योजना वत्ति कहलाती है।[3]

वण योजना एव शब्द प्रयोग के अनुसार तीन रीतियाँ एव तीन वत्तियाँ मानी गई हैं जो इस प्रकार हैं—

रीतियाँ—वदर्भी, गौडी पाचाली।

वत्तियाँ—उपनागरिका, परुषा, कोमला।

इन रीतियों एव वत्तियों का शब्द गुणा के साथ घनिष्ट सम्बन्ध है। रीति सिद्धा त के प्रवतक आचाय वामन न गुण को रीति का अनिवाय तत्व माना था।[4] गुणों की सख्या के सम्बन्ध मे भी आचाय एकमत नहीं हैं। आचाय मम्मट तथा अ य ध्वनिवादी आचाय तीन गुण मानत हैं। आचाय विश्वनाथ न भी यही मत स्वीकार किया है। य तीन गुण हैं—माधुय, ओज और प्रसाद।[5]

वदर्भी रीति—विदर्भादि दशा म प्रचलित रीति वैदर्भी है। यह समग्र गुणों स युक्त होती है। यह एक शापरहित वीणा के स्वरों के समान मधुर, कुछ इसी प्रकार की विशषता से अलकृत है जो कि शब्द एव अय चमत्कार म भिन्न है।[6] इसम ट वग के वण छोडकर शष मधुर वण एव अनुनासिक वण आते हैं।[7] इसम माधुय गुण का प्रयोग होता है। वदर्भी रीति के सफल एव सुदर प्रयोग की एक बानगी दष्ट य है—

---

१ विशिष्ट पद रचना रीति। काव्यालकार सूत्र—आचाय वामन। पद सघटना रीति। साहित्य दपण आचाय विश्वनाथ परिच्छेद नवम आरम्भ

२ साहित्य दपण—आचाय विश्वनाथ परिच्छेद नवम, दशाक १

३ काव्य प्रदीप—रामबहोरी शुक्ल, सोलहवाँ सस्करण, पृ० १०१

४ भारतीय काव्य शास्त्र—सपादक डा० उदयभानुसिंह प्रथम स०, पृ० ९३

५ काव्य शास्त्र—डॉ० भगीरथ मिश्र स० २०२९ वि० स०, पृ० १९२-१९३

६ काव्य शास्त्र—डॉ० भगीरथ मिश्र, द्वितीय सस्करण, पृ० २११

७ काव्य प्रदीप राम बहोरी शुक्ल, १६वाँ सस्करण, पृ० १०२

अग अग अमल तुसार, इ दु, कु द, हूत
जवर समान वर अम्बर विलासिनी ।
वीणा दण्ड मडित अनूप कर कज माझ,
नीरज विसद बीच विदित निवासिनी ।
गुरवि गुलाब ब्रह्म विष्णु रुद्र आदि दव,
वद त चरन दवि म द म द हासिनी ।
दीन जानि मोहि नन कोरन सो सारदरी
एक बार देपि मात म दता विनासिनी ॥[1]

गौडी रीति–यह रीति ओज और कातिमयी होती है । इसम मधुरता एव सुकुमारता का अभाव रहता है । समास बहुल प्रयोग इसकी विशेषता है । उग्र पदों की भरमार रहती है ।[2] इसम ट वण द्वित्व वण सयुक्त वण आदि पुरुष वर्णों की योजना रहती है ।[3] इसम ओज वण का प्रयोग होता है। एक नमूना इसका भी प्रस्तुत है–

उद्धरयों महि सुम्भ निसुम्भ भय बलवाना
नर देव देवपति सकल विकल भय माना ।
तिनके हित अद्भुत रूप बनी नव नारी,
कहि च डमु ड मे नग्र रि सुम्भते सारी ।
पठये तब दूत अभूत बुलावन आय
कहि देवि चलो पर एक जुद्ध जय पाये ।
करि क्रुद्ध उद्भटे चले जुद्ध क नामा
जुत सेन असुरपति आन लखि नव बामा ।
भकुटि कराल की अनल ज्वाल जरिग सब रूप विटबा ।
सुख करनी हरनी दुख सुमरि जगदम्बा ॥[4]

गौडी रीति के लक्षण स्पष्ट रूप स यहाँ परिलक्षित होते हैं ।

पांचाली रीति–माधुय एव सुकुमारता से सम्पन्न पाचाली रीति होती है ।[5] कोमलावृत्ति म 'य' र' व 'स' ह आदि कोमल वण छोटे छोटे समासो स युक्त पद अथवा समास रहित पद इसमे होने हैं ।[6] इसम प्रसाद गुण का प्रयोग होता

१ नारदाष्टक–हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, १ ।
२ काव्यशास्त्र–डा० भगीरथ मिश्र द्वितीय सस्करण, पष्ठ २११ ।
३ काव्य प्रदीप, रामबहोरी शुक्ल १६ वाँ सस्करण, पृष्ठ० १०२ ।
४, जगदम्बा स्तुति–हस्तलिखित राव मुकुन्दसिंह जी से प्राप्त, छन्द ३ ।
५ काव्यशास्त्र–डा० भगीरथ मिश्र–द्वितीय सस्करण प० २११ ।
६ काव्य प्रदीप–राम बहारी शुक्ल–१६ वाँ सस्करण, प० १०३ ।

है । इसका भी एक उदाहरण देखें–

मोहन मौर लसै सिर मे,
कर मे कल कगन की छवि छाज ।
भ्रात वधूटिन सजुत बठि
महा पितु मातुन को सुख साज ।
भोगत नारि नवालय को,
वस्त्रानत कज निहारत बाज ।
या सुख मदिर मूरति राम
निरतर मो मन माहि विराज ॥[1]

अत यह प्रमाणित होता है कि कवि ने सभी रीतियाँ एव वृत्तियो का समुचित प्रयोग किया है । जिसके भावाभिव्यक्ति अधिक सार्थक, सुदर एव सहज प्रतीत होती है ।

वक्रोक्ति–वक्रोक्ति सिद्धात की स्थापना का श्रेय आचार्य कुतक को दिया जाता है । भामह ने भी वक्रोक्ति के भीतर काव्य की समस्त शोभा का और सौदर्य का समावेश माना है । दण्डी ने स्वभावोक्ति से अलग करके देखा है ।[2]

आचार्य कुतक ने अपने "वक्रोक्ति जीवितम" ग्रन्थ मे इस सिद्धात का विस्तार से प्रतिपादन किया है । कुतक ने लिखा है–

शब्दार्थौ सहितौ वक्रकवि व्यापार शालिनि ।
बन्धे व्यवस्थितौ काव्य तद्विदाह्लादकारिणि ॥
उभावेतावलकार्यौ तयो पुनरल कृति ।
वक्रोक्तिरेव वैदग्ध्यभगी भणितिरुच्यते ।[3]

वक्रोक्ति अलकृति है । यह कथन की भगिमा है जो उक्ति को शोभा प्रदान करती है । उक्ति मे चमत्कार और चारुता का सम्पादन वक्रोक्ति के द्वारा ही होता है । अत वक्रोक्ति काव्य जीवन है ।[4]

आचार्य कुतक ने वक्रोक्ति के छह भेद माने हैं जो इस प्रकार है–

१ वर्ण विन्यास वक्रता २ पदपूर्वार्ध वक्रता ३ पद परार्ध वक्रता ४ वाक्य वक्रता, ५ प्रकरण वक्रता ६ प्रबन्ध वक्रता ।[5] इनमे से प्रत्येक के अनेक भेद हैं । राव

१ रामाष्टक–हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छन्द ४ ।
२ काव्यशास्त्र–डॉ० भगीरथ मिश्र–द्वितीय संस्करण, पृ० २२३।२२४ ।
३ वक्रोक्ति जीवनम–आचार्य कुतक, १७, ११० ।
४ काव्यशास्त्र–डॉ० भगीरथ मिश्र, द्वितीय संस्करण, पृ० २२५ ।
५ शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त–डॉ० गोविन्द त्रिगुणायत, प्रथम भाग, द्वितीय संस्करण पृ० ३५७ ।

गुलाबसिंह जी द्वारा वक्रोक्ति के प्रयोग को दर्शाने के हेतु कुछ प्रमुख भेदों का उदाहरणों सहित विवेचन यहाँ प्रस्तुत है।

१ वर्णविन्यास वक्रता—वर्णों का इस प्रकार का विन्यास किया जाय कि जिससे लोकोत्तर आह्लाद उत्पन्न हो सके। इसमें तीन बातों का ध्यान रखा जाता है—पुनरावृत्ति का आग्रह न हो योजना सहज हो, नूतन वर्णों के आवर्तन से वर्ण विन्यास उज्ज्वल हो।[१] इसमें शब्दालंकार अनुप्रास यमक विभिन्न वृत्तियों का, गुणों का समावेश है।

कनक लता सी कमलासी कमनीय महा
पंकज की मालिका सी कैधों माल तारिका।
सुकवि गुलाब कलानिधि की कलासी कल।
कुसुम सिरीष सी है काम की सी कारिका।[२]

यहाँ वर्णों का विन्यास सहज एवं सुन्दर रहा है। नायिका वर्ण्य है सुवर्ण के साथ लता का प्रयोग कर रंग की सुवर्णता के होते हुए भी कवि ने नायिका की कोमलता को भी व्यक्त किया है। यहाँ अनुप्रास सन्देह आदि अलंकार, मधुर गुण आदि का सफल प्रयोग यहाँ है जो वर्ण विन्यास वक्रता के अनुकूल है।

२ पदपूर्वार्ध वक्रता—इसमें पद के पूर्वार्ध में रहने वाली वक्रता का विचार किया जाता है। पद के पूर्वार्ध में प्रकृति रहती है। इसके दस भेद माने गए हैं जो इस प्रकार है—रूढ़ि वैचित्र्य वक्रता पर्याय वक्रता, उपचार वक्रता, विशेषण वक्रता संवृत्ति वक्रता प्रत्यय वक्रता वृत्ति वक्रता, भाव वैचित्र्य वक्रता, लिंग वैचित्र्य वक्रता, क्रिया वक्रता।[३] कवि के काव्य में से पद पूर्वार्ध वक्रता के कतिपय उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य हैं।

(१) रूढ़ि वैचित्र्य वक्रता—जहाँ पर असम्भाव्य धर्म का आरोप अथवा विद्यमान धर्म की अतिशयता होती है वहाँ पर रूढ़ि वैचित्र्यता होती है।[४]

घन घोरन घोर निसान बजे, बगुला न धुजा गन खेचरको।
चपला न गुलाब कृपान करी, जलधार नहीं ऊर है सरको।
धुनि दादुर चातक मोरन की न कुलाहल है अरि के घर को।
घरि घोर हीय वरषा न भूट गिरी ऊपर कोप पुरन्दर को।[५]

---

१ भारतीय काव्यशास्त्र—सम्पादक—डा० उदयभानुसिंह प्रथम संस्करण पृ० १२०।
२ काव्य नियम—हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छन्द ६८।
३ शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त—डॉ० गोविन्द त्रिगुणायत प्रथम भाग, द्वितीय संस्करण पृ० ३५८।
४ काव्यशास्त्र—डॉ० नगेन्द्र मिश्र द्वितीय संस्करण, पृ० २२५।
५ पावस पच्चीसी—हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छन्द १७।

वर्षा ऋतु में विरहिणी की दशा बहाल है उसे धीरज बँधाती हुई सखी नायिका से कहती है यह वर्षा नहीं पहाड़ों पर इन्द्र का कोप है पहाड़ धीरता और गम्भीरता के प्रतीक है। घनघोर बादल गर्जन पर निसान बजने का आरोप यहाँ है। बादल वर्षा पर इन्द्र कोप का आरोप आदि अनेक आरोप यहाँ है। रूढ़ि वैचित्र्य वक्रता का सुन्दर प्रयोग यहाँ है।

(२) पर्याय वक्रता—इसमें किसी शब्द के ऐसे पर्याय का चमत्कारपूर्ण प्रयोग होता है जो घनिष्टता रखता हो, या अर्थ को अतिशय पुष्ट करता हो अथवा असह्य भाव्य अर्थ की सूचना देने की विशेषता से युक्त हो। अनेक पर्याय (एक अर्थ देने वाले) शब्दों में उसी विशेष शब्द का प्रयोग चमत्कार होता है।[1]

उमडि उमडि घिरि घोरि घोरि, और आर
जाय घनश्याम घनश्याम आज आवेंगे।[2]

यहाँ प्रथम घनश्याम शब्द के बदले पर्यायी शब्द मेघ, बादल आदि का प्रयोग करने में चमत्कार नहीं रहेगा। अनेक पर्यायी शब्दों में घनश्याम शब्द का प्रयोग चमत्कार है।

(३) उपचार वक्रता—इस भेद के भीतर आरोप रहता है। वास्तव में भिन्न दूरस्थ वस्तु का जब किसी वस्तु के साथ अभेद स्थापन किया जाता है, तब उपचार वक्रता मानी गई है। अचेतन में चेतन का आरोप भी इसी में होता है।[3]

चन्दहि राखत मित्र चकोरा। तऊ भावि अगिनि तचत इस घोरा।
जलज मीन है जल रवि दाऊ उसर गारन जारत साऊ।[4]

चन्द्र एवं चकोर तथा जलज एवं रवि दोनों एक दूसरे से दूर होने हुए भी मित्रत्व का अभेद स्थापित है। अतः यह उपचार वक्रता है।

(३) विशेषण वक्रता—जहाँ पर विशेषण के महत्वपूर्ण प्रयोग के कारण कारक या क्रिया को विशेष लावण्य प्राप्त होता है वहा पर विशेषण वक्रता मानी जाती है।[5]

वाली आन अली इहि रीति सुनहू द्विरक धारी उर प्रीति
अब इहि ठाँतें चरण उठाऊँ। वाही क्यटी के ढिग जाऊँ।[6]

---

१ काव्यशास्त्र—डा० भगीरथ मिश्र संवत २०२९ वि० संस्करण पृ० १९६।

२ पावस पच्चीसी—हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छन्द २०।

३ काव्यशास्त्र—डॉ० भगीरथ मिश्र—द्वितीय संस्करण पृ० २२६।

४ कृष्ण चरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग मथुरा खण्ड, छन्द २०९।

५ काव्यशास्त्र—डा० भगीरथ मिश्र—द्वितीय संस्करण पृ० २२६।

६ कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, मथुरा खण्ड, छन्द ३८५।

उपर्युक्त में लिए द्वितीय विशेषण क्रिया को विशेष सुन्दरता के साथ अभिव्यक्त करता है—कृष्ण के मित्र है या उस गुण करो हैं यहाँ दूत बन कर आए हैं तो व्रजवासियों को—गोपियों का—राधा को मीठी वाणी से सन्तुष्ट करना चाहते हैं। कृष्ण का कपटी विशेषण भी भावपूर्ण क्रिया को सुन्दरता के साथ अभिव्यक्त करने वाला है।

इसी प्रकार पद्पूर्वार्ध वक्रता के अन्य भेदों के उदाहरण कवि राव गुलाबसिंह के काव्य में प्राप्त हैं।

पद परार्ध वक्रता—इसके अन्तर्गत पद के परार्ध में प्रकट विशेषताओं का संकेत होता है यथा—काल कारक संख्या, पुरुष उपग्रह प्रत्यय तथा पद वक्रता।[1] इसमें से भी कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं।

काल वचित्र्य वक्रता—

रक्षा हित आन्दवा को मैं मथुरा में जन।
मिलत रहो गो सबन से चिन्ता करहुँ न तात।[2]

इसमें एक साथ वर्तमान कालिक एवं भविष्यत कालिक क्रियाओं का बड़ा ही औचित्यपूर्ण एवं चमत्काराश्रित प्रयोग है। अतः यहाँ कालवचित्र्य वक्रता की सफल व्यंजना हुई है।

कारक वक्रता—

जारि जोरि जुगनूँ फिर च्यारो ओर,
घोरि घोरि धरप घोर घन छावरी।
दौरि दौरि दर मैं दरेग दत दामिनिहू
पोरि फोरि सिर को महा रस रसावरी॥[3]

इस पद में जुगनूँ एवं 'घन' का कर्तवाच्य प्रयोग चमत्कारपूर्ण है। अतः यहाँ कारक वक्रता के प्रयोग से काव्य सौन्दर्य की वृद्धि हुई है।

वाक्य वक्रता—वाक्य वक्रता के अन्तर्गत वस्तु का सुन्दर और रमणीयता से युक्त रूप केवल सुन्दर शब्दों से वर्णित होता है। इसमें एक प्रकार का वर्णन तो स्वाभाविक होता है जिसे स्वाभावोक्ति रूप में कहा जाता है दूसरा कवि की सहज और आहार्य प्रतिभा द्वारा अलौकिक या विलक्षण वर्णन होता है।[4]

---

१ शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त—डा० गोविन्द त्रिगुणायत प्रथम भाग द्वितीय संस्करण, पृ० ३५८।
२ कृष्ण चरित, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग मथुरा खण्ड, छन्द ५८५।
३ पावस पच्चासी हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छन्द ८।
४ भारतीय काव्यशास्त्र—सम्पादक—डा० उदयभानुसिंह प्रथम संस्करण, पृष्ठ १२३।

घुंघरु राजत पायन म, कटिमांझ अनूपम किंकिन बाजे।
पीत दुकूल गले नख बाघ गुथे सिर बारन की छवि छाजे।
दौरत देखि सपागन मैं सत कोटि मनोजन को मन लाजे।
या मुख मंदिर मूरति राम मया करि मो उर माहि विराजे।[1]

राम की बाल लीला एव 'सत कोटि मनोजन को मन लाजे" कवि की आहाय प्रतिमा द्वारा यहाँ सुन्दर वस्तु राम का सुन्दर एव रमणीय वणन है। वाक्य वक्रता का बडा ही सुन्दर वणन है।

प्रकरण वक्रता–प्रकरण या प्रसग के औचित्य को प्रभावशाली बनाने में प्रकरण वक्रता मानी जाती है। एक तो प्रकरण वक्रता यहाँ होती है जहाँ कवि असीम उत्साह के साथ किसी प्रसग का प्रकट करता है। यह उत्साह नायक की चारित्रिक दीप्ति या विशेषताओं के कारण होता है। दूसरे प्रकरण वक्रता वहाँ देखी जाती है, जहाँ कवि अपनी रचना का ऊपर उठाने के उद्देश्य से अलौकिक रीति से कुछ नवीन कल्पना द्वारा प्रकरण की उद्भावना करता है। ऐतिहासिक कथा प्रसग में उलट फेर या उनकी नवीन कल्पना भी प्रकरण वक्रता ही मानी जाती है। प्रकरण वक्रता अनेक प्रकार की हो सकती है।[2]

राव गुलाबसिह जी ने कृष्ण चरित म कृष्ण के मथुरा प्रवेश पर मथुरा की नारियो की प्रतिक्रिया का उत्साहपूण वणन किया है–यथा–

सखन सहित विचरत दोऊ भाई। जुगल रूप की उडि अवाई॥
तातै दौरि दौरि पुरबाला। देखन आई तजि घर कामा॥
कोइ इक आन थान के आला। भूषण धारि धाई बिन ज्ञाना।
कोइ ने सारी कटि लपटाई। लहँगा सीस धारिकर धाई॥
कोइ इक नूपरहि धरि दौरी। तजि दूसर की सुरति किसोरी॥
इकज इक दृग आंजन आंजा। उठि भागी इकनै नहि आंजा।
करत असन कोउ तिहि तजी चाली। कोउ हातहि भगी डाली
कोइ सोवत सुनि रूप बडाई। जस की तस देखन उठि धाई।[3]

चरित्र नायक के रूप का नगर की नारियो पर इतना प्रभाव यहाँ कवि ने वणन किया है कि कृष्ण के रूप दशन के लिए अपने सारे व्यवहार वे छोड चुकी है। अत यहाँ प्रकरण वक्रता है।

---

१ रामाष्टक–हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छन्द ९।
२ काव्यशास्त्र–डॉ० भगीरथ मिश्र–द्वितीय सस्करण, पृ० २३१–२३२।
३ कृष्ण चरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खण्ड छन्द २३।

इस विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि ने अपने काव्य म वक्रोक्ति के लगभग सभी भेदो का सफलता पूवक प्रयोग किया है। प्रबन्ध वक्रता का सम्बन्ध सम्पूण प्रबन्ध म अभिव्यक्त वक्रता से होता है। कवि की काव्य कृतियो म एक कृष्ण चरित ही प्रबन्ध काव्य की श्रेणी का काव्य है। कृष्ण के चरित्र के विवचन म श्रीकृष्ण का परम्परागत चरित्र ही कवि ने प्रस्तुत किया है। अत कवि के काव्य में प्रबन्ध वक्रता का अभाव स्वाभाविक ही है।

छद–कविता एव छद का सम्ब ध किस प्रकार का हो यह विवाद का विषय हो सकता है किन्तु कविता के लिए चाहे वह छन्दोबद्ध हो या मुक्त हो एक लय, ताल, सुर का होना आवश्यक माना गया है। काव्य और वस्तु है सगीत और किन्तु दोनो का पारस्परिक सम्ब ध नहान्त घनिष्ट है। आचाय रामच द्र शुक्ल के शब्दों में" छ द वास्तव म बधी हुई लय क भिन्न भिन्न ढाँचों का योग है जो निर्दिष्ट लम्बाई का होता है। लय स्वर के चढाव उतार स्वर क छोटे ढाचे ही हैं जो किसी छद के चरण म भीतर व्यस्त रहते हैं।"[1] अत कविता और छन्द एक दूसरे के सम्बद्ध है कविता म छन्दो का अपना स्थान होता है। छन्दों की मर्यादा मे छन्द जब स्वाभाविक रूप से सहज ही म आकर ग्रहण करते हैं तो कविता का वास्तव सौन्दय निखर उठता है। छन्द म शब्द भाव, कल्पना को बाँधना बस कठिन कवि कम है किन्तु सिद्ध हस्त एव प्रतिभा सम्पन्न कवियो के लिए यह सहज काम है। उनकी काव्य धारा अपने सगीत में लय होकर औचित्यपूण गति म प्रवाहित होती है। छन्दो म गण वत्तो की तुलना म मात्रिक छ द अधिक सुलभ, सहज, स्वाभाविक प्रतीत होते हैं। कवि की वत्ति किसी छन्द विशेष म रमी प्रतीत होती है जो उसकी प्रवत्ति के अनुकूल पडता हो विषय क अनुकूल पडता हो वही छद उसके भावो का सवाहक बनता है। मध्ययुगीन काव्य म छन्दोबद्धता श्रेष्ठ काव्य का उत्कृष्ट लक्षण माना जाता रहा है।

राव गुलाबसिंह जी मध्ययुगीन परम्परा के कवि हैं। काव्य सिन्धु के १२ व तरग म एव लक्षण कौमुदी के अष्टम प्रकाश मे छन्द के सम्ब ध म शास्त्रीय रूप म विवेचन सोदाहरण प्रस्तुत किया गया है। उनकी समस्त रचनाओ म कुछ विशेष छद ही अधिक मात्रा म प्रयुक्त हुए हैं। उन्ही छदो का विवेचन यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

दोहा–दोहा एक अध सम मात्रिक छन्द है। पहले और तीसरे चरण म १३ मात्राएँ तथा चौथे चरण म ११ मात्राएं होती हैं। कुल २४ मात्राएँ प्रत्येक दल म होती हैं। दूसरे एव चौथे चरण म तुक मिलनी चाहिए। विषम चरणारम्भ

---

१ काव्यदपण–राम दहिन मिश्र–चतुथ सस्करण, पष्ठ ३१।

में "स" गण (।।ऽ) "र" गण (ऽ।ऽ) अथवा न गण (।।।) हो सम चरणों के अंत में "ज" गण (।ऽ।) अथवा त गण (ऽऽ।) रहना चाहिए।

दोहे के बारे में इस प्रकार का निर्देश नहीं है फिर भी ११३ चरण के अंत म वर्ण लघु हो तो उसे सुनने म आन द आता है। अपवाद क रूप में १२ एवं ११ मात्राओं वाले दोहे भी देखने के लिए मिलते हैं। कहीं ऐसे भी दोहे देखने में आते हैं जिसमें १२।१३ और १३।१२ मात्राएँ होती हैं।[1]

दोहा छंद कवि के प्रिय छंदों में से एक है उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

सकेत स्थल में गई, पीव न आयो होय।
ताको कारन चितवे, उलका कहिए सोय॥[2]

यहां पहले और तीसरे चरण में १३ तथा दूसरे एवं चौथे चरण में ११ मात्राएँ हैं। दूसरे चरण में और चौथे चरण म तुक मिलता है सम चरणों के अंत म ज गण है। किन्तु विषम चरणों क आरम्भ में "त" (ऽऽ।) एवं "म" (ऽऽऽ) है।

चौपाई—चौपाई के एक चरण में २६ मात्राएँ होती हैं। इसमें केवल द्विकल त्रिकल का प्रयोग होना है। समकल के बाद समकल एवं विषम कल के बाद विषम कल होना चाहिए। त्रिकल के बाद दो गुरु और चरणांत म एक वा दो गुरु होने चाहिए। इसी रूप म चौपाई अधिक प्रचलित है। कहीं कहीं ऐसी चौपाई भी मिलती है जिसके अंत में एक ही गुरु अथवा दो वा तीन लघु वर्ण होते हैं। चौपाई म चार चरण होते हैं। चारों चरणों का तुकांत समान होना चाहिए। किन्तु व्यवहार में दो चरणों का तुक मिलता है।[3] राव गुलाबसिंह जी ने इस छन्द का सफल प्रयोग अपने प्रबन्ध काव्य कृष्ण चरित म किया है। कुछ छन्द यहाँ प्रस्तुत हैं—

कही तोर सुत हम घर माहीं। इहि विधि करत अनीति महाही।
छोरि देत बछरन बिन काला। देखि हँसी भागत तत्काला।[4]
रत्न जटित कंचन रथ माहीं। चली राधिका हुव महाही।
ताहु संग चली सखी वारी। रति रम्भा दि लजावन वारी।[5]

---

1. काव्य प्रदीप—रामबहोरी शुक्ल १६ वाँ संस्करण पृ० ३३६, ३३७।
2. वृहत व्यंग्यार्थ चंद्रिका हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग छंद ३५५
3. छंद प्रभाकर—जगन्नाथ प्रसाद भानु, संवत् २०१७ वि० संस्करण, पृष्ठ ४९-५०।
4. कृष्ण चरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, गोलोक खण्ड, छंद ५३६।
5. वही, छंद ५३६

यहाँ प्रत्येक चरण २६ मात्राएँ हैं। चरणात मे दो दो गुरु होने से छ द अधिक कण मधुर हुए हैं। चारो चरणो म तुक न होकर १।२ एव ३।४ चरणों मे तुक मिलता है।

कवित्त–रीति कालीन कवियो के सर्वाधिक प्रिय छ दों मे से कवित्त छ द है। कवित्त या मनहरण के प्रत्येक चरण मे इकतीस वण होते हैं सोलहवें और पदरहवें वर्णों पर यति होती है। अतिम वर्ण गुरु होता है। शेष वर्णों के लिए लघु गुरु के क्रम का कोई ब धन नही होता। कभी कभी ८, ८ ८ ७ पर यति देने का भी नियम निभाया जाता है। सम वर्णों के शब्दो के प्रयोग से पाठ मे मधुरता आ जाती है।[1] कवि ने इस छ द का प्रयोग विभिन्न ग्रथो मे किया है। एक छद प्रस्तुत है–

कोप करि सावन सिधायो रति भावन को,
बारि मिस डारि विष विरही बरावरी।
दादुर धुकार सो पुकार कर दीन जीव,
मोर कीन कूक हूक हिय मे लगावरी।
सुकवि गुलाब विज्जुगाज, बजधात जानि,
बकन विचारि उडपात ऊरलावँरी।
जानिये न इदवधू जुगनू हमारे जान
धारा धर धरपै अगरि बरसावरी।।[2]

सवया–२२ से लेकर २६ वर्णों तक के वत्त सवया कहलाते हैं। सवया छ द के ८ भेद हैं।[3] राव गुलाबसिंह जी के काव्य से सवयों के कुछ उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य हैं।[4]

सवया मदिरा–२२ वर्णों के इस सवये मे सात भ गण और एक गुरु होता है।

साजि सिंगार सखीन मँझार हुती जिहि जोवन जोर भरे।
जासु अनूपम रूप निहारि शशि रति रूप गुमान गरे।
ता तिरियाँ मनमोहन आगम भो जिहि दप कदप हरे।
वया घर आवत बालम को लखि बाल विभूपन छोरिधरे।[5]

---

१ काव्य प्रदीप राम बहोरी शुक्ल, सोलहवा सस्करण, प० ३६९–७०।
२ पावस पच्चीसी–हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छ द ६।
३ काव्य प्रदीप–राम बहोरी शुक्ल १६ वाँ सस्करण, प० ३५९।
४ छन्द प्रभाकर–जगन्नाथ प्रसाद भानु–सवत् २०१७ वि० सस्करण, पृ० १९८।
५ बृहद वनिता भूषण–हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छद १९६

सवैया-मत्त गयंद—२३ वर्णों के इस सवैये में सात भ गण और दो गुरु होते हैं।[1] इसे 'मालती' और "इंदव" भी कहते हैं एवं उदाहरण यहाँ प्रस्तुत है।

नीर निरंतर नारिन माँझ गुलाब कहै रमि के सुख पावै।
पीव पुकारत है पग जीव अजीमन को गन सोर मचावै।
बूदन के अग में रंग होत सिपाहिन को मन मैन जगावै।
बाल न बालम सों करि मान कहा यह काल गयो फिरि आवै।[2]

सवैया दुर्मिल-२४ वर्णों के इस छंद में आठ स गण होते हैं। इसे दुर्मिला तथा चन्द्रकला नाम से भी जाना जाता है।[3] एक उदाहरण दृष्टव्य है।

पग जात उडे बिदि गो दिसि में मग पावत ना जहँ कूक जगी।
सब आव जवास झुराय गये जरि नारि पुकारन पीव पगी।
घर माँझ गुलाब अगार परे भरि अम्बर में चिनगी उमगी।
अब धीर धरै उर का विधि री जल धारन भीतर लाय लगी।[4]

सवैयों के उपरोक्त तीन भेदों का ही प्रयोग कवि की रचनाओं में किया गया है शेष का नहीं। इन तीनों में से मत्त गयंद एवं दुर्मिल का प्रयोग कवि ने अधिक मात्रा में किया है। छंद योजना की कवि की निर्दोषता स्वतः सिद्ध है। यह छंद झूमने के लिए प्रवृत्त करने वाला छंद है।

छप्पय-छप्पय में कुल छह चरण होते हैं। उनमें से पहले चार रोला छंद के अर्थात २४ २४ मात्राओं के (११ १३ की यति से) और अन्तिम दो उल्लाल के २८-२८ मात्राओं के (१५ १३ की यति से) या २६ २६ (१३ १३ की यति से) होते हैं। उल्लाल के दो प्रकारों के कारण छप्पय के भी दो प्रकार होते हैं।[5] राव गुलाबसिंह रचित छप्पय के कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत।

राजस लोभासक्त, विषय के वस अति होई।
मन रु वचन करि अन्य, कर्म करि अन्य जु होई।
नीति हीन छल सहित, नीच प्रिय दम्भ विचारी।
अरु स्वतंत्र नित्य रहत, अपर बन्धानाय धारी।
पुनि कलह प्रिय वचक महा भूप अधम पदवी लहै।
फिरि अंत मम नियकपनो अरु थावरता गति गहै।[6]

---

१ छन्द प्रभाकर-जगन्नाथ प्रसाद भानु संवत २०१७ वि० संस्करण, पृ० २०१।
२ पावस पच्चीसी-हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छंद ५।
३ काव्य प्रदीप-राम बहोरी शुक्ल-सोलहवाँ संस्करण, पृ० ३६३।
४ पावस पच्चीसी हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छंद १३।
५ छंद प्रभाकर-जगन्नाथ प्रसाद भानु, संवत् २०१७ वि० संस्करण पृ० ९६
६ नीतिचन्द्र राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण, प्रथम कला, द्वितीय प्रकाश, छंद २६

छप्पय के दो भेदों म से कवि ने उल्लाल के १५+१३–२८ के भेद का ही अपनी रचना में प्रयोग किया है। उल्लाल के १३+१६–२६ के भेद का नही किया है।

बरवै–बरवै छ द के चरणो मे बारह मात्राएँ और समचरणो मे सात मात्राएँ होती हैं। प्रत्यक दल मे २९ मात्राएँ होती हैं। समचरणों के अ त म "ज" गण इसकी सु दरता को बढा देता है।[1]

गिरिजा दृग मग साहत, गति गजराज।
भावत लुप्ता, आठहियौं कविराज।[2]

\+ \+

है यह जामिक जनको, करणो काम
चोर जार याहित डर तिहिं तमाम।[3]

इन दोनों उदाहरणो मे १२+७ उन्निस मात्राएँ प्रत्येक चरण मे हैं। पहले उदाहरण म सम चरणो के अ त म "ज" गण (ISI) है किन्तु दूसरे उदाहरण मे चरण में 'ज' गण नही है 'त" गण है चौथे चरण मे "ज' गण है। दूसरे उदाहरण की तुलना म पहला उदाहरण इसी से सु दर बन पडा है। ज" गण की अनिवायता न होने के कारण इसे दोष नही कहा जा सकता।

ललित पद–ललित पद छ द के प्रत्येक चरण मे २६–१२ के यति से २८ मात्राएँ होती हैं। अ त मे दो गुरु होते हैं।[4] इसे 'सार" भी कहते हैं।

जय जय योगि अयोनि अन ता, अ मय ज्योति स्वरूपा।
निगु ण सगुण अनघ साकारा, निराकार बहुरूपा।
जय निरक निरकुश निश्चल निमल निखिला धारा।
जय निरुपद्रव निरुपाधी जय जय पूरन कामा।[5]

ललित पद छन्द का अतीव सुन्दर गठन यहाँ हुआ है।

हरिपद छन्द–हरिपद छ द के विषम चरणो मे २६ एव सम चरणो में ११ मात्राएँ होती हैं। अ त मे गुरु लघु यह क्रम होता है।[6]

---

१ काव्य प्रदीप–राम बहोरी शुक्ल, सोलहवाँ सस्करण, पृ० ३३५।
२ वृहद वनिता भूषण, हस्तलिखित, हि दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छ द २०।
३ नीति च द्र, राव गुलाबसिंह प्रथम सस्करण, चतुथ कला, चतुथ प्र० छन्द ३९।
४ काव्य प्रदीप–राम बहोरी शुक्ल, सोलहवाँ सस्करण, पृ० ३३०
५ कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, गोलोक खण्ड, छन्द २४८।
६ छन्द प्रभाकर–जगन्नाथ प्रसाद भानु दशम सस्करण पृष्ठ ८९।

हो तुम इन्द्रिय मन वच पारा महिमा अगम अपार
अक्षर निर्गुण विभु अव्यक्त रु ध्यान साध्य सुखकार।
स्वेच्छामय मानद परमेश्वर, सब रूप भगवान।
स्वेच्छातनुधर स्वेच्छामयरि निमल मन मतिवान।[1]

भुजंग प्रयात—जिस छंद में चार "य" गण होते हैं वह छंद भुजंग प्रयात माना जाता है।[2]

रटो श्याम श्या भा गुवि न्दा गुपाला।
जसोदा दुलारा स्व भू नंद लाला।
महा दुष्ट कंसादि हारी अघारी।
रमानाथ गोविन्द गौरी मुरारी।[3]

लक्ष्मीधर—जिस छन्द में चार 'र' गण होते हैं, उसे लक्ष्मीधर छन्द कहा जाता है। यह छंद स्रग्विणी, शृंगारिणी, कामिनी–मोहन नामों से भी जाना जाता है।[4]

खेलती डोलती बोलती नाहिरी।
आवती जावती भीतरी बाहिरी।
कौन की लाडली आहि सो बालिका।
मोहिनी है मनो फूल की मालिका।[5]

इन छंदों के अतिरिक्त कवि ने, प्लवगम, पद्धरि चन्द्रायन आदि अन्य छन्दों का प्रयोग भी अपने काव्य में सफलतापूर्वक किया है। कवि की विशेष रुचि दोहा, चौपाई, कवित्त, सवय्या इन छंदों में रही है। उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि भावानुकूल छंद योजना में कवि अत्यंत सफल रहे हैं। कवि का छंद प्रयोग अतीव शुद्ध एवं सौन्दर्य विधायक रहा है।

भाषा–भाषा भाव एवं विचारों की अभिव्यक्ति का प्रधान साधन है। भाषा के साहित्यिक अध्ययन में उसका वैज्ञानिक एवं व्याकरणिक अध्ययन अपेक्षित नहीं

---

१ कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, गोलोक खण्ड छंद २६६।
२ काव्य प्रदीप–रामबहोरी शुक्ल, सोलहवाँ संस्करण, पृ० ३५०
३ काव्य सिन्धु हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वादश तरंग छंद २००।
४ काव्य प्रभाकर, जगन्नाथप्रसाद भानु द्वितीय संस्करण, पृ० ३५३६
५ काव्य सिन्धु–हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, द्वादश तरंग छंद २०१।

होता तो भाषा की भावभि यक्ति की क्षमता प्रभविष्णुता का अध्ययन वाछनीय होता है। किसी कवि की महत्ता उसके द्वारा प्रयुक्त शब्दावली पर निभर होती है। शब्दावली के प्रयोग में उदारता से भाषा की सम्पन्नता बढती है भाषा का विकास होता है। शब्दावली की समृद्धता से कवि का भाषा प्रभुत्व सिद्ध हाता है। अपने भावो और विचारो की अभिव्यक्ति म औचित्यपूण शब्दो का प्रयोग कवि करता है। इस चयन म कवि की भावुकता एव रुचि प्रकट होती है। कवि की प्रतिभा, विद्वत्ता, प्रत्युत्पन्न मति, विचक्षणता आदि गुणो का परिचय भी अध्येताओ को प्राप्त होता है। राव गुलाबसिंह जी के साहित्य में प्रयुक्त भाषा की शब्दावली का अध्ययन यहाँ प्रस्तुत है।

शब्दावली–राजस्थान के राज्य बूँदी क दरबार मे सम्बद्ध होन पर भी कवि की काव्य भाषा व्रजभाषा ही है। राजस्थानी या डिंगल का प्रभाव उस पर नहीं है। राव गुलाबसिंह जी न सस्कृत एव भाषा क ग्रन्थो का अध्ययन रुचि के साथ अपने बचपन म ही किया था। देवभाषा सस्कृत एव नरभाषा के विषय म अत्यधिक प्रयत्न उन्होने किया था। अत शब्दो का परख म व किसी पारखी से कम नहीं हैं। काव्य शास्त्र के विवेचक भावुक भक्त इन उभय विधि रूपो मे इनकी प्रतिभा आविष्कृत होने के कारण भाषा के सुचारु माध्यम के प्रयोग म एक सहजता सरलता दृष्टिगोचर होती है। सस्कृत के तत्सम, तदभव शब्द, अरबी फारसी के तदभव, तत्सम शब्द यत्र तत्र अग्रजी के तदभव शब्द उनकी भाषा को सजाने म अपना सहज एव स्वाभाविक योगदान देते हैं।

सस्कृत तत्सम–सस्कृत की सगोत्री स अनेक भारतीय भाषाए निसत हैं ऋण के बोझ से दबी हैं। सस्कृत के तत्सम शब्दो का भाषा के ग्रन्थों म अधिकारी साहित्यकारो द्वारा प्रयोग भाषा की समद्धि का प्रौढता का प्रतीक माना जाता है। सस्कृत भाषा साहित्य माधुय गाम्भीय प्रौढत्व आदि विभिन्न दृष्टियो से अतीव समृद्ध है। तत्सम शब्दो के उचित प्रयोग के द्वारा भाव विचार यथा–तथ्य रूप म व्यक्त करना उचित अथवत्ता की स्थापना करना सम्भव बनता है। राव गुलाबसिंह जी ने हिन्दी क अनेक श्रेष्ठ कवियो क समान सस्कृत तत्सम शब्दावली को स्वीकार कर प्रयोग किया है। सस्कृत तत्सम शब्दावली के प्रयोग के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं–

१ स्वग नाक स्वर त्रिदिव कहि त्रिदशालय सुरलोक।
दिव द्यु त्रिविष्टप द्यौ नभ द्यु नाक भवन स्वलोक।[1]

---

१ कृष्ण चरित्र हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग स्वग वग, छन्द २१।

२ जय जोगि अयोनि अन ता अव्यय ज्योति स्वरूपा ।
निगु ण, सगुण अनघ साकारा निराकार बहुरूपा ।
जय निशक निरकुश निश्चल निमल निखिलाधारा ।
जय निर्लिप्त निरीह निरजन निधनातक निधिकारा ।
जय निरुपद्रव निरुपाधि जयजय पूरन कामा ।
जय अनिमष नित्य निधन घन जयजय स्वात्मारामा ।
दुगम सुगम दुग दुमति _हर दुराराध्य भगवाना ।
जय वदा त वदवित भयहर वेदरूप बलवाना ।
परब्रह्म परमश्वर तुम हो सत्य रूप तिहुँ काला ।
यह ससार पाल्य तुमरो है तुम या के रखवाला ।[१]

इन छ दो म–स्वग, नाक, त्रिदिव द्यो दिव, अव्यय ज्योति स्वरूप, निगु ण निराकार, निशक, निशक निरकुश निखिलाधारा निर्लिप्त, निरजन, निधनातक आदि सस्कृत के तत्सम शब्द प्रयुक्त है । इन शब्दो के अतिरिक्त उपालम्भ, काग, नर, नृपति दाडिम च द्रमा, कच, नितम्ब जघन ग्रीवा, आदि अनेक शब्दो का प्रयोग यथोचित रूप म राव गुलाबसिंह जी द्वारा किया गया है ।

सस्कृत सामासिक शब्दो का भी प्रयोग अनक स्थानो पर राव गुलाबसिंह जी के काव्य म देखने के लिए मिलता है । कुछ छन्द यहाँ प्रस्तुत हैं जिनमे ऐसे शब्द प्रयुक्त है ।

वह व दावन महिमा साथा । भयो गुणन जुत जिमि ऋतुनाथा ।[२]

\+ \+

मघ दखि भय हर्षित ककी । जिमि हरिजन लखि गही विवकी ।[३]

\+ \+

रामकृष्ण की सुरति करि बह्यो न द दगनीर ।[४]

इन छ दो म 'व दावन ऋतुनाथ हरिजन, गही, रामकृष्ण, दगनीर आदि सामासिक पदों का प्रयोग हुआ है । इस ओर भी अनक सामासिक पद प्रयुक्त हैं किन्तु स्थानाभाव से कुछ उदाहरणो पर ही स तोष करना आवश्यक प्रतीत हो रहा है ।

---

१ कृष्ण चरित हस्तलिखित, हि दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, गोलोक खण्ड, छन्द २४२ ।

२ कृष्णचरित हस्तलिखित हि दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, व दावन खण्ड, छन्द २०९ ।

३ वही, „ छ द २५३ । ४ वही, „ छ द ३१६

संस्कृत अर्थ तत्सम तथा तद्भव—लालित्य एवं उच्चारण की सुकरता के कारण संस्कृत के शब्दों का रूप संस्कार सदैव किया जाता रहा है। यह रूप परिवर्तन स्वर एवं व्यंजनों के लोप, वृद्धि, विपर्यय आदि के द्वारा किया जाता है। इनसे संस्कृत के मूल शब्द अपने विकसित, अभिवर्द्धित रूप में लोक में प्रचलित होकर भाषा की अभिवृद्धि ही के कारण बनते हैं। राव गुलाबसिंह जी के कुछ छंद यहाँ उदाहरण रूप में दिए जा रहे हैं जिनमें इस प्रकार के प्रयोग देखने को मिलेंगे।

दम्पति कम्पति प्रेमवस बोल्त न करत न लाग।[1]

+ +

साजि सिंगार सखीन मझार हुती जिहिं जोवन जोर भर।[2]

+ +

राब रानिन के घरन मैं मुनि न देख्य स्याम।[3]

+ +

रहत सौतिवस पिय सदा सासू कहत कुबन।[4]

इन छंदों में वस सिंगार मझार जोवन रानिन पिय आदि शब्द क्रमशः वश शृंगार मध्य यौवन रानि प्रिय आदि संस्कृत के अर्थ तत्सम या तद्भव रूप है। ऐसे शब्दों की गिनती करना तो कठिन है फिर भी कुछ दिए जा रहे हैं।

जुगल, पग सासन, तिय बन सीतल सयाना, प्रकास चित सिख सज कारन दपन सीस कसानु माय वनन सहाय चरित साईं, चरन अस स्वेत, परिपूरन अस्तुति गुन रस बानी आन नास बिवस जुग, मनुज आदि। ये क्रमशः निम्नलिखित संस्कृत शब्दों के अर्धतत्सम या तद्भव रूप हैं—

युगल पद, शासन, स्त्री वचन, शीतल सज्ञान प्रकाश चित, शिखा शय्या, कारण दर्पण शीर्ष कृशानु माल वर्णन, सहाय्य, चरित्र स्वामी, चरण, अंश, श्वेत परिपूर्ण स्तुति गुण रस वाणी, अन्य, नाश विवश युग मनुष्य।

अपभ्रंश—राव गुलाबसिंह जी ने काव्य में अपभ्रंश भाषा के शब्दों का प्रयोग भी किया गया है।

उदाहरण के रूप में अपभ्रंश की निम्नलिखित शब्दावली देखें—

१ लोयन लाल भय सबके अंजु डारन हाथ की पिचकारी।

---

१ बृहद् वनिता भूषण हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छंद १८८।

२ वही , छंद १९६

३ काव्य सिन्धु हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, द्वितीय तरंग, छंद ६।

४ बृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका,—राव गुलाबसिंह, प्रथम संस्करण छंद २१३।

२ नेह नहे वर नाथ रहै भरि नन्द लला वृषभानु दुलारी ॥[1]

३ गुरु हय गय से वाजि गज धनिक धनद से धीर ।[2]

४ होरी की समाज साजि आये वृषभानु द्वार गावत बजावत उमारा फाग ख्यालकी ।[3]

५ मोहन मोर लसे सिर में, करमें कंकन की छवि छाजै ।[4]

यहाँ लोचन नेह, हय-गय, फाग, मोर छाजै शब्द अपभ्रंश भाषा के हैं। अपभ्रंश के कतिपय ऐसे शब्द भी हैं जो हिन्दी के अपने से लगते हैं किन्तु वास्तव में वे अपभ्रंश के हैं। ऐतिहासिक रूप में हिन्दी अपभ्रंश की ही उत्तराधिकारिणी है। अतः यह स्वाभाविक ही है।

अवधी-राव गुलाबसिंह जी की कविता में अवधी भाषा के भी कतिपय शब्दों का प्रयोग भी देखने में आता है। यथा-

होत अधम सभा के माहीं ।[5]

ताही निसि मैं कस कौं स्वप्न अशुभ के दानि ।[6]

कोउ नही बरजै निसिवासर स्वारथ लै अपने मत चाल ।[7]

इन चरणों में अवधी के माँही, ताही, कोउ शब्दों का प्रयोग हुआ है। इनके अतिरिक्त तछु तऊ जाही, इमि, किमि आदि शब्दों का प्रयोग भी कवि के काव्य में प्राप्त होता है।

विदेशी-विदेशी भाषाओं के शब्दों से तात्पर्य है अरबी, फारसी, अँग्रेजी आदि भाषाओं से आये शब्द। कवि राव गुलाबसिंह जी के काल में प्रचलित अरबी, फारसी के शब्दों का प्रयोग उन्होंने अपने काव्य में बड़ी सफलता के साथ किया है। इस प्रकार के शब्दों के कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैं-

फारसी-

१ है दुसवार चराचर को इहि प्रेम पयो निधि मैं पग दनो ।[8]

---

१ काव्यनियम, हस्त० हिंदी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, छन्द १६१

२ नीति चन्द्र राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण प्रथम प्रकाश छन्द ५ ।

३ काव्य नियम हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छन्द १८६ ।

४ रामाष्टक " छन्द ४

५ कृष्णचरित-हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खण्ड, छन्द १०४ ।

६ वही , , छन्द ८ ।

७ बृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खण्ड १२५ ।

८ प्रमपच्चीसी, हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छन्द २ ।

२ हाय दई धरिये किमि धीरज बेदरदी न सुन दरदी की ।[1]

३ लाग लग्यौ बिन काज इत उन लाग लगी बिन राग परी की ।[2]

यहाँ दुसवार, दरदी, दाग, ये शब्द फारसी के तद्भव एवं तत्सम शब्द हैं। इन शब्दों के अलावा कविराव गुलाबसिंह जी ने सरदार, नगर, जिहाज, शिकार आदि शब्दों का प्रयोग भी अपनी कविता में किया है।

अरबी–

१ भिग पग रेपा के लाय तव कुण्डल जाहर जिहाज नीच विरच बताव है।[3]

२ विपत्ति विशाल माहू पालक विचारत ही भनक परी ही जात पाला जवाब की।[4]

३ जति घालक दुनि दुग की मानिक मयाल मात आलम तमाम की।[5]

यहाँ अरबी शब्दों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। इनके अलावा कवि ने काव्य में हुकम, इमारत, ताजीम, मुनसद्दी, मिजाज आदि अरबी के अन्य शब्दों का प्रयोग भी बड़ी सफलता के साथ किया गया है।

मुहावरे–राव गुलाबसिंह की कविता में विशेष रूप से उनके कृष्णचरित्र में काव्य के औचित्य के लिए कुछ मुहावरों का प्रयोग भी हुआ है। मुहावरे भावों की संक्षिप्त किन्तु मार्मिक अभिव्यक्ति एवं रस परिपोष में सहायक सिद्ध होते हैं। निम्नलिखित उदाहरणों के द्वारा यह स्पष्ट हो जाता है–

तऊ हरिनैं हमकों तजि दीनी। हमरे कहन की कान न कीना।[6]

हम है बिन दामन की दासी। कयो गुलाब सुमिरें अविनासी।[7]

अति कुरूप कहूँ रूप अगारा। बजि हैं चारिहि दिवस नगारा।[8]

इन उदाहरणों में कान न करना, बिनदामन की दासी होना, चार दिन नगारा बजना आदि मुहावरों का प्रयोग हुआ है।

इनके अलावा कुछ और मुहावरों का प्रयोग भी कवि ने अपनी रचनाओं में किया है। यथा–भृकुटि विलास, सूरदास की कारी, हृदय लगाना, बदला लेना, सिन्दूरी भरना, घर में लय लगना, गाँठि लगाना आदि।

---

1. प्रभरूयोगी हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, पृष्ठ ७।
2. वही , पृष्ठ ७।
3. काव्य नियम–हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग पृष्ठ ४०।
4. वही पृष्ठ ४१ 5. वही , पृष्ठ ९१
6. कृष्णचरित हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, मथुरा खण्ड पृ० ३५८
7. वही, " पृष्ठ १६२ 8. " पृष्ठ १८४

इस प्रकार राव गुलाबसिंह जी की कविता की भाषा मुख्यत ब्रजभाषा है। भाव एव विचारो की अभिव्यक्ति मे अनुकूल शब्दावली के चयन मे कवि ने ब्रजभाषा के अलावा संस्कृत, अपभ्रंश, अवधी, अरबी, फारसी आदि विभिन्न भाषाओ के शब्दो का निःसंकोच प्रयोग किया है। प्रयोग करते समय इस कुशलता मे प्रयोग किया है कि वे शब्द पराये नही बन रह पाते हैं। भक्ति एव रीति के विवेचन के प्रसग मे पारिभाषिक, प्रौढ, शोभन भाषा के प्रयोग के द्वारा कवि की क्षमता की अभिव्यक्ति है। संस्कृत शब्दो के प्रयोग मे अभिजात्य लालित्य प्रौढत्व आदि का सुंदर, ललित मधुर समन्वय है। अत भाषा प्रौढ एव माधुर्य तथा लालित्य से युक्त है। अरबी फारसी भाषा के शब्दो का मार्मिक प्रयोग, मुहावरो का सुष्ठु प्रयोग आदि के कारण कवि की भाषा जनमानस का रंजन करने वाली रही है।

भाषा की सुमधुरता, सुश्राव्यता, रसात्मकता व्यंग्य की समता एव सुंदरता आदि गुणो के कारण राव गुलाबसिंह जी की भाषा में लोगो के चित्त का आकर्षित करने की क्षमता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।

विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि राव गुलाबसिंह जी ने अपने काव्य मे भारतीय काव्यशास्त्रीय परम्परा के रस ध्वनि अलकार, रीति तथा वक्रोक्ति सिद्धान्तो का सफलतापूर्वक प्रयोग किया है। रस के अन्तर्गत शृंगार हास्य, वीर, करुण अद्भुत रौद्र, भयानक वीभत्स वात्सल्य एव भक्ति रसो की सुन्दर अभिव्यंजना हुई है। कवि की विशेष रुचि शृंगार एव भक्ति रसो मे रही है जो रीतिकालीन परम्परा के अनुकूल ही है।

ध्वनि के अन्तर्गत कवि ने लक्षणामूला ध्वनि एव अभिधामूला ध्वनि भेदो के विभिन्न उपभेदो को सफलता से प्रस्तुत किया है। अलकार कवि का प्रिय विषय रहा है। अलकारो मे कवि ने शब्दालकारो तथा अर्थालकारो के साम्यमूलक विरोधमूलक, शृंखलामूलक, न्यायमूलक एव गूढार्थ प्रतीतिमूलक–वर्गों के अलकारो का सम्यक् प्रयोग किया है। इन अलकारो के प्रयोग मे कवि की रुचि साम्यमूलक अलकारो में अधिक होने से उनकी अधिक सुंदर अभिव्यक्ति हुई है। वदर्भी गौडी एव पाचाली इन तीनो रीतियो के सहज सुंदर प्रयोग कवि के काव्य मे प्राप्त होते हैं। वक्रोक्ति के वक्रोक्ति के विभिन्न भेद–वर्णविन्यास वक्रता पद पूर्वार्ध वक्रता, पद परार्ध वक्रता, वाक्य वक्रता, प्रकरण वक्रता आदि का औचित्यपूर्ण प्रयोग कवि ने किया है। कवि के काव्य मे प्रबंध वक्रता के प्रयोग का अभाव दृष्टिगोचर होता है।

कवि ने अपने काव्य मे सभी लोकप्रिय छन्दो का प्रयोग किया है। दोहा, चौपाई कवित्त सवैया छप्पय, कवि के विशेष प्रिय छन्द रहे हैं। भाषा के प्रयोग एव शब्द चयन मे कवि ने अपनी उदारता का परिचय दिया है। संस्कृत, अपभ्रंश

अवधी भाषा के शब्दों के साथ अरबी फारसी शब्दों का भी मुक्त प्रयोग किया गया है। मुहावरों के औचित्यपूर्ण एवं सफल प्रयोग से भाषा की ओजस्विता, रोचकता, अर्थपूर्णता अधिक सुन्दर रूप में अभिव्यक्त हुई है।

इस प्रकार की उनकियों के साहित्यिक मूल्यांकन से राव गुलाबसिंह जी के काव्य में निहित भाव सौन्दर्य एवं कला सौष्ठव का उद्घाटन हो जाता है। अतः यह स्पष्ट है कि कवि केवल रीति आचार्य कवि ही नहीं थे अपितु भावुक प्रतिभावान एवं सुन्दर अभिव्यक्ति क्षमता के समर्थ कवि थे।

८

पूर्ववर्ती प्रमुख कवियो का प्रभाव एव मौलिकता

यह सर्वविदित है कि साहित्य सृजन स्वतन्त्र एव स्वायम्भुव नही होता। अपने चिन्तन मनन एव प्रस्तुतीकरण मे साहित्यकार अनेक स्रोतो का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप मे ऋणी रहता है। सबसे प्रथम वह उस परिवेश का ऋणी रहता है। जिसमे वह जन्म लेता है, विकसित होता है। दूसरे वह उन संस्कारो का ऋणी रहता है जो ज्ञात अथवा अज्ञात मे उसके निर्माण के लिए संस्कार के लिए कारण होते हैं। साहित्य सृजन मे प्रतिभा के साथ साहित्य कृतियो का अध्ययन पूर्व सूरियो का अनुसरण, अनुकरण एव अभ्यास का महत्व भी प्राचीन काल से स्वीकृत है। कवि की काव्य चेतना मे पूर्ववर्ती कवियो के भाव भाषा साज सज्जा आदि प्रभावो के बीज पडते हैं। यथावसर कवि के अनुकूल व पल्लवित होते हैं। पूर्ववर्ती प्रभावो के विवेचन मे कवि की काव्य सर्जना मे प्रतिभा के अतिरिक्त व्युत्पत्ति एव अभ्यास के योगदान की अनुपातिक मात्रा को भी सहजता मे समझा जा सकता है। पूर्ववर्ती समस्त कवियो के काव्य की तुलना कर विभिन्न प्रभावो का विवेचन करना तो एक स्वतन्त्र प्रबन्ध का विषय है। अत इस अध्याय मे प्रमुख पूर्ववर्ती कवियो के साथ आलोच्य कवि की प्रभाव परक तुलना प्रस्तुत की गई है जिसमे भाव वर्ण्य भाषा शैली छन्द आदि का विशेष रूप से समावेश किया गया है।

सूरदास राव गुलाबसिंह

सूरदास जी कृष्णकाव्य के अमर गायक हैं। कृष्ण चरित के रचयिता के रूप मे राव गुलाबसिंह का उनके विचारो के साथ साम्य स्वाभाविक ही है। रचना पद्धति एव प्रेरणा स्रोतों की विभिन्नता के होते हुए भी समानता का भाव कहीं न कहीं मिल ही जाता है।

कृष्ण चरित मे भ्रमर गीत का प्रसग मर्मस्पर्शी प्रसग है। भ्रमर उद्धव एव कृष्ण के काले रग और विरह मे तडपाने की कृति को लेकर सूर की गोपियो मे कहा है—

राव गुलाबसिंह जी के कृष्ण चरित में उद्धव विरहिणी राधा का चित्र श्रीकृष्ण के समक्ष प्रस्तुत करते हैं, जो दृष्टव्य है --

तिनहूँ मैं राधा है सारा । सो मैं देखी जुत उपचारा ।
कदली वन मे कदम माँही । जलजन पर लोटत अति दाही।[1]

+ + +

भूषन वर्जित अति मलिन अति ही छीन शरीर ।
राखी ढँकी सित वसन मैं आलिन पागी पीर ।[2]

+ + +

है तुम मैं तत्पर वहै जगते अदभुत आहि ।
राधा सम तिहु लोक मैं दूजी देखत नाहि ।[3]

विरहिणी की दशा एवं भाव की समानता होते हुए भी अभिव्यक्ति में राव गुलाबसिंह की मौलिकता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है ।

राव गुलाबसिंह काव्य प्रतिभा कल्पना एवं भाव साम्य की दृष्टि से सेनापति से प्रभावित प्रतीत होते हैं ।

केशवदास राव गुलाबसिंह

रीति परम्परा के अनुवर्ती कवि एवं आचार्य राव गुलाबसिंह जी के काव्य म केशवदास के काव्य की समता देखने को मिले तो कोई आश्चर्य नहीं है । उनकी भाव एव वर्णन की समानता की परीक्षा के हेतु यहाँ कुछ छ द प्रस्तुत हैं ।

वर्ण्य विषय के रूप म दानी का कवि केशवदास एवं सुकवि गुलाब कृत वर्णन की यहाँ तुलना के हेतु दृष्टव्य है

रामचन्द्र, हरिश्चन्द्र नल परशुराम दुख हरण,
केशवदास दधीचि, पृथु बलि सुविभिषण कर्ण ।
भोज विक्रमादित्य नृप जगदेव रणधीर,
दानिन हूँ के दानि इन्द्रजीत बरवीर ।।[4]

रामचन्द्र जी से आरम्भ करते हुए दानियों की एक परम्परा केशवदास जी ने यहाँ प्रस्तुत की है । राव गुलाबसिंह जी ने भी इसी प्रकार की परम्परा प्रस्तुत की है --

---

१ कृष्णचरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, मथुरा मण्ड, छन्द ४८२
२ वही, छन्द ४९३
३ वही छ द ४९५
४ कवि प्रिया केशवदास, द्वितीय संस्करण, प्रकाशक मातछाया मन्दिर प्रयाग, छ द ६४

सचेना रहत अनुराग हू के बाग बर,
मानिनी के नन क्यों मन के तुरग हैं ।[1]

नेत्रों के वर्णन म कवि का काव्य कौशल स्वत स्पष्ट है, नत्र हिरना से तिरछे चलते हैं, मदन देवता के अश्व है । नत्रों के कुछ ऐसे उपमान यहाँ प्रस्तुत हैं जो बहुप्रचलित नही है--

पलकैं बरम बर बरनी परम असि,
तारे से चरम कसिल सत घनरे हैं ।
भकुटि कमान बान दीठि तून कोय जानि,
सेत लाल हास रोस भरे उर हर हैं ।
सुकवि गुलाब प्रेरे फिरत रजायस के,
प्रति भट घोजि घाजि कीन सब चेर हैं ।
ज न जग जालिम जुलूस भरे जोर जुग
अन मैन मैन के सिपाही नन तेर हैं ॥[2]

राव गुलाबसिंह जी ने नेत्र वर्णन मे नेत्रो पर धनुष बाण आदि का रूपक पूर्ण रूप से प्रस्तुत किया है । नन मदन के सिपाही कहलाए हैं । आँख की कोयो के वर्णन म गग के साथ समानता स्थापित करते हुए --केवल सित असित नही अपितु सेत लाल कह कर उसमे प्रणय का रग भरने का प्रयास भी कवि न किया है ।

सेनापति राव गुलाबसिंह

भक्ति काल के अन्तिम चरण के कवि सेनापति प्रवत्ति म रीति कवि रहे हैं। विरहिणी नायिका का एक अत्यन्त ममस्पर्शी चित्र यहाँ तुलनार्थ प्रस्तुत है

ज्यो ज्यों सखी शीतल करति उपचार सब,
त्यों त्यों तन विरह की बिथा सरसाति है ।
ध्यान कौ धरत सगुनो तियो करत तेरे
गुन सुमिरत ही बिहाति दिनराति है ।
सेनापति जदुबीर मिल ही मिटगो पीर,
जानत ही प्यास कसे आसनि बुझावति है ।
मिलिय के सम आप पाती पठवत कहू
छाती की तपति पति पाती त मिराति है ।[3]

---

१ गग कवित्त--स० बटकृष्ण प्रथम सस्करण छन्द २७

२ काव्यसिन्धु--हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग, एकादश तरग छन्द २१

३ कवित्त रत्नाकर--सेनापति सपादक उमाशकर शुक्ल, प्रथम सस्करण, तरग २, छन्द ३९

राव गुलाबसिंह जी के कृष्ण चरित म उद्धव विरहिणी राधा का चित्र श्रीकृष्ण के समक्ष प्रस्तुत करते हैं, जो दृष्टव्य है --

तिनह में राधा है सारा । सो मैं देखी जुत उपचारा ।
कदली वन मे कदम माँही । जलजन पर लोटत अति दाही।[1]

\+ \+ \+

भूषन वर्जित अति मलिन अति ही छीन शरीर ।
गखी ढँरी सित वसन में आलिन गामी पीर ।[2]

\+ \+ \+

है तुम मैं तत्पर वहै जगते अदभुत आहि ।
राधा सम तिहु लोक मैं दूजी देखत नाहि ।[3]

विरहिणी की दशा एव भाव की समानता होते हुए भी अभिव्यक्ति में राव गुलाबसिंह की मौलिकता स्पष्ट रूप से दिखाई देती है ।

राव गुलाबसिंह काव्य प्रतिभा कल्पना एव भाव साम्य की दृष्टि से सेनापति से प्रभावित प्रतीत होते हैं ।

केशवदास राव गुलाबसिंह

रीति परम्परा के अनुवर्ती कवि एव आचार्य राव गुलाबसिंह जी के काव्य म केशवदास के काव्य की समता देखने को मिले तो कोई आश्चय नहीं है । उनकी भाव एव वणन की समानता की परीक्षा के हेतु यहाँ कुछ छन्द प्रस्तुत हैं ।

वण्य विषय के रूप म दानी का कवि केशवदास एव सुकवि गुलाब कृत वणन भी यहाँ तुलना के हेतु दृष्टव्य है

रामचन्द्र, हरिश्चन्द्र नल परशुराम दुख हरण,
केशवदास दधीचि, पथु बलि सुविभिषण कण ।
भोज विक्रमादित्य नप जगदेव रणधीर,
दानिन हू के दानि दिन इन्द्रजीत बरबीर ॥[4]

रामचन्द्र जी से आरम्भ करते हुए दानियों की एक परम्परा केशवदास जी ने यहाँ प्रस्तुत की है । राव गुलाबसिंह जी ने भी इसी प्रकार की परम्परा प्रस्तुत की है --

---

१ कृष्णचरित हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, मथुरा खण्ड, छन्द ४८२
२ वही छन्द ४९३
३ वही छन्द ४९५
४ कवि प्रिया केशवदास, द्वितीय संस्करण, प्रकाशक मातछाया मन्दिर प्रयाग, छन्द ६४

आदि जुग माँहि तो प्रियव्रत दधीच पथु
बलि आनि म दया विशेष छावती ।
भीषम करन धर्मादि दया धारी भये,
पिछले जमाने माँन विक्रम की पावती ।
सुकवि गुलाब या कराल कलि काल मे तो,
निरदय क्रूरता जिहान मा भावती ।
राघवेन्द्रसिंह के सपूत जादवेन्द्र सिंह,
पर दुख देखि दया तेरे उर आवती ॥[1]

केशवदास जी की तुलना मे राव गुलाबसिंह जी का दानियो का क्रम निसदेह अधिक समुचित है । उसमें आदि मध्य अधुना इस प्रकार क क्रम को कवि ने निर्दिष्ट किया है । क्रम के सयोजन म कवि की विदग्धता स्पष्ट रूप मे यहाँ अनुभूत होती है । वर्ण्य एव शैली दोनो पर केशवदास का प्रभाव दिखाई देता है ।

चिन्तामणि राव गुलाबसिंह

आचार्य केशवदास के समान ही आचार्य चिन्तामणि एव राव गुलाबसिंह के काव्य में भी भाव एव रचना साम्य दृष्टिगोचर होता है ।

चिन्तामणि के कृष्ण चरित का एक प्रसग यहा तुलनार्थ प्रस्तुत है

बाँह पकरि आनन्द मन्मत्त मनोहरश्याम ।
स्यामा जू को ल गए कुज धाम अभिराम ॥
आठ सखी व राधिका जु की छबि अनुरूप ।
कुजनि मैं हरि ल गए धरि बहुरूप अनूप ॥
श्री राधा की सखिन सग द्वै द्वै सहज जे और ।
प्रिय सखियन के खोज को करी उ ही उत दौर ॥
श्री हरि तनरे रूप धरि तेती कुजन माह ।
बाँह पकरि सब ल गए दए विविध सुख नाह ॥[2]

राव गुलाबसिंह जी ने इस प्रसग को निम्नानुसार प्रस्तुत किया है—

राधा को भरि बाथ मझारा । कीनी हर्षित जन रखवारा ।
लखि हरिको हित सत हर्षाई । जिमि अति रक महानिधि पाई ।
हरि हर्ष लखि तिन का प्यारा । जिमि केकी अति नदित मझारा ।
करमैं कर राधा को धारी । सग लेय सब गोप कुमारी ।

---

१ काव्य नियम हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मलन प्रयाग छ द ३८

२ चिन्तामणि ग्र थावली–सम्पादक–डा० कृष्ण दिवाकर (अप्रकाशित) श्रीकृष्ण चरित (आदश सर्ग छन्द ४२–४५)

आदि जुग मांहि तो प्रियव्रत दधीच पथु
बलि आदि मैं दया विशेष छावती ।
भीषम भरत धर्मादि दया धारी भय,
पिछले जमान माँझ विश्रम की पावती ।
सुकवि गुलाब या कराल कलि काल मैं सो
निरदय कूरता जिहान मन भावती ।
राघवेन्द्रसिंह के सपूत जादवेन्द्र सिंह
पर दुख देखि दया तेरे उर आवती ॥[1]

केशवदास जी की तुलना म राव गुलाबसिंह जी का दानिया का क्रम निसदेह अधिक समुचित है। उसमे आदि मध्य अधुना इस प्रकार के क्रम को कवि ने निर्दिष्ट किया है। क्रम के सयोजन म कवि की विदग्धता स्पष्ट रूप से यहाँ निभत होती है। वर्ण्य एव शैली दोनो पर केशवदास का प्रभाव दिखाई देता है।

चिन्तामणि राव गुलाबसिंह

आचाय केशवदास के समान ही आचाय चिन्तामणि एव राव गुलाबसिंह के काव्य में भी भाव एव रचना साम्य दष्टिगोचर होता है।

चिन्तामणि के कृष्ण चरित का एक प्रसग यहाँ तुलनाथ प्रस्तुत है

बाँह पकरि आनद मन्मत्त मनोहरश्याम।
स्यामा जू को ल गए कुज धाम अभिराम ॥
आठ सखी व राधिका जु की छबि अनुरूप।
कुजनि मैं हरि ले गए धरि बहुरूप अनूप ॥
श्री राधा की सखिन सग द्व द्व सहज जे और।
प्रिय सखियन के खोज को करी उ हो उत दौर ॥
श्री हरि तेनरे रूप धरि तेती कुजन माह।
बाँह पकरि सब ल गए दए विविध सुख नाह ॥[2]

राव गुलाबसिंह जी ने इस प्रसग का निम्नानुसार प्रस्तुत किया है—

राधा को भरि बाव मझारा। कीनी हर्षित जन रखवारा।
लखि हरिको हित सब हर्षाई। जिमि अति रक महानिधि पाई।
हरि हर्ष लखि तिन का प्यारा। जिमि केकी अति वष्टि मयारा।
करमें कर राधा को धारी। सग लेय सब गोप कुमारी।

---

१ काव्य नियम हस्तलिखित हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग छ द ३८

२ चिन्तामणि ग्र थावली–सम्पादक–डा० कृष्ण दिवाकर (अप्रकाशित) श्रीकृष्ण चरित (आदश सग छ द ४२–४५)

जात भए एकान्त स्थाना । तहँ क्रीडा कीनी विधि नाना ।
रस बस ह्वै तिहि समय तमामा । करत भए मन वाछित कामा ।[1]

कृष्ण चरित मूल स्रोत म एक ही होने म वर्ण्य विषय की समानता यहाँ परिलक्षित होती है । भावाभिव्यक्ति अलंकार छन्द चयन आदि म दोनो म जो भिन्नता है वह स्वत स्पष्ट है ।

मतिराम राव गुलाबसिंह--मतिराम एवं राव गुलाबसिंह जी दोनो बूँदी म रहे हैं, दोनो ने अपनी रचनाओ में बूँदी का वर्णन किया है । उनके वर्णन म विषय की समानता सहज एवं स्वाभाविक है । तुलनार्थ दोनो के बूँदी वर्णन के छन्द यहाँ प्रस्तुत किए जा रहे हैं ।

जगत विदित बूँदी नगर, सुख सपति को धाम ।
कलिजुग हू म सत्य जुग जहाँ करत विश्राम ।[2]

राव गुलाबसिंह जी ने बूँदी का अनेक ग्रंथों म वर्णन किया है । एक छन्द यहाँ प्रस्तुत है ।

बूँदी है अमरावती सुरपति राम उदार ।
कवि कोविद गुरु शुक्र सम सुर सम सब सरदार ।[3]

यहाँ वर्ण्य विषय म एव छद म मतिराम का प्रभाव स्पष्ट है । अभिव्यक्ति मे राव गुलाबसिंह जी की स्वतत्र प्रतिभा के दर्शन होते हैं । मतिराम ने बूँदी का वर्णन करते हुए उसे सुख सपत्ति का धाम, कलियुग म जहाँ सत्ययुग विश्राम करता कहा है । राव गुलाबसिंह ने उसे अमरावती कह कर पूरा रूपक खडा कर दिया है।

देव राव गुलाब सिंह—देव एवं राव गुलाबसिंह के काव्य म साम्य निदे-शक छन्द तुलनार्थ यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है ।

फूलि उठे व दावन भूलि उठे खग मग सूलि उठे उर विरहागि बगराई है।
गुजर करत अलि पुज कुज कुज, धुनि मजु पिक पुज, नूत मजुरी सुहाई है।
बाल वन माल फूल माल विकसत, बिहसत मुनी ब्रजहू म बसत ऋतु आई है।
नन्द के नन्दन ब्रजचद का वदन देखे सदन सदन देव मदन दुहाई है ।

---

१ कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, वृन्दावन खण्ड छन्द ४७९ ।

२ मतिराम ग्रथावली–सम्पादक–प० कृष्ण बिहारी मिश्र चतुर्थ स० ललित ललाम छद ६

३ बृहद व्यंग्यार्थ चद्रिका–राव गुलाबसिंह, प्रथम सस्करण छन्द ५ ।

४ देव ग्रथावली भाग १, पुष्पारानी जायसवाल, प्रथम सस्करण सुख सागर तरग छन्द ११७

देव रचित यह वसन्त ऋतु का वर्णन है । वसन्त के आगमन पर प्रकृति खग मृग सुग हैं, भ्रमरों का गुन्जन है किंतु विरहाग्नि को फैलाने का काम भी ऋतु वसन्त के द्वारा ही होता है । ब्रज के घरघर में उसकी दुहाई है ।

राव गुलाब सिंह का वसन्त वर्णन दृष्टव्य है--

अति शीतल मन्द सुगन्ध समीर हर विरही जन दागन कों ।
सरसन्त वसन्त गुलाब गुलाब अनन्त करै अनुरागन कों ।
सुख होत महा सबके उनमे लखि नीरजवन्त तडागन को ।
मलि री दुग एक दुसार अरे पतझार कर वन बागन कों ।[1]

वसन्त के वर्णन म गुलाबसिंह जी ने विरही जना के दाह को हरण करने वाले के रूप म उसे प्रतिपादित किया है । वनबागो मे अभी तक पतझर अडा हुआ है यही दुख की बात है । पतझर एव वसन्त की सीमा रखा का यह प्रकृति चित्र राव गुलाबसिंह जी की मार्मिकता को ही अभिव्यक्त करता है । प्रकृति मे वसन्त का खिलना विरही जनों के लिए विरह समाप्ति का विश्वास दिलाता है । यद्यपि पतझर के मौसम के दुख अब भी मन म घर किए हुए है । आली पर मतिराम का प्रभाव यहाँ लक्षित होता है ।

बिहारी राव गुलाबसिंह--बिहारी के दोहो मे नायिकाओं के ऐसे कतिपय उदाहरण प्रस्तुत हैं जिनसे राव गुलाबसिंह जी के कुछ छन्दो की समानता देखी जा सकती है ।

मग न ती रग की फरक उर उछाह तन फूल ।
बिन ही प्रिय आगम उमगि पल्टन लगी दुकूल ।[2]

आगमिष्यत पतिका नायिका प्रियतम के आगमन का शुभ शकुन अनुमान कर अपने वसन भूषण ठीक करना आरम्भ करती है ।

राव गुलाबसिंह जी की आगमिष्यत भी इसी प्रकार से अपने मनोभाव को व्यक्त करती हैं---

सास जनी ननदी गन मांझ हुती थित बाल विन सरसाई ।
सील सनी सखियाँ जन सों बतरावत ही बिमनी निरनाई ।
ता बिरियाँ बिन कारन ही मन मांहि गुलाब महा हरषाई ।
दौरि हरै मुसकाय निजालय जाय सहेलिहि बाँह बताई ।[3]

नायिका विनम्र है फिर भी विमनस्क है अचानक अतीव हरषित हुई बाँह

---

१ काव्य नियम--हस्तलिखित, हिन्दी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, छन्द १६९
२ बिहारी रत्नाकर--सम्पादन, जगन्नाथदास रत्नाकर चतुर्थ स०, छन्द २२२
३ बृहद् व्यग्यार्थ चन्द्रिका--हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मलन, प्रयाग, छन्द ४४२

की फरक प्रियागम का मकेत करती है और वही उसके आनन्द का कारण है ।

इन दोनों छन्दों में इतनी समानता स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है कि राव गुलाबसिंह जी को बिहारी के काव्य से प्रभावित स्वीकार करना उचित होगा।

भिखारीदास राव गुलाबसिंह—रीतिकालीन आचार्यों की परम्परा में भिखारीदास अपनी महत्ता रखते हैं । राव गुलाबसिंह जी भी आचार्यत्व की परंपरा को निवाहते रहे हैं। इन दोनों के समभाव को व्यक्त करने वाले छंद तुलनार्थ प्रस्तुत हैं—

भिखारीदास की गुणगर्विता नायिका नायक के द्वारा उसके रूप की प्रशंसा में एकत्रित किए हुए उपमानों को तुच्छ दर्शाती है—

चंदमा आनन मरो विचारो तो चदहि देखि सिरा औ हियो जू।
बिंब सो जो अधरान बखानो तो बिंबहि का रस पीओ जिओ जू।
श्रीफल ही क्यों न अंक भरो जो पै श्रीफल मेरे उरोज कियो जू।
दीपनि मंग दिये सी है दाम तो जाऊ हौं बैठो निहारो दिया जू।[1]

इसकी तुलना में राव गुलाबसिंह जी की रूप गर्विता का चित्र दर्शनीय है ।

देखि देखि सजनी सयानी सब वचन के,
रंग सम अंगन मैं भूषन बनावेंगी।
नायनि हू लाय लाय मलि मलि भूलि जाय,
जावक लगायो ना लगायो पार पावैंगी।
सुकवि गुलाब त्यौं प्रदीप के बनाय बिन,
बैठी जिहि भौन जनी दीपक जगावेगी।
कुंदन कमालन को मालन में हीरे जाल
लाले न लगा बिन लाल पहिरा वैंगी।[2]

दास की सी व्यंग्य एवं तुच्छता का भाव यहाँ नहीं है । रूप गर्विता नायिका के रूप का भान उसकी सखी प्रिय आदि को होता है । कवि ने रूप गर्विता का बड़ा सुन्दर रूप यहाँ प्रस्तुत किया है । वर्ण्य विषय एवं भावाभिव्यक्ति कर्ता की स्थापना यहाँ लक्षणीय है ।

सुखदेव मिश्र राव गुलाबसिंह—सुखदेव मिश्र एवं राव गुलाबसिंह जी के काव्य में भी समानता पाई गई है । स्वयं दूतिका नायिका का चित्र यहाँ उदाहरण के रूप में प्रस्तुत है—

---

१ भिखारीदास ग्रंथावली—प्रथम खण्ड सपा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, शृंगारनिर्णय छंद १५६

२ बृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका—राव गुलाबसिंह प्रथम संस्करण, छंद २७०

नद निनारी, सागु माग के गिधारी
अहै रन अधियारो भरा गुझान न करु है।
पीतम का गौन कविराज न सुहात मौन,
दारुन वहत पीर, लाग्यो मधु नरु है।
संग न सहली, वस नवल अकेली
नन परी तलकली महा लाग्या मन सरु है।
भई आधीरात मरो जियरा डरात
जागु रे जागु वटोही यहा चार न को डरु है।[1]

राहर सोन वाले बटोही का अपनी एकाकी दशा स्पष्ट करते हुए आगे का डर बताकर मात्र संकेत मे अन्दर आने के लिए यह नायिका निदेश करती है।

राव गुलाबसिंह जी ने स्वयंदूतिका नायिका का चित्र इसी प्रकार प्रस्तुत किया है। यथा--

अब राम घरी दिन आय रह्यो पथ जान गुलाब सु ठीक नहीं।
नजदीक न ग्राम उजारि महा मग लूटन लाग जगे दिन हा।
इहि ठा बहुधाम धर सब काम तमाम मिलै वर वस्तु सही।
तुम जाहु न आहु करो जु रुच गुन्या धरि मैं हित बात कही।[2]

राव गुलाबसिंह जी की स्वयंदूतिका नायिका स या समय आगे बढ़ने वाले बटोही को रास्ता ठीक नहीं रास्ते मे लोग लूटते है यहा अनेक घर हैं सभी वस्तुए प्राप्त है आदि बातें बताकर, एक ओर डर दिखाकर तो दूसरी ओर प्रलोभन दिखा कर रोकना चाहती है। अपनी चाह को वह स्पष्ट नहा करती किंतु संकेत से जताती है कि यहा रहना लाभकारी है। वर्ण्य विषय की एकता के होते हुए भी अभिव्यंजना की मौलिकता यहाँ दिखाई देती है।

रसखान राव गुलाबसिंह--रसखान के काव्य मे भी कुछ छन्द ऐसे उपलब्ध होते हैं जिनकी समकक्षता राव गुलाबसिंह के कुछ छन्द करते है। रसखान ने आगत पतिका नायिका का चित्र बडे सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है---

रसखानि सुन्यो है वियोग के ताप मलीन महा दुति देह तिया की।
पकज सो मुख गो मुरझाइ लगीं लपटैं बिस स्वास हिया की।
एस मैं आवत कान्ह सुने हुलसे सरके तरकी अंगिया की।
यो जग जोति उठी तन की उसकाइ दई मनो बाती दिया की।[3]

---

१ रीतिकालीन साहित्य का ऐतिहासिक पृष्ठभूमि--डा० शिवलाल जोशी, प्रथम संस्करण पृ० २६१-२६२ से उद्धृत

२ बृहद् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका राव गुलाबसिंह, प्रथम संस्करण छन्द २१६

३ रसखान और घनानद सपादक--बाबू अमीर सिंह प्रथम संस्करण, छन्द १०१

विरह में जली क्षीण बनी मुरझी प्रिया का प्रिय आगमन सुनते ही जो परिवर्तन है बड़ा ही मार्मिक है। उसका अंग प्रत्यंग उल्लसित है। उसकी शरीर कांति प्रज्वलित है।

राव गुलाबसिंह का भी एक छंद दृष्टव्य है—

मोर हीत और भाँति घोर घन ओर ओर,
दौरें वर दामिनि निशान मैं न भावरी।
चौर चित चातक चिचाय गात पीतम को,
मागैं मन मुवा सुवा सुनावरी।
सुकवि गुलाब जोरैं हित बकमाल छाय,
आय आय वीर वधू धीरज धरावैरी॥
फरि फेरि फरकि हमारे वाम नन भुज,
आज मनभावन को आवन जनावैरी।[1]

विरह में विरहिणी की पीड़ा को बढ़ाने वाले बादल, चातक, मोर आज और ही ढंग से प्रतीत होते हैं बकमाल भी फरकर धीरज बढ़ाती है। वामांग का फड़कना प्रिय आगम बतलाना है। यह चित्र भी बड़ा सुंदर एवं मर्मस्पर्शी है। शैलीगत प्रभाव यहाँ स्पष्ट होता है।

घनानंद राव गुलाबसिंह—घनानंद रीति कालीन कवियों में भावुक, रीति मुक्त एवं स्वच्छंद कवि के रूप में जाने है। प्रेम के वर्णन में घनानंद एवं राव गुलाबसिंह जी के छंदों में भाव साम्य देखने के लिये मिलता है यथा—

दीन भए जल मीन अधीन कहा कछु मो अकुलानि समान।
नीर सनेह को लाय कलंक निरास ह्वै कायर त्यागत प्रान।
प्रीति की रीति सु क्यों समुझै जड़ मीन के पानि परे को प्रमानै।
या मन की जु दसा घन आनंद जीव की जीवनि जान ही जानै।[2]

प्रेमी जीव की असहायता दीनता की बड़ी ही सुंदर अभिव्यंजना घनानंद जी ने यहाँ व्यक्त की है।

राव गुलाबसिंह का एक छंद दृष्टव्य है—

मीन पतंग करै तन त्याग तऊ जल दीप न जानत जोऊ।
चातक और चकोर की ओर चितौन न मेघ निसाकर दोऊ।
दानव देव कहाँ नर नाग गुलाब चराचर है जग सोऊ।
जानत है करिबो सब नेह निवाहिबो नेह न जानत कोऊ॥[3]

---

१ बृहद् व्यंग्यार्थ चंद्रिका हस्तलिखित हिंदी सा० सम्मेलन, प्रयाग, छंद ४४६

२ घनानंद कवित्त आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र पंचम संस्करण, छंद ८

३ प्रेम पच्चीसी–हस्त०, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छंद ४

भाव साम्य के साथ, प्रतीक उपमानों की साम्यता यहाँ स्पष्ट रूप से परिलक्षित है । राव गुलाबसिंह जी ने प्रेम भाव का एक मीन ही नही तो अ य अनक उपमाना को एक ही छन्द मे प्रस्तुत कर अपनी कुशलता को प्रमाणित किया है। इस स राव गुलाबसिंह जी की अभि यक्ति अधिक सु दर बनी है।

बेनी प्रवीन राव गुलाबसिंह–बनी प्रवीन रीतिकाल के रसवादी कवि हैं। उनक छन्दो की समानता करन वाले कुछ छन्द यहा प्रस्तुत है–

घहराती कछुक घटा घनकी थहराती पुहुपनि वलि पुही।
झहराती समीर नकीर महा महराती समूह सुग घ उही।
तह राती गोवि द गोपसुता सिर आन्नियां फहराती सुही।
ठहराती मरु करि ननन में परि अँगन म छहराती फुही।[1]

वर्षा ऋतु की पाश्वभूमि पर नायक नायिका का एक ही आढना क नीचे चलना अतीव सु दरता से वर्णित है। यह सयोग चित्र है। इसी वषा की पाश्वभूमि पर सयोग वियोग का चित्र राव गुलाबसिंह जी न प्रस्तुत किया है –

पीत पट ओढि प्यारी प्यारो पट नील ओढि
चटपट आये आय उठि रस उपमान मैं।
रग की अटारी मांझ कौन जाने कौन भाँति,
पटपट होय गई उर ल्पटान मैं ।
सुकवि गुलाब अटपट बन बोलत है,
लटपट है रहे हित अहरान मैं ।
नीर अपटा मैं छिन छबि की छटा मैं,
आज बठे हैं अटा मैं रूसि घन की घटा न मैं ॥[2]

इस छ द म सयोग एव मान वियोग का चित्र कवि न प्रस्तुत किया है। पाश्वभूमि एव रचना कौशल की समानता यहा दिखाई दती है।

पद्माकर राव गुलाबसिंह–पद्माकर रीति कालीन कवि शृखला की अतिम कडी माने जाते है। पद्माकर की मत्यु एव राव गुलाबसिंह जी का ज म इनम लग भग तीन वर्षों का अतराल है। पद्माकर की कविता की गूँज राव गुलाबसिंह जी ने जेष्ठो से सुनी होगी कविता भी देखी होगी अत उनकी कविता पर पद्माकर की कविता का प्रभाव पडना असम्भाविक नही कहा जा सकता।

भाव एव रचना कौशल की समानता दर्शाने वाले अनक छन्द इन दोनो क काव्य म देखे जा सकते हैं। तुलनार्थ कुछ छन्द यहाँ प्रस्तुत किए जा रहे है–

---

१ हिन्दी रीति साहित्य–डा० भगीरथ मिश्र, द्वितीय सस्करण पष्ठ १७९ छन्द ११।
२ पावस पच्चीसी–हस्तलिखित, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, छ द १।

चपला चमा कैं चहूँ ओरन तें चाहभरी।
　　चरजि गई ती फेरि चरजन लागी री।
कहैं पद्माकर लवगन की लोनी लता
　　लरजि गई ती फेरि लरजन लागी री।
कैसे धरों धीर वीर त्रिविध समीर तन,
　　तरजि गइ ती फेरि तरजन लागीरी।
घुमडि घुमडि घटा घन की घनरी आव
　　गरजि गइ ती फेरि गरजन लागीरी।[1]

वर्षा के परिवेश म विरहणी नायिका का यह अतीव भाव पूर्ण चित्र छ द योजना प्रभावादि का सु दर उदाहरण है। राव गुलाबसिंह का भी इस प्रकार का एक छ द प्रस्तुत है–

आवैना मुरारि तौ लौ वरजि सखिन कौरी
　　वह सतवारी मैं किवार आनि गोलना।
चपला चला क चित चौवैना चहुँधा दौरी,
　　धारि घन वरी ये लगाय लाय डोलना।
गुवकि गुलाब टारि माल बक जालन की,
　　मुरवा विडारि पुकारि उर छोलना।
मारि मारि दादुर निकारी दूरी देसन त,
　　चौच न उपारि ज्यों पपीहा पीव बोलना॥[2]

दोनों छ दों का भाव साम्य एव रचना सौ दय बडा ही मनोहर है। रचना सौष्ठव म राव गुलाबसिंह जी पद्माकर की समता करने की क्षमता रखते प्रतीत होते हैं।

रसिक सु दर राव गुलाबसिंह–रसिक सु दर रीतिकाल के अल्प ज्ञात कवि हैं। डॉ० म० वि० गोविलकर न अपन शोध प्रब ध में सवत् १८६३ वि० में इनका ज म प्रमाणित करत हुए सवत १९२५ तक उनके जीवित होन को स्वीकृत किया है। राव गुलाबसिंह जी का ज म स० १८८७ एव मत्यु सवत् १८५८ वि० है। अत

---

१ पद्माकर ग्रन्थावली–सम्पादक विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, प्रथम सस्करण, जगद्विनोद छ द ३८६।

२ काव्य नियम हस्तलिखित, छ द १७८, पावस पच्चीस हस्तलिखित छ द १२।

३ रसिक सु दर और उनका हि दी काव्य–डा० म० वि० गोवि दकर, प्रथम सस्करण पृष्ठ ५२ एवं पृष्ठ ८५।

ये दोनो कवि समकालीन ही ठहरते हैं। रसिक सु दर राव गुलाबसिंह के ज म काल मे लगभग २२।२३ वर्ष के रहे होंगे। जयपुर दरबार से सम्बद्ध होने के कारण सभव है राव गुलाबसिंह जी भी कभी उनके सम्पर्क म आये हो। तुलनार्थ इनके समान भाव को दर्शाने वाले एक छ द को उदाहरण रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है–

बोली श्री राधे मृप सानी। अति आन द हरख सा वानी।
हे सखि कही बात तुम सोही। प्रथम ही चित्र दिखावो मोही।
चित्र देखि देयू मैं उनकू । या मैं कछु स देह न मनकू ।
अति नवीन जोवन छवि छाई। मूरत मोहन रूप बनाई।
अदभुत रूप अनुपम सोहै। देखत सुर नर को मन मोहै।
तन घनश्याम पीत पट राजै। ज्यो घन दामिन दुति ठाजै।
मोर मुकुट बजती माला। अग अग भूषन छबि जाला।[1]

कृष्ण के सम्ब ध म ललिता द्वारा रूप वणन चित्र दर्शन और राधा का इसी प्रकार से आसक्त होना राव गुलाबसिंह जी के कृष्ण चरित म भी वर्णित है–

एक समय ललिता रु विशाखा। मुख्य सखिन राधा स भाखा।
जाके गुण त सुण सुणाव। सो हरि नित्य तोर पुर आव।
गाय चरावत वालन लारा। तिहि मू लखि है अति मन हारा।
बोली मुहि तिहि चित्र दिखाऊ। पुनि लखि हो कृष्ण हि मन भाऊ।
तब अलिन लखि चित्र दिखायो। अति मनहर प्यारी मन भायो।
चित्रहि लखन लिय कर प्यारी। सोई मोहित है सुकुमारी।
स्वप्न माहि देखे वनमाली। जमुना तट नतन दुख टाली।
खुलत नयन भई विकल विहाला। सुमरत मोहन रूप रसाला।[2]

भाव एव रचना कौशल की समानता यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। शब्द चयन एव का य कौशल म राव गुलाबसिंह जी की रचना अधिक सु दर प्रतीत होती है।

उत्कृष्टता एव मौलिकता–राव गुलाबसिंह जी की कविता की तुलना सूर से लेकर रसिक सु दर तक अनेक बहुचर्चित एव अल्प प्रचलित कवियो की कविता से करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि राव गुलाबसिंह जी ने किसी भी कवि की कल्पना, भाव या रचना शिल्प का पूण रूप स बिम्ब प्रति बिम्ब भाव से, मात्र

---

१ रसिक सु दर और उनका हि दी का य–डा० म० वि० गोविलकर, प्रथम सस्करण, पृष्ठ २११।

२ कृष्ण चरित, हस्तलिखित, हि दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, वृ दावन खण्ड, छन्द २२८।

अनुसरण नहीं किया है। पूर्ववर्ती कवियों से कतिपय स्थानों पर वे अवश्य इससे प्रभावित रहे हैं। किन्तु इस प्रभाव को अपने साँचे में ढालकर उन्होंने अपने काव्य में भाव कल्पना, एवं शैली को इस प्रकार संस्कारित किया है कि वह पूर्णतः नया एवं मौलिक हो गया है।

राव गुलाबसिंह के काव्य की मौलिकता, उत्कृष्टता एवं श्रेष्ठता की दृष्टि से समकालीन तथा परवर्ती विद्वानों ने सदा सम्मानित किया है। समकालिकों में अलवर नरेश शिवदान सिंह, करौली नरेश जयपाल सिंह, बूँदी नरेश, राजा रामसिंह एवं रघुबीर सिंह, पं० रामकृष्ण वर्मा[1], मुंशी देवीप्रसाद[2], रामनाथसिंह, चन्द्रकलाबाई, विहारीसिंह[3] आदि की प्रशस्ति विख्यात है। इसके अतिरिक्त कवि के काव्य की महत्ता का और प्रमाण भी प्राप्त है। समकालीन विद्वान लेखक पं० जगन्नाथ प्रसाद भानु ने अपने 'काव्य प्रभाकर' नामक[4] काव्यशास्त्र विषयक ग्रंथ में नायिका भेद एवं अलंकार के विवेचन के प्रसंग में कवि के लगभग ३५ छंदों को अन्य पूर्ववर्ती रीतिकालीन ख्याति प्राप्त कवियों के छंदों के समकक्ष उदाहरण रूप में प्रयुक्त किया है।

पं० रामदहिन मिश्र[5] ने भी अपने 'काव्य दर्पण' नामक प्रसिद्ध ग्रंथ में हिंदी के श्रेष्ठ कवियों के साथ राव गुलाबसिंह जी की कविता के कतिपय छंद उदाहरण के रूप में ग्रहण किए हैं। इससे सिद्ध होता है कि राव गुलाबसिंह जी की कविता शास्त्रीयता, उत्कृष्टता एवं मौलिकता की दृष्टि से पंडितों एवं आचार्यों की कसौटी पर भी उतर चुकी है।

परवर्ती विद्वानों में मिश्र बंधु[6], डा० मोतीलाल मनारिया, डॉ० ओम

---

१ ललित कौमुदी—प्रकाशक—रामकृष्ण वर्मा, प्रथम संस्करण, राव गुलाबसिंह जी का जीवन चरित।

२ कवि रत्नमाला भाग १, मुंशी देवी प्रसाद प्रथम संस्करण राव गुलाबसिंह जी का जीवन चरित।

३ कविरत्न माला भाग १, मुंशी देवीप्रसाद, प्रथम संस्करण, राव गुलाबसिंह जीवन चरित।

४ काव्य प्रभाकर—जगन्नाथ प्रसाद भानु द्वितीय संस्करण।

५ काव्य दर्पण—रामदहिन मिश्र, चतुर्थ संस्करण

६ मिश्र बन्धु विनोद—भाग ३ मिश्रबंधु, सं० १९८५ वि०।

७ (१) राजस्थानी भाषा और साहित्य—डा० मोतीलाल मनारिया, तृतीय संस्करण।

(२) राजस्थानी का पिंगल साहित्य—डा० मोतीलाल मनारिया, प्रथम संस्करण।

काश[1] डा० व्रजराज शर्मा[2] आदि ने कवि के काव्य को उच्च कोटि का स्वीकार करते हुए उसको सूरदास, सेनापति, आचार्य केशवदास आदि हिन्दी के गणमान्य कवियों के समकक्ष माना है। इससे स्पष्ट सिद्ध हो जाता है कि राव गुलाबसिंह एक व्युत्पन्न मति, प्रतिभासम्पन्न एवं प्रभावशाली आचार्य कवि थे।

१ हिन्दी अलंकार साहित्य–डॉ० ओमप्रकाश–गुलाबसिंह शीर्षक का अध्याय।
२ सूर्यमल्ल मिश्रण शताब्दी समारोह–स्मारिका, नवम्बर १९६९।

उपसहार

राव गुलाबसिंह क समस्त साहित्य के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि व एक उच्च कोटि क कवि आचाय एव भक्त थे। रीतिकाल एव आधुनिक काल की संधिरेखा के परिवेश म निबद्ध होने तथा राजस्थान क बूदी जस कला प्रिय राज्य के आश्रय म रहने के फलस्वरूप रीतिकालीन का य की विभिन्न प्रवृत्तिया के सहज एव स्वाभाविक दशन उनके काव्य म प्राप्त होत ह। उनकी कविता की प्रधान प्रवत्ति शृगार की रहा है। उनक का य म शृगार के उभय पक्षा सयोग एव वियोग म से वियाग शृगार का विवेचन अधिक विस्तत परिणाम म किया गया है। रीति चिंतन परम्परा म उनकी प्रवत्ति यद्यपि नायिका भेद एव अलकारा की ओर अधिक रहा है फिर भी सवाग निरूपक आचाय क रूप म उ होन स्थायी भाव, विभाव, अनुभव, हाव, यभिचारी भाव, रस, रीति ध्वनि, गुण दोष, दोषोद्धार, काव्य लक्षण काव्य प्रयोजन, काव्य कारण काव्य प्रकार शब्दशक्ति छद आदि का विवेचन अपने लक्षण कौमुदी तथा काव्य सि धु ग्र था म किया है। काव्य नियम ग्र थ म काव्य वण्य विषयो का क्रमबद्ध प्रतिपादन किया गया है। कवि ने नायिका भद एव अलकारा का एकत्र विवेचन अपने व्यग्याथ चद्रिका बहद् व्यग्याथ चद्रिका चद्रिका, वनिता भूषण, वहद् वनिता भूषण आदि ग्र था म अत्यत कुशलता स किया है।

रीति सिद्ध कविया के समान इनके का य म रस, ध्वनि, अलकार, रीति, वक्रोक्ति आदि क अत्यत सुदर तथा पाठका के अ तरतम का स्पश कर उह आन द स आपूरित करन वाल अनक उदाहरण प्राप्त होत ह। भाषा, अलकार एव छन्दो के प्रयोग म भी राव गुलाबसिंह एक सरल और अधिकारी कवि रह है। उनक सकेत पर श द थिरकत, नत्य करत प्रतीत होत हैं। सुबोध सरल एव सहज शब्द योजना कवि की विशेषता रही है। इनक का य म सगीत की लयकारी क दशन भी प्राप्त होत हैं।

रीतिकालीन नीति परक का य प्रवत्ति भी राव गुलाबसिंह के साहित्य म प्राप्त होता है। नीतिचद्र नीति म जरी आदि ग्र थ इसका समुचित प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। नीतिच द्र राजकीय प्रशासन क साथ सामा य नागरिक जना का भी माग दशक ग्र थ है। नीति मञ्जरी म जीवन विषयक नीति की विवेचना ... है,

जिसम घन विद्या एव सज्जन प्रसगा, सुपुत्र कुपुत्र लक्षण आदि विषयो पर नीति सूत्रा को प्रस्तुत किया गया है। कवि के काव्य ग्र था म अष्टक एव पच्चीसी पद्धति के ग्र थ प्राप्त होते है जो रीति कालीन प्रवृत्ति के ही द्योतक हैं।

राव गुलाबसिंह प्रब ध का य लेखन म भी सिद्ध हस्त कवि रहे हैं। रीति काल म कृष्णचरित विषयक प्रब ध काव्य लेखन की जो परम्परा रही है उसकी अ तिम कड़ी के रूप म राव गुलाबसिंह की गणना की जा सकती है।

युगीन प्रवृत्ति के अनुरूप राव गुलाबसिंह ने टीका ग्रथा का भी निमाण किया है और एक टीकाकार के रूप म अपनी क्षमता को सिद्ध किया है। भूषण चद्रिका एव ललित कौमुदी ग्रथो म टीका के लिए ब्रजभाषा गद्य का सफल प्रयोग कवि न किया है। टीका लखन म कवि की व्याख्यात्मक भाषा शली, विद्वता तथा आत्म विश्वास आदि गुण स्पष्ट रूप स अभि यक्त हुए है।

राव गुलाबसिंह बू दी दरबार के कवल आश्रित कवि ही नहीं अपितु एक अधिकारी एव मत्रणाकार मत्री भी थ। उनके काव्य का उद्देश्य आश्रय दाता राजाओ एव दरबारियो की विलासिता का उद्दीपन मात्र नही था तो का य शास्त्र क अध्यताओ का सुयोग्य मागदशन भी था। बचपन स व सासारिकता के प्रति विरक्त थ। प्रशसा एव पुरस्कार की उनकी कामना न थी फिर भी व सम्मानित एव पुरस्कारित हुये हैं। अपनी सम्पत्ति दान म वितरित करन की उदारता उनम थी। साहित्य सस्थायें कवि एव साहित्यकार उनकी सम्पत्ति के वितरण के केद्र थे।

राव गुलाबसिंह सौ दय माधुय एव अलकरण के कवि हैं। शृगाराश्रित मानवीय व्यापारो का सु दर आकषक एव मनोहारी रूप इनके साहित्य म प्राप्त होता है। नायिका भद एव अलकारा के प्रसग म अपन चारो ओर व्याप्त सौ दय की अभि यजना अतीव सु दर ढग स तथा समथ शब्दो म कवि न की है। नेत्रा द्वारा सौंदय की जितनी लालित्यपूण भगिमाएँ दखी जा सकती है उनका चित्रण राव गुलाबसिंह जी के का य म उपल ध होता है। कला पक्ष की साज सज्जा म उ होन भाव पक्ष को कहीं दबने नही दिया है। कलाभि यक्ति म भावो की सु दर अभि यजना से सोन मे सुग ध आ गई है।

राव गुलाबसिंह की रचनायें माधुय से तो सम्पन्न हैं ही शली की दृष्टि स भी सु दर हैं। कृष्ण चरित नायिका भेद तथा अलकारो की विवेचना से इस की पुष्टि होती है। राधा कृष्ण का आलम्बन रसिको के साथ सहृदय भक्तो के आकषण का भी के द्र है। इस माधुय भाव के आस्वादन स मनुष्य की सभी इद्रिया रससिक्त बनती हैं। कवि के अष्टक ग्र थो म भी माधुय भाव की सु दर अभि यक्ति हुई है।

इस विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि का व्यक्तित्व द्विविध रूप का है। एक ओर व भाव सकुल भक्त हृदय के जीव हैं जो भक्ति का रचनाओं द्वारा

एक
आना

सूर, तुलसी जसे भक्त कवियों की समकक्षता रखते हैं। दूसरी ओर वे केशवदास, चिंतामणि, मतिराम, देव, भिखारीदास आदि रीति कालीन आचार्यों एवं कवियों की परम्परा में समाविष्ट होने की क्षमता रखते हैं। राव गुलाबसिंह की प्रतिभा उत्तम साधना एवं सिद्धि के समन्वित रूप में स्थापित हो जाती है।

सामान्यतः रीतिकालीन कविता के विषय में यह धारणा दृष्टिगत होती है कि दरबारी एवं अभिजात्य वातावरण का घणित एवं तिरस्कारित रूप ही उसमें विवेचित हुआ है। रीति साहित्य के पुनर्मूल्यांकन के प्रयासों द्वारा यह धारणा अब निर्मूल हो चुकी है। रीति साहित्य का समुन्नत कलापक्ष एवं सम्पन्न भाव पक्ष प्रकाश में आता गया है। रीति साहित्य में विशुद्ध भक्ति के कुछ चिह्न भी दृष्टिगोचर हुए हैं।

इस प्रकार विवेचन से स्पष्ट होता है कि राव गुलाबसिंह बहुमुखी प्रतिभा के आचार्य कवि थे जिन्होंने काव्यशास्त्र एवं भक्ति के अतिरिक्त नीति, टीका, अनुवाद एवं कोश जैसे महत्त्वपूर्ण विषयों में सफलतापूर्वक रचनायें की हैं। आशा है कि हिन्दी साहित्य के इस महत्त्वपूर्ण परन्तु अल्पज्ञात साहित्यकार के व्यक्तित्व एवं साहित्य के विविध पहलुओं का यह अध्ययन हिन्दी साहित्य के इतिहास में एक विस्मृत कड़ी जोड़कर नई दिशा प्रदान कर सकेगा।

परिशिष्ट

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

हिन्दी

१ अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय, भाग १—डा० दीन दयालु गुप्त

२ अष्टछाप और वल्लभ सम्प्रदाय भाग २—डा० दीन दयालु गुप्त

३ आधुनिक भारतीय संस्कृति का इतिहास—डॉ० पी० आर० साहनी

४ आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका—डा० लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय

५ आचार्य भिखारीदास—डॉ० नारायणदास खन्ना

६ उपनिषदों की भूमिका—डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन, अनु० रमानाथ शास्त्री

७ कविप्रिया—केशवदास प्रका० मातृभाषा मंदिर प्रयाग

८ कवित्त रत्नाकर—सेनापति, सम्पादक उमाशंकर शुक्ल

९ कवि रत्नमाला, भाग १—मुंशी देवीप्रसाद मुंसिफ

१० काव्य प्रभाकर—जगन्नाथ प्रसाद 'भानु'

११ काव्य प्रदीप—रामबहोरी शुक्ल

१२ काव्य दर्पण—रामदहिन मिश्र

१३ काव्यशास्त्र—डा० भगीरथ मिश्र

१४ काव्यशास्त्र प्रधान सम्पादक—डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी

१५ केशव का आचार्यत्व—डा० विजयपाल सिंह

१६ गंग कवित्त सम्पादक—बटेकृष्ण

१७ घनानन्द कवित्त सम्पादक—डा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

१८ चिंतामणि ग्रंथावली सम्पादक—डा० कृष्ण दिवाकर (अप्रकाशित)

१९ जसवंत सिंह ग्रंथावली सम्पादक—डा० विश्वनाथप्रसाद मिश्र

२० देव ग्रंथावली संपादक-डा० पुष्पारानी जायसवाल

२१ पद्माकर ग्रंथावली संपादक—विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

२२ बिहारी रत्नाकर—जगन्नाथदास रत्नाकर

२३ बूंदी राज चरितावली—हरिचरण सिंह चौहान

२४ बूंदी राज्य का इतिहास—गलहात, परिहार

२५ बृहत हिंदी कोश, संपादक—मुकुंदीलाल श्रीवास्तव

२६ भक्ति का य में माधुय भाव का स्वरूप–डॉ० जगन्नाथ नलिन
२७ भक्ति का विकास–डा० मु शीराम शर्मा
२८ भक्ति साहित्य म मधुरोपासना–आचाय परशुराम चतुर्वेदी
२९ भारत म अगरेजी राज–सु दरलाल
३० भारत म अग्रजी राज के दो सौ वप–केशवकुमार ठाकुर
३१ भारत का राजनतिक इतिहास–राजकुमार
३२ भारतीय का यशास्त्र, सपादक–डॉ० उदयभान सिंह
३३ भिखारीदास ग्र थावली, प्रथम एव द्वितीय खण्ड–विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
३४ भोसला राजदरबार क हि दी कवि–डॉ० कृष्ण दिवाकर
३५ मतिराम ग्रथावली–प कृष्ण बिहारी मिश्र
३६ मध्यकालीन कोश साहित्य–डा० अचलान द जखमोला
३७ म यकालीन धम साधना–डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी
३८ म ययुगीन कृष्ण भक्ति धारा और चत य सप्रदाय–डॉ० मीरा श्रीवास्तव
३९ मिश्र बधु विनोद भाग ३–मिश्र ब धु
४० रसखान और घनान द, सपादक–बाबू अमीर सिंह
४१ रस सिद्धा त स्वरूप विश्लेषण–डॉ० आन दप्रकाश दीक्षित
४२ रसिक सु दर एव उनका हि दी का य–डा० म० वि० गोविलकर
४३ राजस्थान का इतिहास–डा० एम० दिवाकर
४४ राजस्थान का पिंगल साहित्य–डा० मोतीलाल मनारिया
४५ राजस्थानी भाषा और साहित्य–डा० मोतीलाल मनारिया
४६ राधावल्लभ सिद्धा त और साहित्य–डा० विजये द्र स्नातक
४७ रामचरित मानस–तुलसीदास
४८ रीतिकाल के प्रमुख प्रबध का य–डा० इ द्रपाल सिंह इ द्र
४९ रीतिकालीन अलकार साहित्य का शास्त्रीय विवेचन–डॉ० ओमप्रकाश
५० रीतिकालीन कविता और शृगार रस का विवेचन–डॉ० राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी
५१ रीतिकालीन कवियो की प्रेम यञ्जना–डा० बच्चन सिंह
५२ रीतिकालीन साहित्य की एतिहासिक पृष्ठभूमि–डॉ० शिवलाल जोशी
५३ रीतिकाव्य–डा० जगदीश गुप्त
५४ रीतिकालीन काव्य सिद्धा त–डॉ० सूयनारायण द्विवेदी
५५ रीतिकाव्य की भूमिका–डा० नगेन्द्र
५६ रीतिकाव्य क स्रोत–डॉ० रामजी मिश्र
५७ सक्षिप्त हि दी शब्द सागर–नागरी प्रचारिणी स भा, काशी

५८ साहित्य के सिद्धान्त विश्लेषण एवं समीक्षा आचार्य गिरिजादत्त त्रिपाठी
५९ सूरसागर, द्वितीय खण्ड काशी नागरी प्रचारिणी सभा
६० शास्त्रीय समीक्षा के सिद्धान्त डॉ० गोविन्द त्रिगुणायत
६१ हिन्दी अलंकार साहित्य, डॉ० ओमप्रकाश
६२ हिन्दी कुवलयानन्द, सपा० डॉ० भोलाशंकर व्यास
६३ हिन्दी काव्य में प्रकृति चित्रण डा० किरण कुमारी गुप्ता
६४ हिन्दी नीति काव्य, डा० भोलानाथ तिवारी
६५ हिन्दी रीति काव्यों का काव्य निरूप डा० महेन्द्र कुमार
६६ हिन्दी रीति परम्परा के प्रमुख आचार्य डा० सत्यदेव चौधरी
६७ हिन्दी रीति साहित्य, डा० भगीरथ मिश्र
६८ हिन्दी में समस्या पूर्ति काव्य डा० दयाशंकर शुक्ल
६९ हिन्दी साहित्य का अतीत खण्ड २ डा० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र
७० हिन्दी साहित्य का इतिहास आचार्य रामचन्द्र शुक्ल
७१ हिन्दी साहित्य का इतिहास डॉ० रामकुमार वर्मा
७२ हिन्दी साहित्य का इतिहास सम्पा० डा० नगेन्द्र
७३ हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास षष्ठभाग सम्पा० डॉ० नगेन्द्र
७४ हिन्दी साहित्य उसका उद्भव और विकास डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी
७५ हिन्दी साहित्य का बृहत् इतिहास सप्तम भाग सम्पा० डा० भगीरथ मिश्र
७६ हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास रामबहोरी शुक्ल
७७ हिन्दी साहित्य कोश—भाग १ सम्पा० धीरेन्द्र वर्मा
७८ हिन्दी साहित्य कोश—भाग २, सम्पा० धीरेन्द्र वर्मा
७९ हिन्दी साहित्य में राधा, डा० द्वारिका प्रसाद मीतल

संस्कृत

१ अलंकार सर्वस्व—रुय्यक सपा० रेवाप्रसाद द्विवेदी, चौखम्भा प्रथम संस्करण
२ अमर कोश—अमर सिंह सपा० वा० ल० पणशीकर, निर्णय सागर, स० १९५१ ई०
३ उज्ज्वल नीलमणि—रूप गोस्वामी—निर्णयसागर स० १९३२ ई०
४ काव्यानुशासन—हेमचन्द्र सपा० प्रभाकर कुलकर्णी स० १९६४ ई०
५ काव्यप्रकाश—मम्मट सपा० डा० नगेन्द्र प्रथम
६ काव्यालंकार—रुद्रट नाटक—रामदेव शुक्ल चौखम्भा—स० १९६६ ई०
७ काव्यालंकार सूत्र—वामन, सपा० डा० नगेन्द्र स० १९५४ ई०
८ गर्ग संहिता—वेंकटेश्वर प्रेस, स० १९६६ वि०
९ दशरूपक, धनञ्जय सपा० हजारीप्रसाद, पृथ्वीनाथ द्विवेदी प्रथम संस्करण

१० नाट्यशास्त्र-भरत प० केदारनाथ निर्णय सागर स० १९४३ ई०
११ नारद भक्ति सूत्र सपा० न दलाल सिंहा-ओरिएण्ट पब्लीशस, दिल्ली, स० १९१७ ई०
१२ नीतिमाला-नारायण-स० १९३० ई० सस्करण
१३ नीतिमाला-सदानन्द मिश्र-प्रथम सस्करण
१४ बृहत सहिता-वराह मिहर-चौखम्भा, स० १९५९ ई०
१५ ब्रह्मवैवर्त पुराण हस्तलिखित, शक १७५९ में प्रायागमन
१६ रस गगाधर, प० जगन्नाथ सपा० राव आठवले प्रथम सस्करण
१७ रस मजरी, भानुदत्त, सपा० जगन्नाथ पाठक, द्वितीय सस्करण
१८ वक्रोक्ति जीवितम कुतक व्याख्या राधेश्याम मिश्र चौखम्भा, स० १९६७ ई०
१९ वाग्भटालकार-वाग्भट, निर्णय सागर स० १९३४
२० शाडिल्य भक्ति सूत्र न दलाल सिंहा ओरिएण्ट पब्लीशस, स० १९१७ ई०
२१ शुक्रनीति सपा० ब्रह्माशकर मिश्र स० १९६४ ई०
२२ श्रीमदभागवत पुराण प्रकाशन, दामोदर सावळराम आल्मण्डली, मु बई स० १९२८ ई०
२३ शृङ्गारतिलक-रुद्रभट्ट प्राच्य प्रकाशन वाराणसी प्रथम सस्करण
२४ शृङ्गार प्रकाश भोजराज कॉटोनेशन प्रेस मसूर स० १९६३ ई०
२५ सरस्वती कठाभरण, भोजराज निर्णयसागर, बम्बई स० १९३४
२६ साहित्य दर्पण, विश्वनाथ । सपा० डा० सत्यव्रत सिंह स० १९५७ ई० सस्करण

मराठी

१ दिन विशेष-प्र० न० जोशी, द्वितीय सस्करण
२ पचाग शक १८२३ शालिवाहन, मुद्रक, प्रकाशक श्री बा० रा० सावत, राम तत्व, प्रकाशक मुद्रालय वलगाँव ।
३ भारतीय सस्कृति कोश खण्ड १ सपा० प० महादेव शास्त्री जोशी, प्रथम सस्करण ।
४ भारतीय सस्कृति कोश खड ८, सपा० प० महादेवशास्त्री, जोशी, प्रथम सस्करण ।
५ राजस्थान-प० महादेवशास्त्री जोशी स० १९६३ ई० सस्करण

अग्रेजी

1 A History of Sanskrit literature by A A Macdonall 1961 Ed
2 Hindu Polity by Dr K P Jaiswal 4th Ed

राव गुलाबसिंह के उपलब्ध ग्रन्थों की सूची

हस्तलिखित

ग्रन्थ	प्राप्ति स्थान
१ साहित्य हृदय	१ हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग २ राव मुकुन्दसिंह जी, बूँदी हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
२ काव्य नियम	
३ काव्य सिन्धु पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
४ कृष्णचरित गोलोक, वृन्दावन मथुरा, द्वारिका, गिरनार गढ़	,,
५ रामाष्टक	,,
६ गुलाबकोश	,,
७ दुर्गास्तुति-जगदम्बा स्तुति	राव मुकुन्दसिंह बूँदी से प्राप्त
८ नीतिचन्द्र	हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग
९ नीति मंजरी	,,
१० पावस पच्चीसी	
११ प्रेम पच्चीसी	(२) राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर (१) हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग (२) राजस्थान प्राच्य विद्या प्र० जोधपुर
१२ बालाष्टक	(१) हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग
१३ बृहत् वनिता भूषण	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
१४ बृहत् व्यंग्यार्थ चन्द्रिका	(१) हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग (२) राव मुकुन्दसिंह जी, बूँदी सार्वजनिक पुस्तकालय, बूँदी
१५ भूषण चन्द्रिका	
१६ रामाष्टक	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
१७ रुद्राष्टक	,,
१८ लक्षण कौमुदी	,,
१९ व्यंग्यार्थ चन्द्रिका	राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर
२० समस्या पच्चीसी	हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग
२१ शारदाष्टक	

प्रकाशित ग्रन्थ

१ नामसिंधु कोश, चार भाग, विद्या रत्नाकर यन्त्र, आगरा १ २ प्रकाशन संवत नहीं तृतीय भाग सं० १८८५ ई०
चतुर्थ भाग सं० १९४३ वि०

२ नीतिचन्द्र–दो भाग, विद्या रत्नाकर यन्त्र, आगरा, सं० १९४३ वि०

३ नीति मंजरी–मतवश चौक, काशी, सं० १९४१ वि०

४ बहृत व्यंग्यार्थ चन्द्रिका भारत जीवन प्रेस, काशी, सं० १९५४ वि०

५ ललित कौमुदी भारत जीवन प्रेस, काशी प्रकाशन संवत नहीं

६ वनिता भूषण–जगत प्रकाश यन्त्रालय फतहगढ़, प्रकाशन संवत नहीं

७ व्यंग्यार्थ चन्द्रिका प्रति अपूर्ण।

पत्र पत्रिकाएँ

1 Govt College, Magazine Bundi 71–72

२ सूर्यमल्ल मिश्रण शताब्दी समारोह स्मारिका–नवम्बर १९६९